॥ श्रीः ॥

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानेकी परमोपयोगी स्वच्छ शुद्ध और सस्ती पुस्तकें।

यह विषय आज २५।३० वर्षसे अधिक हुआ भारतवर्षमें प्रसिद्ध है कि,इस छापाखानाकी छपी हुई पुस्तकें सर्वोत्तम और सुन्दरप्रतीत तथा प्रमाणित हुई हैं।सो इस यन्त्रालयमें प्रत्येक विषयकी पुस्तकें जैसे-वैदिक, वेदान्त, पुराण, धर्मशास्त्र, न्याय, मीमांसा, छन्द, ज्योतिष, साम्प्रदायिक, काव्य, अलंकार, चम्पू, नाटक, कोष, वैद्यक, तथा स्तोत्रादि संस्कृत और हिन्दीभाषाके प्रत्येक अवसरपर विक्रीके अर्थ तैयार रहतेहैं। शुद्धता, स्वच्छता तथा कागजकी उत्तमता और जिल्द की बँधाई देशभरमें विख्यात है। इतनी उत्तमता होनेपर भी दाम बहुतही सस्तेरक्खे गये हैं और कमीशन भी पृथक् काट दिया जाता है। ऐसी सरलता पाठकोंको मिलना असंभवहै। संस्कृत तथा हिन्दीके रसिकोंको अवश्य अपनी २ आवश्यकतानुसार पुस्तकोंके मँगानेमें त्रुटि न करनाचाहिये. ऐसा उत्तम, सस्ता और शुद्ध माल दूसरी जगह मिलना असम्भव है)॥ भेजकर 'सूचीपत्र' मँगा देखो ॥

KHEMRAJ SHRIKRISHNADAS,

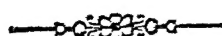
SHRI VENKATESHWAR STEAM PRESS

BOMBAY.

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना खेतवाड़ी-मुंम्बई.

# प्रस्तावना.



भरतखंडमें वैद्यशास्त्रमें रोगके निदान, वैद्य, रोगी, औषध इत्यादिकोंका वर्णन, आचार, गुणागुण जिनमें वर्णन किये ऐसे सूत्रस्थान, चिकित्सा, शारीरक इत्यादिकोंका विस्तारसे अच्छे तरहका विचार जिनमें किया ऐसे वहुत ग्रंथ एकएक विषयकूं रखे प्रसिद्ध हैं तैसे निदानोंमें और रुग्विनिश्चय जिसको "माधवनिदान" कहते हैं वोही प्रसिद्ध है. जैसे—

"निदाने माधवः प्रोक्तः सूत्रस्थाने तु वाग्भटः ।
शारीरे सुश्रुतः प्रोक्तश्चरकस्तु चिकित्सिते" ॥

सव निदानग्रंथोंमें "माधवनिदान" श्रेष्ठ है, सूत्रस्थानमें 'वाग्भट' अच्छा, शारीरस्थानमें 'सुश्रुत' उत्तम और चिकित्सा नाम औषधविचारमें 'चरक' वहुत अच्छा है। इस ग्रंथका कर्ता ग्रंथनामसेही माधव मालूम पडता है। पंडितमाधवक सव शास्त्रोंमें ग्रंथ हैं. इस ग्रंथकी भाषा काशीआदि नगरोंमें भई है, परंतु ऐसी कहींभी नहीं. इस टीकामें सव शब्द प्रसिद्ध वालकोंकेभी समझमें जल्दी आजायँ ऐसे हैं और इसमें "मधुकोश, आतंकदर्पण" इत्यादि टीकाके आशयकीभी पंक्तिकी भाषा वनाइ और शंकासमाधान लिखा है और वहुतसे निदान जो आजतक किसी टीकाकारने नहीं लिखे सो प्रसंगवशसे इसमें लिखदीनेहैं—जैसे चरकके मतसे क्लीवका निदान इत्यादि. और अँग्रेजी मतसे हकीमके मतसे जो निदान हैं वेभी लिखे हैं और परिशिष्टमेंभी शुक्र, आर्तव, गर्भ, स्नायु इत्यादि निदानका अन्य ग्रंथोंसे प्रमाण लेके इसकी भाषा वनाई है.

इस भाषाके वनानेवाले प्रसिद्ध आयुर्वेदोद्धारक माथुरपंडित दत्तरामजी हैं इन्होंने भाषाकरके दो आवृत्तियें दिल्लीमें और मथुरामें छपायीथीं अव इनसे कृपापूर्वक सव हक लेके यहाँ उक्त पंडितसेही शुद्ध कराके और वढाके हमने छापी. सो इस ग्रंथकूं इस प्रतिसे और दिल्ली और मथुरामें छपे पुस्तकसेभी कोई छापनेका अधिकारी नहीं है. इति प्रार्थना.

भवदीयशुभाकांक्षी—

**खेमराज श्रीकृष्णदास,**

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालयाध्यक्ष—वंबई.

॥ श्रीः ॥

# माधवनिदानस्थविषयाणामनुक्रमणिका ।

## अंग्रेजीमतानुसार ज्वरनिदान ४३



## अतिसारनिदानम् ४५



## अथ ग्रहणीनिदानम् ५१.

## वातरक्तनिदानम् १५३.

## नेत्ररोगनिदानम् ३११.



## नेत्रके कालेरंगमें रोग ३१६.



## दृष्टिरोग ३१८.

इति माधवनिदानस्थविषयानुक्रमणिका

समाप्ता ।

ॐ श्रीशं वन्दे ।

श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ।

# अथ माधवनिदानम् ।

भाषाटीकासमेतम् ।



नरवरवपुधारीगोकुलानंदकारी ।
व्रजयुवतिविहारीरासलीलाप्रचारी ॥
प्रणवहुँवनवारीकंसकोमानमारी ।
सकलविघनटारीलीजियेसुधिहमारी ॥ १ ॥

तथा च ।

कर्त्ताभर्तातथाहर्ताभोगमोक्षैकदायिनम् ॥
वन्देश्रीगिरिजाकान्तंशंकरंलोकशंकरम् ॥ २ ॥

परमकारुणिक श्रीसदाशिवचरणाब्जचञ्चरीक श्रीमाधवाचार्य्य निश्शेषविघ्नविघातार्थ और ग्रन्थकी निर्विघ्नपरिसमाप्तिके निमित्त ग्रन्थके आदिमें मंगलाचरण करते है–

युग्मम् ।

प्रणम्य जगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारणम् ॥
स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं त्रैलोक्यशरणं शिवम् ॥ १ ॥
नानामुनीनां वचनैरिदानीं समासतः सद्भिषजां नियोगात् ॥
सोपद्रवारिष्टनिदानलिंगो निबध्यते रोगविनिश्चयोऽयम् ॥ २ ॥

मया अयं रोगविनिश्चयो ग्रन्थः इदानीं समासतः निबध्यते, किं कृत्वा शिवं प्रणम्य, कथंभूतं शिवं जगदुत्पत्तिस्थितिसहारकारणम्, पुनः कथंभूतं शिवं स्वर्गापवर्गयोर्द्वारम्, पुनः त्रैलोक्यशरणम्, किंविशिष्टो ग्रंथः सोपद्रवारिष्टनिदानलिंगः कैः नानामुनीनां वचनैः कस्मात् सद्भिषजां नियोगात्, इत्यन्वयः ॥

अर्थ–जगत्की उत्पत्ति पालन और प्रलयके प्रधान कारण, स्वर्ग ( सुख ) अपवर्ग ( मोक्ष ) के द्वार अर्थात् दाता तथा त्रिलोकीके रक्षक शिवको प्रणाम कर अनेक चरक सुश्रुत आदि

मुनीश्वरोके वचनोके अनुसार उत्तम वैद्योकी आज्ञासे अव मैं सक्षेपसे रोगविनिश्चय नाम ग्रन्थकी रचना कर्त्ताहू। जिसमे उपद्रव, अरिष्ट, निदान और लिंगे, (चिह्न) इनका लक्षण अच्छीरीतिसे किया गया है॥

* **शिष्य**-* यह अतिसूक्ष्म निदानपचक सर्वज्ञ ऋपिमुनियोके जानने योग्यहै उनके वाक्यो-का निरादर कर मनुष्यकृत तुम्हारे ग्रन्थमे मनुष्योकी कैसे प्रवृत्ति होवेगी? इसकारण माधवा-चार्य्यने **"नानामुनीनां वचनैः"** इस पदको धरा, अर्थात् अनेक मुनीश्वरोके वचनोंका आशय ले मैंने यह ग्रन्थ निर्माण किया है. किंतु मेरे मनकी उक्तिसे कल्पित नहीं है। * **शंका**-* पहले ही बहुत ग्रन्थ निर्माणकरे उपस्थितहै फिर तुम्हारे इस ग्रन्थको कौन पढेगा? इसकारण माधवा-चार्य्यने **"इदानीम्"** पद मूलमे धरा, इसपदका यह आशय है कि, हम ही अनेक मुनीश्वरोंके वचनोसे अब ऐसा अलौकिक ग्रंथ रचतेहैं कि, पहिले किसी आचार्यने अद्यापि नहीं निर्माणकरा। कोई वादी शका करे कि, तुमने ग्रन्थ रचा भी परतु किसीने नही पढा तो आपका ग्रन्थ निर्माण करना व्यर्थ होगा इस कारण माधवाचार्यने **"सद्भिषजां नियोगात्"** यह पद धरा इस पदका आशय यह है कि, हमारे पढनेके निमित्त कोई निदानग्रन्थ निर्माणकरो ऐसे बुद्धिमान् वैद्योके कहनेसे इस ग्रन्थकी रचना करीहै। ***शंका**-* श्रीमहादेवजीके हर मृड रुद्र शम्भु इत्यादिनामोको त्यागकर शिव इस नामको क्यो प्रणामकरा? * **उत्तर**-* इस रोगविनिश्चयग्रन्थके पठन पाठन करनेवालेके कल्याणकी इच्छाकर सर्वकामना देनेवाला कल्याणवाचक शिवनाम विचार, इसीको ग्रन्थके आदिमे माधवाचार्य्यने प्रणामकरा॥

**नानातंत्रविहीनानां भिषजामल्पमेधसाम्॥**
**सुखं विज्ञातुमातंकमयमेव भविष्यति॥ ३॥**

अयमेव (ग्रन्थः) अल्पमेधसां भिषजां सुखं यथा भवति तथा आतङ्कं विज्ञातुं भवि-ष्यति। किंविशिष्टानां भिषजां नानातंत्रविहीनानामित्यन्वयः॥

अर्थ-अन्यनिदान ग्रन्थोसे इसकी उत्तमता दिखाते है। अनेक ग्रंथोके विचार करनेमे असमर्थ ऐसे मन्दबुद्धिवाले वैद्योंको सुखपूर्वक रोगज्ञानके निमित्त यही ग्रन्थ कारण होवेगा. क्योकि, रोगका जाननाही मुख्य है सो ग्रन्थान्तरोमे लिखा भी है॥

---

१ उपद्रवो-रोगारम्भकदोषप्रकोपजन्योऽन्यविकारः। २ अरिष्ट-नियतमरणख्यापकं लिंगम्। ३ निदान-रोगोत्पादको हेतुः। ४ लिंग-रोगख्यापको हेतुः। तेन लिंग्यते ज्ञायते व्याधिरनेनेति व्युत्पत्त्या पूर्वरूपरूपोपशय-संप्राप्तयो विज्ञायते। ५ रोगमादौ परीक्षेतत ततोऽनन्तरमौषधम्॥ ततः कर्म भिषक्पश्चाज्ज्ञानपूर्वसमाचरेत्॥ १॥ रोगज्ञानार्थमेवादौ यत्नः कार्यो भिषग्वरैः॥ सति तस्मिन्क्रियारम्भः पुण्याय यशसे श्रियै॥ २॥

रोग जाननेके पांच उपाय हैं उनको कहते हैं।

**निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ॥**
**संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पंचधा स्मृतम् ॥ ४ ॥**

रोगाणां विज्ञानं पञ्चधा स्मृतम्, इत्यन्वयः ॥

अर्थ–निदान, पूर्वरूप, रूप, उपशय और संप्राप्ति ये पांच प्रकार पृथक् पृथक् और समस्त व्याधियोके बोधक होते है। इसप्रकार रोगोका जानना मुनीश्वरोने पांच प्रकारका कहा है ॥

* इसश्लोकमे "**उपशयस्तथा**" यह जो पद धरा इसका यह आशयहै कि, जैसे निदान, पूर्वरूप और रूपसे रोग जानाजाता है उसीप्रकार उपशयसे और संप्राप्तिसे भी रोग जाना जाताहै "**सम्प्राप्तिश्चेति**" इसपदमे च और इतिके धरनेसे यह प्रयोजनहै कि, रोगजाननेके इन पाचोसे विशेष और उपाय नही है। अब कहते है कि, रोगोका निदान सनिकृष्ट ( **समीप** ) और विप्रकृष्ट ( **दूर** ) इन भेदोसे दो प्रकारका है * ( **सनिकृष्ट** ) उसे कहते है कि, जैसे कुपित वातादिक ज्वरादिक रोगोको प्रगट करे है और * ( **विप्रकृष्ट** ) उसे कहतेहैं जैसे हेमतऋतुमे सचितहुआ कफ वसंतऋतुमे कुपित होताहै * ( **पूर्वरूप** ) उसे कहतेहै जैसे ज्वरमें आलस्यादिधर्म * ( **रूप** ) उसे कहतेहै जैसे १८ के श्लोकमे लिखाहै * **स्वेदावरोध** इति * अर्थात् पसीनोका अवरोध होना इत्यादिक * ( **उपशय** ) उसे कहतेहै जैसे वातरोग तैल आदिके लगानेसे शान्त होता है * ( **सम्प्राप्ति** ) उसे कहतेहैं जैसे १० वे श्लोकमे लिखाहै * "**यथा दुष्टेन दोषेण**" इत्यादि–* **शका**–* क्यो जी ये पाच जो व्याधि जाननेके उपाय कहे इनमे एकहीसे रोगका निश्चय होसकता है फिर माधवाचार्यने पांच प्रकार व्यर्थ क्यो लिखे ? क्योकि पाचोका प्रयोजन केवल रोगका जाननाहै * **उत्तर**–* तुमने कहा सो ठीकहै परन्तु इन पांचोका पृथक् पृथक् प्रयोजनहै, जैसे * **निदान** से यह प्रयोजन है कि जिस वस्तुके खानेसे या लगानेसे रोग प्रगटहो उसका त्याग करनेसे रोग नही वढे किंतु उलटा शांत ही होताहै और * **पूर्वरूप** के जाननेसे यह प्रयोजनहै जैसे **सुश्रुत** मे लिखाहै कि, वातज्वरके पूर्वरूपमे घृतपान करानेसे वातज्वरकी उत्पत्ति नही होय * रूप के जाननेसे यह प्रयोजनहै कि, व्याधि अर्थात् रोगका साध्याऽसाध्य और कष्टसाध्यत्व निश्चय होताहै जैसे जिसरोगका अल्परूप होवे वह सुखसाध्य और मध्यरूप कष्टसाध्य और सपूर्णरूप असाध्य है इनके जाननेसे असाध्यका परित्याग करना और कष्टसाध्य तथा

---

१ अर्थात् नाडी नेत्र जिह्वा मल मूत्र आदिकी परीक्षाओसे रोगोका ज्ञान यथार्थ नहीं होता। २ वातिकज्वरपूर्वरूपे घृतपानमिति तथा च साध्यासाध्यत्वमपि ज्ञायते। ३ कष्टसाध्यके लक्षण चरकमें लिखे हैं–यथा–निमित्तपूर्वरूपाणा रूपाणां मध्यमे बले इति। ४ गूढलिंगं व्याधिमुपशयाऽनुपशयाभ्या वुध्येत इति।

सुखसाध्यकी औषधि करनी उचित है *उपशयके जाननेसे यह प्रयोजन है कि सुपरीक्षितव्याधिके संपूर्ण लक्षण न मिलनेसे व्याधिका यथार्थ ज्ञान नही होय उसको उपशयके द्वारा निश्चय करे सो चरक मे लिखा है कि जिस व्याधिके लक्षण प्रगट न होय उसकी उपशय और अनुपशयके द्वारा परीक्षा करे उसीप्रकार सुश्रुते में लिखा है जैसे उवटना तेल लगाना स्वेदनविधि इत्यादिक कर्म करनेसे वातरोग शात न होय तो उसके रुधिरका विकार जाने और * सप्राप्ति के जाननेसे यह प्रयोजनहै कि सप्राप्तिके विना जाने पूर्वरूपादिकों करके जानीभई भी व्याधि चिकित्साके योग्य भी है परन्तु अशांश विकल्प बल काल आदिको जबतक नही जाने तबतक चिकित्सा यथार्थ नही होसकती इसीसे वैद्य निदानपचकका अवश्यही परिचय करे ॥

**निमित्तहेत्वाऽऽयतनप्रत्ययोत्थानकारणैः ॥**
**निदानमाहुः पर्यायैः प्राग्रूपं येन लक्ष्यते ॥ ५ ॥**

**अर्थ**–अब निदानके पर्यायवाचक शब्दोको कहे हैं, निमित्त, हेतु, आयतन, प्रत्यय, उत्थान और कारण ये निदानके पर्य्यायवाचक शब्द शास्त्रव्यवहारके अर्थ मुनीश्वरोने कहेहै इनके कहनेका कारण यह है कि, व्यवहारके वास्ते अर्थात् शास्त्रमे इन छहौ शब्दोमेसे कोई शब्द आवे उसको निदानवाचकही जाने ॥

**उत्पित्सुरामयो दोषविशेषेणाऽनधिष्ठितः ॥**
**लिंगमव्यक्तमल्पत्वाद्व्याधीनां तद्यथायथम् ॥ ६ ॥**

येन उत्पित्सुः आमयः लक्ष्यते ज्ञायते तत्प्राग्रूपम्–किंभूतः आमयः दोषविशेषेणाऽनधिष्ठितः। अत एव ज्वरादिव्याधीनाम् अल्पत्वात् अव्यक्तं लिंगं तत् यथायथं यस्य व्याधे र्यद्रूपं तदेवाव्यक्तं पूर्वरूपम्, इत्यन्वयः ॥

**अर्थ**–जिस जभाई आलस्य आदि करके उत्पत्ति होनेवाली व्याधिका ज्ञान होवे उसको प्राग्रूप अर्थात् पूर्वरूप कहते है फिर वह व्याधिदोष ( वात पित्त कफ ) से बहुधा अप्रगट होवें। * शंका–*यदि वातादिक दोषोसे अप्रगट होवेगी तो व्याधिका प्रगट होना असम्भव है क्योकि, कारण तो वातादिक दोषहैं जव दोषही नही तो रोग कैसे प्रगट होसकते है। * उत्तर –*इस पदका यह अर्थ है कि दोष ( वात पित्त कफ ) का व्याधिके अल्प होने से अप्रगटरूप होना अर्थात् थोडा थोडा होना. अतएव तत्तत् ज्वरादिव्याधिका अपने अपने अप्रगट लक्षण पूर्वरूप तेसे वैसेही होते है। अब कहते है कि, पूर्वरूप दो प्रकारका है, एक सामान्य दूसरा विशिष्ट सामान्यप्राग्रूप ( पूर्वरूप )

---

१ अभ्यगस्नेहस्वेदाद्यैर्वातदोषो न शाम्यति। विकारस्तत्र विज्ञेयो दुष्टमत्रास्ति शोणितमिति।

उसे कहते है जैसे दोष ( वात पित्त कफ ) से दूषित धातु उसके बिगडनेसे प्रगट होनेवाले ज्वरादि व्याधिमात्रहीकी प्रतीति होवे और वात आदि दोषोके चिह्न न मालूमहो जैसे "श्रमोऽरति र्विवर्णत्वमिति" अर्थात् ज्वरमे श्रमहो। मनका न लगना, देहका विवर्ण, इत्यादि लक्षण और जिससे होनहार रोगारम्भक दोष उन्होके चिह्न तिसके एक अंशकी प्रतीतिहो उसको विशिष्ट प्राग्रूप कहते हैं जैसे "जृंभात्यर्थं समीरणात्" अर्थात् जभाईका आना केवल वातके दोपसेही है। इसमें होनहार रोग कौन ज्वर, उसका आरम्भक दोप कौन वात, उस वातका एक अश कौन जभाई, ऐसे और भी जानने चाहिये। इस विशिष्ट पूर्वरूपमें जंभाई आदि रूप देखकर कदाचित् पूर्वरूपको रूप न समझनां चाहिये। क्योकि यह तो केवल व्याधिके आरम्भक दोपमात्रका सूक्ष्म चिह्न है, इस बातको दृष्टान्त देकर समझाते हैं। **दृष्टान्त**। जैसे तृणके समूहमें छोटी अग्निकी चिनगारी गिरनेसे धूम ( धूआँ ) मात्र प्रकट देखकर हाथ, वस्त्र आदिके मारनेसेही शान्ति करसकते है, परन्तु जब अग्नि एकसाथ जोरसे प्रज्वलित होगई तब शात नही होसके ऐसेही विशिष्ट पूर्वरूपके अल्प होनेसे चिकित्सा करनेसे शान्ति कर सक्ते है, परन्तु जब रूप होगया तब उसका उपाय नही होसकताहै। इसीसे पूर्वरूप और रूपमे भेद है। अब कहते हैं पूर्वरूप और इन दोनोंमें कोई शारीरिक अर्थात् शरीरसे सम्बन्ध रखतेंह और कोई मानसिक अर्थात् मनसे सम्बन्ध रखतेहैं शारीरिक जैसे ज्वरमे मुखका बिरस होना, देह भारी, नेत्रोंसे जल गिरना इत्यादिक और मानसिक जैसे मनका एक जगह न लगना और अपने हितकारक वचनोसे शान्ति न होना तथा खट्टे चरपरे पदार्थपर मन चलना इत्यादि॥

**तदेव व्यक्तता यातं रूपमित्यभिधीयते॥**
**संस्थानं व्यञ्जनं लिंगं लक्षणं चिह्नमाकृतिः॥ ७॥**

**अर्थ**—जब पूर्वोक्त प्राग्रूप प्रगट होजाय तब उसको रूप ऐसे कहते हैं। और सस्थान, व्यञ्जन, लिंग, लक्षण, चिह्न और आकृति ये छः शब्द रूपके पर्यायवाचक हैं॥

उपशयके लक्षण।

**हेतुव्याधिविपर्य्यस्तविपर्यस्तार्थकारिणाम्॥**
**औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम्॥ ८॥**
**विद्यादुपशयं व्याधेः स हि सात्म्यमिति स्मृतः॥**

व्याधेः सुखावहम्, उपयोगम्, उपशयं विद्यात् स सात्म्यम्, इति स्मृतः। केषाम्, औषधान्नविहाराणाम्, किंभूताना हेतुव्याधिविपर्यस्तविपर्य्यस्तार्थकारिणाम्, इत्यन्वयः॥

**अर्थः**--व्याधेरुपयोगः सुखावहस्तमुपशय विद्यात् जानीयात् । उपयुज्यत इति उपयोगः सेवन सुखमावहतिसम्यगनुबधेनसुखमुत्पादयतीति सुखावहः, केपामुपयोगः औपधान्नविहाराणाम्, औषध चान्न च विहारश्चौपधान्नविहारास्तेपाम्, औपध हरीतक्यादि, अन्नं रक्तशाल्यादि, विहारो देहमनोनिर्वर्तितचेष्टाविशेपः, किंभूतानाम्, औषधान्नविहाराणां हेतुव्याधिविपर्यस्तविपर्यस्तार्थकारिणाम्, हेतुर्बाह्य आभ्यन्तश्च व्याधिर्ज्वरादिः हेतुश्च व्याधिश्च हेतुव्याधी तयोर्व्यस्तसमस्तयोः विपर्यस्ता व्याधिनिदानयोर्विपरीता. तथा विपर्यस्तानाम्, अर्थोविपर्यस्तार्थः तयोर्व्यस्तसमस्तयोरेवविपरीतमर्थकुर्वतीतिविपर्यस्तार्थकारिणः हेतुव्याधिविपर्यस्ताश्चविपर्यस्तार्थकारिणश्चहेतुव्याधिविपर्यस्तविपर्यस्तार्थकारिण । तेषां हेतुव्याधिविपर्यस्ताविपर्यस्तार्थकारिणां तदायमर्थः निदानरोगयोर्व्यस्तसमस्तयोर्विपरीता अपिकारणरूपाइवभासमानाः व्याधिरूपाइवभासमाना हेतुव्याधिविपरीतानाम्, अर्थव्याध्युपशमलक्षणंकुर्वन्तीति यथाहेतुविपरीतैः औपधान्नविहारैः व्याध्युपशमः क्रियते प्रतिपक्षत्वात् एवं विपर्यस्तार्थविपर्यस्तार्थकारिभिरपीत्यर्थ. । तत्रचोपशमानामष्टादशभेदाभवन्ति तान्वर्णयति यथा हेतुविपरीतमौपध हेतुविपरीतमन्न हेतुविपरीतो विहारः । यथेमे त्रयोभेदा एवमेव सर्वत्र । तथा च हेतुविपरीतानां व्याधिविपरीताना हेतुव्याधिविपरीतानां हेतुविपरीतार्थकारिणां व्याधिविपरीतार्थकारिणा हेतुव्याधिविपरीतार्थकारिणाम्, औपधान्नविहाराणा यः सुखावह उपयोगः स उपशय इति पिंडार्थ. । अथैषाक्रमेणोदाहरणानिभापायावेदितव्यानि ॥

**अर्थ**--अत्र उपशयके लक्षणको कहते हैं,--हेतुविपरीत व्याधिविपरीत हेतुव्याधिविपरीत हेतुविपर्यस्तार्थकारी व्याधिविपर्यस्तार्थकारी हेतुव्याधिविपर्यस्तार्थकारी ऐसे जो औपध अन्न (पथ्य) विहार (आचरण) इनका सेवन सुखकारक जानना उसको व्याधिका उपशय कहतेहै इसका तात्पर्य यहहै कि, रोग और रोगका हेतु इनको सुखकारक जो औपाधि पथ्य आचरणरूप प्रयोग उसको उपशय कहते हैं ओर व्याधिसात्म्य ये पर्यायवाचक नाम उसी उपशयके हे सुखकारकके कहनेसे यह प्रयोजन है कि दाह और प्यासयुक्त नवीन ज्वरमे शीतलजलका पीना व्याधिका बढानेवाला है इससे शीतलजल सुखकर्ता न भया अतएव शीतलजलको उपशय न समझना चाहिये परतु दाहयुक्त प्यासम शीतलजल उपशय माना जायगा क्योकि सुखकारक हे ॥

## आगे अब क्रमसे उदाहरण लिखते हैं।

हेतुविपरीत ओपध--जैसे शीतकफज्वरमे सोठ, तो इसमे प्रथम समझना चाहिये कि, यहा हेतु कौन हे कि सर्दी उसका शीतल धर्म है तो अब शीत कफ यह कब शान्त होय कि जब सर्दी और कफसे विपरीत औपध मिले ऐसी औपध कौन कि शुंठी यह सर्दीको और कफ दोनोको शान्त करती है तो शीतकफज्वरमे हेतुविपरीत औपध सोठ हुई ॥ ऐसेही हेतुविपरीत अन्न जैसे श्रम और वातसे प्रगट ज्वरमे मासका रस और चावल इसमे हेतु कौन कि श्रम और वात,

ये कब शान्त होयँ कि, श्रम और वात हरणकर्त्ता पथ्य मिले ऐसा पथ्य कौन कि मांसरस और चावलोका भात ये श्रम और वातके विपरीतहै अर्थात् नाशकहैं ॥ ऐसे ही हेतुविपरीतविहार— कहिये आचरण कौन जैसे दिनके सोनेसे प्रगट कफपर रातमें जागना, यहा हेतु कौन भया कि दिनका सोना, उससे प्रगट दोष कौन कि कफ, यह कफ कब शान्त होय कि जिस हेतुसे प्रगटभया उस हेतुसे विपरीत आचरण कराजाय, तो दिनके सोनेपर उलटा आचरण कौन कि रातमे जागना, तो यह हेतुविपरीत आचरणभया। इसीप्रकार और उदाहरण व्याधिविपरीत आदिके आगे लिखे हुए चक्रके अनुसार बुद्धिमान् मनुष्य समझ लेवेंगे ॥

| नाम. | औषध | अन्न | विहार |
|---|---|---|---|
| हेतुविपरीत. | शीतज्वरमे गरम औषधि सोंट | श्रम और वादीसे प्रगट रोगपर मांसका रस और भात | दिनके सोनेसे प्रगट कफरोगपर विपरीत आचरण रातमे जागना |
| व्याधिविपरीत. | अतिसारमे दस्त बंद करनेवाली औषधि पाठाआदि. | दस्तोंमे दस्तके बंद कारक पथ्य मसूर | उदावर्त्त रोगमे शब्दपूर्वक अधोवायुका निकसना मन्त्र औषध धारण देव गुरुकी सेवा करनी |
| हेतुव्याधिविपरीत | वातकी सूजनमे दशमूलका काढा वात और सूजन दोनोको दूर करनेवाला है. | कफकी संग्रहणीमे छाछका पीना वातनाशक कफनाशक और संग्रहणी नाशक | स्निग्ध जो दिनके सोनेसे उत्पन्न तद्रा तिसमे रूक्षतद्रासे विपरीत और स्निग्धतानाशक रातमे जागना |
| हेतुविपर्यस्तार्थकारी | जैसे पित्तप्रधान व्रण सूजनमे पित्तकारक उष्ण पिंडीका बांधना. | पित्तकी सूजनमे दाह कारक अन्नका भोजन करना | जैसे वातसे पैदा उन्मादमे त्रासका देना |
| व्याधिविपर्यस्तार्थकारी | जैसे कफरोगमे वमनकारक मैनफल आदि. | अतिसार रोगमे दस्तकारक दुग्ध देना | छर्दी रोगमे हाथका अँगूठा गलेमे कर वा कमलनाल आदिसे उलटीका लाना |
| हेतुव्याधिविपर्यस्तार्थकारी | जैसे अग्निजलेपर गरम अगर आदि लेप अथवा विषपर विष. | जैसे मद्यपानके करनेसे प्रगट मदात्यय रोगमे मदकारक फिर मद्य पीना | दंड कसरतसे प्रगट वातमे जलका तैरनारूप व्यायामका करना |

अनुपशयके लक्षण।

विपरीतोऽनुपशयो व्याध्यसात्म्यमिति स्मृतः ॥ ९ ॥

अर्थ—जो उपशयके लक्षण कहेहैं उससे विपरीत लक्षण अनुपशयके हैं और व्याधिका अन्सात्म्य अर्थात् असमान नाम उसी अनुपशयका पर्यायवाचक शब्द है ॥

सम्प्राप्तिके लक्षण।

**यथा दुष्टेन दोषेण यथा चानुविसर्पता ॥**
**निर्वृत्तिरामयस्याऽसौ सम्प्राप्तिर्जातिरागतिः ॥ १० ॥**

अर्थ—दोष कहिये वातपित्त कफ इनका दुष्टहोना नाम कुपित होना अनेक प्रकारकाहै अर्थात् स्वकारण या दूसरेके कारण करके ऐसे कुपितदोष अपने स्थानको छोडकर देहमें ऊपर नीचे तिरछे विचरते हैं उस विचरनेसे जो रोग प्रगटहो उसको सम्प्राप्ति कहतेहैं और जाति तथा आगति ये दोनों पर्य्यायवाचक नाम उसी सम्प्राप्तिके हैं। तात्पर्यार्थ यह है कि मनुष्यके देहमे वात पित्त कफ ये सम्पूर्ण दोष बढकर जैसे रोगको प्रगटकरैं तैसेही उसको सम्प्राप्ति कहते हैं * उदाहरण—जैसे कुपितदोषोंका आमाशयमे प्रवेश होनेसे और उस स्थानमे इतस्ततो गमन करनेसे तथा रसको बहनेवाली नाडियोंके मार्गोंको रोकनेसे और पक्काशयमे रहनेवाली अग्निको बाहिर निकालनेसे तथा उसी जठर अग्निसे सर्व देहके तप्तहोनेसे यह ज्वरहै, ऐसा जो निश्चय किया जायहै उसीको संप्राप्ति कहते हैं ऐसे ही अतिसारादिरोगोंकी सप्राप्ति जाननी चाहिये ॥

सम्प्राप्तिके भेद।

**संख्याविकल्पप्राधान्यबलकालविशेषतः ॥**

अर्थ—अब सप्राप्तिके भेद कहतेहै सा कहिये सो संप्राप्ति सख्यादि विशेषण करके पांचप्रकारकी है जैसे १ संख्या २ विकल्प ३ प्राधान्य ४ बल ५ काल इति ॥

संख्यारूप संप्राप्तिके लक्षण।

**सा भिद्यते यथात्रैव वक्ष्यन्तेऽष्टौ ज्वरा इति ॥ ११ ॥**

अर्थ—जैसे इसी ग्रन्थमे आगे आठ प्रकारका ज्वर पाच प्रकारकी खासी अर्थात् रोगोंकी गणनाकोही सख्यारूप सम्प्राप्ति कहते है ॥

विकल्परूप संप्राप्तिके लक्षण।

**दोषाणां समवेतानां विकल्पोंऽशांशकल्पना ॥**

अर्थ—मिलेहुए दोप कहिये वात पित्त कफ इनके अशांशका अनुमान करना। उसको * विकल्परूपसम्प्राप्ति कहते हैं जैसे धूएँके निकलनेसे यह पर्वत अग्निवाला है, ऐसेही यह रोगीके देहमे वातका अंश विशेष है काहेसे कि वातके अंश विशेष मिलनेसे इसी अनुमानको विकल्पसंप्राप्ति कहते हैं * उदाहरण--जैसे रूखी शीतल हलकी और फैलानेवाली इत्यादि गुणयुक्त जो पवन उसका रूक्षआदि गुणयुक्त कसैलारस वातको सर्वांश करके बढानेवाला है * ऐसेही कटुरस

सर्व भाव करके पित्तका बढानेवाला है अर्थात् कटु, उष्ण, तीक्ष्णत्व करके हींग पित्तको बढानेवाली है * ऐसेही मधुररस, जैसे भैंसका दूध यह सर्व भाव करके कफ बढानेवाला है इत्यादि। इसमें "दोषाणां" जो बहुवचन है सो दोषोके पृथक् पृथक् ग्रहणके वास्ते है और "समवेतानाम्" यह पद जो है सो द्वन्द्वज और सन्निपातके ग्रहणनिमित्त धराहै ॥

### प्राधान्यरूपसंप्राप्तिके लक्षण ।

## स्वातंत्र्यपारतंत्र्याभ्यां व्याधेः प्राधान्यमादिशेत् ॥ १२ ॥

व्याधेः स्वातंत्र्येण च पुनः पारतंत्र्येण प्राधान्यम्, आदिशेत् अप्राधान्यं चेतिशेषः, इत्यन्वयः ॥

अर्थ--व्याधिके स्वतंत्रता और परतंत्रता करके प्रधानता और अप्रधानता कही है, जैसे स्वतंत्र ज्वरको प्रधानता है और ज्वराधीन श्वास आदिरोगोको अप्रधानता है। अर्थात् व्याधिकी स्वतन्त्रतासे प्रधानता और परतन्त्रतासे अप्रधानता जाननीचाहिये ॥

### बलरूपसंप्राप्तिके लक्षण ।

## हेत्वादिकार्त्स्न्यावयवैर्बलाबलविशेषणम् ॥

अत्रापि व्याधेरित्यनुवर्तते । हेत्वादीनां हेतुपूर्वरूपरूपाणां कार्त्स्न्येन साकल्येन अवयवैरेकदेशैर्बलाबलयोर्विशेषणं विशेषावबोधः, इत्यन्वयः ॥

अर्थ--हेतु आदिशब्दोसे हेतु पूर्वरूप और रूप इनके सर्व अवयव ( लक्षण ) मिलनेसे व्याधिको बलवान् जानना, और थोडे लक्षण मिलनेसे निर्बल जानना, जैसे रोगके प्रति जो निदान कहा है वह निदान सम्पूर्ण रोगोको उत्पन्न करनेवाला है.—कि एक देश ऐसे ही पूर्वरूप भी समस्त अवयवो करके व्याधिका प्रकाशित है या एक देशसे इत्यादि ॥

### कालरूपसंप्राप्तिके लक्षण।

## नक्तंदिनर्तुभुक्तांशैर्व्याधिकालो यथामलम् ॥ १३ ॥

अर्थ--नक्त ( रात्रि ) दिन ( दिवस ) ऋतु ( वसन्तादि ) भुक्त ( आहार ) इनका अंश कहिये एकदेश उसको यथा दोष ( वात, पित्त, कफ ) के अनुसार व्याधिका काल अर्थात् रोगके घटने बढनेके हेतुका समय जाने * उदाहरण दिखाते है जैसे रात्रिके तीनभाग करे प्रथम मध्य और अन्त्य, तौ रात्रिका प्रथमभाग कफका है, मध्यभाग पित्तका, अन्त्यभाग वातका है। ऐसेही दिनके भी तीन भाग करे तो पूर्वाह्णकफका, मध्याह्न पित्तका, अपराह्ण वातका है, ऐसे ही ऋतु, जैसे वसंतऋतुमे कफ, शरदृतुमे पित्त और वर्षामे वात कुपित होता है। ऐसे ही भोजनका, जैसे

---

१ केचन ऋत्वंशाः कतिपयाहोरात्राणि कथयंति यदुक्तं वाग्भटे—ऋत्वोरित्यादिसप्ताहावृतुसंधिरितिस्मृतः ।

भोजन करनेके समय कफका काल और अन्नके पचनेके समय पित्तका काल और जब भले प्रकार परिपक्क होगया तब वातका काल, इसके जाननेसे यह प्रयोजन है कि जिस दोष ( वात, पित्त कफ ) का जो काल कहा है उसका उसी २ कालमे जान लेना कठिन मालूम नहीं होता ॥

## निदानपंचकका उपसंहार ।

**इति प्रोक्तो निदानार्थः स व्यासेनोपदेक्ष्यते ॥ १४ ॥**

अर्थ--इति कहिये यह संक्षेप प्रकारसे जो निदानार्थ कहा उसे विस्तारपूर्वक प्रतिरोगके निदान पूर्वरूपादि करके कहेंगे ।

**सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः ॥**
**तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाऽहितसेवनम् ॥ १५ ॥**

अर्थ–अब पूर्व चतुर्थ श्लोककी व्याख्यामें कहे निदानके दोभेद कौन सन्निकृष्ट और विप्रकृष्ट तिसमें सन्निकृष्ट कौन वातादिक समीपके कारण करके सर्व रोगोंका कारण है सो कहते है "सर्वेषामिति" कुपित भये जो मल ( वात, पित्त, कफ ) ये सम्पूर्ण रोगोके कारण होते है और उन वात, पित्त, कफ, दोषोके कोपका कारण अनेक प्रकारका जो अपथ्यसेवन करना ही है॥

**निदानार्थकरो रोगो रोगस्याप्युपजायते ॥**
**तद्यथा ज्वरसंतापाद्रक्तपित्तमुदीर्यते ॥ १६ ॥**
**रक्तपित्ताज्ज्वरस्ताभ्यां श्वासश्चाप्युपजायते ॥**
**प्लीहाभिवृद्ध्या जठरं जठराच्छोफ एव च ॥ १७ ॥**
**अर्शोभ्यो जाठरं दुःखं गुल्मश्चाप्युपजायते ॥**
**( दिवास्वापादिदोषैश्च प्रतिश्यायश्च जायते )**
**प्रतिश्यायादथो कासः कासात्संजायते क्षयः ॥ १८ ॥**
**क्षयो रोगस्य हेतुत्वे शोषस्याप्युपजायते ॥**

अर्थ–कोई प्रश्नकरे कि जो पूर्व कह आये हैं यह ही निदान है अथवा इसके व्यतिरिक्त और ? इसलिये कहते हैं रोगका रोग भी निदान होता है अर्थात् जो निदानसे कार्य्य होता है वह ही रोगसे भी होता है इसवास्ते दृष्टांत देकर कहते है " तद्यथेति " जैसे ज्वर संतापसे रक्तपित्त प्रगट

१ यदाह चरकः–" नास्तिरोगो विनादोषैर्यस्मात्तस्माद्विचक्षणः ॥ अनुक्तमपिदोषाणां लिंगैर्व्याधिमुपाचरेत् ॥" मलिनीकरणान्मला वातपित्तकफाः ।

होता है, और रक्तपित्तसे ज्वर, और रक्तपित्त ज्वरसे श्वास प्रगट होता है और प्लीहके बढ़नेसे जैसे उदररोग और उदररोगसे सूजन, और बवासीरसे जैसे उदररोग और गुल्म ( गोला ) रोग दिनमें सोने आदिकोंसे जुकाम होता है और जुकामसे खासी तथा खांसीसे ओजप्रभृति धातुओंका क्षय होता है, यह क्षयरोग ( राजयक्ष्मा ) सम्पूर्णरोगोंमें राजा है इसको प्रगट करे है ॥

**ते पूर्वं केवला रोगाः पश्चाद्धेत्वर्थकारिणः ॥ १९ ॥**

अर्थ–वे रोग प्रथम स्वतन्त्र होतेहै और पीछे जब बल मिलगया तो वेही हेत्वर्थकारी अर्थात् रोगके उत्पन्न करनेवाले होते है जैसे ज्वरसे रक्तपित्त होता है ॥

**कश्चिद्धि रोगो रोगस्य हेतुर्भूत्वा प्रशाम्यति ॥**
**न प्रशाम्यति चाप्यन्यो हेत्वर्थं कुरुतेऽपि च ॥**
**एवं कृच्छ्रतमा नृणां दृश्यंते व्याधिसंकराः ॥ २० ॥**

अर्थ–अब उसी रोग उत्पन्न करनेवाली व्याधिकी विचित्रता दिखाते है, जैसे कोई एक रोग दूसरेका कारण हो अर्थात् दूसरे रोगको प्रगटकर आप शांत होजाता है जैसे ज्वरके सन्तापसे रक्त-पित्त होताहै उससमय ज्वर दूर होजाय और रक्तपित्त रहा जावे । और कोई रोग दूसरे रोगको प्रगटकर आप जैसा का तैसा बना रहता है जैसे बवासीर नहीं जाय और गुल्म तथा उदररोग पैदा होते हैं । इस प्रकार मनुष्योंके घोर क्लेशदायक मिलेहुए रोग देखनेमे आते है विशेष करके चिकित्सा विरुद्ध होनेसे ये रोग कृच्छ्रतम होते है ॥

**तस्माद्यत्नेन सद्वैद्यैरिच्छद्भिः सिद्धिमुत्तमाम् ॥**
**ज्ञातव्यो वक्ष्यते योऽयं ज्वरादीनां विनिश्चयः ॥ २१ ॥**

अर्थ–अब कहे हुए निदानादिपंचकद्वारा रोगनिवृत्तिरूप सिद्धिको इच्छा करके अवश्य जानने योग्यको कहते है "तस्मात्" इति । इसीकारण उत्तम सिद्धि हमको प्राप्त हो ऐसी जिन सद्वैद्योंकी इच्छा है उनको ज्वरादिरोगोका निदान जो आगे कहते है वह यत्नसे जानना चाहिये ॥

इति श्रीमाधवभावार्थदीपिकायां माथुरीटीकायां सर्वरोगनिदानादिपंचककथनं समाप्तम् ॥ १ ॥

---

# ज्वरनिदान ।



अब सर्व देहके रोगोंमे प्रथम प्रगट होनेसे बली, देह इन्द्रिय मनको तपायमान करनेसे, जन्म मरणका कारण होनेसे, स्थावर जंगम प्राणियोमे स्थिति होनेसे सम्पूर्ण शरीरके रोगोंमे, चरक सुश्रु-तादि आचार्योंने ज्वर राजा कहा है ।

तदुक्तं चरके।

**देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो बली ॥**
**ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा ॥ १ ॥**

अर्थ–देह इन्द्रिय मनको तपायमान करनेसे रोगोमे प्रथम प्रगट होनेसे बलवान् ज्वरको सब रोगोमे प्रधानता है ॥

ज्वरकी उत्पत्ति।

**दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिःश्वाससम्भवः ॥**
**ज्वरोऽष्टधा पृथग्द्वंद्वसंघातागंतुजः स्मृतः ॥ २ ॥**

अर्थ–दक्षप्रजापतिकृत तिरस्कारसे क्रोधित श्रीरुद्र भगवान्के श्वाससे उत्पन्न जो ज्वर सो आठ प्रकारका है। वात, पित्त, कफ इनसे ३ द्वंद्वज ३ सान्निपात १ और आगंतुज १ ऐसे मिलकर संक्षेपसे ज्वर आठ प्रकारका है ॥

इस श्लोकमे " निःश्वाससम्भवः " यह जो पद धरा है सो श्वास इस जगह क्रोधके लक्षण करके कहा है किंतु ज्वरकी श्वाससे उत्पत्ति नहीं है क्योकि, जैसे सुश्रुतमे लिखा है यथा " रुद्रकोपाग्निसंभूतः सर्वभूतप्रतापनः " इति। अर्थात् क्रोधित रुद्रने ललाटस्थ तीसरे अग्निमय चक्षु (नेत्र) को स्पर्शकर आग्नेयबाण निर्माण किया तथा च चरके " स्पृष्ट्वा ललाटे चक्षुर्वै दग्ध्वा तानसुरान्प्रभुः। बाण क्रोधाग्निसंतप्तमसृजच्छत्रुनाशनम् ॥ " इत्यादिक वाक्योसे ज्वरमात्रकी पित्तप्रकृति जाननी, प्रयोजन यह है कि सर्वज्वरमे पित्तकी विरोधी क्रिया न करे सो वाग्भटने कहा है यथा–" उष्मा पित्तादृते नास्ति नात्युष्माण विना ज्वरः तस्मात्पित्तविरुद्धानि त्यजेत्पित्ताधिकेऽधिकम् ॥ " इति। अर्थात् गरमी पित्तके विना नही होती और ज्वर गरमीके विना नहीं होवे इसीसे ज्वरमे पित्तविरुद्ध क्रिया न करे और पित्तज्वरमे विशेषकरके पित्तविरुद्ध क्रिया त्याज्य है। अन्य आचार्य कहते है कि श्रीरुद्रसे उत्पत्ति होनेमे ज्वर देवता है इस लिये ज्वरका पूजन करनेसे शांत होता है, जैसे विदेहका वाक्य है "ज्वरस्तु पूजनैर्वापि सहसैवोपशाम्यति " और ज्वरका स्वरूप भी हरिवंशमें लिखा है, यथा–"ज्वरस्त्रिपादस्त्रिशिरा· षड्भुजो नवलोचन.। भस्मप्रहरणो

१ ज्वरयति शरीराणीति ज्वरः नान्ये व्याधयस्तथा दारुणा बहूपद्रवा दुश्चिकित्स्याश्च यथायम्, ससर्वरोगाधिपातिर्नानातिर्य्यग्योनिषुच बहुविधैःशब्दैःश्रूयते। यथा " पाकलःसतुनागानामभितापश्चवाजिनाम्। गवामीश्वरसंज्ञश्च मानवानां ज्वरोमतः। अजावीना प्रलापाख्यः करभे चालसोभवेत्। हारिद्रो माहिषाणाञ्चमृगरोगो मृगेषुच। पक्षिणामभिघातस्तु मत्स्येष्विन्द्रमदोमतः। पक्षपातः पतङ्गाना व्यालेष्वाक्षिकसञ्ज्ञकः इत्यादि " सर्वे प्राणभृतश्च सज्वरा एवजायन्ते सज्वराएव मृयन्ते। अतः सर्वरोगाग्रगण्यत्वाज्ज्वरएव प्रागभिहितः ॥

रौद्रः कालान्तकयमोपमः ॥ " इति । अर्थात् ज्वरके तीन चरण, तीन मस्तक, छह भुजा, नव नेत्र, भस्मयुक्त देह, रौद्रकालका भी काल और यमराजके समान है ॥

### ज्वर–संप्राप्ति।

**मिथ्याहारविहाराभ्यां दोषा ह्यामाशयाश्रयाः ॥**
**वहिर्निरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ॥ ३ ॥**

अर्थ--मिथ्या आहार ( देश काल प्रकृति आदिसे विरुद्ध और सयोगविरुद्ध भोजन ) मिथ्याविहार ( देहके पुरुषार्थसे विशेष कामका करना ) इन कारणोसे दुष्ट हुये जो दोष ( वात, पित्त, कफ ) सो नाभिस्तनके बीच आमाशयमें प्राप्त हो रसको बिगाडकर और कोष्ठस्थानमे रहती जो अग्नि उसको देहके बाहर निकाल करके प्रगट करनेवाले होते है ॥

यह संप्राति शारीररोगोकी है आगतुजकी नही है क्यो कि, आगंतुज रोगोका तो व्यथापूर्वक वातादिदोषोके रोकनेसे प्रयोजन है जैसे **सुश्रुतमें** लिखा है श्रम और चोटके लगनेसे देहधारियोके देहमें कुपित हुई वात सब देहको परिपूर्णकर ज्वरको पैदा करती है * और **चरकमे** भी लिखा है कि चोटके लगनेसे प्रगट वात रुधिरको बिगाड व्यथा और शोप तथा विवर्णयुक्त वातज्वरको प्रगट करतीहे * **शंका**-- * क्योजी ? आगंतु भी शारीर रोगही है क्यो कि, आगतुज्वरसें भी गरमी रहती है, क्यो कि * "उष्मा पित्तादृते नास्ति" * इत्यादि वाक्य प्रमाण होनेसे * **उत्तर**-- * यह जो तुमने कहा सो ठीक हे परंतु इन आगंतुरोगोमे पित्तकी पूर्वकालसेही उत्पत्ति न होती पीछे उत्पत्ति होती है, इससे आगंतुरोगोको शारीरत्व नही है। इस श्लोकमे **"कोष्ठाग्निं"** यह जो पद धरा है सो धातुकी अग्निके निवारणार्थ है अर्थात् जब धात्वग्नि बाहर आयजावेगी तो दोषोंका पचना नही होसके और दोष पकेविना ज्वरशाति नहीं होवेगी इसलिये इसका अर्थ--ऐसा न करना चाहिये **"वहिर्निरस्य कोष्ठाग्निम्"** कोठेके अग्निकी गरमीको वाहर निकाल कर ऐसा अर्थ करना चाहिये ॥

### ज्वरके लक्षण।

**स्वेदावरोधस्संतापः सर्वांगग्रहणं तथा ॥**
**युगपद्यत्र रोगे तु स ज्वरो व्यपदिश्यते ॥ ४ ॥**

अर्थ—जिस रोगमे पसीना न आवे देहमे सन्ताप और सर्वांगमे पीडा ये एक ही समय हों उसको ज्वर ऐसे कहते है ॥ * **शंका**— * क्योजी पित्तज्वरमे तो पसीना आता है तौ इस

---

१ अकाले चातिमात्रञ्च असात्म्य यच्चभोजनम्। विपमाशनञ्च यद्भुक्तं मिथ्याहारः स उच्यते ॥ २ अशक्तः कुरुते कर्म शक्तिमान्न करोति च । मिथ्याविहारमित्युक्तं सदा चैव विवर्जयेत् ॥ ३ नाभिस्तनान्तरं जन्तोरामाशय इति स्मृतः ।

श्लोकमे विरुद्धता आती है * इसपर जैज्जटादिक उत्तर लिखतेहैं कि स्वेदावरोध कहिये "स्विद्यते अनेनेति स्वेद:" इस व्युत्पत्ति करके स्वेद कहिये अग्नि तिसका अवरोध कहिये दीपकी व्याप्ति ऐसा अर्थ करनेसे श्लोकार्थमे विरुद्ध नही पडता ॥

ज्वरका पूर्वरूप ।

**श्रमोरतिर्विवर्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः ॥**
**इच्छा द्वेषो मुहुश्चापि शीतवातातपादिषु ॥ ५ ॥**
**जृम्भांगमर्दो गुरुता रोमहर्षोऽरुचिस्तमः ॥**
**अप्रहर्षश्च शीतं च भवत्युत्पित्सति ज्वरे ॥ ६ ॥**

**अर्थ**--कारण विना ही श्रमकर्म करनेमे उत्साह न हो अथवा खेलनेमे अरुचि, देहमे मलीनता, मुखमे विरसता, नेत्र अश्रुपातयुक्त और सर्दी, गर्मी, पवन इनकी वारवार इच्छा होना और वारंवार द्वेष हो इसमे जो आदि शब्द है उससे जल और अग्निका ग्रहण है अर्थात् इनकी वार २ इच्छा और द्वेष ये चरकका मत है तदुक्त **चरके**--"ज्वलनातपवाय्वंबुभक्तद्वेषाभिलाषिता" इति । अन्ये तु शैत्यौष्ण्यसाधर्म्याज्जलाऽनलौ गृह्णति ते तु आदिशब्देन शयनादिकं मन्यते * और अन्य आचार्य सर्दी गरमीके साधर्म्यसे जल अग्निको कहते है और वे आदिशब्दसे शयन आदि मानते है* जभाई अगोका टूटना देह भारी रोमाचोका होना अन्नमे अरुचि अंधेरेका आना आनदकी निवृत्ति सरदीका लगना *शंका--क्योजी पूर्व कहिआये कि शरदी गरमीकी वार २ इच्छा और वार वार द्वेष पुन. शीत पद क्यो धरा ? *उत्तर--* इस पदके धनरेसे शरदीकी अधिकता दिखाई अर्थात् शरदी विशेष लगे ये लक्षण ज्वरके पूर्व होते है ॥

**सामान्यतो विशेषात्तु जृंभात्यर्थं समीरणात् ॥**
**पित्तान्नयनयोर्दाहः कफान्नान्नाभिनन्दनम् ॥ ७ ॥**

**अर्थ**--विशेषकरके वातज्वरमे जभाई बहुत आती हैं पित्तज्वरमे नेत्रोमे दाह होता है और कफ ज्वरमे अन्नमें अरुचि होती है ॥

वातज्वरके लक्षण ।

**वेपथुर्विषमो वेगः कंठोष्ठमुखशोषणम् ॥**
**निद्रानाशः क्षवस्तंभो गात्राणां रौक्ष्यमेव च ॥ ८ ॥**
**शिरोहृद्गात्ररुग्वक्त्रवैरस्यं गाढविट्कता ॥**
**शूलाध्माने जृंभणं च भवन्त्यनिलजे ज्वरे ॥ ९ ॥**

**अर्थ**—कंप होना ज्वरका विषमवेग कंठ, होठ, मुख, इनका सूखना, निद्राका नाश, छींकका न आना, देहका रूखापना, चरकरासे नेत्र, विष्ठा, मूत्र, इनका काला होना और आचार्य "**रौक्ष्य-मेवच**" इसजगह "**श्यावांगमलमूत्रता**" ऐसा पाठ कहते हैं और मस्तक हृदय गात्र इनमें पीडा कोई * **शंका**-* करे कि गात्र पदके धरनेसे ही मस्तक हृदय आदिका बोध होगया फिर मस्तक और हृदय पद क्यो धरा ? * **उत्तर**—* इन दोनो पदोके धरनेसे इनमे दर्दकी अधि-कता दिखाई अर्थात् मस्तक हृदयमे बहुत पीडा होय मुखकी विरसता, मलका रुकना, शूल,आफरा जम्भाई ये लक्षण वातज्वरके होते है ॥

## पित्तज्वरके लक्षण।

**वेगस्तीक्ष्णोऽतिसारश्च निद्राऽल्पत्वं तथा वमिः॥**
**कंठोष्ठमुखनासानां पाकः स्वेदश्च जायते॥ १०॥**
**प्रलापो वक्त्रकटुता मूर्च्छा दाहो मदस्तृषा॥**
**पीतविण्मूत्रनेत्रत्वक् पैत्तिके भ्रम एव च॥ ११॥**

**अर्थ**—ज्वरका तीक्ष्णवेग हो, अतिसार यानी पित्तके वेगसे दस्तका पतला होना, नकि अति-सार रोगहो, थोडी निद्रा आवे पित्तको कफके स्थानमे पहुचनेसे वमनका होना, कंठ, होठ, मुख, नाक इनका पकना और पसीनोका आना बडबडाना, मुखमे कडुआट, मूर्च्छा, दाह, उन्मत्तपना, प्यास, विष्ठा, सूत्र, नेत्र, देहकी त्वचा इनका पीला होना तथा भ्रम ये लक्षण पित्तज्वरमे होते है * **शंका**—* क्यों जी भ्रमको वातविकारसे लिखा है इससे यह तो वातका धर्म है फिर पित्तके विकारमे भ्रमशब्द क्यो धरा ? * **उत्तर**—* तुमने कहा सो ठीक है परंतु रोग एकही दोषसे नही प्रगट होता किंतु अनेक दोपोसे होय है सो लिखा है "न रोगोप्येकदोपजः" इति और "**पैत्तिके भ्रम एव च**" इस श्लोकमे चकार जो पढा है इससे इस श्लोकमे जो नही कहे जो तीव्रगरमी लाल चकत्ते शीतकी इच्छा दाह अरुचि इत्यादि जानने ॥

## कफज्वरके लक्षण।

**स्तैमित्यं स्तिमितो वेग आलस्यं मधुरास्यता॥**
**शुक्लमूत्रपुरीषत्वक्स्तम्भस्तृप्तिरथापि च॥ १२॥**
**गौरवं शीतमुत्क्लेदो रोमहर्षोऽतिनिद्रता॥**
**प्रतिश्यायोऽरुचिः कासः कफजेऽक्ष्णोश्च शुक्लता॥ १३॥**

**अर्थ**—स्तैमित्य ( गीले कपडेसे देहको आच्छादित करदेनेसे जैसा हो ऐसा मालूमहो ) ज्वरका मंदवेग, आलस्य, मुख मीठा, मल, मूत्र, सफेद देहका जकडना, तृप्तसरीखा, अन्नमे अरुचि, देह-

भारी, शीत लगे, ओकारी आवे * अन्य आचार्य कहते हैं कि कफका थूकना रोमांचका होना, अतिनिद्रा, रसके वहनेवाली नाडीके मार्गोंका रुकना, दस्तका थोड़ा उतरना, पसीना, मुखमें नोनकासा स्वादहो, देहका थोडा गरमहोना, रद्दका होना, लारका गिरना, मुखपाक तथा मुखनाकसे कफका पडना, अरुचि, खाँसी, नेत्र श्वेत हो ये लक्षण कफज्वरमे होते है " स्तंभस्तृप्तिरथापि च " इस पदमे जो चकार है उससे देहमे पीडा, शीतका लगना, लारका गिरना, वमन, तन्त्रिकरोग, हृदय ल्हिसासा, गरमी प्यारी लगे, मन्दाग्नि इत्यादि जानने ॥

वातपित्तज्वरके लक्षण ।

**तृष्णा मूर्च्छा भ्रमो दाहः स्वप्ननाशः शिरोरुजा ॥**
**कंठास्यशोषो वमथू रोमहर्षोऽरुचिस्तमः ॥ १४ ॥**
**पर्वभेदश्च जृम्भा च वातपित्तज्वराकृतिः ॥**

अर्थ–प्यास, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, निद्रानाश, मस्तकपीडा, कंठ मुखका सूखना, वमन, रोमाच, अरुचि, अंधकार दर्शन, संधियोमे पीडा और जंभाई ये वातपित्तज्वरके लक्षण हैं ॥

वातकफज्वरके लक्षण ।

**स्तैमित्यं पर्वणां भेदो निद्रागौरवमेव च ॥ १५ ॥**
**शिरोग्रहः प्रतिश्यायः कासः स्वेदाप्रवर्त्तनम् ॥**
**संतापो मध्यवेगश्च वातश्लेष्मज्वराकृतिः ॥ १६ ॥**

अर्थ--स्तैमित्य ( गीलेकपड़ेसे देहको ढकनेसे जैसा हो ऐसा मालूमहो ) संधियोमे फूटनी, निद्रा, देह भारी, मस्तक भारी, नाकसे पानी गिरे, खासी, पसीनाका आना, शरीमे दाह, ज्वरका मध्यमवेग ये वातश्लेष्मज्वरके लक्षण है ॥

पित्तकफज्वरके लक्षण ।

**लिप्ततिक्तास्यता तंद्रा मोहः कासोऽरुचिस्तृषा ॥**
**मुहुर्दाहो मुहुः शीतं श्लेष्मपित्तज्वराकृतिः ॥ १७ ॥**

अर्थ–मुख कफसे लिप्तहो तथा पित्तके जोरसे मुखमे कडुआट, तंद्रा, मूर्च्छा खासी, अरुचि, प्यास, वारवार दाहहो ओर वारवार शीतका लगना ये कफपित्तज्वरके लक्षण हैं. स्तंभ ( देहका जकडना ) पसीना, कफ, पित्तका गिरना ये सुश्रुतोक्त लक्षण और भी जानने चाहिये ॥

सन्निपातज्वरके लक्षण ।

**क्षणे दाहः क्षणे शीतमास्थिसंधिशिरोरुजा ॥ सस्रावे कलुषे रक्ते निर्भुग्ने चापि लोचने ॥ १८ ॥ सस्वनौ सरुजौ कर्णौ**

**कंठः शूकैरिवावृतः॥ तन्द्रा मोहः प्रलापश्च कासः श्वासोऽरुचिर्भ्रमः॥ १९॥ परिदग्धा खरस्पर्शा जिह्वा स्रस्तांगता परम्॥ ष्ठीवनं रक्तपित्तस्य कफेनोन्मिश्रितस्य च॥ २०॥ शिरसो लोठनं तृष्णा निद्रानाशो हृदि व्यथा॥ स्वेदमूत्रपुरीषाणां चिराद्दर्शनमल्पशः॥ २१॥ कृशत्वं नातिगात्राणां सततं कण्ठकूजनम्॥ कोष्ठानां श्यावरक्तानां मण्डलानां च दर्शनम्॥ २२॥ मूकत्वं श्रोतसां पाको गुरुत्वमुदरस्य च॥ चिरात्पाकश्च दोषाणां सन्निपातज्वराकृतिः॥ २३॥**

अर्थ–अकस्मात् क्षणमें दाह, क्षणभरमे शीत लगे, हाड, सधि, मस्तक इनमे शूल, अश्रुपातयुक्त काले और लाल तथा फटेसे नेत्र होजावे [ अथवा टेढे नेत्र हो, यह जैज्जटका मत है ] कानोमे शब्द और पीडा हो, कठमे काटे पडजायँ; तंद्रा, वेहोशी हो, अनर्थ बोले; खासी श्वास, अरुचि, भ्रम, ये हो, जीभ परिदग्धवत् ( काली ) और खर्दरी गोजीभके समान तथा शिथिल ( लठर ) हो, पित्त और रुधिर मिला कफ थूके, शिरको इधर उधर पटके, तृषा बहुत लगे, निद्राका नाशहो, हृदयमे पीडा पसीना, मूत्र मल इनका बहुतकालमे थोडा, • उतरना, दोषोके पूर्ण होनेसे देहका कृश न होना, कठमे कफका निरन्तर बोलना, रुधिरसे काले लाल कोठे[1] और चकत्तोंका होना, शब्द बहुत मन्द निकले, कान, नाक, मुख आदि छिद्रोका पकना, पेटका भारी होना, वात पित्त कफ इनका देरमे पाकहो "उदरस्य च" इस पदमे जो चकार है इससे **वाग्भटने** जो लिखे है कौन; शीतका लगना, दिनमे घोर निद्राका आना, नित्य रात्रिमे जागना अथवा निद्रा कभी आवेही नही, पसीना बहुत आवे और नही आवे, कभी गान करे, कभी नाचे, हसे, रोवे, और चेष्टा पलटजाय इत्यादि जानने ये सन्निपात ज्वरके लक्षण जानने॥

* **शका** * क्योंजी वातादिक दोषोके परस्पर विरुद्ध गुण है फिर उनको एकत्र मिलकर एकही कार्यका करना नही घट सकैहै क्योकि परस्पर विरुद्ध गुण होनेसे, जैसे अग्नि और जलके विरुद्ध गुण होनेसे एक ही कार्य नही होसके ऐसेही वात पित्त कफके विरुद्ध गुणहै फिर ये मिलकर कैसे सन्निपातरूपी विकारको प्रगट करतेहै[2] * **उत्तर**–* इसका समाधान **दृढबल** आचार्यने इस प्रकार कहा है कि, गुणविरुद्ध भी वात पित्त कफ दोषहै तथापि एक सग उत्पन्न होनेसे तथा पर-

---

१ कोठके लक्षण भालुकिने कहेहै यथा–"वरटीदंशसंकाशः कंडूमान् लोहितोऽसकफपित्तक्षणिकोत्पत्तिविनाशः कोठ इत्यभिधीयते सद्भिः" इति। २ विरुद्धैरपिनत्वेतेगुणैर्घ्नंति परस्परम। दोषाःसहजसाम्यत्वाद्विषंघोरमहीनिव।

स्पर समान गुण होनेसे एक दूसरे दोपको शांत नहीं कर सकताहै जैसे सर्पका विष सर्पको बाधक नहीं **गदाधर** आचार्य इसमे और हेतु कहतेहैं, जैसे दैवकी इच्छासे और दोपोंके स्वभावसे तथा विरुद्ध गुण होनेसे सन्निपातमे एक दोप दूसरे दोपका नाशक नहीं है *शंका* क्योजी वात पित्त कफका अलग अलग कालमे संचय होताहै और अलग अलग कोप होताहै इनका एकही कालमे प्रगट होना असभव है तौ कहिये तीनो दोप मिलकर कैसे सन्निपातज्वरको प्रगट करते हैं? *उत्तर—* ये त्रिदोष प्रगट कारक कारण औपध अन्न विहारके बलकरके एक ही कालमे इन तीनो दोपोका प्रकोप होताहै यह सिद्धात है ॥

## सन्निपातोंके भेद ।

**सुश्रुत** और **वाग्भटके** मतसे सन्निपात एक ही प्रकारका है परन्तु और आचार्योंके मतमे उल्वणादि भेदों करके ९२ प्रकारका है, यथा—

**भ्रमः पिपासादाहश्चगौरवंशिरसोतिरुक् ॥ वातपित्तोल्बणेविद्याल्लिंगंमन्दकफेज्वरे ॥ १ ॥ शैत्यंकासोऽरुचिस्तन्द्रापिपासादाहहृद्व्यथाः ॥ वातश्लेष्मोल्बणेव्याधौलिङ्गंपित्तानुगेविदुः ॥२॥ छर्दिःशैत्यंमुहुर्दाहस्तृष्णामोहोस्थिवेदना ॥ मन्दवातेव्यवस्यन्तिलिङ्गंपित्तकफोल्वणे ॥ ३ ॥ सन्ध्यस्थिशिरसःशूलंप्रलापोगौरवंभ्रमः ॥ वातोल्वणेस्याद्व्यनुगेतृष्णाकण्ठास्यशुष्कता ॥ ४ ॥ रक्तविण्मूत्रतादाहःस्वेदतृष्णाबलक्षयः ॥ मूर्छाचेतित्रिदोषेस्याल्लिङ्गंपित्तेगरीयसि ॥ ५ ॥ आलस्यारुचिहृल्लासदाहवम्यरतिभ्रमैः ॥ कफोल्वणंसन्निपातं तन्द्राकासेनचादिशेत् ॥ ६ ॥ प्रतिश्याच्छर्दिरालस्यंतन्द्रारुच्यग्निमार्दवम् ॥ हीनवातेपित्तमध्येलिङ्गंश्लेष्माधिकेमतम् ॥ ७ ॥ हारिद्रमूत्रनेत्रत्वंदाहस्तृष्णाभ्रमोरुचिः ॥ हीनवाते मध्यकफेलिङ्गंपित्ताधिकेमतम् ॥ ८ ॥ शिरोरुग्वेपथुःश्वासः प्रलापच्छर्द्यरोचकाः ॥ हीनपित्तेमध्यकफेलिङ्गंवाताधिकेमतम् ॥ ॥ ९ ॥ शीतकंगौरवंतन्द्राप्रलापोस्थिशिरोऽतिरुक् ॥ हीनपित्ते-**

---

१ दैवाद्दोपस्वभावाद्वादोपाणा सान्निपातिके । विरुद्धैश्चगुणैस्तैश्चनोपघातःपरस्परम ।

**वातमध्येलिङ्गंश्लेष्माधिकेविदुः ॥ १० ॥ वर्चोभेदोग्निदौर्बल्यं तृष्णादाहोरुचिर्भ्रमः ॥ कफहीनेवातमध्येलिङ्गंपित्ताधिके विदुः ॥ ११ ॥ श्वासःकासप्रतिश्यायौमुखशोषोतिपार्श्वरुक्॥ कफहीनेपित्तमध्येलिङ्गंवाताधिकेमतम् ॥ १२ ॥**

जिस सन्निपातज्वरमें वात पित्तकी अधिकता और कफकी मन्दताहो उसमें भ्रम प्यास दाँहै और शरीरका भारापन शिरमे अत्यन्त पीडा ये लक्षण जानने चाहिये ॥ १ ॥ वात कफकी अधिकता और कफकी मन्दतामे शीतलगना खासी अरुचि तन्द्रा प्यास दाह हृदयमे दर्द होता है ॥ २ ॥ पित्त कफ की अधिकता और वातकी मन्दतामे वमन जाडालगना बारम्बार दाह प्यास मोह हड्डियेमे पीडा होतीहै ॥ ३ ॥ वातकी अधिकता और पित्तकफकीन्यूनतामें सन्धिस्थान और हड्डी और शिरमे शूल, बडबडाना शरीरका भारापन भ्रम प्यास कण्ठ और मुखका सूखना होताहै ॥४॥ पित्तकी अधिकता और वात कफकी मन्दतावाले सन्निपातमे लाल पुरीप और लालमूत्र, दाह, पसीना प्यास बलका नाश मूर्छा ये लक्षण होतेहै ॥ ५ ॥ कफकी अधिकता पित्तवातकी न्यूनतामे आलस्य अरुचि उबकाई जलन वमन पीडा भ्रम तन्द्रा खासी होतीहै ॥ ६ ॥ हीन वायु पित्तमध्यम और कफकी अधिकतामे जुकाम वमन आलस्य तन्द्रा अरुचि मन्दाग्नि होतीहै ॥ ७ ॥ हीन वात, कफ मध्यम पित्त अधिक होवे तो पीला मूत्र और नेत्रमे भी पीलापन जलन प्यास भ्रम अरुचि ये लक्षण होतेहैं ॥ ८ ॥ हीन पित्त और कफमध्यम और वातकी अधिकतामे शिरमे पीडा कापना श्वास बडबडाना वमन अरुचि होतीहै ॥ ९ ॥ हीन पित्त और वात मध्यम कफकी अधिकतामे शीत शरीरका भारापन तन्द्रा बडबडाना, हड्डी और शिरमे अत्यन्त पीडा होतीहै ॥ १० ॥ हीन कफ वात मध्यम पित्तकी अधिकतामे दस्तपतला अग्निमन्द प्यास दाह अरुचि भ्रम ये लक्षण होते है ॥ ११ ॥ हीन पित्त मध्यम वात अधिक होतो श्वास खांसी जुकाम मुखका सूखना पसवाडेमे अत्यन्त पीडा होतीहै ॥ १२ ॥

ये उल्बणादि भेद **चरकके** मतसे कहे है परतु **भालुकि** आचार्यने अपने ग्रथमे उल्बणादि लक्षण और ही प्रकारसे कहे हैं, यथा:—

**वातपित्ताधिकोयस्यसन्निपातःप्रकुप्यति ॥ तस्यज्वरोङ्गमर्द-स्तृट्तालुशोषप्रमीलकाः ॥ १३ ॥ आध्मानतन्द्रावरुचिश्वा-सकासभ्रमश्रमाः ॥ पित्तश्लेष्माधिकोयस्यसन्निपातःप्रकुप्य-ति ॥ १४ ॥ अन्तर्दाहोबहिःशीतस्तस्यतन्द्राविवर्द्धते ॥ तुद्यतेदक्षिणंपार्श्वमुरःशीर्षगलग्रहाः ॥ १५ ॥ निष्ठीवेत्क-**

फपित्तश्चतृष्णाकण्ठश्चदूयते ॥ विड्भेदश्वासहिक्काश्चबाध्यन्तेसप्रमीलकाः॥१६॥ (विधुफल्गू--) च तौ नाम्ना सन्निपातावुदाहृतौ ॥ श्लेष्मानिलाधिकोयस्यसन्निपातःप्रकुप्यति ॥ १७॥ तस्यशीतज्वरोनिद्राक्षुत्तृष्णापार्श्वसंग्रहः ॥ शिरो गौरवमालस्यंमन्यास्तम्भप्रमीलकाः ॥ १८ ॥ उदरंतुद्यते चास्यकटीबस्तिश्चदूयते॥ सन्निपातःसविज्ञेयो [ मकरीति–] सुदारुणः ॥ १९ ॥ वातोल्वणःसन्निपातोयस्यजन्तोःप्रकुप्यति ॥ तस्यतृष्णाज्वरग्लानिपार्श्वरुग्दृष्टिसंक्षयाः ॥ २० ॥ पिण्डिकोद्वेष्टनंदाहउरुसादोबलक्षयः ॥ सरक्तंचास्यविण्मूत्रं शूलंनिद्राविपर्ययः ॥ २१ ॥ निर्भिद्यतेगुदंचास्यवस्तिश्च परिकृष्यति ॥ आयम्यतेभिद्यतेचहिक्कतेविलपत्यपि ॥ २२ ॥ मूर्च्छतिस्फार्यतेरौतिनाम्ना [ विस्फूरकः–] स्मृतः ॥ पित्तोल्वणःसन्निपातोयस्यजन्तोःप्रकुप्यति ॥ २३ ॥ तस्यदाहज्वरोघोरोबहिरन्तश्चवर्द्धते ॥ शीतंचसेवमानस्यकुप्यतःकफमारुतौ ॥ २४ ॥ ततश्चैनंप्रधावन्तेहिक्काश्वासप्रमीलकाः॥ विषूचिकापर्वभेदःप्रलापोगौरवंक्लमः ॥ २५॥ नाभिपार्श्वरुजातस्यस्विन्नस्याशुविवर्द्धते॥ स्विद्यमानस्यरक्तंचस्रोतोभ्यः संप्रपद्यते ॥ २६ ॥ शूलेनपीड्यमानस्यतृष्णादाहश्चवर्द्धते ॥ असाध्यसन्निपातोयं [ –शीघ्रकारीति– ] कथ्यते ॥ २७ ॥ नहिजीवत्यहोरात्रमेतेनाविष्टविग्रहः ॥कफोल्बणःसन्निपातोयस्यजन्तोः प्रकुप्यति ॥ २८ ॥ तस्यशीतज्वरस्वप्नगौरवालस्यतन्द्रिकाः॥ छर्दिर्मूर्च्छातृषादाहतृष्णारोचकहृद्ग्रहाः ॥ ॥ २९॥ ष्ठीवनंमुखमाधुर्य्यश्रोत्रवाग्दृष्टिनिग्रहः ॥ श्लेष्मणो निग्रहश्चास्ययदाप्रकुरुतेभिषक् ॥ ३० ॥ तदातस्यभृशंपित्तं कुर्य्यात्सोपद्रवंज्वरम् । निगृहीते तु पित्तेचभृशंवायुः प्रकु-

**ष्यति ॥ ३१ ॥ निराहारस्यसोप्यर्थं मेदोमज्जास्थिवाधते ॥ तथाऽत्र स्नाति भुंक्ते वा त्रिरात्रं नहि जीवति ॥ ३२ ॥ मेदोगतः सन्निपातः ( कर्फणः- ) स उदाहृतः ॥**

जिस पुरुषके वातपित्त अधिकहै जिसमे ऐसा सन्निपात कोपको प्राप्त होताहै उस पुरुषके ज्वर सब शरीरमे दर्द प्यास तलुआसूखना नेत्र मिचना अफारा तन्द्रा अरुचि श्वासकास भ्रम थकायन होतीहै। पित्तश्लेष्म अधिकवाला सन्निपात कुपित होतो भीतर जलन बाहर ठंडा और तन्द्रा अधिक वढतीहै दाये पसवाडे मे सुई सी चुभतीहै हृदय शिर गला पकडा हुआ मालूम होताहै ॥१३॥१४॥१५॥ कफ और पित्तको थूकताहै प्यास लगतीहै कठदूखताहै अथवाप्यासकी अधिकतासे कण्ठ दूखताहै। दस्त पतला सास और हिचकीसे पीडितहोताहै आँखे मिच जाती हैं ॥ १६ ॥ विधु और फल्गुनामसे दोनों सन्निपात कहे है ( अर्थात् वात पित्ताधिकवाला विधु और पित्तश्लेष्माधिकवाला फल्गुकहाहै ) कफ और वात अधिक होकर सन्निपात जिसके कुपित होता है उसके शीतज्वर नींद, क्षुधा, प्यास, पसवाडोका जिकडना शिरका भारीपन आलक्स मन्याका ( नाडकी दोनो नस ) जिकडना नेत्रमिचना पेटमे सुईसी चुभना मुख कमर वस्ति इनमे दर्द होना ये सब लक्षण होते हैं ( यह अतिभयकर मकरी इस नाम वाला सन्निपात जानना चाहिये ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ वात अधिक है जिसमे ऐसा सन्निपात जिस पुरुषके कुपित हुआ हो उसके प्यास ज्वर ग्लानि पसवाडेमे दर्द नेत्रसे न दीखना पींडियोका इँठना जलन जघामें पीडा वलनाश रक्तसहित विष्ठा और मूत्रका निकलना शूल निद्राविपर्यय ( दिनमे सोना रात्रिमें जागना ) गुदाका फटना और वस्तिका खिचना—सिकुडना फूटनी होनी हिचकीलेना वडवडाना मूर्च्छा होना नेत्रोंका फटना रोना ये सब लक्षण होतेहै ( विस्फुरक ) कहाहै ॥ २० ॥२१॥२२॥ पित्त अधिक है जिसमे ऐसा सन्निपात जिसके कुपित हुआ हे ॥ २३ ॥ उस पुरुषके घोर दाह और ज्वर भीतर और वाहर वढताहै उससमय शीतका सेवन करने पुरुषके कफ और वायु कुपित होतेहैं तदनन्तर हिचकी और सास और आखोकामिचना वाधा करतेहै। विसूचिका ( दस्त और उलटी ) पर्वोमे फूटन वडवडाना शरीरका भारी होना खेद होना, नाभि और पसवाडेमे दर्द स्वेदनदेनेसे शीघ्र वढना, और उस खिन्न पुरुषके स्रोतोसे रक्त झरने लगना और शूलसे पीडित पुरुषके प्यास और दाहका वढना यह असाध्य सन्निपात होताहै इसको (शीघ्रकारी) नाम से वोलते हैं। इस सन्निपातसे ग्रसित शरीरवाला पुरुष एक दिनरातभी नही जीता ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ कफाधिक है जिसमे ऐसा सन्निपात जिसके कुपितहो उस पुरुषके शीतज्वर, स्वप्न शरीरकाभारीपन आलस्य तन्द्रा वमन मूर्च्छा दाह प्यास अरुचि हृदयका जिकडना थूकना मुखमे मीठापन कानोसे सुनना वाणीसे वोलना दृष्टिसे देखना वन्द होजाय, यदि इस पुरुषके कफको वैद्य रोके तो अत्यन्त कुपित हुआ पित्त उपद्रव साहित ज्वरको पैदाकरै। और

यदि पित्तको रोका जायतो अत्यन्त वात कुपित होताहै और कुपित हुआ वात निराहारपुरुषकी मेदामज्जा और हड्डियोको पीडित करताहै । इसमे स्नान करताहै और खाताभीहै लेकिन तीन रात नही जीताहै अर्थात् तीन रातके अन्दरही मरजाताहै । यह मेदोगत सन्निपात ( काफण ) नामसे कहाहै ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

मतान्तरभेद ।

**कुम्भीपाकःप्रोर्णुनावः प्रलापी ह्यंतर्दाहोदंडपातोंऽतकश्च ॥**
**एणीदाहश्चाथहारिद्रसंज्ञोभेदाएते सन्निपातज्वरस्य ॥ १ ॥**
**अजघोषभूतहासौ यंत्रापीडश्च संन्यासः ॥**
**संशोषी च विशेषास्तस्यैवोक्तास्त्रयोदशान्यत्र ॥ २ ॥**

अर्थ-- १ कुम्भीपाक २ प्रोर्णुनाव ३ प्रलापी ४ अतर्दाह ५ दण्डपात ६ अन्तक ७ एणीदाह ८ हारिद्रसज्ञक ९ अजघोप १० भूतहास ११ यत्रापीड १२ सन्यास १३ राशोषी ये तेरह प्रकारके सन्निपात है ॥

इन तेरहोके क्रमसे लक्षण लिखे हैं ।

कुम्भीपाक ।

**घोणाविवरगलद्बहुशोणासितलोहितं सार्त्तिं ॥**
**विलुठन्मस्तकमभितः कुंभीपाकेन पीडितं विद्यात् ॥ १ ॥**

जिस पुरुपके नासिकाके छिद्रसे पीलाकालालालगाढा जल बहुत झरताहो और शिरको चारो तरफ पटकताहो उस पुरुपको कुम्भी पाकसे पीडितजाननाचाहिये ॥ १ ॥

प्रोर्णुनाव ।

**उत्क्षिप्य यः स्वमंगं क्षिपत्यधस्तान्नितांतमुच्छ्वसिति ॥**
**तं प्रोर्णुनावजुष्टं विचित्रकष्टं विजानीयात् ॥ २ ॥**

जो पुरुप अपने अंगको उठाकरनीचेको पटकताहै और बहुत जल्दी २ श्वास लेताहै अनेक प्रकारसे दु.खी उस पुरुषको प्रौर्णुनाव सन्निपातसे ग्रसितजानना चाहिये ॥ २ ॥

प्रलापी ।

**स्वेदभ्रमांगमर्दाः कंपो दवथुर्वमिर्व्यथा कण्ठे ॥**
**गात्रं च गुर्वतीव प्रलापिजुष्टस्य जायते लिंगम् ॥ ३ ॥**

प्रलापी सन्निपातसे ग्रसितमनुष्यके पसीना भ्रम सब शरीरमे दर्द कंप दाह वमन कण्ठमे पीडा और शरीरमे भारीपन ये लक्षण होतेहै ॥ ३ ॥

अन्तर्दाह।

**अन्तर्दाहः शैत्यं बहिः श्वयथुररतिरपि तथा श्वासः॥**
**अंगमपि दग्धकल्पं सोंतर्दाहार्दितः कथितः॥ ४ ॥**

भीतर दाह और बाहर शरीर ठंडा सूजन शरीरसे पीडा श्वास शरीरभी जलेहुएके सदृश ये लक्षण जिसमे हो उसको अन्तर्दाह सन्निपातसे पीडित कहाहै॥ ४ ॥

दण्डपात।

**नक्तं दिवा न निद्रामुपैति गृह्णाति मूढधीर्नभसः॥**
**उत्थाय दण्डपाते श्रमातुरः सर्वतो भ्रमति॥ ५ ॥**

दण्डपात सन्निपातमे मनुष्य रात्रि और दिनमे कभी सोता नही है और वेवकूफ हुआ आकाश से कोई चीज लेनेके लिये हाथ फैलाताहै। भ्रमसे पीडित हुआ उठकर सब जगह भ्रमता है॥५॥

अन्तक।

**संपूर्य्यते शरीरं ग्रन्थिभिरभितस्तथोदरं मरुता॥**
**श्वासातुरस्य सततं विचेतनस्यांतकार्त्तस्य॥ ६ ॥**

निरन्तर श्वासोंसे पीडित चेतनारहित अन्तक सन्निपातसे पीडित मनुष्यका शरीरगाठोसे भर जाताहै और वायुसे उदर चारोतरफसे भरजाताहै॥ ६ ॥

एणीदाह।

**परिधावतीव गात्रे रुक्पात्रे भजगपतंगहरिणगणः॥**
**वेपथुमतः सदाहस्यैणीदाहज्वरार्त्तस्य॥ ७ ॥**

कम्प युक्त दाह युक्त एणीदाह सन्निपातसे पीडित मनुष्यको अपने शरीरमे सर्प पतंगमृगोंका समुदाय दौडता हुआ माल्म होता हे॥ ७ ॥

हारिद्र।

**यस्यातिपीतमंगं नयने सुतरां मलं ततोप्यधिकम्॥**
**दाहोतिशीतता वहिरस्य स हारिद्रको ज्ञेयः॥ ८ ॥**

जिस पुरुषका शरीर अत्यन्त पीला और नेत्रभी पीले और विष्टामूत्र सबसे भी अधिक पीलेहो भीतरदाह और बाहिरसे शरीरठडा हो तो उस पुरुषको हारिद्रसन्निपातसे पीडित जानना॥ ८ ॥

अजघोष।

**छगलकशरीरगंधः स्कंधरुजावान्निरुद्धगलरंध्रः॥**
**अजघोषसन्निपातादाताम्राक्षः पुमान्भवति॥ ९ ॥**

अजघोप सन्निपातसे बकरेकी गधके समान शरीरमे गंधआतीहै कंधेमे पीडा और गलेकाछिद्ररुक जाताहै लालनेत्र होजातेहै इनलक्षणोयुक्त पुरुप होताहै ॥ ९ ॥

भूतहास ।

**शब्दादीनधिगच्छति न स्वान्विषयान् यदिंद्रियग्रामैः ॥**
**हसति प्रलपति परुषं स ज्ञेयो भूतहासार्त्तः ॥ १० ॥**

जो इन्द्रिय समुदायसे अपने शब्दादि विपयोको न समझताहो ( अर्थात् श्रोत्रेन्द्रियसे शब्द न सुनताहो त्वगिन्द्रियसे स्पर्श न जानताहो इत्यादि ) हसता होवे कठोर बडबडाता हो उसको भूतहासार्त सन्निपातसे पीडित जानना ॥ १० ॥

यंत्रापीड ।

**येन मुहुर्ज्वरवेगाद्यंत्रेणेवावपीड्यते गात्रम् ॥**
**रक्तं पीतं च वमेद्यंत्रापीडः स विज्ञेयः ॥ ११ ॥**

वारम्वार ज्वरके वेगसे यत्रके सदृश जिसका शरीर पीडित किया जाय और लालपीला वमन करैं उस मनुष्यको यन्त्रापीडसे पीडित जानना चाहिये ॥ ११ ॥

संन्यास ।

**अतिसरति वमति कूजति गात्राण्यभितश्चिरं नरः क्षिपति ॥**
**संन्याससन्निपाते प्रलपति भुग्नाक्षिमण्डलो भवति ॥ १२ ॥**

सन्यास सन्निपातमे मनुष्यके दस्तहोतेहै वमन करताहै कुन २ शब्द करताहै चारोतरफ वहुत कालतक शरीरको फेंकताहै प्रलाप करताहै और उस पुरुपकी आखोकी पुतली टेढी होजातीहै। १२।

सशोपी ।

**सेचकवपुरतिसेचकलोचनयुगलोमलोत्सर्गात् ॥**
**शंशोषिणिसितपिटकामण्डलयुक्तोज्वरोभवति ॥ १३ ॥**

सशोपी सन्निपातमे मलके त्यागहोनेसे कालाशरीर और अत्यन्त काले दोनो नेत्र होजातेहै और सफेद फुंसियोके मण्डलसे युक्त पुरुप होताहै ॥ १३ ॥

इति कुम्भीपाकादीना त्रयोदशाना लक्षणानि ।

सन्निपातके विस्फारकादि १६ भेदोंको कहते हैं ।

१ विस्फारक २ शीघ्रकारी ३ कम्पन ४ वभ्रु ५ विह्वाल्य ६ शर्कराल्य ७ भल्लू ८ कूटपाल्क ९ समोहक १० पाकल ११ याम्य १२ संग्राम १३ क्रकच १४ कर्कोटक १५ दारिक १६ व्यालाकृति, इन १६ सन्निपातोंके लक्षण ग्रन्थवढनेके भयसे हमने नही लिखे अव प्रसगवशसे सम्पूर्ण सन्निपातोकी उत्पत्ति और सम्प्राप्ति ग्रन्थान्तरोसे लिखते हैं ॥

अम्लस्निग्धोष्णतीक्ष्णैः कटुमधुरसुरातापसेवाकषायैः
कामक्रोधातिरूक्षैर्गुरुतरपिशिताहारनीहारशीतैः ॥
शोकव्यायामचिंताग्रहगणवनितात्यंतसंगप्रसङ्गैः
प्रायःकुप्यंतिपुंसांमधुसमयसरद्वर्षणेसन्निपाताः ॥ १ ॥

अर्थ–खट्टा चिकना गरम तीखा कडुआ मीठा मद्य, सूर्यके घामसे आदिले तापका सेवन. कसेला काम क्रोध रूक्ष भारी मास आदि पदार्थोंका सेवन, नहिार कौल शीतशोक दंड कसरत आदि श्रम चिता भूतपिशाचकी बाधा अत्यत स्त्रीसग इन कारणोसे और चैत्र, वैशाख आश्विन कार्तिक श्रावण भाद्रपद इन महीनोमे मनुष्योंके प्रायः सान्निपातोका कोप होताहै ॥

आमोह्याहारदोषात्प्रथमसुपचितोहंतिवह्निंशरीरे
श्लेष्मत्वंयातिभुक्तंसकलमपिततोऽसौकफोवायुदुष्टः ॥
स्रोतांस्यापूर्य्यरुध्यादनिलमथमरुत्कोपयेत्पित्तमंतः सं-
मूर्छ्याऽन्योन्यमेतेप्रबलमितिनृणांकुर्वतेसान्निपातम् ॥ २ ॥

अर्थ–आहारके दोपसे प्रथम सगृहीत जो आम सो देहकी अग्निको शान्त करे और मनुष्य जो कुछ खाय सो सब कफ होजाय और फिर इस कफको वायु दूपित करे तब ये पवनके वहनेवाली नाडियोके मार्गमे प्राप्तहो उनको रोकदे तब पवन पित्तको कुपित करे ऐसे तीनो दोष अन्योऽन्य कुपित हो मनुष्योंके प्रबल सान्निपात रोग प्रगट करे हैं ॥

संधिकश्चांतकश्चैवरुग्दाहश्चित्तविभ्रमः ॥ शीताङ्गस्तंद्रिकःप्रो-
क्तःकंठकुब्जश्चकर्णकः ॥ ३ ॥ विख्यातोभुग्ननेत्रश्चरक्तष्ठीवी
प्रलापकः ॥ जिह्वकश्चेत्यभिन्यासस्सन्निपातास्त्रयोदशः ॥ ४ ॥

अब साधिकादि तेरह सान्निपातोंके लक्षण
पृथक् २ लिखते हैं ।

अर्थ–१ सधिक २ अतक ३ रुग्दाह ४ चित्तविभ्रम ५ शताग ६ तद्रिक ७ कठकुब्ज ८ कर्णक ९ भुग्ननेत्र १० रक्तष्ठीवी ११ प्रलापक १२ जिह्वक १३ अभिन्यास, ये तेरह सन्निपात कहे हैं ॥

अथ तेरहसान्निपातोंकी मर्यादा ।

संधिकेवासराः सप्त चान्तकेदशवासराः ॥ रुग्दाहेविंशतिर्ज्ञेयाव-
ह्न्यष्टौचित्तविभ्रमे ॥ ५ ॥ पक्षमेकंतुशीतांगेतान्द्रकेपंचविं-

शांतिः ॥ विज्ञेयावासराश्चैवकंठकुब्जेत्रयोदश ॥ ६ ॥ कर्णकेचत्रयोमासाभुग्ननेत्रेदिनाष्टकम्॥रक्तष्ठीवीदशाहानिचतुर्दशप्रलापके ॥ ७ ॥ जिह्वकेषोडशाहानिकलाभिन्यासलक्षणे ॥ परमायुरितिप्रोक्तंम्रियतेतत्क्षणादपि ॥ ८ ॥

अर्थ–संधिककी ७ अन्तककी १० रुग्दाहकी २० चित्तविभ्रमकी २४ शीतागकी १५ तंद्रिककी २५ कंठकुब्जकी १३ कर्णकका तीन महीना ( ९० दिन ) भुग्ननेत्रकी ८ रक्तष्ठीवीकी १० प्रलापकी १४ जिह्वककी १६ अभिन्यासकी १६ दिन की ये सन्निपातोकी परमायुके दिन कहे हैं परन्तु रोगी शीघ्र भी मरजाता है ॥

उक्तसन्निपातोंमें साध्याऽसाध्य विचार ।

सन्धिकस्तन्द्रिकश्चैवकर्णकः कंठकुब्जकः ॥
जिह्वकश्चित्तविभ्रंशः षट् साध्याः सप्त मारकाः ॥ ९ ॥

अर्थ–संधिक १ तंद्रिक २ कर्णक ३ कण्ठकुब्ज ४ जिह्वक ५ चित्तविभ्रंश ६ ये छः साध्य है बाकी बचे सात सो मारक हैं ॥

असाध्य कृच्छ्रसाध्यके लक्षण ।

दोषेविवृद्धेनष्टेऽग्नौसर्वसम्पूर्णलक्षणः ॥
सान्निपातज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्रसाध्यस्ततोऽन्यथा ॥ १० ॥

अर्थ–जिसमे दोष ( वात पित्त कफ ) वृद्धि होकर अर्थात् सम्पूर्ण लक्षण होकर मिलतेहो और अग्नि शांत होगई हो वह सन्निपात ज्वर असाध्य है और इससे विपरीत अर्थात् दोष बढे नहीं अल्प लक्षण हो अग्नि थोडी शांत हो वह सन्निपात ज्वर कृच्छ्रसाध्य है ॥

* जैजटने दोषशब्दका मल अर्थ करा है अर्थात् पुरीषादिक बढेस्तते इत्यादि इस श्लोकका तात्पर्यार्थ यह है कि असाध्य और कृच्छ्रसाध्य भयेपर सुखसाध्य नहीं होता है इसीसे भालुकि आचार्यने लिखा है ।

मृत्युनासहयोद्धव्यंसन्निपातंचिकित्सता ॥
यस्तुतत्रभवेज्जेतासजेताऽऽमयसंकुले ॥ ११ ॥

अर्थ–जो वैद्य सन्निपातकी चिकित्सा करेहै वह मौतके साथ सग्राम करे है जो इस सन्निपातको जीते अर्थात् शांत करे वह सर्व रोगके गणोका जीतनेवाला है ॥

तथाच ।

सन्निपातार्णवेमग्नं योऽभ्युद्धरतिमानवम् ॥
कस्तेननकृतोधर्मः कांचपूजांनसोऽर्हति ॥ १२ ॥

अर्थ–जो वैद्य सन्निपातरूपी सागरमे डूबे मनुष्यको निकालता है उसने कौनसा धर्म न करा अर्थात् सब धर्म्म कर चुका और वह कोन पूजाके योग्य नही है अर्थात् वह सब पूजाओके योग्य है ॥

संधिक।

**पूर्वरूपकृतशूलसम्भवंशोषवातबहुवेदनान्वितम् ॥**
**श्लेष्मतापबलहानिजागरंसन्निपातमितिसन्धिकंवदेत् ॥ १ ॥**

अर्थ--जिसके पूर्वरूपमें शूल, शोष, वातसे बहुत पीडा, कफका गिरना, सन्ताप, बलहानि, रात्रिमे जागरण ये लक्षण होयँ तिसको [ सन्धिक ] सन्निपात कहते है ॥

अन्तक।

**दाहंकरोतिपरितापनमातनोति मोहंददातिविदधाति शिरःप्रकंपम् ॥ हिक्कांकरोतिकसनंचसमाजुहोतिजानी हितंविबुधवर्जितमंतकाख्यम् ॥ २ ॥**

अर्थ--दाह करे, सतापको बढावे, मोहको देवे, शिर कपावे, हिचकी करे और खाँसीको बढावे ऐसा पंडितो करके त्याज्य ( अन्तक ) सन्निपात जानना ॥

रुग्दाह।

**प्रलापपरितापनप्रबलमोहमांद्यश्रमः परिभ्रमणवेदनाव्यथितकण्ठमन्याहनुः ॥ निरंतरतृषाकरःश्वसनकासहिक्काकुलः सकष्टतरसाधनोभवतिहन्तरुग्दाहकः ॥ ३ ॥**

अर्थ--अनर्थभाषण, सन्ताप, अतिमोह, मंदता, अनायासश्रम और पीडा, कंठ मन्यानाडी और ठोडी इनमे व्यथा, निरतर प्यास लगे, श्वास, खाँसी और हिचकी इन लक्षणोकरके युक्त ऐसा यह ( रुग्दाहनामक ) सन्निपात कष्टसाध्य है।

चित्तभ्रम।

**यदिकथमपिपुंसांजायतेकायपीडा भ्रममदपरितापोमोहवैकल्यभावः ॥ विकलनयनहासोगीतनृत्यप्रलापी ह्यभिदधतिअसाध्यंकेपिचित्तभ्रमाख्यम् ॥ ४ ॥**

अर्थ--जिसके कोई प्रकार करके पीडा होय तथा भ्रम ( धतूरा खाये सरीखी अवस्था हो ) सन्ताप, मोह, विकलता, नेत्रोमे वेकली, हसना, गाना, नाचना, बकना ये लक्षण होयँ उसको कोई असाध्य ( चित्तभ्रम ) सन्निपात ऐसे कहते है ॥

शीतांग ।

**हिमसदृशशरीरोवेपथुः श्वासहिक्का शिथिलितसकलांगः खिन्ननादोग्रतापः ॥ क्लमथुदवथुकासच्छर्द्यतीसारयुक्तस्त्वरितमरणहेतुः शीतगात्रप्रभावात् ॥ ५ ॥**

अर्थ--शरीर बर्फके समान शीतल हो, कम्प श्वास हिचकी सर्व अङ्ग शिथिल हो. मन्द शब्द, देहके भीतर उग्र सन्ताप, अनायासश्रम, मनका संताप, खाँसी, छर्दि, अतीसार इन लक्षणोयुक्त सन्निपातको ( शीताङ्ग ) कहते है यह प्राणोका शीघ्र नाशकर्ता है ॥

तंद्रिक ।

**प्रभूततंद्रार्तिज्वरकफपिपासाकुलतरो भवेच्छ्यामाजिह्वापृथुलकठिनाकंटकवृता ॥ अतीसारःश्वासःक्लमथुपरितापः श्रुतिरुजोभृशंकंठेजाड्यंशयनमनिशंतंद्रिकगदे ॥ ६ ॥**

अर्थ--तंद्रा बहुत हो शूल ज्वर कफ तृषासे रोगी बहुत पीडित हो, जीभ काले रङ्गकी मोटी कठोर ओर काटेयुक्त हो और अतीसार श्वास ग्लानि सताप कर्णशूल कंठमे जडता और रातदिन निद्रा ये लक्षण ( तंद्रिक ) सन्निपातमे होते है यह असाध्य है ॥

कंठकुब्ज ।

**शिरोर्तिकंठग्रहदाहमोहकंपज्वरारक्तसमीरणार्तिः ॥ हनुग्रहस्तापविलापमूर्च्छास्यात्कण्ठकुब्जः खलुकष्टसाध्यः ॥ ७ ॥**

अर्थ--शिरमे पीडा कण्ठमे पीडा, दाह, बेहोशी, कंप, ज्वर, वातरक्तसम्बन्धी पीडा, हनुग्रह, संताप, बकना और मूर्च्छा इन लक्षणोयुक्त सन्निपातको ( कण्ठकुब्ज ) कहते हैं यह कष्टसाध्य है ॥

कर्णक ।

**प्रलापश्रुतिह्रासकंठग्रहांगव्यथाश्वासकासप्रसेकप्रभावम् ॥ ज्वरंतापकर्णालयोर्गल्लपीडाबुधाःकर्णकंकष्टसाध्यंवदंति ॥ ८ ॥**

अर्थ--अनर्थभाषण करे, बहरा होजावे, कंठमे दर्द होय, अंगोमे पीडा, श्वास, कास, पसीना, लारका गिरना, ज्वर, सन्ताप, कर्ण और गाल इनमे पीडा जिसमे ये लक्षण हो उसको पण्डित कष्टसाध्य ( कर्णक ) सन्निपात कहते हैं ॥

भुग्ननेत्र ।

**ज्वरबलापचयःस्मृतिशून्यताश्वसनभुग्नविलोचनमोहितः ॥ प्रलपनभ्रमकंपनशोफवांस्त्यजतिजीवितमाशुसभुग्नदृक् ॥ ९ ॥**

अर्थ--ज्वर बलका नाश, स्मृतिनाश, श्वास, टेढी दृष्टि, बेहोशी, अनर्थभाषण, भ्रम, कंप और सूजन ये लक्षण [भुग्ननेत्र] सन्निपातके हैं यह रोगी जल्दी मरताहै ।

रक्तष्ठीवी ।

**रक्तष्ठीविज्वरवमितृषामोहशूलातिसारा हिक्काध्मानभ्रमणदवथुश्वाससंज्ञाप्रणाशाः ॥ श्यामारक्ताधिकतररसनामंडलोत्थानरूपारक्तष्ठीवीनिगदितइहप्राणहंताप्रसिद्धः ॥ १० ॥**

अर्थ--रक्तकी, उलटीकरे, ज्वर, वमन, तृषा, मूर्च्छा, शूल, अतिसार, हिचकी, अफरा, भौरेका आना, सताप, श्वास, संज्ञानाश, काली और लाल जीभ, देहमे रुधिरके विकारसे चकत्ते जिसमे ये लक्षणहो उसको (रक्तष्ठीवी) सन्निपात कहतेहै यह प्राणनाशक प्रसिद्ध है ।

प्रलापक ।

**कंपप्रलापपरितापनशीर्षपीडा प्रौढप्रभावपवमानपरोऽन्यचिन्ता ॥ प्रज्ञाप्रणाशविकलप्रचुरप्रवादःक्षिप्रंप्रयातिपितृपालपदंप्रलापी ॥ ११ ॥**

अर्थ--कंप, बडबडाना, संताप, शिरमें पीड़ा इनका विशेष जोर हो, पवित्रतामे आसक्त, दूसरेकी चिता करे, बुद्धिका नाश हो, विकल, और बहुत बकवाद करे ऐसा यह (प्रलापक) सन्निपात है, इस सन्निपातवाला रोगी यमराजके पुरको पधारे ॥

जिह्वक ।

**श्वसनकासपरितापविह्वलःकठिनकंटकपरीतजिह्वकः ॥ बधिरमूकबलहानिलक्षणोभवति कष्टतरसाध्यजिह्वकः ॥ १२ ॥**

अर्थ--श्वास, खाँसी, संताप, विह्वल कठोर और काटोसे व्याप्त ऐसी जीभ, बहरा, गूंगा और बलकी हानि इन लक्षणोसे सयुक्त ऐसा यह (जिह्वक) सन्निपात कष्टसाध्य है ॥

अभिन्यास ।

**दोषत्रयस्निग्धमुखत्वनिद्रा वैकल्यनिश्चेष्टनकष्टवाग्ग्मी ॥ बलप्रणाशःश्वसनादिनिग्रहोऽभिन्यासउक्तोननुमृत्युकल्पः ॥ १३ ॥**

अर्थ--त्रिदोषोके कोपके समान मुखपर चिकनापना, निद्रा, वेकली, चेष्टाहीन हो कष्टसे बोले बलनाश, श्वासादिकोका रुकना ये लक्षण (अभिन्यास) सन्निपातमे होते हैं यह महा असाध्य मृत्युके तुल्य है ।

## सन्निपातोपद्रव ।

**सन्निपातज्वरस्यांतेकर्णमूलेसुदारुणः ॥**
**शोथःसंजायतेतेनकश्चिदेवप्रमुच्यते ॥ १४ ॥**
**ज्वरस्यपूर्वंज्वरमध्यतोवाज्वरांततोवाश्रुतिमूलशोथः ॥**
**क्रमादसाध्यःखलुकष्टसाध्यःसुखेनसाध्योमुनिभिःप्रदिष्टः॥ १५ ॥**

अर्थ—सन्निपातज्वर शात होनेके पीछे कानकी जडमे दारुण सूजन पैदा होती है उस सूजनसे कोई रोगी बचे है प्रायः यह मारही डाले है ॥ यदि यह सूजन ज्वरके पहिले होवे तौ असाध्य है ज्वरके मध्यमे होय तौ कष्टसाध्य है और ज्वरके अतमे होय तौ सुखसाध्य है, ऐसे मुनीश्वरोने कहा है ॥

**सद्यस्त्रिपंचसप्ताहाद्दशाद्द्वादशादपि ॥**
**एकविंशाद्दिनैःशुद्धःसन्निपातीसुजीवति ॥ १६ ॥**

अर्थ—सन्निपात हुएपर तत्काल तीन पाच सात दश और बारह दिनमे इक्कीस दिनतक सन्निपातवाला रोगी शुद्धहोकर जीवे है ॥

## त्रिदोषज्वरोंकी साधारण मर्यादा ।

**सप्तमीद्विगुणायावन्नवम्येकादशीतथा ॥**
**एषात्रिदोषमर्यादामोक्षायचवधायच ॥ १७ ॥**
**पित्तकफानिलवृद्धद्वादशादिवसद्वादशाहसप्ताहात् ॥**
**हंतिविमुंचतिपुरुषंत्रिदोषजोधातुमलपाकात् ॥ १८ ॥**

अर्थ—जबसे[१] त्रिदोप प्रकट हो उस दिनसे लेकर ७ किवा १४ और ९ किवा १८ तथा ११ किवा २२ दिनतक त्रिदोपज्वरोकी मर्यादाहे इस अवधिमे ज्वर जातारहे अथवा मृत्यु होय ॥ सात नौ और ग्यारह दिनमे मर्यादा वाताधिक पित्ताधिक और कफाधिक सन्निपातोकी क्रमसे जाननी पित्त कफ और वात इनकी वृद्धि क्रमकरके दशदिनकी बारहदिनकी और सातदिनकी है इसमे त्रिदोषजज्वर धातुपाक होनेसे मार डाले और मलपाक होनेसे रोगी रोगमुक्त होजाय ॥

## धातुपाकलक्षण ।

**निद्राबलौजोरुचिवीर्यनाशो हृद्वेदनागौरवतालपचेष्टा ॥**
**विष्टंभतायस्यकिलारतिःस्यात्सधातुपाकीमुनिभिःप्रदिष्टः ॥ १९ ॥**

---

१ सप्तमे दिवसेप्राप्तेदशमे द्वादशेपिवा ॥ पुनर्घोरतरोभूत्वाप्रशमंयातिहंतिवा, इति ।

अर्थ-निद्रा बल तेज रुचि वीर्य इनका नाश, हृदयमे पीडा, देह भारी, हीनचेष्टा, अफरा, मनका न लगना ये लक्षण जिसके हो उसको धातुपाकी मुनीश्वरोने कहा है धातुपाक कहिये उत्तरोत्तर रोगकी वृद्धि और बलकी हानि होकर शुक्रादि धातुसहित मूत्रादिकोका जो पाक होय उसे धातुपाक कहते हैं ॥

मलपाकलक्षण।

**दोषप्रकृतिवैकृत्यंलघुताज्वरदेहयोः ॥**
**इन्द्रियाणांचवैमल्यंदोषाणांपाकलक्षणम् ॥ २० ॥**

अर्थ-दोषोका स्वभाव पलटजाय, ज्वरका हलका होना, देह हलकी हो, इन्द्रियोका निर्मल होना ये मलपाक के लक्षण जानने धातुपाक और मलपाक होना केवल ईश्वरपर हैं इसमे दूसरा कोई हेतु नहीं है ॥

आगंतुकज्वर।

**अभिघाताभिचाराभ्यामभिषंगाभिशापतः ॥**
**आगंतुर्जायतेदोषैर्यथास्वंतंविभावयेत् ॥ २१ ॥**

अर्थ-तलवार छुरा मुक्का लकडी इत्यादि शस्त्रआदिके लगनेसे प्रगट ज्वरको अभिघातज कहते है और विपरीत मंत्रके जपनेसे, लोहके श्रुवासे मारणार्थ सर्षपादिक होम अथवा कृत्याका प्रयोग करनेसे उत्पन्नज्वरको अभिचारज कहते है, काम शोक भय क्रोध भूतादिकोके आवेशसे उत्पन्न ज्वरको अभिषंगज कहते हैं, ब्राह्मण गुरु वृद्ध सिद्ध इनके शाप देनेसे प्रगट ज्वरको अभिशापज कहते हैं ये चार प्रकारसे आगतुकज्वर उत्पन्न होयँ हैं इस ज्वरके आरंभसे पूर्व कोई दोषका प्रकाश नहीं हो पीछे जैसे दोष कुपित होवे तिनको उन्हीं २ दोषोके लक्षण करके जाने जैसे "कामशोकभयाद्वायुः" अर्थात् काम शोक भयसे वात कुपित होती है ॥

विषजन्य आगंतुकज्वर।

**श्यावास्यताविषकृतेदाहोतीसारएवच ॥**
**भक्तारुचिःपिपासाचतोदश्चसहमूर्च्छया ॥ २२ ॥**

अर्थ-अब आगंतुकज्वरोके हेतुभेदकरके लक्षण कहते है. स्थावर जगम विष भक्षण करनेसे जो ज्वर होय उससे मुख श्यामवर्ण और दाह तथा दस्तोका होना, अन्नमें अरुचि, प्यास, सुई चुभनेकीसी पीडा और मूर्च्छा ये लक्षण होते है ॥

औषधगंधजनितज्वर।

**औषधीगन्धजेमूर्च्छाशिरोरुग्वमथुःक्षवः ॥**

अर्थ-तीक्ष्ण औषधके सूंघनेसे जो ज्वर होय उसमें मूर्च्छा शिरमें पीडा वमन छींक ये लक्षण होते हैं ॥

कामज्वरके लक्षण ।

**कामजेचित्तविभ्रंशस्तन्द्राऽलस्यमभोजनम् ॥ २३ ॥**
**हृदयेवेदनाचास्य गात्रंचपरिशुष्यति ॥**

अर्थ–सुन्दर स्त्रीके देखनेसे मनुष्यके मनमे घोर कामकी बाधा उत्पत्तिहो उससे प्रगट ज्वरके ये लक्षण हैं, चित्तकी अस्थिरता, तन्द्रा, आलकस, भोजनमे अरुचि,: हृदयमे पीडा और शरीर सूखजावे ॥

अथ भयशोक और कोपज्वर ।

**भयात्प्रलापः शोकाच्च भवेत्कोपाच्च वेपथुः ॥ २४ ॥**

अर्थ–भयसे और शोकसे उत्पन्नज्वरमे अनर्थ बके, कोपसे प्रगट ज्वरमे कंप होय ॥

अभिचार और अभिघातज्वरके लक्षण ।

**अभिचाराभिघाताभ्यांमोहस्तृष्णाचजायते ॥**

अर्थ–अभिचार और अभिघातसे प्रगटज्वरमे मोह और तृष्णा होवे ॥

भूताभिषंगज्वरके लक्षण ।

**भूताभिषंगादुद्वेगोहास्यरोदनकंपनम् ॥ २५ ॥**

अर्थ–भूतबाधासे उत्पन्नज्वरसे चित्तमे उद्वेग, हसे, रोवे और कप ये लक्षण होते है ॥

**कामशोकभयाद्वायुःक्रोधात्पित्तंत्रयोमलाः ॥**
**भूताभिषंगात्कुप्यंतिभूतसामान्यलक्षणः ॥ २६ ॥**

अर्थ–काम शोक और भय इनसे वात कुपित होता है, क्रोधसे पित्त कुपित होता है और भूताभिषगसे तीनो दोष कुपित होते हैं इसमे और भी लक्षण होते हैं अर्थात् उन्माद निदानमे जिस जिस देवग्रहोके लक्षण हास्य रोदन कंपादिक कहे है वे लक्षण होते है ॥

विषमज्वरकी संप्राप्ति ।

**दोषोऽल्पोऽहितसंभूतोज्वरोत्सृष्टस्यवापुनः ॥**
**धातुमन्यतमंप्राप्यकरोतिविषमज्वरम् ॥ २७ ॥**

अर्थ–जिसमनुष्यके ज्वर, औपधादिक सेवन करनेसे शांत होनेके पश्चात् अपथ्य करनेसे वात पित्तादि दोष पुनः थोडे प्रकुपित हो रसरक्तादि धातुओमेसे किसी धातुमे प्राप्त हो और उनको दूषितकर विषमज्वर कहिये तृतीयक चतुर्थकादिक ज्वर उत्पन्न करे। वाशब्दकरके प्रथमसे ही विषमज्वर होय है यह सूचनाकरी। यथा–" आरम्भाद्विषमोयस्तु " इति। अल्पशब्दसे यह

दिखाया कि वह दोष बलहीन होनेसे कालांतरमे बलवान् होकर ज्वर करे और जो दोष बलवान् है वह नित्यज्वर करे है। विषमज्वरके लक्षण भोलुकिने कहे है सो ऐसे कि अनियतकालमे शीत उष्णकरके विषमवेगज्वर होय उसज्वरको विषमज्वर ऐसे कहते है दूसरे लक्षण ऐसे कि "मुक्तानुबन्धित्व विषमत्वम्" अर्थात् जो ज्वर छोडदे और फिर आजावे उसको विषमज्वर ऐसे कहते है॥

धातुगतज्वरके नाम।

**संततःसततोऽन्येद्युस्तृतीयकचतुर्थकौ ॥ सततंरसरक्तस्थःसोऽन्येद्युः पिशिताश्रितः ॥ मेदोगतस्तृतीयेह्निह्यस्थिमज्जागतः पुनः ॥ कुर्य्याच्चातुर्थिकंघोरमंतकंरोगसंकरम् ॥ २८ ॥**

अर्थ--सतत सतत अन्येद्यु ( द्व्याहिक ) तृतीयक ( त्र्याहिक--जिसको तिजारी कहते है ) और चातुर्थिक जिसको चौथिया कहते है ऐसे पाचप्रकारके विषमज्वर है सतत शब्दकरके सतत और सतत ये दोनो जानने अर्थात् रसस्थदोष संततज्वर करे है और रक्तस्थदोष सतत ज्वर करे है इससे संतत और सतत ये दोनो शब्द केवल संज्ञावाचक हैं सातत्यवाचक नही है ऐसे जाने, वेही दोष मांसगत अन्येद्युष्क अर्थात् द्व्याहिक ( एकंतरा ) को करे है और मेदगतदोष तृतीयक ( तिजारी ) ज्वर करे है और वेही दोष अस्थिमज्जामें प्राप्त हुए दु:सह मृत्युकारक अनेक रोगोसे व्याप्त ऐसा चातुर्थिक ज्वर प्रगट करें हैं॥

संततज्वरके लक्षण।

**सप्ताहंवादशाहंवाद्वादशाहमथापिवा ॥
संतत्यायोऽविसर्गीस्यात्संततःसनिगद्यते ॥ २९ ॥**

अर्थ--सात दिन पर्यंत किंवा दशदिनपर्यंत किंवा बारहदिन पर्यंत एकसा जो ज्वर निरन्तर रहे और उतरे नही तिसको संततज्वर कहते है। सात दश बारह ये जो कहे सो अनुक्रम करके वात पित्त कफ इनके उल्बणसे कहे है यह संततज्वर त्रिदोषज है कारण इसका बारह पदार्थोंका साथ होना है ऐसे वातादिदोष धातुके प्रमाण मूत्र और मल इनको एक ही समयमे ग्रसकर संततज्वर उत्पन्न करे हैं बारह पदार्थ ये है वातादिदोष३सप्तधातु ७ मूत्र १ और मल १ मिलकर बारह हुए॥

संततकादिकोंके लक्षण।

**अहोरात्रेसततकोद्वौकालावनुवर्त्तते ॥ अन्येद्युष्कस्त्वहोरात्रसेककालंप्रवर्त्तते ॥ ३० ॥ तृतीयकस्तृतीयेऽह्निचतुर्थेऽह्निचतुर्थकः ॥ केचिद्भूताभिषंगोत्थंवदंति विषमज्वरम् ॥ ३१ ॥**

अर्थ--काल छः है १ पूर्वाह्न २ मध्याह्न ३ अपराह्न ४ प्रदोष ५ अर्द्धरात्रि ६ प्रत्यूष, पूर्वाह्न प्रदोष ये कफके काल हैं, मध्याह्न और अर्द्धरात्र ये पित्तके काल है, अपराह्न और प्रत्यूष ये वातके

१ "यःस्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यांतथैवच वेगतश्चापिविषमो ज्वरः सविषमोमतः॥

काल है, सततज्वर दिनरातमे दो समय आता है। **ईशानदेव** कहते हैं कि दिनके दो वेला अर्थात् दो वार अथवा रात्रिके दो वेला अथवा दिनके एक वेला और रात्रिके एक वेला एकके दो वेला अमुक वेलामे आवेगा जैसे ज्वरके आनेका समय नहीं कहा है **अन्यद्युष्कज्वर** अहोरात्रिमे एक वेलामे आता है। **तृतीयकज्वर** जिस दिन आता है उससे तीसरे दिन फिर आता है और **चातुर्थिक** चौथे दिन आता है। और कोई आचार्य इस विषमज्वरको भूताभिषंगोत्थ कहते हैं यह मत **सुश्रुताचार्य**हीका मान्य है अर्थात् उसने विषमज्वरपर बलि होमादिक भूतोचित और कषायपानादिक दोषोचित ऐसी चिकित्सा कहीहै और विषमज्वर ये प्रायशः आगंतुकका सम्बन्धी है यह **चरकने** कहा है॥

## उत्कृष्टदोषभेदकरके तृतीयक चतुर्थकोंके दूसरे लक्षण।

**कफपित्तात्त्रिकग्राहीपृष्ठाद्वातकफात्मकः॥ वातपित्ताच्छिरोग्राहीत्रिविधःस्यात्तृतीयकः॥३२॥ चातुर्थिकोदर्शयतिप्रभावंद्विविधंज्वरः॥जंघाभ्यांश्लैष्मिकः पूर्वंशिरसोऽनिलसंभवः॥३३॥**

**अर्थ**–तृतीयक ज्वर कफ पित्तके जोरसे त्रिकस्थान ( तीन हड्डी )[1] मे पीडा करे है, वात कफके जोरसे पीठमे पीडा करे है, वात पित्तके जोरसे मस्तकमे पीडा करे है, ऐसे **तृतीयकज्वर** तीन प्रकारका है त्रिकग्राही जो कहा इसका तात्पर्य यह है कि, त्रिकवातका स्थान है उसके स्थानमे कफ पित्त दूसरेके स्थानमे पहुचनेसे निर्बल हो जाते हैं इससे तीसरे दिन ज्वर करते हैं। यदि कफ पित्त स्वस्थानपर स्थित होयँ तो सततज्वरको करते है यह **जैज्जटका** मत है ऐसेही मस्तक कफका स्थान है और पीठ पित्तका स्थान है इनमे दूसरे दोषोंके पहुचनेसे दुर्बल होकर तृतीयक ज्वर करते हैं। * **शंका**–* यदि त्रिकवातका स्थान है तो फिर आप पित्त कफका उस स्थानमे गमन कैसे कहते हो * **उत्तर**–* यह स्थानका नियम प्रकृतिस्थित दोषोका कहा है कुपित दोषोका नही कहा है क्योकि कुपित दोषोका सर्वत्र गमन होता है[2] यह **सुश्रुत** का मत है। ऐसे ही दोषोको अन्यस्थानगतत्व होनेसे तथा दोषोको निर्बलत्व होनेसे **चातुर्थिक** ज्वरमें भी जानना। चातुर्थिक ज्वर दो प्रकारकी शक्ति दिखाता है, सो ऐसे–कफअधिक जिसमे होवे वह प्रथम जघाओमे व्याप्त होकर पश्चात् सर्व देहवे व्याप्त होता है और वाताधिक्य जिसमे होवे वह पहिले मस्तकमे व्याप्त होकर पीछे सर्व देहमे व्याप्त होता है पाच प्रकारके विषमज्वर प्रायशः[3] सन्निपातसे प्रगट होते हैं यह **चरक**का मत है **हारीत**ऋषि कहते हैं कि **चातुर्थिक** ज्वरमे पित्त प्रधान है इन विषमज्वरोकी उत्पत्तिक्रम **वृद्धसुश्रुतमे** इस प्रकार लिखाहै कि, कफके पांच स्थान

---

१ त्रिक कहिये कमर और जंघाके मध्यकी तीन हड्डी। २ कुपितानाहिदोषाणांशरीरेपरिधावताम्। यत्रसंगःस्ववैगुण्याद्व्याधिस्तत्रोपजायते। ३ प्रायश. सन्निपातेनदृष्टः पञ्चविधोज्वरः। सन्निपाते तु योभूयात् सदोषः परिकीर्तित॥

हैं उनमे जिस जिस स्थानमें दोष प्राप्त होते है वहा उसी २ विषमज्वरको, प्रगट करते है। उन पांच स्थानोके नाम आमाशय १ हृदय २ कठ ३ शिर ४ और सधि ५ तहा आमाशयमे दोष पहुचनेसे सततक ज्वर दो समय आता है हृदयस्थितदोष आमाशयमे आनेसे एकंतरा एक समय आता है, कठमे स्थित दोष एकदिनमे हृदयमे आता है, दूसरेदिन आमाशयमे प्राप्त हो ज्वर करे उसे तृतीयक ( तिजारी ) कहते है, शिरमे स्थित जो दोष सो क्रमसे कठ हृदय और आमाशयमें तीन दिनमें प्राप्त हो चतुर्थ दिवस **चातुर्थिक** ज्वर प्रगट करते हैं और उन दोषोका उलट कर पुनः स्वस्थानमे पहुंचना उसी दिन होता है क्यो कि, दोष वेगवान् होते है और दोष संधिस्थित होते है तव **प्रलेपक ज्वर** प्रगट करते हैं ये विषमज्वरके समान ज्वर हैं कारण इसका यह है कि, सधि आमाशयमे स्थित है और **सुश्रुतने** कहाहै कि, प्रलेपक यह विषम ज्वर है धातुशोष रोगियोको क्लेशका देनेवाला है ॥

विषमज्वरके भेद ।

**विषमज्वरएवान्यश्चातुर्थिकविपर्ययः ॥**
**समध्येह्निज्वरयतिह्यादावंतेचमुंचाति ॥ ३४ ॥**

**अर्थ**—चातुर्थिक ज्वरका उलटा यह दूसरा विषमज्वर है यह प्रथम और अंतका दिन छोड़कर वीचके दोदिन आता है जैसे यह चातुर्थिकका विपर्यय है तैसे ही तृतीयक आदिका भी विपर्यय होता है उनको कहते है जैसे वीचके एकदिन ज्वर आवे और आदि अन्तके दिन नहीं आवे यह तृतीयकका विपरीत और जो एक काल छोड़कर सव दिनरात्रि ज्वर रहे वह अन्येद्युष्क इकंतरेका विपरीत जानना। इनके विषयमे ग्रन्थकारोके भिन्न भिन्न मत है विस्तारके भयसे इस जगह नहीं लिखे हैं ॥

वातवलासकज्वर ।

**नित्यंमन्दज्वरोरूक्षःशूनकस्तेनसीदति ॥**
**स्तब्धांगःश्लेष्मभूयिष्ठोनरोवातवलासकी ॥ ३५ ॥**

**अर्थ**—वातवलासक नामक ज्वर जिस मनुष्यके हो वह उस ज्वरकरके शोथयुक्त अर्थात् सूजन हो और मन्दज्वर सदैव वनारहे. देह रूखी हो, अग जिकड जावे, कफ विशेष होय यह ज्वर वात और कफसे होता है इसको **वातवलासक** ज्वर कहते है ॥

प्रलेपकज्वर ।

**प्रलिंपन्निवगात्राणिघर्मेणगौरवेणच ॥**
**मन्दज्वरविलेपीचसशीतःस्यात्प्रलेपकः ॥ ३६ ॥**

---

१ प्रलेपकस्त्वविषमः प्रायः क्लेशाय शोषिणाम्। अन्येरात्रिज्वरादयोऽपिविषमज्वरावोद्धव्याः, यथोक्तम्—क्षमौवातकफौयस्यक्षीणापित्तस्यदेहिनः। रात्रौप्रायोज्वरस्तस्यदिवाहीनकफस्यतु ॥ १ ॥

अर्थ–जिस ज्वरमे पसीनासे तथा सूर्यके घामसे अथवा देहके गौरवसे मानों देहको लिप्त करदियासा मालूम हो इसी हेतुसे मन्द ज्वर हो शीत लगे यह ज्वर कफ पित्तसे प्रगट होता है और राजयक्ष्मारोगमे यह होता है कोई इसको त्रिदोपजनित कहते हे इसको **प्रलेपक ज्वर** कहते हैं॥

### विषमज्वर विशेषभेद।

**विदग्धेऽन्नरसेदेहेश्लेष्मपित्तेव्यवस्थिते ॥**
**तेनार्धंशीतलंदेहमर्धमुष्णंप्रजायते ॥ ३७ ॥**

अर्थ–अन्नका रस दुष्ट होनेसे और देहमे कफ पित्त दुष्ट होकर स्थित होनेसे ( अर्धनारी-श्वररूप * अथवा नरसिंहरूप ) **अर्धांग ज्वर** प्रगट करे हैं, अर्थात् अर्धदेह कफसे शीतल और अर्धदेह पित्तसे गरम होता है ॥

**कायेदुष्टंयदापित्तंश्लेष्माचान्तेव्यवस्थितः ॥**
**तेनोष्णत्वंशरीरस्यशीतत्वंहस्तपादयोः ॥ ३८ ॥**

अर्थ–जिस मनुष्यके कोठेमे पित्त दुष्ट होवे और कफ, हाथपैरोमे दुष्ट होकर स्थित होवे तिस करके सब देह उष्ण रहे और हाथ पग शीतल रहे ॥

### इन्होंका विपरीत द्वितीय ज्वर।

**कायेश्लेष्मायदादुष्टःपित्तंचान्तेव्यवस्थितम् ॥**
**शीतत्वंतेनगात्राणामुष्णत्वंहस्तपादयोः ॥ ३९ ॥**

अर्थ–जिस समय कोठेमे कफ दुष्ट हो और पित्त हाथपैरोमे दुष्ट होकर रहे तब शरीर शीतल हो और हाथपैर उष्ण होयँ ॥

### शीतपूर्वज्वरके लक्षण।

**त्वक्स्थौश्लेष्मानिलौशीतमादौजनयतोज्वरम् ॥**
**तयोः प्रशांतयोः पित्तमन्ते दाहं करोति च ॥ ४० ॥**

अर्थ–कफ और वात ये दुष्ट होकर त्वचामे प्राप्त हो अर्थात् रसधातुका आश्रय कर प्रथम शीतज्वर उत्पन्न करते हैं और जब इनका वेग शांत होता है तब पिछाडी पित्त दाह करे हैं ॥

### दाहपूर्वज्वरके लक्षण।

**करोत्यादौतथापित्तंत्वक्स्थंदाहमतीवच ॥**
**तस्मिन्प्रशान्ते त्वितरौकुरुतःशीतमंततः ॥ ४१ ॥**

द्वावेतौदाहशीतादिज्वरौ संसर्गजौस्मृतौ ॥
दाहपूर्वस्तयोःकष्टःसुखसाध्यतमोऽपरः ॥ ४२ ॥

अर्थ—इसी प्रकार पहिले पित्त, रसगत होकर अत्यंत दाह करे है, पीछे उसका वेग शांत हुएपर वात कफ ये शीत करते हैं। दाहपूर्वक और शीतपूर्वक ये दोनो ज्वर संसर्ग अर्थात् त्रिदोषोंके संबंधसे होते हैं ऐसे ऋषियोंने कहा है उनमें दाहपूर्वक ज्वर दुःखप्रद और कृच्छ्रसाध्य है और शीतपूर्व ज्वर सुखसाध्य है ॥

सप्तधातुगत ज्वरोंके लक्षण, रसगत ज्वरके लक्षण ।

गुरुताहृदयोत्क्लेशःसदनंछर्द्यरोचकौ ॥
रसस्थेतुज्वरेलिंगंदैन्यं चास्योपजायते ॥ ४३ ॥

अर्थ—रसधातुमें स्थितज्वर होय तौ देह भारी, दोषोंको हृदयमें स्थित होनेसे उपस्थित वमनसी मालूम हो, ग्लानि, ओकारी, अन्नमें अरुचि और दैन्य कहिये मनमें खेद ये चिह्न होते हैं ॥

रक्तगतज्वरके लक्षण ।

रक्तनिष्ठीवनंदाहोमोहश्छर्दनविभ्रमौ ॥
प्रलापःपिडिकातृष्णारक्तप्राप्तेज्वरेनृणाम् ॥ ४४ ॥

अर्थ—रुधिरका गिरना, दाह, मोह, वमन, भ्रम, अनर्थ बोलना, देहमें फुन्सी, प्यास ये लक्षण रक्तगतज्वरके होनेसे होते हैं ॥

मांसगतज्वरके लक्षण ।

पिंडिकोद्वेष्टनंतृष्णासृष्टमूत्रपुरीषता ॥
ऊष्मान्तर्दाहविक्षेपौग्लानिःस्यान्मांसगेज्वरे ॥ ४५ ॥

अर्थ—जानुके नीचे पीडियोंमें दंड आदिके लगनेकीसी पीडा, प्यास, मल मूत्रका निकलना, गरमी, अन्तर्दाह, हाथ पैरोंका इधर उधर पटकना और ग्लानि ये लक्षण जब मांसमें ज्वर पहुंचजाय है तब होते हैं ॥

मेदोगतज्वरके लक्षण ।

भृशंस्वेदस्तृषामूर्च्छाप्रलापश्छर्दिरेवच ॥
दौर्गन्ध्यारोचकौग्लानिर्मेदःस्थेचासहिष्णुता ॥ ४६ ॥

अर्थ—अत्यंत पसीनेका आना, प्यास, मूर्च्छा, प्रलाप, वमन, देहमें दुर्गंध, अन्नमें अरुचि, ग्लानि और वेदना न सही जाय ये लक्षण मेदोगत ज्वरमें होते हैं ॥

अस्थिगत ज्वरके लक्षण ।

भेदोऽस्थ्नांकूजनंश्वासोविरेकश्छर्दिरेवच ॥
विक्षेपणंचगात्राणामेतदस्थिगतेज्वरे ॥ ४७ ॥

अर्थ—हाड फूटना तथा हाडोका गूजना, श्वास, दस्तका होना, वमन, हाथ पैरका चलना ये अस्थिगत ज्वरके लक्षण है ॥

मज्जागत ज्वरके लक्षण ।

तमःप्रवेशनंहिक्काकासःशैत्यंवमिस्तथा ॥
अन्तर्दाहोमहाश्वासोमर्मच्छेदश्चमज्जगे ॥ ४८ ॥

अर्थ—अंधेरा आना, हिचकी, खॉसी, शीत लगे, वमन, अन्तर्दाह, महाश्वास अर्थात् जो श्वासके निदानमे कहेगे और मर्म मे पीडा यह मर्म शब्द इस जगह हृदयवाचक है अर्थात् हृदयमें पीडा हो ये मज्जागत ज्वरके लक्षण है ॥

शुक्रगत ज्वरके लक्षण ।

मरणंप्राप्नुयात्तत्रशुक्रस्थानगतेज्वरे ॥
शेफसःस्तब्धतामोक्षःशुक्रस्यचाविशेषतः ॥ ४९ ॥

अर्थ—रसादि धातुगत ज्वर शुक्रस्थानमे पहुचनेसे रोगीका मरण होताहै इस ज्वरमे लिंगका जकड़जाना और शुक्रका विशेप छुटना और सुश्रुतादिक आचार्य कहते है कि रक्तादि पदार्थोका थोडा थोडा स्राव हो ॥

प्राकृत और वैकृत ज्वरके लक्षण ।

वर्षाशरद्वसंतेषुवाताद्यैःप्राकृतःक्रमात् ॥
वैकृतोऽन्यःसुदुःसाध्यःप्राकृतश्चानिलोद्भवः ॥ ५० ॥

अर्थ—वर्षाऋतु शरदृतु और वसंतऋतु इनके मध्यमे वातादिकके क्रमसे जो ज्वर होय वह प्राकृतज्वर कहाता है जैसे वर्षाकालमे वातज्वर शरत्कालमे पित्तज्वर और वसंतकालमे कफज्वर इससे विपरीत जो ज्वर हो उसको वैकृतज्वर कहते है जैसे वर्षाकालमे पैत्तिक शरदृतुमे श्लैष्मिक और वसंतऋतुमें वातिक यह वैकृत ज्वर दु.साध्य है अर्थात् प्राकृत ज्वर सुखसाध्य है और वातजन्य प्राकृत ज्वर यह भी दुःसाध्य है और रोगोमे प्राकृतत्व दुःसाध्य है परन्तु ज्वरमे व्याधिस्वभाव करके सुखसाध्यत्व कहा है ॥

---

१ यदुक्तम्—प्राकृतः सुखसाध्यस्तु वसंतशरदुद्भवः । २ ज्वरेतुल्यर्तुदोषत्व प्रमेहे तुल्यदूष्यता.। रक्तगुल्मे पुराणत्व सुखसाध्यस्य लक्षणम् ॥

प्राकृतज्वरोंकी चिकित्साके निमित्त उत्पत्तिक्रम कहते हैं।

**वर्षासुमारुतोदुष्टः पित्तश्लेष्मान्वितोज्वरम् ॥ कुर्याच्चपित्तंश-रदितस्यचानुबलःकफः ॥ ५१ ॥ तत्प्रकृत्याविसर्गाच्चतत्रनान-शनाद्भयम् ॥ कफोवसन्तेतमपिवातपित्तंभवेदनु ॥ ५२ ॥**

अर्थ—ग्रीष्मऋतुमे संचित हुआ वायु वर्षाकालमे कुपित हो पित्त कफ युक्त हो ज्वरको प्रगट करे है उसीप्रकार वर्षाकालमे संचित हुआ पित्त शरदऋतुमे दुष्ट होकर ज्वरको उत्पन्न करे है इसको कफका अनुबंध होता है। उस ज्वरमे कफ पित्तके स्वभाव करके और विसर्ग काल करके लंघन करनेसे भय नहीं होय। तैसेही हेमंतकालमे संचित भया कफ वसंतकालमे ज्वर उत्पन्न करे है तिसके पिछाडी वात पित्त सहायक होते है॥

**कालेयथास्वंसर्वेषांप्रवृत्तिर्वृद्धिरेववा ॥**
**निदानोक्तानुपशयोविपरीतोपशायिता ॥ ५३ ॥**

अर्थ—वातादिकोकी यथायोग्य अपने कालमे उत्पत्ति और वृद्धि होवे है अथवा उत्पत्ति नित्य ज्वरकी और वृद्धि विषमज्वरकी होतीहै जैसे कालमे ये दोष विशेष जाननेके लक्षण है उसी प्रकार उपशय और अनुपशय भी रोग जाननेके कारण है। सो इसप्रकार जानना निदानत्व करके जो आहार विहार कहे हैं उनके सेवन करनेको अनुपशय कहिये दुःखउत्पत्ति होती है और दोषोके विपरीत जो आहार विहार उन्होसे उपशायिता कहिये सुखकी उत्पत्ति होय हे॥

**अंतर्दाहोऽधिकातृष्णाप्रलापःश्वसनंभ्रमः ॥ संध्यस्थिशूलम-स्वेदोदोषवर्चोविनिग्रहः ॥ ५४ ॥ अंतर्वेगस्यलिंगानिज्वरस्यै-तानिलक्षयेत् ॥ संतापोऽभ्यधिकोबाह्यस्तृष्णादीनांचमार्दवम् ॥ ५५ ॥ बहिर्वेगस्यलिंगानिसुखसाध्यत्वमुच्यते ॥**

अर्थ—पिछाडी जो ज्वर कहे है उन्होमे सम्प्राप्तिके भेदसे कोई एक ज्वर अंतर्वेग होता है ओर कोई बहिर्वेग होता है तिन दोनोके लक्षण कहते है, अंतर्दाह, अतितृषा, बडबडाना, श्वास, भ्रम, संधि ओर हाड इनमे पीडा, पसीना न आवे, वायु और मलका बाहर न निकलना ये अंतर्वेग ज्वरके लक्षण जानने॥

---

१ अनुबलयथा—स्वतंत्रस्यकस्यचिद्राज्ञो गजरथतुरगपुरुषादिबलवतो वैरिभिःसह युध्यमानस्य पश्चादन्य-बल तच्छक्तेरनुबलोपबृंहणार्थमागच्छति एवं स्वतंत्रस्य पित्तस्य ज्वरं कुर्वतो बलोपबृंहणं शरदि कफः करोति, तयोः पित्तश्लेष्मणोः प्रकृत्या स्वभावेन तत्कृतयोर्ज्वरयोरनशनाल्लंघनाद्भय न भवतीति। वर्षा शरद और हेमंत ये विसर्ग काल हैं इनमे चन्द्रमाका बल रहे है इनमे प्राणोका बल बढे हैं। और शिशिर वसन्त ग्रीष्म ये आदान काल हैं इनमे सूर्यको बल अधिक होता है इसीसे प्राणोका बल क्षीण होताहै।

शरीरके वाहर संताप अधिक होवे, तृष्णादिक लक्षण थोडे होवें, ये बहिर्वेगज्वरके लक्षण हैं यह ज्वर सुखसाध्य है इस ज्वरके सुखसाध्य कहनेसे अतर्वेगज्वर कृच्छ्रसाध्य और असाध्य है यह सूचना करी ॥

**लालाप्रसेकहृल्लासहृदयाशुद्ध्यरोचकाः ॥ तंद्रालस्याविपाका-स्यवैरस्यंगुरुगात्रता ॥ ५६ ॥ क्षुन्नाशोबहुमूत्रत्वंस्तब्धताच-लवाञ्ज्वरः ॥ आमज्वरस्यलिंगानिनदद्यात्तत्रभेषजम् ॥ ५७ ॥ भेषजंह्यामदोषस्यभूयोजनयातिज्वरम् ॥ शोधनंशमनीयंचक-रोतिविषमज्वरम् ॥ ५८ ॥**

अर्थ—चिकित्सा करनेके निमित्त आम पच्यमान और निराम ज्वरके लक्षण कहते हैं, ग्यारका गिरना, खालीओकारीका आना, हृदयमे जडत्व, अरुचि, तन्द्रा आलकस अन्नका परिपाक न होना, मुखको स्वाद जाता रहे, देह भारी, भूखका नाश, बारंबार मूतना, देहका जकडना, देहमे बलवान् ज्वर हो ये अपक्व ज्वरके लक्षण जानने, इस ज्वरमे वैद्य औषधि न दे अपक्व ज्वरमें औषधि देनेसे ज्वरकी वृद्धि होती है और शोधन तथा शमन औषध देनेसे विषमज्वरको करे है ॥

ज्वरके दश उपद्रव।

**श्वासोमूर्च्छाऽरुचिस्तृष्णाछर्द्यतीसारविड्ग्रहाः ॥
हिक्काकासांऽगदाहाश्चज्वरस्योपद्रवादश ॥ ५९ ॥**

अर्थ—भावप्रकाश के मतसे ज्वरके दश उपद्रवोको कहते हैं, श्वास, मूर्च्छा, अरुचि, प्यास, वमन, अतिसार, मलका रुकना, हिचकी, खॉसी, देहमे दाह ये ज्वरकेदश उपद्रव हैं ॥

पच्यमानज्वरके लक्षण।

**ज्वरवेगोऽधिकातृष्णाप्रलापःश्वसनंभ्रमः ॥
मलप्रवृत्तिरुत्क्लेशःपच्यमानस्यलक्षणम् ॥ ६० ॥**

अर्थ—ज्वरका वेग, अधिक प्यास, प्रलाप, श्वास, भ्रम, मलकी प्रवृत्ति उपस्थित, वमनसी मालूम होय ये पच्यमानज्वरके लक्षण है ॥

पक्वज्वर किंवा निरामज्वरके लक्षण।

**क्षुत्क्षामतालघुत्वंचगात्राणांज्वरमार्दवम् ॥
दोषप्रवृत्तिरुत्साहोनिरामज्वरलक्षणम् ॥ ६१ ॥**

अर्थ—भूखका लगना, देहका कृश होना, अगोका हलकापना, मन्दज्वरका आना, अधोवायु की प्रवृत्ति होना, मनमें उत्साहका होना, ये निरामज्वरके लक्षण जानने ॥

ग्रन्थान्तरसे जीर्णज्वरके लक्षण ।

त्रिसप्ताहव्यतीतेषुज्वरोयस्तनुतांगतः ॥
प्लीहाग्निसादंकुरुतेसजीर्णज्वरउच्यते ॥ ६२ ॥

अर्थ-२१ दिवस व्यतीत होनेपर जो ज्वर बारीकहो देहमे रहे जिससे प्लीहा अर्थात् तापतिल्ली रोग और मंदाग्नि होवे उसको जीर्णज्वर कहते हैं ॥

साध्यज्वरके लक्षण ।

बलवत्स्वल्पदोषेषुज्वरः साध्योऽनुपद्रवः ॥

अर्थ-बलवान् पुरुषके थोडे दोषयुक्त और श्वास आदि उपद्रव करके रहित जो ज्वरहो वह साध्य जानना ॥

असाध्यज्वरके लक्षण ।

हेतुभिर्बहुभिर्जातोबालीभिर्बहुलक्षणः ॥
ज्वरःप्राणान्तकृद्यश्चशीघ्रमिंद्रियनाशनः ॥ ६३ ॥

अर्थ-जो ज्वर बहुत प्रवल कारणोसे उत्पन्न भया हो ओर जिसमे सम्पूर्ण लक्षण मिलतेहो वह ज्वर प्राणोका हरण करनेवाला जानना और जो ज्वर प्रगट होते ही चिकित्सा करते २ इन्द्रियोकी शक्ति नष्ट करदे अर्थात् अधा वहिरा इत्यादि वह भी ज्वर असाध्य जानना ॥

ज्वरःक्षीणस्यशूनस्यगंभीरोदैर्घरात्रिकः ॥
असाध्योबलवान्यश्चकेशसीमंतकृज्ज्वरः ॥ ६४ ॥

अर्थ-जो पुरुष ज्वरसे क्षीण पडगयाहो अथवा सूजन जिसके देहमे आगईहो वह ज्वर असाध्यहै ओर जिसके ज्वर धातुके भीतर हो अथवा अतर्वेगज्वर अथवा जिसमे वातादि दोषोका निश्चय न होसके और बहुत दिनतक रहनेवाला ज्वर असाध्य होता है और ज्वर बलवान् हो तथा जिसमे रोगी अपने हाथसे केशो (बालो) की सीमत आदि रचना करे वह ज्वर असाध्य है ॥

गंभीरज्वरके लक्षण ।

गंभीरस्तुज्वरोज्ञेयोह्यंतर्दाहेनतृष्णया ॥
आनद्धत्वेनचात्यर्थंश्वासकासोद्गमेनच ॥ ६५ ॥

अर्थ-अतर्दाह, प्यास, दोष अर्थात् विरुद्ध दोषके बढनेसे, मल के रुकनेसे तथा श्वास खाँसीके उत्पन्न होनेसे गंभीर ज्वर जानना ॥

दूसरे असाध्यज्वरके लक्षण ।

**आरंभाद्विषमोयस्ययस्यवादैर्घरात्रिकः ॥ क्षीणस्यचातिरूक्षस्यगंभीरोहंतिमानवम् ॥ ६६ ॥ विसंज्ञस्ताम्यतेयस्तुशेतेनिपतितोपिवा ॥ शीतार्दितोंतरुष्णश्चज्वरेणाम्रियतेनरः ॥ ६७ ॥**

**अर्थ**—जो ज्वर प्रगट होते ही विषम पडजाय और जो ज्वर बहुत दिनसे आयाकरे और क्षीण तथा अतिरूक्ष देहवाले पुरुषके जो गम्भीर ज्वर हो वह मृत्यु कारक होता है और जो बेहोश होकर मोहको प्राप्त हो तथा गिरकर जिससे उठा न जाय पड़ाही रहे अथवा बाहरी शीतलगे और देहके भीतर दाह हो ऐसे ज्वरवाला पुरुष मरजावे ॥

और असाध्य लक्षण ।

**योहृष्टरोमारक्ताक्षोहृदिसंघातशूलवान्॥ वक्त्रेणचैवोच्छ्वसितितंज्वरोहंतिमानवम्॥ ६८ ॥ हिक्काश्वासतृषायुक्तंमूढंविभ्रांतलोचनम्॥ संततोच्छ्वासिनंक्षीणंनरंक्षपयतिज्वरः ॥ ६९ ॥ हतप्रभेन्द्रियंक्षामसरोचकनिपीडितम् ॥ गंभीरतीक्ष्णवेगार्त्तं ज्वरितंपरिवर्जयेत् ॥ ७० ॥**

**अर्थ**—जिसके देहमे रोमा खडे रहे, लाल नेत्र हो, हृदयमे गॉठ होनेसे जैसी पीडा हो वैसा हो और **संघात** इस पदका यह अर्थ करते हैं कि नानाप्रकारका शूल हो, मुखके द्वारा श्वास ले वह ज्वर, रोगी मनुष्यको मारडाले ॥

हिचकी श्वास प्यास इनकरके व्याप्त हो, मोहयुक्त हो चलायमान नेत्र हो, निरंतर श्वासले ऐसे लक्षणयुक्त मनुष्यको ज्वर मारडालता है ॥

इन्द्रियोकी शक्ति नष्ट होनेसे और शरीरकी काति निस्तेज होनेसे अथवा इन्द्रिय (नाक कान नेत्र) ये नष्ट होजावे, देह कृश होजावे, अरुचिसे अत्यत पीडित हो **"अरोचकनिपीडितम्"** इस जगह **जैज्जट** ने दो पाठ लिखे है एक तो **"दुरात्मानमुपद्रुतम्"** इसका अर्थ यह है कि, दुष्ट अत करण होवे और उपद्रवयुक्त होवे। दूसरा पाठ यह है कि **"दुरात्मभिरुपद्रुतम्"** अर्थात् राक्षसादिकरके युक्तहो तथा अतिघोर अतर्वेग करके परिपीडित हो ऐसे ज्वरवान् पुरुषको वैद्य छोडदेवे। इसी जगह कई एक टीकाकारोने जो असाध्य लक्षण लिखे है सो **आतंकदर्पण** तथा **मधुकोश** टीकासे लिखेह वे सब **वाग्भट** और **हारीत** के कालज्ञान देखनेसे निश्चय होजायँगे सो देखलेवे इस जगह हम ग्रथ बढनेके भयसे नही लिखते ॥

ज्वरमुक्तिके पूर्वरूप ।

**दाहःस्वेदोभ्रमस्तृष्णाकंपोविड्भिदसंज्ञिता ॥**
**कूजनंचातिवैगंध्यमाकृतिर्ज्वरमोक्षणे ॥ ७१ ॥**

**अर्थ**–दाह, पसीना, भ्रम, प्यास, कप, मलका पतला होना, संज्ञाका नाश होना, गूजे, देहमे अत्यंत दुर्गंध आवे ये लक्षण ज्वर छोडता है तव होते है *शंका*–क्यो जी दोप ( वात पित्त कफ ) नाशके विना रोगकी निवृत्ति होय नही और जव दोप क्षीण होगये तो उक्त दाहादिलक्षण कैसे करते हे ; *उत्तर–*इसका कारण यह है कि कोई एक वस्तुका ऐसा स्वभाव है कि क्षीण होनेके समयमे अपनी शक्तिको दिखाती हे जैसे दीपकमे तेल नहीं रहे और बुझनेको होताहै तव एकसंग पहिली अपेक्षा अत्यत वलनेलगे है और थोडी देर वलकर शात होजाता है ऐसे ही जव दोप शात होनेको होते है तब अपनी शक्ति दाहादिकोंको दिखाते है । अथवा **दूसराउत्तर** यह है कि जैसे वदर वृक्षकी डाली को हिलायकर दूसरे स्थानपर चलाजाताहै परतु वह वृक्षकी डाली बहुत देरपर्यत हिला करती हे इसी प्रकार ज्वर गयेपर भी उसके असरसे दाहादिक रहते है यह लक्षण दाहसे आदिले त्रिदोप ज्वरके शात होनेके समय होते है और सव ज्वरोमे नही होते और ज्वरमें केवल पसीने ही आते है यह **भालुकि** आचार्यका मत है ॥

ज्वरमुक्तिके लक्षण ।

**स्वेदोलघुत्वंशिरसःकंडूःपाकोमुखस्यच ॥**
**क्षवथुश्चान्नकांक्षाचज्वरमुक्तस्यलक्षणम् ॥ ७२ ॥**

**अर्थ**--पसीने आवे, देह हलका हो, मस्तकमे खुजली चले, मुखका पाक अर्थात् होठोमे पपडी पड़जाय, छीक आवे, भोजन करनेकी इच्छा हो ये लक्षण ज्वर मुक्तके है ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकाया ज्वरनिदान समाप्तम् ।

---

# इंग्रेजी मतानुसार ज्वरनिदान ।

ज्वरको इंग्रेजीमें ( Fever. ) फीवर कहते हैं उसकी उत्पत्ति ।

१ शरदी ।

शरदी पडनेसे मनुष्यका सब देह रोमाच वद्ध होजावे तव पसीनेका निकलना रुकजाय इस हेतुसे देहका जो अवगुन सो देहके वाहर नही निकले इसीसे देह हलका नही होय और वही देहका अवगुन ज्वररोगको प्रगट करताहै इस ज्वरको सामान्य ज्वर कहते है । अथवा देह अति-गरमीसे पीडित होय उस समय किसी कारणसे शीतल करे तो शरदी होती हे अथवा किसी

अतिपरिश्रम करनेसे मनुष्यके देहसे पसीने निकले उस समय हवामे बैठ अथवा हवामे शयन करनेसे शरदी होती है अथवा रातमे मैदानमे सोनेसे अथवा रातमें शीतलपवनके लगनेसे पसीना नहीं निकले इस हेतुसे शरदी होय अथवा गीला कपडा ओढकर बैठनेसे वा सोनेसे शरदी होय है इन कारणोसे शरदी होय वह शरदी अनेक प्रकारके ज्वरोकी उत्पत्ति करे है ॥

## २ मन्दवायु ।

जिस समय पृथ्वीमे वर्षाका अथवा और प्रकार जल सूखे उसमे घास पत्ता सडजावे तब इनसे मन्द वायु अथवा वाष्प उत्पन्न होय तिसके द्वारा अनेक प्रकारके ज्वर प्रगट होवे विशेषकरके आमज्वरकी अधिक उत्पत्ति होय इसीसे जलाशयस्थान तलाव आदि और झील खाल इनस्थानोमे मन्दवायु अधिक होताहे इससे नानाप्रकारके ज्वर प्रगट होय यह हवा सोताके जलसे उत्पन्न नहीं होय है किंतु जिस जगह थोडा जल होय जैसे तलैयाआदि उसमें घास लगनेसे जल पक्क होकर गन्धवायुको अधिक उत्पन्न करे हैं यह वायु दिनमे सूर्यकी किरणसे बहुत हलकी होकर ऊपरको उठे इसीसे यह बडा नुकसान करनेवाली होती है और सन्ध्या तथा रात्रिमे यह वायु शीतल होनेसे नीचे उतर सर्व साधारण मनुष्योको नुकसान करनेवाली होती है और हवाओसे यह हवा अधिक भारी होती है घरके किवाड लगानेसे यह हवा घरके भीतर कम जाती है इसीसे घरके किवाड देकर मसेरी जिसको पूर्वके लोग बहुधा रखते हैं यह कपडेकी बनी हुई होती है इसमे सोना चाहिये ॥

## ३ गरिष्ठभोजन ।

जो मनुष्य भारी द्रव्य भोजन करे तब उसके वह पचे नहीं और पेटमे पीडा करे उस पीडाके होनेसे ज्वर उत्पन्न होय विशेषकरके यह ज्वर बालकोके होता है ।

## अनेकप्रकारके ज्वरोंके लक्षण ।

नाडी और श्वास जल्दी चले, मस्तकमे पीडा होय, त्वचा शुष्क और गरम होय, प्रलाप होय अथवा न होय. पेशाब लाल उतरे, जीभ मलीन होय, शरीरमे सदा ज्वर रहा करे कभी कम होजाय कभी जियादह होजाय ॥

## कुंकुमज्वरके लक्षण ।

श्वास लेते समय मंद मद पीडा होय, खाँसी होय, कफ कुछ नीलेरंगका गिरे, ज्वर अल्प होय, वक्षस्थलमे पीडा होय, खाँसते समय श्वास जल्दीचले नाडी, कुछ कुछ थोडी और शीघ्र चले, त्वचा सदैव थोड़ी गरम रहे जिस समय रोगकी वृद्धि होय, श्वासके चलनेसे पीडा होय, उससे अधिक पीडा होय, इस रोगके आरम्भमे कफ नहीं निकले, किंतु दो तीन दिनके बाद कफ श्वेत निकल पडे उस रोगीका हल्दीके समान पीलावर्ण होय, कभी कभी जलके सदृश वर्ण होय इस रोगकी विशेषता होनेसे कफ पतला होजाय यह रोग अत्यंत बढकर पचनेको होय तब कसना शाकके समान रंगहो अथवा कालेरंगका और दुर्गंधयुक्त होय, बहुत शरदी पडनेसे इसकी उत्पत्ति होती है ॥

यकृत् वा कलेजाज्वरके लक्षण।

दहने पाँसूमे पीडा होय, शरीरमे थोडा ज्वर होय तथा आहारमे अरुचि होय, जीभमलीन, नेत्र पीले होयँ, मल मिट्टीके रगका अथवा सफेद तथा काला होय और कठिन, पेशाब लाल ॥

प्रसंगवशाज्ज्वरमुक्तलक्षणं ग्रन्थांतरे।

**देहोलघुर्व्यपगतक्लमसोहतापःपाकोमुखेकरणसौष्ठवमव्यथत्वम् ॥ स्वेदः क्षवः प्रकृतियोगिमनोऽन्नलिप्साकंडूश्चमूर्ध्निविगतज्वरलक्षणानि ॥ १ ॥**

पित्तज्वरमें अतिसार होता है तथा ज्वरको और अतिसारको अन्योन्य उपद्रव होनेसे ज्वरके अनन्तर अतिसार रोगको कहते हैं।

इति ज्वरनिदानम्।

## अतिसारनिदानम्।



**गुर्वतिस्निग्धतीक्ष्णोष्णद्रवस्थूलातिशीतलैः ॥ विरुद्धाध्यशनाजीर्णैर्विषमैश्चातिभोजनैः ॥ १ ॥ स्नेहाद्यैरतियुक्तैश्च मिथ्यायुक्तैर्विषैर्भयैः ॥ शोकदुष्टाम्बुमद्यातिपानैः सात्म्यर्तुपर्ययैः ॥ २ ॥ जलाभिरमणैर्वेगविघातैः क्रिमिदोषतः ॥ नृणांभवत्यतीसारो लक्षणं तस्य वक्ष्यते ॥ ३ ॥**

अर्थ—प्रमाणसे अधिक भोजन करनेसे अथवा स्वभावसे भारी पदार्थ, जैसे उडद आदिके खानेसे और अतिचिकनी अतितीखी अतिगरम अत्यंतपतली ओर अत्यतस्थूल अर्थात् जिसके अवयव कठिन हो जैसे लड्डू, घेवर, गूंझा इत्यादि, और अत्यत शीतल स्पर्शसे तथा वीर्यसे विरुद्ध जैसे क्षीर मत्स्य इत्यादिक, अध्यशन कहिये पूर्वदिनका भोजन परिपाक नही होय और उसपर भोजन करना, अन्नके विनापके, नित्य भोजनके समयको त्यागकर और समय थोड़ा वा बहुत, ऐसे

१ वातबलासलक्षण ग्रन्थान्तरे—बलासोवायुनायुक्तः शीतादिपडहोज्वरम्। जनयेन्नयनलावं इत्यादि.मधुरास्यताम् ॥१॥ २तदुक्तंचरके—भुक्तपूर्वान्नलेपेतुपुनरध्यशन मतम्। ३बहुस्तोकमकाले च तज्ज्ञेयविषमाशनम्।

भोजनोके करनेसे, स्नेह स्वेद आदि पचकर्मके अत्यत योगके करनेसे, वा थोडे योग करनेसे, स्थावरा-दिक दूषीविषके खानेसे, भयसे, सोच करनेसे, अतिदुष्ट जलके पीनेसे तथा अतिमद्यके पीनेसे, सात्म्य और ऋतुके पलटनेसे, जलमे अतिक्रीडा करनेसे, मल, मूत्र, आदि वेगोको रोकनेसे, अर्शरोगके उपद्रवसे, अथवा कृमिजनित वातादिकके कोपसे मनुष्योको अतिसार रोग होता है । इन सब रोगोंमे यह निदान यथासम्भव वातादिदोषोका जानना आगे अतिसारके लक्षण कहते है ॥

अतिसाररोगकी संप्राप्ति ।

**संशम्यापां धातुरग्निं प्रवृद्धो वर्चोमिश्रो वायुनाधः प्रणुन्नः ॥ सरत्ये-तातीवातिसारं तमाहुर्व्याधिं घोरं षड्विधं तं वदंति ॥ ४ ॥ एकै-कशः सर्वशश्चापिदोषैः शोकेनान्यः षष्ठआमेनचोक्तः ॥**

अर्थ–पूर्वोक्त कुपथ्यसे अत्यत दुष्ट हुए शरीरमे रस, जल, मूत्र, स्वेद, मेदा, कफ, पित्त, रुधिर इत्यादि जलरूप धातु, अग्निको मन्दकर और वही जल मलमिश्रित हो पवनका प्रेरित गुदाके मार्गसे वारबार नीचको वहुत उतरे तिसको अतिसार कहतेहै।यह भयकर अतिसाररोग ६ प्रकारका है १ वातका २ पित्तका ३ कफका ४ सन्निपातका ५ शोकका और ६ आमातिसार ऐसे छः प्रकारका अतिसार है । द्वद्वज अतिसारव्याधिस्वभावकरके नही होते चरकमे आमातिसार नही कहा । भय और शोकसे दो कहकर सख्या पूरी करी है । और आमातिसारको सन्निपातातिसारके अन्तर्गत कहा है । यहा माधवा-चार्यने भयातिसारकी वातज अतिसारमे गणना करी है ॥

अतिसारके पूर्वरूप ।

**हृन्नाभिपायूदरकुक्षितोदगात्रावसादानिलसन्निरोधाः ॥ विट्-संग आध्मानमथाविपाको भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि ॥ ५ ॥**

अर्थ--हृदय, नाभि, गुदा, पेट, कूख इनमे पीडा हो, शरीरमे फूटनी हो, गुदाका पवन रुकजाय, मलका अवरोध हो, अफरा हो और अन्नपचे नही ये लक्षण अतिसाररोगके पूर्वरूपके होते है ॥

वातातिसारके लक्षण ।

**अरुणं फेनिलं रूक्षमल्पमल्पंमुहुर्मुहुः ॥
शकृदामं सरुक्शब्दं मारुतेनातिसार्यते ॥ ६ ॥**

अर्थ–कुछ ललाईको लिये, झाग मिला तथा रूखा, थोडा थोडा, वारवार, आममिला हुआ दस्त उतरे और शूल चले तथा मल उतरतेसमय शब्द होवे तौ वातातिसार जानना ॥

पित्तातिसारके लक्षण ।

**पित्तात्पीतं नीलमालोहितं वा तृष्णा मूर्छा दाहपाकोपपन्नम् ॥**

अर्थ–पित्तसे पीला काला और धूसर रंगका मल उतरता है तथा तृष्णा मूर्च्छा और सम्पूर्ण शरीर तथागुदामे दाह होती है गुदापकजाती है, ये लक्षण पित्तातिसारके हैं ॥

कफातिसारके लक्षण ।

**शुक्लं सांद्रं सकफं श्लेष्मयुक्तं विस्रं शीतं हृष्टरोमा मनुष्यः ॥ ७ ॥**

अर्थ–कफातिसारवाले पुरुषका मल–सफेद, गाढा, चिकना, कफमिश्रित दुर्गंधयुक्त और शीतल उतरता है तथा रोम खडे होजाते हैं ये लक्षण कफातिसारके जानने ॥

सन्निपातातिसारके लक्षण ।

**वराहस्नेहमांसांबुसदृशं सर्वरूपिणम् ॥**
**कृच्छ्रसाध्यमतीसारं विद्याद्दोषत्रयोद्भवम् ॥ ८ ॥**

अर्थ–सूकरकी चरवीसदृश अथवा मांसके धोयेहुए पानीके सदृश और वातादि त्रिदोषोंके जो लक्षण कहे है उन लक्षणसयुक्त हो ऐसा यह त्रिदोषजनित अतिसार कष्टसाध्य जानना ॥

शोकातिसारके लक्षण ।

**तैस्तैर्भावैः शोचतोऽल्पाशनस्य बाष्पोष्मा वै वह्निमाविश्य जंतोः ॥**
**कोष्टं गत्वा क्षोभयेत्तस्य रक्तं तच्चाधस्तात्काकणंतीप्रकाशम् ॥ ९ ॥**
**निर्गच्छेद्वै विड्भिर्मिश्रं ह्यविड्वानिर्गंधं वा गंधवद्वातिसारः ॥**

अर्थ–जिस पुरुषके पुत्र, मित्र, स्त्री, धन, इनका नाश होजावे वह उसी उसी वस्तुका शोच करे इसीसे क्षुधा मन्द होनेसे ( धातुक्षय होय ) ऐसे प्राणीके वाष्प ( नेत्र नासा, गले आदिसे जो शोकद्वारा जल गिरना ) और उष्मा कहिये शोकजन्य देहतेज ये दोनो वाष्पोष्मा कोठेमे प्राप्तहो अग्निको मन्दकर रुधिरको कुपित करे तव यह रुधिर चिरमिटीके रगसदृश हुवा गुदाके मार्ग होकर मलयुक्त अथवा मलरहित निकले तथा गधयुक्त अथवा गधरहित दरत उतरे इसको शोकातिसार कहते हैं इसी प्रकार भयातिसारभी जान लेना ॥

शोकातिसारके कृच्छ्रसाध्यत्वलक्षण ।

**शोकोत्पन्नो दुश्चिकित्स्योऽतिमात्रं रोगो वैद्यैःकष्ट एष प्रदिष्टः१०**

अर्थ--शोकसे उत्पन्न हुवा जो आतिसार वह चिकित्सा करनेमे वहुत कठिन है कारण कि, शोकशाति हुए विना केवल औषधोंसे शाति नहीं होती इससे वैद्योंने यह कष्ट साध्य कहा है ॥

आमातिसारके लक्षण ।

**अन्नाजीर्णात्प्रद्रुताःक्षोभयंतः कोष्ठं दोषा धातुसंघान्मलाञ्च॥**
**नानावर्णं नैकशः सारयंति शूलोपेतं षष्ठमेनं वदन्ति ॥ ११ ॥**

अर्थ—अन्नके न पचनेसे दोष ( वात पित्त कफ ) अपने मार्गको छोडकर कोठेमे प्राप्त हो कोठेको दूषितकर रक्तादि धातु और पुरीषादि मलको वारंवार गुदाके मार्गसे बाहर निकाले और इसका रग अनेकप्रकारका होय तथा शूलयुक्त दस्त उतरे इसको छठा आमातिसार वैद्य कहते है । * शंका— * प्रथम कहि आये है कि अतिसार रोग छः प्रकारका होता है पुनः "षष्ठमेनंवदंति" यह पद क्यो धरा ? * उत्तर— * यह पद नियमके अर्थ माधवाचार्यने सुश्रुतके मतसे सग्रह किया है । हमारे मतमे छठा अतीसार आमज है भयसे उत्पन्न हुआ जो औरआचार्य मानते हैं वह हम नहीं मानते अतएव षष्ठमेनं पुन. कहा है क्योकि भयादि अतिसारोका वात पित्त कफ अतिसारोके अन्तर्गतत्व है ॥

आमके लक्षण ।

**संसृष्टमेभिर्दोषैस्तु न्यस्तमप्स्ववसीदति ॥**
**पुरीषं भृशदुर्गंधि पिच्छिलं चामसंज्ञितम् ॥ १२ ॥**

अर्थ—पूर्वकहे वातादिक अतिसारोके मिले हुए लक्षणसंयुक्त जो मल वह जलमें गेरनेसे डूब-जाता है, क्यो कि, आम वजनमें भारी है और उसमे बहुत दुर्गंध आती है तथा अत्यन्त गाढा होता हे उसकी आमसंज्ञा है ॥

अथ पक्वलक्षण ।

**एतान्येव तु लिंगानि विपरीतानि यस्य वै ॥**
**लाघवं च विशेषेण तस्य पक्वं विनिर्दिशेत् ॥ १३ ॥**

अर्थ—और ऊपरके श्लोकसे विपरीत लक्षण होवे अर्थात् शरीर हलका हो, तथा मल जलमें डूबे नहीं और दुर्गंधिरहित हो, ववूलारहित हो, उस रोगीका मल पक्व हुवा जाने ॥

असाध्यलक्षण ।

**पक्वजांबवसंकाशं यकृत्पिंडनिभं तनु ॥ घृततैलवसामज्जावे-शवारपयोदधि ॥ १४ ॥ मांसधावनतोयाभं कृष्णं नीलारुण-प्रभम् ॥ मेचकं कर्बुरं स्निग्धं चन्द्रकोपगतं घनम् ॥ १५ ॥ कुणपं मातुलुंगाभं दुर्गंधं कुथितं बहु॥तृष्णादाहाऽरुचिश्वासहि-**

---

१ यह पाठ सुश्रुतका है

क्वापार्श्वास्थिशूलिनम् ॥ १६ ॥ संमूर्च्छारतिसंमोहयुक्तं पक्कवलीगुदम् ॥ प्रलापयुक्तं च भिषग्वर्जयेदतिसारिणम् ॥ १७ ॥

अर्थ—पके जामुनके रंगसदृश काला और चिकना, तथा काला और लोहित रंग, पतला घृत तेल चरबी मज्जा वेशवार[1] दूध दही और मासके धोनेसे जैसा जल निकलेहै ऐसा रंग होय, काजलके रंगसमान अथवा नीलमिश्रित अरुण रंग अर्थात् पपैया पक्षीके पंखके रंगसमान अथवा खंजन पक्षीके वर्णसदृश तथा अनेक रंगका चिकना मोरकी चंद्रिकाके सदृश रंग, दृढ मुरदाकीसी दुर्गंध युक्त, मस्तककी मज्जाके समान गंधयुक्त, बुरीदुर्गंधके समान, प्यास दाह अरुचि श्वास हिचकी पसवाडोंके हाडोंमे पीडा, मनको मोह, और इन्द्रियोंको मोह अरति ये लक्षण होयँ तथा गुदाके ओंठोंका पकना, अनर्थ भाषण करे ऐसे अतिसारी रोगीको वैद्य छोड देवे ॥

दूसरे असाध्य लक्षण ।

असंवृतगुदंक्षीणंदुराध्मानमुपद्रुतम् ॥
गुदे पक्वेगतोष्माणमतिसारिणमुत्सृजेत् ॥ १८ ॥

अर्थ—जिसकी गुदाका दस्तके पीछाडी संकोच न होवे, क्षीण पुरुष, अत्यंत अफरायुक्त अथवा "दुरात्मानं" ऐसा भी पाठान्तरहै अर्थात् जिसकी इन्द्रिय वश न होवे तथा अतिसारके शोथादिक उपद्रवकरके युक्त और गुदाके स्थानमे पाककर्ता अर्थात् पकानेवाला पित्त विद्यमान होते हुए जिसकी देहमे गरमीसी नही दीखे अर्थात् देह शीतल हो अथवा जिसकी अग्नि नष्ट होजावे ऐसे अतिसारी रोगीको वैद्य त्याग देवे ॥

अतिसारके उपद्रव ।

शोथंशूलंज्वरंतृष्णां श्वासकासमरोचकम् ॥
छर्दिंमूर्च्छांचहिक्कांचदृष्ट्वातीसारिणंत्यजेत् ॥ १९ ॥

अर्थ—सूजन, शूल, ज्वर, तृषा, श्वास, खासी, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, हिचकी ऐसे लक्षण जिस रोगीमें होयँ उसको वैद्य छोड देवे ॥

असाध्य लक्षण ।

श्वासशूलपिपासार्त्तंक्षीणंज्वरेणपीडितम् ॥
विशेषेणनरंवृद्धमतिसारोविनाशयेत् ॥ २० ॥

---

१ वेशवार नाम मासमेंसे हड्डी निकाल और कूटकर दही दूध कालीमिरच डालकर जो पदार्थ बनाते हैं तत्सदृश रंग होय ।

अर्थ--श्वास, शूल, प्यास इनसे पीडित, क्षीण. ज्वरसे पीडित और वृद्ध मनुष्यके ये लक्षण होयँ तो यह अतिसार रोग मनुष्यको विनाश करे ॥

रक्तातिसारके लक्षण ।

पित्तकृन्तियदात्यर्थं द्रव्याण्यश्नातिपैत्तिके ॥
तदोपजायतेऽभीक्ष्णंरक्तातीसारउल्वणः ॥ २१ ॥

अर्थ--पित्तातिसारवाला पुरुष अथवा पित्तातिसार होनेवाला पुरुष जब पित्तकरनेवाली वस्तु अधिक और निरन्तर भोजन करे तब भयंकर रक्तातिसार प्रगट होता है । इसके लाल काले पीले आदि रंग वातादि दोषोंके दूषित होनेसे होते हैं ये भी पित्तातिसारके भेद हैं ।

प्रवाहिकाकी सम्प्राप्ति ।

वायुःप्रवृद्धोनिचितंवलासंनुदत्यधस्तादहिताशनस्य ॥
प्रवाहतोल्पंवहुशोमलाक्तं प्रवाहिकां ता प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥ २२ ॥

अर्थ--अपथ्य सेवन करनेवाले पुरुषके कुपित हुई जो वात सो संचित हुए कफको मलसयुक्त करके वारंवार गुदाके मार्गसे बाहर निकाले और मरोडाके साथ पीडा थोडा मल कईदफे निकले इसको प्रवाहिका कहते है । प्रवाहिका और अतिसार इन दोनोंका एक साधर्म्य है इसीसे अतिसार रोगमें प्रवाहिका कही हे । परन्तु अतिसारमे अनेक प्रकारके द्रव धातु निकलते हैं और प्रवाहिकामें केवल कफ निकलता है इतना भेद है। इसमें "निचितं बलासं" यह जो पद कहा अर्थात् कफसे मिलकर. सो यह केवल कफका तो उपलक्षण है अर्थात् कफसे कहनेसे पित्त और रुधिर भी जानना । भोजने इस रोगका नाम विदसी कहा है, पराशरऋषिने इसको अन्तरग्रंथी कहा है, हारीत ऋषिने निश्वारक कहा है, कोई आचार्य निर्वाहिका कहते हैं ॥

प्रवाहिकाके वातादि भेदकरके लक्षण ।

प्रवाहिका वातकृता सशूला पित्तात्सदाहा सकफा कफाच्च ॥ स शोणिता शोणितसंभवा च ताः स्नेहरूक्षप्रभवा मतास्तु ॥ तासा-मतीसारवदादिशेच्च लिंगं क्रमं चामविपकतांच ॥ २३ ॥

अर्थ--वातकी प्रवाहिकामे शूल होताहै, पित्तको दाहयुक्त, कफकी कफयुक्त और रक्तसे रक्त युक्त होती है । यह चिकने और रूखे पदार्थ भोजन करनेसे होती है अर्थात् चिकने पदार्थसे कफकी, रूखे पदार्थसे वातकी, तु--शब्द करके तीक्ष्ण और खट्टे पदार्थसे क्रमसे पित्तकी और रुधिरकी होती है ऐसे जानना । इस प्रवाहिकाके लक्षणक्रम आम और पक्वावस्था यह अतिसार निदानके सदृश जानना ॥

अतिसारचलागया होय उसके लक्षण।

यस्योच्चारंविनामूत्रंसम्यग्वायुश्चगच्छति ॥
दीप्ताग्नेर्लघुकोष्ठस्यस्थितस्तस्योदरामयः ॥ २४ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यको मूत्र करते समय दस्त न होय और अपानवायु जिसकी शुद्ध निकले और अग्नि देदीप्यमान होवे, कोठा हलका होवे उस मनुष्यका अतिसार गया जानिये ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थदीपिकायामाथुरीभाषाटीकाया-मतिसाररोगः समाप्तः।

---

# अथ ग्रहणीनिदानम्।

ग्रहणीकी सम्प्राप्ति।

अतिसारेनिवृत्तेऽपिमन्दाग्नेरहिताशिनः ॥
भूयःसंदूषितोवह्निर्ग्रहणीमभिदूषयेत् ॥ १ ॥

अर्थ–पहले मनुष्यके अतिसार रोग होकर जातारहा होय फिर उस मनुष्यके कुपथ्य करनेसे मन्द हुई जो अग्नि पुरुषके उदरमे रहनेवाली जो पित्तधरानामक छठी कला जिसको ग्रहणी कहते हैं उसको बिगाड, अपिशब्द करके अतिसार न भया होय तो भी अपने कारणकरके पूर्वोक्त ग्रहणीको बिगाडकर ग्रहणीरोगको प्रगट करे यह सूचना करी। कोई आचार्य ऐसे कहते हैं कि, अतिसार न गया होय बीचमें ही ग्रहणीरोग होता है " मन्दाग्नि " इसपद करके यह सूचना करी कि, जिसपुरुषकी अग्नि तीक्ष्ण है वह कुपथ्य भी करे तथापि कुछ औगुण नहीं होय, अन्नको ग्रहण करे है इसीसे इसको ग्रहणी कहैं हैं इसीसे ग्रहणीके बिगडनेसे अन्नका परिपाक अच्छेप्रकार नहीं होय अर्थात् बारबार आममिश्रित मल गुदाके मार्गसे गिरता है ॥

ग्रहणीरोगकी सम्प्राप्तिपूर्वक सामान्य लक्षण।

एकैकशःसर्वशश्चदोषैरत्यर्थमूर्च्छितैः ॥ साादुष्टाबहुशोभुक्तमा-
ममेवविमुंचति ॥ २ ॥ पक्वंवासरुजंपूतिमुहुर्बद्धंमुहुर्द्रवम् ॥
ग्रहणीरोगमाहुस्तमायुर्वेदविदोजनाः ॥ ३ ॥

अर्थ–अत्यंत कुपित हुए पृथक् २ दोष ( वात, पित्त कफ ) और सर्वदोष मिलकर ग्रहणीको दुष्ट करैं सो ग्रहणी दुष्ट होकर भोजन किये हुए पदार्थको कच्चा अथवा पक्का गुदाके मार्ग होकर

निकाले और पीडा होय तथा उस मलमे दुर्गंध आवे, वादीसे पतला मल, और पित्तसे गाढा दस्त वारवार होवे और कभी कफसे पानीसरीखा अधोवायुयुक्त निकले इसको आयुर्वेदके जानने वाले वैद्य ग्रहणीरोग कहते हैं ॥

पूर्वरूप।

पूर्वरूपंतुतस्येदंतृष्णालस्यंबलक्षयः ॥
विदाहोन्नस्यपाकश्चचिरात्कायस्यगौरवम् ॥ ४ ॥

अर्थ—प्यास, आलकस, बलनाश, अन्नका दाह. ( पाकके समय अग्निसी जले ) और अन्नका पाक देरमे होय, देह भारी होय, यह ग्रहणीरोगका पूर्वरूप है ॥

वातजग्रहणीका निदान।

कटुतिक्तकषायातिरूक्षसंदुष्टभोजनैः ॥ प्रमितानशनात्यध्ववेगनिग्रहमैथुनैः ॥ ५ ॥ मारुतः कुपितोवह्निंसंछाद्यकुरुतेगदान् ॥

अर्थ—कडुआ तीखा, कसैला, अतिरूखा और सयोगविरुद्ध ऐसे भोजनसे तथा थोडे भोजनसे, उपवाससे, बहुत चलनेसे, मलमूत्रादि वेगोके रोकनेसे, अत्यत मैथुनसे कुपित भई जो वात सो अग्निको दूषित कर रोगोको प्रगट करेहै ॥

वातजसंग्रणीका रूप।

तस्यान्नंपच्यतेदुःखंशुक्तपाकंखरांगता ॥ ६ ॥ कंठास्यशोषः क्षुत्तृष्णातिमिरंकर्णयोः स्वनः ॥ पार्श्वोरुवंक्षणग्रीवारुगभीक्ष्णं विषूचिका ॥ ७ ॥ हृत्पीडाकार्श्यदौर्बल्यंवैरस्यंपरिकर्त्तिका ॥ गृद्धिःसर्वरसानांचमनसःसदनंतथा ॥ ८ ॥ जीर्णेजीर्यतिचाध्मानंभुक्तेस्वास्थ्यमुपैतिच ॥ सवातगुल्महृद्रोगप्लीहाशंकी चमानवः ॥ ९ ॥ चिराद्दुःखंद्रवंशुष्कंतन्वामंशब्दफेनवत् ॥ पुनःपुनःसृजेद्वर्चःकासश्वासार्दितोऽनिलात् ॥ १० ॥

अर्थ—उस वातग्रहणीवालेके अन्न दुःखसे पचे, अन्नका पाक खट्टा होय, अगमे कर्कशता, ( यह वायुको त्वचाके चिकनापन शोखनेसे होता है ) कठ मुखका सूखना, भूख, प्यास लगे, मन्द दृष्टि, कानोमे शब्द हो, पसवाडे जॉघ पेडू और कधामे पीडा होवे, विषूचिका हो, अर्थात् दोनो द्वारसे कच्चे अन्नकी प्रवृत्ति होवे, हृदय दूखे, देह दुबला होजाय, जीभका स्वाद जातारहे, गुदामे

१ यथाह चरके—"अग्न्यधिष्ठान मन्नस्य ग्रहणाद् ग्रहणी मता। नाभेरुपरि साह्यग्निबलोपस्तम्भ बृंहिता ॥ अपक्क धारयत्यन्नं पक्कं सृजति चान्यथः ॥"

करतनीकीसी पीडा हो, मीठेसे आदि ले सर्व रसोके खानेकी इच्छा, मनमे ग्लानि, अन्न पचने उपरांत पेटका फूलना, भोजन करनेसे स्वस्थता, पेटमे गोला, हृद्रोग, तापतिल्लीकीसी शंका वातके योगसे खांसी श्वाससे पीडित, बहुत देरमे वडे कष्टसे कभी पतला कभी गाढा थोडा शब्द और झाग मिला वारवार दस्त जाय ॥

## पित्तग्रहणीके लक्षण ।

कट्वजीर्णविदाह्यम्लक्षाराद्यैः पित्तमुल्वणम्॥आप्लावयद्धंत्यन-लंजलंतप्तमिवानलम् ॥ ११ ॥ सोऽजीर्णंनीलपीताभंपीताभ-स्सार्यतेद्रवम् ॥ सधूमोद्गारहृत्कंठदाहारुचितृडार्दितः ॥ १२ ॥

अर्थ—जो पुरुष कटु, अजीर्ण, मिरच आदि तीखी, दाहकारक ( वंश, करीलकी कोपल ) आदि, खट्टी, खारी ( ओंगा आदिका खार ) आदि शब्दसे नोनका गरम पदार्थ इन कारणोसे कुपित हुआ जो पित्त सो जठराग्निको ऐसे बुझाय देता है जैसे ततजल अग्निको शांत कर देता है और पित्तकी ग्रहणीसे पीली कान्तिवाला पुरुष कच्चा तथा नीले पीले रंगके मलको निकाले तथा धूमयुक्त डकार आवे, हृदय और कंठमे दाह होवे, अरुचि और प्यास करके पीडित होवे ये पित्तकी संग्रहणीके लक्षण है ॥

## कफसंग्रहणीकी उत्पत्ति ।

गुर्वतिस्निग्धशीतादिभोजनादतिभोजनात् ॥ भुक्तमात्रस्यच स्वप्नाद्धंत्यग्निंकुपितःकफः ॥ १३ ॥ तस्यान्नंपच्यतेदुःखंहृ-ल्लासच्छर्द्यरोचकाः ॥ आस्योपदेहमाधुर्यकासष्ठीवनपीनसाः ॥१४॥ हृदयंमन्यतेस्त्यानमुदरंस्तिमितंगुरु ॥ दुष्टोमधुरउद्गारः सदनंस्त्रीष्वहर्षणम् ॥१५॥ भिन्नामश्लेष्मसंसृष्टगुरुवर्चःप्रवर्त्त-नम् ॥ अकृशस्यापिदौर्वल्यमालस्यंचकफात्मके ॥ १६ ॥

अर्थ—भारी, अत्यंत चिकना, शीतल आदि पदार्थके खानेसे, अति भोजनसे तथा भोजन करके दिनमे सोनेसे इन कारणोसे कुपित हुआ कफ जठराग्निको शांत करे तव इसके खाया अन्न कष्टसे पचे, हृदयमे पीडा होय, वमन, अरुचि, मुखके कफसे लिपासा तथा मुखका मीठा रहना, खाँसी, कफ थूके, पीनस ( जुखाम ) होय, हृदय पानीसे भरासदृश होय, पेट भारी और जड हो, दुष्ट और मीठा डकार आवे, अग्नि शांत हो, स्त्रीरमणमे अरुचि, पतला आम कफ मिला और भारी ऐसा मल निकले, वल विन शरीर पुष्ट दीखे, आलस्य बहुत आवे ये कफकी ग्रहणीके लक्षण हैं ॥

---

१ पूत्यम्लोद्गार इत्यपि पाठ —दुर्गन्ध्युक्त डकार तथा खट्टी डकार आवे,

त्रिदोषकी ग्रहणीके लक्षण।

**पृथग्वातादिनिर्दिष्टहेतुलिंगसमागमे ॥**
**त्रिदोषंलक्षयेदेवंतेषांवक्ष्यामिभेषजम् ॥ १७ ॥**

अर्थ–वातादि तीनों दोपोके जो लक्षण कहआये हैं वे सब जिसमें मिलते होयँ उसको त्रिदोषकी ग्रहणी जानिये(“तेषां वक्ष्यामि भेषजम्” यह पद केवल पादपूरणार्थ लिखा है ॥

अथ संग्रहणी लक्षण।

**“अन्त्रकूजनमालस्यं दौर्बल्यं सदनं तथा। द्रवं शीतं घनं स्निग्धं सकटीवेदनं शकृत् ॥ १ ॥ आमं बहु सपैच्छिल्यं सशब्दं मन्दवेदनम्। पक्षान्मासान्दशाहाद्वा नित्यं वाप्यथ मुञ्चति ॥२॥ दिवाप्रकोपो भवति रात्रौ शान्ति व्रजेच्चसा। दुर्विज्ञेया दुश्चिकित्स्या चिरकालानुबंधिनी ॥ ३ ॥ सामवेदाभवातेन संग्रहग्रहणीमता।**

आन्तोमे शब्द होना, आलकस, दुर्वलता, शरीरमे पीडा तथा पतला ठंडा कुछ गाटा चिकना दस्त होवे दस्त होते समय कमरमें दर्द होवे। पन्द्रहदिन अथवा एक महीना अथवा दशदिनबाद हमेशा बहुत आम रेसादार शब्द सहित मन्द २ पीडासे निकले वहभी आम दिनमें आधिक निकले और रातमे शान्तिको प्राप्तहो। दु.खसे जानने योग्य दुःखसे चिकित्सा करने योग्य बहुत समयतक रहने वाली होवे ऋषियोने आम और वातसे सगृहीतको सग्रहणीकहाहे ॥

**स्वपतः पार्श्वयोः शूलं गलज्जलघटीध्वनिः ॥**
**तं वदन्ति घटीयंत्रमसाध्यं ग्रहणी गदम् ॥ ४ ॥**

सोते हुए मनुष्य दोनो पसवाडोंमे शूल तथा निगलते हुएकी जल चेष्टाके समान शब्द हो उस ग्रहणी रोगको घटी यत्र कहते हैं और वह असाध्य है” ॥

**दोषं सामं निरामञ्च विद्यादत्रातिसारवत् ॥ १८ ॥**

जैसे अतीसारमे मलका जलमें डूबने आदि लक्षणोसे आम और उसके विपरीत होनेसे निरामता यक्षत्) जानी जाती है उसीप्रकार ग्रहणी रोगमेभी जाननी चाहिये ॥

**लिङ्गैरसाध्यो ग्रहणी विकारोयैस्तैरतीसारगदोनसिध्येत् ॥**
**वृद्धस्यनूनंग्रहणी विकारो हत्वातनूमेव निवर्ततेच ॥ १९ ॥**

जिन पक्वजाम्बवसकाशमित्यादि लक्षणोसे अतीसार रोग असाध्य होजाताहे उनही लक्षणोसे ग्रहणी रोगभी असाध्य होजाताहे अर्थात् जो अतीसारके असाध्य लक्षणहे वे ही ग्रहणी रोगके असाध्य लक्षण समझने चाहियें। ओर वृद्ध मनुष्यका ग्रहणी रोगतो शरीरको नाशकरके ही दूर होता है॥

**बालके ग्रहणी साध्या यूनि कृच्छ्रा समीरिता ।**
**वृद्धे त्वसाध्या विज्ञेया मतं धन्वन्तरेरिदम् ॥ २० ॥**

बच्चेके हुआ ग्रहणी रोग साध्य होताहै और जवान पुरुषके ग्रहणी रोग कृच्छ् साध्य होताहै । और वृद्धके असाध्य जानना चाहिये यह धन्वन्तरिजीका मतहै ॥

डाक्टरीमतके अनुसार परीक्षा ।

आमसे मिल मल उतरे,दस्त होते समय गुदा शब्द करे ऐसे एक महीना अथवा अधिक दिवस पयन पीडा होय ॥

कारण ।

भारी द्रव्यके खानेसे अथवा देहके दुर्बल होनेसे मनुष्यके सग्रहणी रोग होताहै ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधुरीमाधवार्थदीपिकाभाषाटीकायां ग्रहणीरोगःसमाप्तः ।

---

# अतिसार ग्रहणी और अर्श इनका परस्पर सम्बन्ध है यासैं ग्रहणीरोगके पीछे अर्शरोग कहते हैं ।

---

संख्यारूपसम्प्राप्ति ।

**पृथग्दोषैः समस्तैश्चशोणितात्सहजानिच ॥**
**अर्शांसिषट्प्रकाराणिविद्याद्गुदवलित्रये ॥ १ ॥**

अर्थ–पृथक् पृथक् दोषोंसे ३ समस्तदोष मिलकर १ रुधिरसे १ और सहज १ ऐसे छः प्रकारका अर्श ( बवासीर ) रोग है यह रोग गुदाकी तीन वलीके भीतर होय गुदामे प्रवाहिणी विसर्जनी सम्वरणी यह तीन वली ( आँटे ) हैं ॥

---

१ मनुष्यकी गुदामें तीन आँटे हैं एकऊपर एक नीचे, एक बीचमे ऊपरके आँटेका नाम प्रवाहिनी है सो मल पवन आदिको बाहर काढे, बीचका आँटा मल पवनको बाहर पटकदे इसका नाम विसर्जनी है, तीसरा नीचेका आँटा मल पवन निकले पीछे ज्योंका त्यो गुदाको करदे तिसका नाम संवरणी है ।२गुदा साढेचार अंगुलकी होतीहै और गुदाके अवयव भूत तीनवली शंखके आवर्तकेसमान प्रवाहणी,विसर्जनी, संवरणी नामवाली उपर २ ही स्थितहैं उसमे गुदाका ओष्ठ आधा अंगुलका होताहै गुदोष्ठसे ऊपर प्रवाहिणी एक अंगुलकी और विसर्जनी डेढ अंगुलकी, और सम्वरणी भी डेढ अंगुलकी होतीहै इसीप्रकारसे गुदाका प्रमाण चार अंगुलका होताहै ॥

सम्प्राप्तिपूर्वक अर्शका रूप।

**दोषास्त्वङ्मांसमेदांसिसंदूष्यविविधाकृतीन् ॥**
**मांसांकुरानपानादौकुर्वन्त्यर्शांसितान्जगुः ॥ २ ॥**

अर्थ–वातादि दोष, त्वचा, मास और मेदा इनको और उस ठिकानेके रुधिरको दूषित कर अपान ( गुदा ) मे अनेकप्रकारकी आकृतिके मासके अकुर उत्पन्न करे अर्थात् मस्से प्रगट करे उसको ववासीर कहते है। आदिशब्दसे नाक, नेत्र, नाभिमे भी जानना, यह मत सुश्रुत का है कायचिकित्सक तो गुदामे जो होयहै उसीको ववासीर कहते है जो नासिका आदिमें होय उसको अधिमास कहतेहै क्योकि, नासिका आदिमे जो ववासीर होताहै उसमे पूर्वरूपके लक्षण नहीं मिलते है ॥

वातकी ववासीरके कारण।

**कषायकटुतिक्तानिरूक्षशीतलघूनिच ॥ प्रमिताल्पाशनंतीक्ष्णं मद्यंमैथुनसेवनम् ॥ ३ ॥ लंघनंदेशकालौचशीतौव्यायामकर्म्म च ॥ शोकोवातातपस्पर्शोहेतुर्वातार्शसांमतः ॥ ४ ॥**

अर्थ–कसैला, कडुवा, तीखा, रूखा, शीतल और अतिलघु ऐसे पदार्थोंके खानेसे तथा अति थोडा खानेसे, भोजनकालके उल्लघन करनेसे, तीव्र मद्यके पान करनेसे, अत्यंत मैथुन ( स्त्रीसग ) करनेसे, उपवास, शीतदेश और शीतकाल ( हेमतादि ऋतु ) दंड कसरतसे, शोकसे, हवा घाममे डोलनेसे ये वातकी ववासीर होनेके कारण हैं ॥

पित्तके ववासीरके कारण।

**कट्वम्ललवणोष्णानिव्यायामाग्न्यातपश्रमाः ॥ देशकालावशिशिरौक्रोधोमद्यमसूयनम् ॥ ५ ॥ विदाहितीक्ष्णमुष्णंचसर्वपानान्नभेषजम् ॥ पित्तोल्बणानांविज्ञेयःप्रकोपेहेतुरर्शसाम् ॥६॥**

अर्थ--तीखा, खट्टा, लवणका, गरम ऐसे पदार्थोंसे, दड कसरतसे, अग्निके समीप तथा घाममे रहनेसे, श्रम, गरमदेश ( मारवाड आदि ) और उष्णकाल अर्थात् ग्रीष्मऋतु, क्रोध, मद्यपान, परद्रव्य देखकर जलना, दाहकारक, तीखी, गरम वस्तुका पीना, अन्नका और गरम औषधिका सेवन ये सब पित्ताधिक ववासीरके कारण हैं ॥

कफकी ववासीरका कारण।

**मधुरस्निग्धशीतानिलवणाम्लगुरूणिच ॥ अव्यायामदिवास्वप्नशय्यासनसुखेरतिः ॥ ७ ॥ प्राग्वातसेवाशीतौचदेशकालावचिंतनम् ॥ श्लैष्मिकाणांसमुद्दिष्टमेतत्कारणमर्शसाम् ॥ ८ ॥**

अर्थ—मीठा, चिकना, शीतल, नमकीन, खट्टा, भारी ऐसे भोजनसे व्यायामके न करनेसे, दिनमें सोनेसे, सेज, गद्दी इनके सेवन करनेसे, पूर्वकी हवा खानेसे, शीतल देश, शीतकाल, चितारहित होनेसे ये कफकी ववासीर होनेके हेतु हैं ॥

द्वन्द्वजववासीरके कारण ।

हेतुलक्षणसंसर्गाद्विद्याद्द्वंद्वोल्वणानिच ॥

अर्थ--दो दो दोषोंके कारण और लक्षण मिलें तो द्वंद्वज ववासीर भई है ऐसे जाने ॥

त्रिदोषकी ववासीरके कारण ।

सर्वोहेतुस्त्रिदोषाणांसहजैर्लक्षणैःसमम्[1] ॥ ९ ॥

अर्थ—पृथक् वातादि ववासीरके जो कारण कहे हैं वे सर्व त्रिदोषकी ववासीरके कारण हैं और जो सहज अर्शके अर्थात् सहजववासीरके लक्षण, सो भी इसके लक्षण जानने ॥

वातकी ववासीरके लक्षण ।

गुदांकुरावह्वानिलाःशुष्काश्चिमिचिमान्विताः ॥ म्लानाःश्यावारुणाःस्तब्धाविशदाःपरुषाःखराः ॥ १० ॥ मिथोविसदृशावक्रास्तीक्ष्णाविस्फुटिताननाः ॥ बिंबीकर्कंधुखर्जूरकार्पासीफलसन्निभाः ॥ ११ ॥ केचित्कदंबपुष्पाभाःकेचित्सिद्धार्थकोपमाः ॥ शिरःपार्श्वांसकट्यूरुवंक्षणाभ्यधिकव्यथाः ॥ १२ ॥ क्षवथूद्गारविष्टंभहृद्ग्रहारोचकप्रदाः ॥ कासश्वासाग्निवैषम्यकर्णनादभ्रमावहाः ॥ १३ ॥ तैरार्तोग्रथितंस्तोकंसशब्दंसप्रवाहिकम् ॥ रुक्फेनपिच्छानुगतंविबद्धमुपवेश्यते ॥ १४ ॥ कृष्णत्वङ्नखविण्मूत्रनेत्रवक्त्रश्चजायते ॥ गुल्मप्लीहोदराष्ठीलासंभवस्ततएवच ॥ १५ ॥

---

[1] अथ सहजार्शोलक्षणम्—यथाहसुश्रुतः,—"दुर्दर्शनानि परुषारुणपाण्डूनि दारुणान्तर्मुखानितैरुपद्रुतः कृशोऽल्पभुक् शिरासततगात्रोऽल्पप्रजः क्षीणरेताः क्षामस्वरः क्रोधनोऽल्पाग्निर्घ्राणशिरोऽक्षिश्रवणरोगवान् सततमन्त्रकूजनाटोपहृदयोपलेपारोचक प्रभृतिभिः पीड्यते" । दुःखसे देखने योग्य ( बहुत छोटे होनेसे ) अथवा भयंकर दर्शन और खरखरे लाल पीले वर्णवाले कठिन और भीतर मुखवाले मस्सोंके उपद्रवसे युक्त मनुष्य दुबला थोडा भोजन करनेवाला, शिराओंसे व्याप्त शरीर ( नस सब शरीरपर दीखे ) अल्प सन्तान, क्षीण शुक्र बैठी हुई आवाज, क्रोध मदाग्नि नाक शिर नेत्र कानोंके रोगवाला निरन्तर आन्तोंमें शब्द अफारा हृदयका भारीपन अरुचि आदिसे पीडित होताहै ।

अर्थ—वाताधिक्यसे गुदाके अंकुर सूखे (स्रावरहित) चिमचिम पीडायुक्त, मुरझाये हुए, काले, लाल, टेढे, विशद, कर्कश, खरदरे, एकसे न होयँ, बांके, तीखे, फटे मुखके, कंदूरी, बेर, खजूर, कपासके फलसदृश होयँ, कोई कदंबके फूलसमान हो, कोई सरसोंके सदृश हो, शिर, पसवाडे, कन्धा, कमर, जांघ, पेडू इनमे अधिक पीडा हो, छींक, डकार, दस्तका न होना हृदय पकडासा मालूम हो, अरुचि, खाँसी, श्वास, अग्निका विषम होना अर्थात् कभी अन्न पचे कभी नहीं पचे, कानोंमे शब्द होय, भ्रम होय उस बवासीरकरके पीडित मनुष्यके पत्थरके समान, थोडा, शब्दयुक्त और वातकी प्रवाहिकाके लक्षणसंयुक्त शूल, झाग, चिकटा इन लक्षणसंयुक्त होले होले दस्त होय उस मनुष्यकी त्वचाका रंग तथा नख, विष्ठा, मूत्र, नेत्र, मुख ये काले होयँ, गोला नापतिल्ली, (उदररोग) अष्ठीला (वातकी गाँठ) इन रोगोंके उपद्रव इस वातकी बवासीरमे होते हैं ॥

पित्तकी बवासीरके लक्षण ।

**पित्तोत्तरानीलमुखारक्तपीतासितप्रभाः ॥ तन्वस्रस्राविणो विस्रास्तनवोमृदवःश्लथाः ॥ १६ ॥ शुकजिह्वायकृत्खंडजलौकावसक्त्रसन्निभाः ॥ दाहपाकज्वरस्वेदतृण्मूर्च्छारुचिमोहदाः ॥ १७ ॥ सोष्माणोद्रवनीलोष्णपीतरक्तामवर्चसः ॥ यवमध्याहरित्पीतहारिद्रत्वङ्नखादयः ॥ १८ ॥**

अर्थ—मस्सोंका मुख नीला, लाल, पीला और सफेदाई लिये होवे, उन मस्सोमेंसे महीनधारसे रुधिर चुचाय और रुधिरकी वास आवे, महीन और कोमल तथा शिथिल हो और उनका आकार तोताकी जीभ कलेजा और जोकके मुखके समान हो और देहमे दाह हो गुदाका पकना, ज्वर, पसीना, प्यास, मूर्च्छा, अरुचि और मोह ये होवे और हाथके स्पर्श करनेसे गरम मालूम होवें और जिसके मलका द्रव नीला, पीला, लाल, गरम, आमसयुक्त होय जवके समान बीचमे मोटे हो और जिसकी त्वचा, नख, नेत्रादिक हरे पीले हरतालके समान और हल्दीके समान होवे ये लक्षण पित्ताधिक बवासीरके हैं ॥

कफकी बवासीरके लक्षण ।

**श्लेष्मोल्बणामहामूलाघनामन्दरुजःसिताः ॥ उत्सन्नोपचिताः स्निग्धाःस्तब्धावृत्तगुरुस्थिराः ॥ १९ ॥ पिच्छिलाःस्तिमिताः**

---

१ सामान्यतोबवासीरोरीहीखूनीद्विधाभवेत् । खूनीह्यपिच्चवातस्यविनाकोपनसभवेत् ॥ १ ॥ इति यवनशास्त्रे ।

श्लक्ष्णाःकंडाढ्याः स्पर्शनप्रियाः ॥ करीरपनसास्थ्याभास्तथा-गोस्तनसन्निभाः ॥ २० ॥ वंक्षणानाहिनःपायुबस्तिनाभिविकर्षिणः ॥ सश्वासकासहृल्लासप्रसेकारुचिपीनसाः ॥ २१ ॥ मेहकृच्छ्रशिरोजाड्यशिशिरज्वरकारिणः ॥ क्लैब्याग्निमार्दवच्छर्दिरामप्रायविकारदाः ॥ २२ ॥ वसाभाः सकफप्रायपुरीषाः सप्रवाहिकाः ॥ नस्रवंतिनभिद्यन्तेपाण्डुस्निग्धत्वगादयः ॥ २३ ॥

अर्थ—कफकी बवासीरके लक्षण ये हैं जैसे कि, गुदाके मस्से महामूल ( दूर धातुके प्रति जानेवाले ) एक दूसरेसे मिले हुए मद पीडाके करनेवाले, सफेद, लंबे, मोटे, चिकने, करडे, गोल, भारी, स्थिर, गाढे, कफसे लिपटे, मणिके समान स्वच्छ, खुजली बहुत होय और प्यारी लगे, करील कटहर इनके काँटेके समान होयँ दाखके सदृश होयँ पेडूमे अफरा करनेवाले, गुदा, मूत्रस्थान और नाभि इनमें पीडा करनेवाले, श्वास, खाँसी, खालीओकी, लारका टपकना, अरुचि, पीनस इनको करनेवाले, प्रमेह, मूत्रकृच्छ, मस्तकका भारी होना, शीतज्वर, नपुंसकपना, अग्निका मन्द होना, वमन और आम जिनमे बहुत ऐसे अतिसार, सग्रहणीआदि रोगके करने वाले, वसा ( चर्वी ) और कफ मिला दस्त होवे, प्रवाहिका उत्पन्न करनेवाले और मस्सोमेसे रुधिर न निकले, गाढा मल होनेसे भी मस्से न फूटे और शरीरका रंग पीला और चिकना होय ये कफकी बवासीरके लक्षण हैं ॥

सन्निपातके और सहज बवासीरके लक्षण।

सर्वैःसर्वात्मकान्याहुर्लक्षणैःसहजानिच ॥

अर्थ--जो पूर्ववातादिक तीनो दोषोकी बवासीरोके लक्षण कहे सो सब लक्षण मिलतेहो उसको सन्निपातकी बवासीर जाननी और ये ही लक्षण सहज बवासीरके हैं ॥

रक्तार्शके लक्षण।

रक्तोल्वणागुदेकीलाः पित्ताकृतिसमन्विताः ॥ २४ ॥ वटप्ररोहसदृशागुंजाविद्रुमसन्निभाः ॥ तेऽत्यर्थदुष्टमुष्णंचगाढविट्कप्रपीडिताः ॥ २५ ॥ स्रवंतिसहसारक्तंतस्यचातिप्रवृत्तितः ॥ भेकाभः पीड्यतेदुःखैः शोणितक्षयसंभवैः ॥ २६ ॥ हीनवर्णबलोत्साहोहतौजाः कलुषेन्द्रियः ॥ विट्श्यावंकठिनं रूक्षमधोवायुर्नगच्छति ॥ २७ ॥

अर्थ–गुदाके मस्सोंका रग चिरमिठीके समान होवे अथवा वटके अकुरसे हो और पित्तकी, ववासीरके लक्षण जिसमे मिलतेहो। मूँगाके सदृशहो और दस्त कठिन उतरनेसे मस्से दवे तव उन मस्सोमेसे दुष्ट और गरमागरम रुधिर पड़े और रुधिरके वहुत पड़नेसे वर्षाऋतुके मेडकके समान पीलारग होजाय, रुधिरके निकलनेसे जो प्रगट त्वचाका कठोरपना, नाडीका शिथिलपना और खट्टीवस्तु तथा शीतकी इच्छा इत्यादि दुःख तिनसे पीडित होय, हीनवर्ण, वल, उत्साह पराक्रमका नाश होय, सम्पूर्ण इन्द्रियोका व्याकुल होना, उसका काला,कठिन और रूखा ऐसा मल होय अपानवायु सरे नही, ये लक्षण रुधिरकी ववासीरके जानने चाहिये॥

अव इसी रक्तार्शनिदानके वातादिभेदकरके लक्षण।

तनुचारुणवर्णंचफेनिलंचासृगर्शसाम्॥ कट्यूरुगुदशूलंचदौर्वल्यंयदिचाधिकम्॥तत्रानुबंधोवातस्यहेतुर्यदिचरूक्षणम्॥२८॥

अर्थ–ववासीरमेसे रुधिर थोड़ा, अरुणवर्ण और झागसयुक्त निकले और कमर जाँघ और गुदा इनमे दर्द होवे। यदि दुर्वलता विशेप होजावे और उसमे कोई रूक्षहेतु पहुँचाहोवे तो इस रक्तार्श के वातका सम्बन्ध है ऐसे जानना॥

कफसंबंधके लक्षण।

शिथिलंश्वेतपीतंचविट्स्निग्धंगुरुशीतलम्॥ यद्यर्शसंघनंचासृक्तंतुमत्पांडुपिच्छिलम्॥२९॥ गुदंसपिच्छंस्तिमितंगुरुस्निग्धंचकारणम्॥ श्लेष्मानुबंधोविज्ञेयस्तत्ररक्तार्शसांबुधैः॥३०॥

अर्थ–जिसमेसे शिथिल, सफेद पीला चिकना, भारी और शीतल ऐसा दस्त होवे और जिसका रुधिर गाढा ततुयुक्त, पीला तथा वबूलेयुक्त, निकले और गुदा वबूलेयुक्त गीली होवे और भारी चिकनी ऐसे कोई कारण होवे तो उस रक्तार्शको कफका सम्बन्ध जानना॥* शंका-* क्यो जी पित्तके अनुवन्धकी ववसीर,क्यों नही कही* उत्तर--*रक्तके और पित्तके प्राय.करके समान लक्षण होनेसे नही कहे,क्योकि पहले२४ के श्लोकमे कहि आये है कि "पित्ताकृतिसमन्विताः" इति॥

ववासीरका पूर्वरूप।

विष्टंभोऽन्नस्यदौर्बल्यंकुक्षेराटोपएवच॥ कार्श्यमुद्गारबाहुल्यंसक्थिसादोऽल्पविट्कता॥३१॥ ग्रहणीदोषपांडर्वोराशंकाचोदरस्यच॥ पूर्वरूपाणिनिर्दिष्टान्यर्शसामभिवृद्धये॥३२॥

अर्थ–अन्नका परिपाक अच्छीतरह होय नही, अन्न कूखमे रहे, देहमे दुर्वलता हो, कूखमे आफरा हो, अग्निमद होजावे, डकार वहुत आवे, जघामे पीडा, थोडा दस्त उतरे,सग्रहणी और पाडुरोगे

की भ्रांति होना, क्यों कि, इनके लक्षण मिलते है ओर उदररोगकीशंका होना ये लक्षण होवें तब जनना कि, इस पुरुषके बवासीर रोग होवेगा ॥

-- शंका-- केवल गुदामे दोषेके कोपसे बवासीर रोग होय हे फिर सब देहमे कृशत्व और काला होजाना कैसे होताहै ॥

उत्तर ।

पंचात्मामारुतःपित्तंकफोगुदवलित्रये॥ सर्वएवप्रकुप्यंतिगुदजानांसमुद्भवे ॥३३॥ तस्मादर्शांसिदुःखानिबहुव्याधिकराणिच॥ सर्वदेहोपतापीनिप्रायः कृच्छ्रतमानिच ॥ ३४॥

अर्थ-गुदाके तीन ऑटोमे बवासीरके मस्से प्रगट होनेसे पाँच प्रकारकी वायु पाच प्रकारका पित्त पाच प्रकारका कफ ये सब दोष कुपित होते हैं ॥

प्राण, अपान, समान, उदान ओर व्यान ये पाँच प्रकारकी वायु,हृदय, गुदा, नाभि, कंठ और सर्व देह ये इनके क्रमसे स्थान है तथा अलोचक, रंजक, साधक, पाचक, भ्राजक इन भेदोसे पित्त पाच प्रकारका है । इनके स्थान आलोचक नेत्रोमे रंजक, यकृत् और प्लीहोमे साधक, हृदयमे पाचक,पक्वाशय ओर आमाशयमे भ्राजक त्वचामे रहता है ) ऐसे ही कफ भी अवलम्बक, क्लेदक, बोधक, तर्पक और श्लेष्मक इन पाच भेदके क्रमकरके हृदय,आमाशय, जीभ, मस्तक और सन्धि इन पाचों स्थानोमे रहता है इस प्रकार सर्व दोष अपने अपने पाच पाच स्वरूपोसे कुपित होते है, इसमे यह रोग ( बावासीर बहुत दुःखकारक और अनेकप्रकारकी व्याधि ( उदर और अग्निमाद्य इत्यादि उपद्रव ) कर्ता सर्व देहको क्लेशदायक और विशेषकरके कृच्छ्रसाध्य तथा असाध्य जानना ॥

सुखसाध्यके लक्षण ।

बाह्यायांतुवलौजातान्येकदोषोल्बणानिच ॥
अर्शांसिसुखसाध्यानिनचिरोत्पतितानिच ॥ ३५ ॥

अर्थ-बाहरके ऑटेमे भई हो, एक दोषोल्बण हो और जिसको एक वर्ष व्यतीत न भया हो ऐसी बवासीर सुखसाध्य है ॥

कृच्छ्रसाध्य के लक्षण ।

द्वंद्वजानिद्वितीयायांवलौयान्याश्रितानिच ॥
कृच्छ्रसाध्यानितान्याहुःपरिसंवत्सराणिच ॥ ३६ ॥

अर्थ--दो दोषोसे प्रगट भई हो और दूसरी वली अर्थात् ऑटेमे होय और जिसको एक वर्ष व्यतीत होगया हो ऐसी बवासीरके मस्से कृच्छ्रसाध्य होते है और जो बाहरकी वलीमे द्विदोषोल्बण होय और एक दोषोल्बण दूसरी वली ( दूसरे ऑटे ) मे होवे तो यहभी कृच्छ्रसाध्य जानना ॥

असाध्यके लक्षण।

सहजानित्रिदोषाणियानिचाभ्यंतरावलिम् ॥
जायंतेऽर्शांसिसंश्रित्यतान्यसाध्यानिनिर्दिशेत्॥ ३७ ॥

अर्थ–सहज कहिये जन्म होनेके समयसे जो होय अथवा तीन दोषोंसे प्रगट भई हो और जो तीसरा अतका आँटा है उसमें भईहो सो बवाशीर असाध्य जानना ॥

याप्यलक्षण।

शेषत्वादायुषस्तानिचतुःपादसमन्विते ॥
याप्यंतेदीप्तकायाग्नौप्रत्याख्येयान्यतोऽन्यथा ॥ ३८ ॥

अर्थ–यदि असाध्य बवासीर होय और उस रोगीकी आयुष्य बाकी होय और चतुःपाद सम्पत्ति ( वैद्य, औषध, परिचारक और रोगी ये जैसे चाहिये वैसे ) होवें और रोगीकी जठराग्नि प्रदीप्त होवे तौ रोगी याप्य जानना। और इससे विपरीत होवे तो रोगीको वैद्य छोड देवे। [प्रसंगवशसे रोगी, वैद्य, औषध और सेवकके लक्षण कहते हैं ] ॥

वैद्योव्याध्युपसृष्टश्चभेषजंपरिचारकः ॥
एतेपादाश्चिकित्सायाःकर्मसाधनहेतवः ॥ ३९ ॥

अर्थ--वैद्य, रोगी, औषध और सेवक ये कर्मसाधनहेतु चिकित्साके पाद हैं ॥

तत्रादौ वैद्यलक्षण।

तत्त्वाधिगतशास्त्रार्थोदृष्टकर्मास्वयंकृती ॥ लघुहस्तःशुचिःशूरः सज्जोपस्कृतभेषजः ॥ ४० ॥ प्रत्युत्पन्नमतिर्धीमान्व्यवसायी प्रियंवदः ॥ सत्यधर्मपरोयश्चवैद्यईदृक्प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

अर्थ--गुरुसे भलेप्रकार शास्त्रको पढाहो और दूसरे वृद्ध वैद्यकी चिकित्सा अर्थात् इलाज जिसने देखा हो और आप चिकित्सा करनेमें चतुर हो तथा सिद्धहस्त अर्थात् जिस रोगीका इलाज करे सो शीघ्र अच्छा होजावे, पवित्र रहे, शूर हो श्रेष्ठ औषधि चन्द्रोदय आदि रसादिक सामग्री जिसके समीप रहा करें, तत्काल जिसकी बुद्धि स्फुरणवाली होय, बुद्धिमान्, संसारके व्यवहारको जाननेवाला हो, प्रियवचन बोलनेवाला, सत्य और धर्मका आचरण करनेवाला ऐसा वैद्य प्रशंसाके योग्य होता है ॥

निषिद्धवैद्यके लक्षण।

कुचैलःकर्कशःस्तब्धःकुग्रामीस्वयमागतः ॥
पंचवैद्यानपूज्यन्तेधन्वन्तरिसमाअपि ॥ ४२ ॥

अर्थ-मैले वस्त्रवाला, बुरा बोलनेवाला, अभिमानी, व्यवहारमें न समझै और जो बिन बुलाये आवे ये पांच वैद्य श्रीधन्वंतरिके समान भी हों तो पूजने योग्य नहीं हैं ॥

रोगीके लक्षण ।

आयुष्मान्सत्त्ववान्साध्योद्रव्यवानात्मवानपि ॥
उच्यतेऽव्याधितःपादोवैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥ ४३ ॥

अर्थ-आयुवाला, बलयुक्त, साध्य, द्रव्यवान्, ज्ञानी, वैद्यका आज्ञाकारी और आस्तिक ऐसा रोगी होना चाहिये ॥

उत्तम औषधके लक्षण ।

प्रशस्तदेशसंभूतंप्रशस्तेहनिचोद्धृतम् ॥
अल्पमात्रंबहुगुणंगंधवर्णरसान्वितम् ॥ ४४ ॥

अर्थ-उत्तम स्थानमें प्रगट भई होय और शुभ दिनमें उसको उखाड़ी होय, थोडी मात्रा देनेसे बहुत गुण करे, दुर्गंधरहित, उत्तम स्वरूप और रसयुक्त होय सो औषध उत्तम है ॥

दुष्ट औषधके लक्षण ।

वल्मीककुत्सितानूपश्मशानोषरमार्गजाः ॥
जंतुवह्निहिमव्याप्तानौषध्यःकार्यसाधकाः ॥ ४५ ॥

अर्थ-इतने स्थानकी औषधें कार्यकरनेवाली नहीं होती हैं बॉबीकी, खोटी धरतीकी, जलके समीपकी, श्मशानकी, ऊपरकी, जहां रेहू चूना निकलता होय तहांकी और रास्तेकी, कीडोंकी खाई, अग्निसे जरी भई, जाडेकी मारी ऐसी औषधें कार्य करनेवाली नहीं होती हैं ॥

अथ दूतके लक्षण ।

स्निग्धोऽजुगुप्सुर्बलवान्युक्तोव्याधितरक्षणे ॥
वैद्यवाक्यकृदश्रांतःपादः परिचरःस्मृतः ॥ ४६ ॥

अर्थ-नवीन अवस्थाका, बलवान् रोगीकी रक्षा करनेमें तत्पर होवे, वैद्यके वचनका करनेवाला होवे, आलस्यरहित ऐसा परिचारक अर्थात् दूत होय इन पूर्वोक्त को चतुष्पादसम्पत्ति कहते हैं सो यह आयुशेषके विना नहीं मिलते ॥

अथ उपद्रवसे असाध्यत्व कहते हैं ।

हस्तेपादेगुदेनाभ्यांमुखेवृषणयोस्तथा ॥
शोथोहृत्पार्श्वशूलंचतस्यासाध्योऽर्शसोहितः ॥ ४७ ॥

अर्थ–जिसके हाथ, पैर, गुदा, नाभि, मुख और अंडकोश इनमे सूजनहो हृदय और पसवाडे दूखे वह रोगी असाध्य जानना ॥

हृत्पार्श्वशूलंसंमोहश्छर्दिरंगस्यरुग्ज्वरः ॥
तृष्णागुदस्यपाकश्चनिहन्युर्गुदजातुरम् ॥ ४८ ॥

अर्थ–हृदय और पसवाडोमे दर्द होय, इन्द्रिय और मन इनमे मोह होय, वमन, अंगोंमे पीडा, ज्वर, प्यास, गुदाका पकना अर्थात् गुदाके ऊपर पीले फोडे ये लक्षण होनेसे बवासीरवाला रोगी असाध्य जानना ॥

तृष्णारोचकशूलार्त्तमतिप्रसृतशोणितम् ॥
शोथातिसारसंयुक्तमर्शांसिक्षपयंतिहि ॥ ४९ ॥

अर्थ–प्यास, अरुचि, शूल इनसे पीडित, जिसके अत्यत रुधिर वहे और सूजन अतिसार ये होयँ उस रोगीका बवासीर नाश करदेता हैं ॥

मेढ्रादिष्वपिवक्ष्यंतेयथास्वंनाभिजान्यपि ॥
गंडूपदास्यरूपाणिपिच्छिलानिमृदूनिच ॥ ५० ॥

अर्थ–मेढ्र कहिये लिंग, आदिशब्दकरके नाक कान इत्यादि स्थानोमे दोपभेदकरके बवासीर होती है सो आगे कहेगे । उसी प्रकार नाभिस्थानमे भी अर्शरोग होता है वह केंचुकराके मुखके समान गाढी और नरम होय है ॥

चर्मकीलकी समाप्ति ।

व्यानोगृहीत्वाश्लेष्माणंकरोत्यर्शस्त्वचोबहिः ॥
कीलोपमंस्थिरखरंचर्मकीलंतुतद्विदुः ॥ ५१ ॥

अर्थ–व्यानवायु कफको लेकर त्वचामे कीलके सदश स्थिर और खरदरी ऐसी बवासीरकोकरे उसको चर्मकीलक कहते हे " त्वचो बहिः " इसके कहनेसे गुदा होठका त्याग कहा ॥

वातादिभेदकरके उसके लक्षण ।

वातेनतोदपारुष्येपित्तादतिसरक्तता ॥
श्लेष्मणास्निग्धताचास्यग्रथितत्वंसवर्णता ॥ ५२ ॥

अर्थ–वातसे सूईके चुभानेसे जैसी पीडा होती है ऐसी पीडाहो, पित्तसे कठोरता, कफसे काला और कुछ लाल तथा चिकनी गाँठके समान देहके वर्णके समान वर्ण होवे ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायामर्शोरोगः समाप्त ।

# अर्शरोगसे मन्दाग्नि होतीहै इसीसे मन्दाग्निरोगको कहैं हैं।



**मन्दस्तीक्ष्णोऽथविषमःसमश्चेतिचतुर्विधः॥**
**कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः॥ १॥**

अर्थ--मनुष्यके कफकी प्रकृतिसे मदाग्नि, पित्तकीसे तीक्ष्णाग्नि, वातकी प्रकृतिसे विषमाग्नि तथा वात, पित्त, कफ इनके समान होनेसे समाग्नि होवे है। ऐसे अग्नि चार प्रकारकी हैं इसमे नन्दाग्निको दुर्जय होनेसे प्रथम कही ओर जाठरशब्द कहनेसे धातुकी अग्निका त्याग जानना॥

अजीर्णरोग।

**विषमोवातजान्रोगांस्तीक्ष्णःपित्तनिमित्तजान्॥**
**करोत्यग्निस्तथामन्दोविकारान्कफसंभवान्॥ २॥**

अर्थ—विषमाग्नि वातजन्य ८० रोगोमेसे किसी रोगको प्रगट करे और सामान्य ज्वरा-तिसारादिकको प्रगट करे, तीक्ष्णाग्नि पित्तके ४० रोगोमेसे किसी रोगको प्रगट करे उसी प्रकार मन्दाग्नि कफजन्य २० रोगोमेसे किसी रोगको पैदा कर आलस्यादिकोको उत्पन्न करती है॥

समाग्न्यादिकोंके लक्षण।

**समासमाग्नेरशितामात्रासम्यग्विपच्यते॥ स्वल्पापिनैवम-न्दाग्नेर्विषमाग्नेस्तुदेहिनः॥ ३॥ कदाचित्पच्यतेसम्यक्कदा-चिन्नविपच्यते॥ मात्रातिमात्राप्यशितासुखंयस्यविपच्यते॥ ४॥ तीक्ष्णाग्निरितितंविद्यात्समाग्निःश्रेष्ठउच्यते॥**

अर्थ--समाग्निवाले पुरुषके यथोचित आहार भलेप्रकार पाचन होता है और मन्दाग्निवाले पुरुषके थोडाभी आहार यथार्थ नही पचता और विषमाग्निवाले मनुष्यके कभी अच्छी तरहसे अन्न पचे और कभी नही पचे और बहुत भोजन करा भी जिसके सुखपूर्वक पचजावे उसको तीक्ष्णाग्नि कहते है। इन चारोप्रकारकी अग्निमे समाग्नि उत्तम है। तीक्ष्णाग्निके कहनेसे भस्मकका ग्रहण नही करना चाहिये क्यो कि, अत्यत तीक्ष्णाग्निको भस्मक कहते हैं उसके लक्षण चरकमे कहे है॥

यथा।

नेरक्षीणकफेपित्तंकुपितंमारुतानुगम् ॥ ५ ॥ सोष्मणापाचकस्थानेबलमग्नेःप्रयच्छति॥तदालब्ध्वबलोदेहंरूक्षयेत्सानिलोऽनलः ॥ ६ ॥ अभिभूयपचत्यन्नंतैक्ष्ण्यादाशुमुहुर्मुहुः ॥ पक्त्वान्नंसततोधातूञ्छोणितादीन्पचत्यपि ॥ ७ ॥ ततोदौर्बल्यमातंकम्मृत्युंचोपनयेत्परम् ॥ भुक्तेऽन्नेलभतेशांतिं जीर्णमात्रेप्रताम्यति ॥ तृट्कासदाहमोहाःस्युर्व्याधयोऽत्यग्निसंभवाः ॥ ८ ॥

अर्थ–क्षीणकफवाले पुरुषके कफ कुपित हो वायुसे मिलकर उष्माके साथ पाचकस्थानमे जाकर अग्निको बल देवे, तब जठराग्नि वातकी सहायता पाकर प्रबल होकर देहको रूखा करदेवे और उसके जोरसे बारबार अन्नको पचावे। अन्नको पचाय पीछे रुधिरआदि धातुओंको पचावे रुधिरआदिके पचनेसे देहमे दुर्बलताका रोग और मृत्युको मनुष्य प्राप्त होवे जब अन्नको खावे तब तौ शाति होजाय और जब अन्न पचजाय तब मूर्च्छित होय प्यास, खॉखी, दाह, मोह, ( कुछ सुध न रहै ) ये रोग अत्यत अग्निसे होते है॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायामग्निमाद्यनिदानम्।

---

# अथ अजीर्णनिदानम्।

अग्निमाद्य और अजीर्ण इनका परस्पर कारण है इसीसे अग्निमाद्यके पीछे अजीर्णनिदानको कहते है।

आमंविदग्धंविष्टब्धंकफपित्तानिलैस्त्रिभिः ॥ अजीर्णंकेचिदिच्छंतिचतुर्थं[१]रसशेषतः ॥ १ ॥ अजीर्णंपंचमंकेचिन्निर्दोषंदिनपाकिच ॥ वदंतिषष्ठंचाजीर्णंप्राकृतंप्रतिवासरम् ॥ २ ॥

---

१ शंका–आमादिक तीनो अजीर्ण और रसशेषमे क्याभेद है। उत्तर–आम, विदग्ध, विष्टब्ध येतीनो अजीर्ण, अन्नसे उत्पन्न होतेहैं। और रसशेष अजीर्ण, आहारके रससे उत्पन्न होता है।

अर्थ–मनुष्यके कफसे आम, पित्तसे विदग्ध, वातसे विष्टब्ध ऐसे तीन प्रकारका अजीर्णरोग होता है। और जो भोजन करा सो पक्व होय नहीं रस शेष रहे सो रसशेषसे चतुर्थ अजीर्ण होय है। और रात्रिदिनमें जो आहार पचे और जिसमे आफरा, हडफूटन कुछ न होय यह पाचवा अजीर्ण किसीके मनसे है। और जो नित्य ही स्वाभाविक अजीर्ण रहे अर्थात् विकृतिजन्य न होय उसको छठा अजीर्ण कहते हैं। इस अजीर्णके पचानेके अर्थ सुश्रुतमें वामपार्श्वशयनादिक उपाय कहे है सो करने चाहिये॥

**भुक्त्वाशतपदंगच्छेद्वामपार्श्वेनसंविशेत्॥ शब्दरूपरसस्पर्श-गंधाश्चमनसःप्रियान्॥ भुक्तवानुपसेवेततेनान्नंसाधुतिष्ठति॥३॥**

अर्थ–भोजनकरे पीछे सौ पैंड डोलना, बाईकरवट शयन करना, अपने मनको जो प्रिय शब्द, रूप, रस, स्पर्श, सुगंध उनको सेवन करना इस प्रकार करनेसे अन्न भले प्रकारपचे है॥

अजीर्णके कारण।

**अत्यंबुपानाद्विषमाशनाच्चसंधारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च॥**
**कालेपिसात्म्यंलघुचापिभुक्तमन्नंनपाकंभजतेनरस्य॥ ४॥**
**ईर्ष्याभयक्रोधपरिप्लुतेनलुब्धेनशुग्दैन्यनिपीडितेन॥**
**प्रद्वेषयुक्तेनचसेव्यमानमन्नंनसम्यक्परिपाकमेति॥ ५॥**

अर्थ–बहुत जलपीनेसे, भोजनके समयको छोड पीछे भोजन करनेसे, मल, मूत्र आदि वेगोके रोकनेसे, दिनमे सोनेसे, रातमे जागनेसे इन कारणोसे भोजनके समय यदि लघु और स्निग्ध गरम आदिगुण युक्त भी हितकारी पदार्थ खाय तौ भी अन्न अच्छी रीतिसे नही पचे ये देहके कारण कहे॥ अब अजीर्णके कारण जो मनसे सम्बध रखते है उनको कहते हैं, ईर्ष्या कहिये परद्रव्यको न देखसकना, डरना, क्रोध करना, इन कारणोसे युक्त तथा लोभ, शोक, दीनतासे पीडित इन कारणोमे और मत्सरता करना इन कारणोसे मनुष्यके भोजन करा हुवा अन्न भलेप्रकार पचता नहीं है॥

आमादिक अजीर्णोंके लक्षण।

**तत्रामेगुरुतोत्क्लेदःशोथोगंडाक्षिकूटगः॥**
**उद्गारश्चयथाभुक्तमविदग्धःप्रवर्त्तते॥ ६॥**

अर्थ–उन चारो अजीर्णोमे प्रथम आमाजीर्णके लक्षण कहते है, पेट और अग भारी हो, वमनका आनाकेसा प्रतीत हो, कपोल और नेत्रोमे सूजन होवे और इसी अजीर्णके प्रभावसे जैसा भोजन करा होय मीठा आदि उसी प्रकारकी डकार आवे॥

विदग्धाजीर्णके लक्षण ।

**विदग्धेभ्रमतृणमूर्च्छाःपित्ताच्चविविधारुजः ॥**
**उद्गारश्चसधूमाम्लः स्वेदोदाहश्चजायते ॥ ७ ॥**

अर्थ–विदग्ध अजीर्णमे भ्रम प्यास और मूर्च्छा ये लक्षण होतहैं और पित्तके अनेक रोग प्रगट हो तथा धूएँके साथ खट्टी डकार आवे पसीना आवे और दाह होय ॥

विष्टब्ध अजीर्णके लक्षण ।

**विष्टब्धेशूलमाध्मानंविविधावातवेदनाः ॥**
**मलवाताप्रवृत्तिश्चस्तंभोमोहोऽगपीडनम् ॥ ८ ॥**

अर्थ–विष्टब्ध अजीर्णके ये लक्षण है, शूल, आफरा, अनेक वातकी पीडा, मल और अधोवायुका रुकजाना, देह जकडजाय, मोह और देहमे पीडा होय ॥

रसशेष अजीर्णके लक्षण ।

**रसशेषेऽन्नविद्वेषोहृदयाशुद्धिगौरवे ॥**

अर्थ--रसशेप अजीर्णके ये लक्षण हैं, अन्नमे अरुचि,हृदयमे शुद्धि न होय और देह भारी होय ॥

अजीर्णके उपद्रव ।

**मूर्च्छाप्रलापोवमथुःप्रसेकःसदनंभ्रमः ॥**
**उपद्रवाभवंत्येतेमरणंचाप्यजीर्णतः ॥ ९ ॥**

अर्थ–मूर्छा,वडवडे, ओकारी अर्थात् वमन, लारका गिरना, ग्लानि, भ्रम ये अजीर्णके उपद्रव हैं और वहुत वडा अजीर्ण मनुष्यको मार भी डालता है ॥

वहुत भोजन ही अजीर्णका हेतु है उसीको कहते हैं ।

**अनात्मवंतःपशुवद्भुंजतेयेऽप्रमाणतः ॥**
**रोगानीकस्यतेमूलमजीर्णंप्राप्नुवंतिहि ॥ १० ॥**

अर्थ- जिन मनुष्योकी इन्द्रिय स्वाधीन नहीं है वे पशुके समान अप्रमाण भोजन करते हैं उनके अनेक रोगोका कारण अजीर्णरोग प्रगट होता है ॥

अव कहते है कि, अजीर्णरोगसे विषूचिकारोगकी उत्पत्ति होती है इसलिये अजीर्णके अनंतर विषूचिकाको कहे है ॥

**अजीर्णमामंविष्टब्धंविदग्धंचयदीरितम् ॥**
**विषूच्यलसकौतस्माद्भवेच्चापिविलंबिका ॥ ११ ॥**

अर्थ-आम, विष्टब्ध और विदग्ध ये जो अजीर्ण कहे हैं इनसे विषूचिका (हैजा) अलस और विलंबिका पैदा होवे हैं, इनमे चौथा रसशेष अजीर्णको विषूच्यादिकोका उत्पादक नहीं लिखा है इसका कारण यह है कि, उस रसाजीर्णको अपरिणाममात्रत्वकरके विषूचिका आदिके आरंभत्व स्वभावादिकोपमतके कहनेसे आम, विदग्ध और विष्टब्ध इनसे क्रमपूर्वक विषूचिका, अलस, विलंबिका ये प्रगट होती हैं ऐसे कार्तिककुंड आचार्य कहना है सो असत्य है क्योंकि, विदग्ध अजीर्णको विलंबिकाका प्रगट करना असम्भव है क्यो कि, उस विलंबिकाका आगे कफ वातसे प्रगट होना कहैंगे और विदग्धभावको पित्तजन्यताहै इसलिये यह मत मन्तव्य नहीं है। इसी कारण तीनो अजीर्ण मिलकर विषूचिका आदिको प्रगट करते है यह बकुल आचार्यका मत है ॥

विषूचिकाकी निरुक्ति कहते हैं।

सूचीभिरिवगात्राणितुदन्संतिष्ठतेऽनिलः ॥
यत्राजीर्णेचसावैद्यैर्विषूचीतिनिगद्यते ॥ १२ ॥

अर्थ--जिस अजीर्णमे वादी, देहको सूईके सदृश पीडा देय अर्थात् सूईसी चुभै उसको वैद्य विषूचिका कहते हैं ॥

नतां परिमिताहारालभंतेविदितागमाः ॥
मूढास्तामजितात्मानोलभंतेऽशनलोलुपाः ॥ १३ ॥

अर्थ-जिनका आहार परिमाणका है और जो वैद्यविद्याके कहनेपर चलते हैं उनके कदाचित् विषूचिकारोग नही होय और जो अज्ञानी तथा जिनकी इन्द्रिय वशमे नहीं और जो भोजनके लालची हैं ऐसे मनुष्योकें यह विषूचिका रोग अवश्य होता है ॥

विषूचिकाके लक्षण।

मूर्च्छातिसारोवमथुःपिपासाशूलभ्रमोद्वेष्टनजृंभदाहाः ॥
वैवर्ण्यकंपौहृद्रयेरुजश्चभवंतितस्यांशिरसश्चभेदः ॥ १४ ॥

अर्थ-मूर्च्छा, अतिसार, वमन, प्यास, शूल, भ्रम, ढोटवेंधना, जभाई, दाह, देहका विवर्ण, कम्प, हृदयमे पीडा और मस्तकमे पीडा ये लक्षण हो उसको विषूचिका कहते है इसीको महामारी अथवा हैजा कहते है ॥

अलसके लक्षण।

कुक्षिरानह्यतेऽत्यर्थंप्रताम्येत्परिकूजति ॥ निरुद्धोमारुतश्चैवंकुक्षावुपरिधावति ॥१५॥ वातवर्चोनिरोधश्चयस्यात्यर्थंभवेदपि ॥
तस्यालसकमाचष्टेतृष्णोद्गारौतुयस्यच ॥ १६ ॥

अर्थ-कूखमे और पेटमे आफरा हो, मोह हो, पीडासे पुकारे, पवनचलनेसे रुककर कूखमें और कंठादिस्थानोमे फिरे, मल मूत्र और गुदाकी पवन रुके, प्यास बहुत लगे डकार आवें ये लक्षण जिसमे होयँ उसको अलसक रोग कहते है ॥

विलंबिकाके लक्षण।

**दुष्टंतुभुक्तंकफमारुताभ्यांप्रवर्त्ततेनोर्ध्वमधश्चयस्य ॥**
**विलंबिकांतांभृशदुश्चिकित्स्यामाचक्षतेशास्त्रविदःपुराणाः ॥ १७ ॥**

अर्थ-जिस मनुष्यके भोजन करा हुवा अन्न, कफ वात करके दूषित होय ऊपर नीचे नहीं जाय अर्थात् वमन विरेचन न होय उसको वैद्यविद्याके जाननेवाले जिसकी चिकित्सा नहीं ऐसी विलंबिका रोग कहते है। कोई * शंका*-करे कि, अलसक और विलंबिका इन दोनोंको वात कफके प्रबल होनेसे ऊपर नीचे प्रवृत्ति होती है इन दोनोमे भेद क्या है सो कहो * उत्तर-* अलसकमे शूल आदि, घोर पीडा कर्त्ता होते है और विलंबिकामे नही होते इतना ही भेद है ॥

अजीर्णसे प्रगट विषूच्यादिको कहकर अजीर्णजन्य आमके दूसरे कार्यान्तर कहैं हैं।

**यत्रस्थमामं विरुजेतमेवदेशंविशेषेणविकारजातैः ॥**
**दोषेण येनावततं शरीरं तल्लक्षणैरामसमुद्भवैश्च ॥ १८ ॥**

अर्थ-जिस ठिकानेपर आम रहता है उस ठिकानेपर जिस दोषसे वह स्थान व्याप्त हो उसके लक्षण करके पीडा, दाह गौरव आदि और आमजन्य विकारके आमवातादिक विशेष पीडा होती है, इसलिये जाना गया कि, और ठिकानेपर थोड़ी पीडा होती है और "यत्र" इस सर्व नाम शब्दसे कुपित हुए वातादिकोके सदृश आमका कोई स्थान नियत नही है यह दिखाया ॥

अब विषूचिका और अलसक इनके असाध्य लक्षण।

**यःश्यावदंतौष्ठनखोऽल्पसंज्ञोवम्यर्दितोऽभ्यंतरयातनेत्रः ॥**
**क्षामस्वरःसर्वविमुक्तसंधिर्यायान्नरःसोऽपुनरागमाय ॥ १९ ॥**

अर्थ--जिस रोगीके दात नख होठ काले पडजावे और सज्ञा जातीरहे वमनसे पीडित होवे और नेत्र भीतरको वैठजायँ मन्द स्वर हो तथा हाथपैरोकी संधि ढीली पडजायँ वह मनुष्य बचे नही विलम्बिकास्वरूपसे ही असाध्य है यह जेज्झट आचार्यका मत है ॥

**निद्रानाशोऽरतिःकम्पोमूत्राघातोविसंज्ञिता ॥ अमीउपद्रवाघो-रविषूच्यांपंचदारुणाः ॥ २० ॥ प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णंजा-यतेनृणाम् ॥ तन्मूलोरोगसंघातस्तद्विनाशाद्विनश्यति ॥ २१ ॥**

अर्थ--निद्राका नाश, मनका न लगना, कम्प, मूत्रका रुकना, सञ्ज्ञाका नाश, ये विषूचिकाके घोर पाच उपद्रव है। बहुधा भोजनकी विषमतासे अजीर्णरोग मनुष्योको होता है वही अजीर्ण सब रोगोका कारण है उस अजीर्णरोगके नाश होनेसे सब रोगोका नाश होता है ये दोनो श्लोक क्षेपक है॥

अजीर्ण जातारहा उसके लक्षण।

**उद्गारशुद्धिरुत्साहोवेगोत्सर्गोयथोचितः॥**
**लघुताक्षुत्पिपासाचजीर्णाहारस्यलक्षणम्॥ २२॥**

अर्थ–शुद्ध डकार आवे, शरीर और मनका प्रसन्न होना, जैसा भोजन करा हो उसके सदृश मल मूत्रकी भलेप्रकार प्रवृत्ति होना, शरीर हलका होय परतु कोष्ट विशेष हलका हो, भूख और प्यास लगे, भोजन पचनेके उत्तर ये लक्षण होते है॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाथुरीमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकाया-
मजीर्णरोगनिदानम्।

---

# अथ कृमिरोगनिदानम्।

अजीर्णरोगसे कृमिरोग प्रगट होय है इसीसे अजीर्णरोगके
अनन्तर कृमिरोग कहे हैं।

**क्रिमयस्तुद्विधाप्रोक्ताबाह्याऽभ्यंतरभेदतः॥**
**बहिर्मलकफासृग्विड्जन्मभेदाच्चतुर्विधाः॥ १॥**

अर्थ–कृमिरोग दो प्रकारका है एक बाहरका दूसरा भीतरका तहां बाहरके मल (पसीनाआदि) और कफ, रुधिर, विष्ठा इन कारणोसे बहिः कृमिरोग चार प्रकारका है उनके नाम बीस प्रकारके हैं॥

बाह्यकृमियोंके नाम।

**नामतोविंशतिविधाबाह्यास्तत्रमलोद्भवाः॥ तिलप्रमाणसंस्था-**
**नवर्णाःकेशांबराश्रयाः॥ २॥ बहुपादाश्चसूक्ष्माश्चयूकालिक्षा**
**दिनामतः॥ द्विधातेकुष्ठपिडिकाकंडूगंडान्प्रकुर्वते॥ ३॥**

अर्थ–उस कृमिरोगके वीस नामोसे वीस भेद है। तहां बाहरके मलसे प्रगट कृमि, तिलके समान परिमाण और आकृति और श्वेत कृष्णवर्णवाली होती है। वस्त्र और केशोमे रहनेवाली होती है तथा बहुत पैरकी और छोटी जूं, लीख, नामोसे प्रसिद्ध दो प्रकारकी है ये कृमिये कोढ, पिडिका, खाज, गाठ इत्यादि रोग प्रगट करैं है॥

## कृमिरोगका कारण ।

**अजीर्णभोजीमधुराम्लनित्योद्रवप्रियःपिष्टगुडोपभोक्ता ॥
व्यायामवर्जीचदिवाशयानोविरुद्धभुक्संलभतेकृमींश्च ॥ ४ ॥**

अर्थ–अजीर्णमे भोजन करे, प्रतिदिन मीठा, खट्टा, खावे तथा पतला पदार्थ (जैसे कढी, रायता आदि) खावे, पीसा अन्न मैदा आदि और गुडके पदार्थ खावे और भोजन करके परिश्रम न करे, दिनमे सोवे, विरुद्ध भोजन, जैसे दूध मछली आदिको खावे ऐसे पुरुषको कृमिरोग प्रगट होता है ॥

## कौनकारणसे कौनसी कृमि प्रगट होती है ।

**माषपिष्टान्नलवणगुडशाकैःपुरीषजाः ॥ मांसमत्स्यगुडक्षीर-दधिशुक्तैःकफोद्भवाः ॥ विरुद्धाजीर्णशाकाद्यैः शोणितोत्थाभ-वंतिहि ॥ ५ ॥**

अर्थ–उडद पीसा अन्न (लड्डू घेवर गूंझाआदि) नोनके गुडके तथा शाक आदि ऐसे पदार्थ खानेसे मलकी कृमि प्रगट होती हैं । मास मछली गुड दूध दही काजी ऐसे पदार्थ खानेसे कफकी कृमि पैदा होती है । विरुद्ध पदार्थ जैसे दूध मछली और आधा कच्चा आधा पक्का शाक जैसे हरा चनेका आदि ऐसे भोजनोसे रुधिरजन्य कृमि पैदा होती है ॥

## पेटमें कृमि पडगईहो उसके लक्षण ।

**ज्वरोविवर्णताशूलंहृद्रोगः सदनंभ्रमः ॥
भक्तद्वेषोऽतिसारश्चसंजातक्रिमिलक्षणम् ॥ ६ ॥**

अर्थ–ज्वर हो, शरीरका रग और ही प्रकारका होजावे, शूल हृदय दूखे, वमनकीसी इच्छा हो, भ्रम, भोजन बुरा लगे, दस्त होयँ ये लक्षण जिसके पेटमे गिंडोहा आदि कृमि पडजाती हैं उसके होते हैं ॥

## कफकी कृमिके लक्षण ।

**कफादामाशयेजातावृद्धाःसर्पंतिसर्वतः ॥ पृथुब्रध्ननिभाःके-चित्केचिद्गंडूपदोपमाः ॥ ७ ॥ रूढधान्यांकराकारास्तनुदी-र्घास्तथाणवः ॥ श्वेतास्ताम्रावभासाश्चनामतःसप्तधा तु ते ॥८॥ अंत्रादाउदरावेष्टाहृदयादामहारुजः ॥ चुरवोदर्भकुसुमाः सु-**

**गंधास्तेचकुर्वते ॥ ९ ॥ हृल्लासमास्यस्त्रवणमविपाकमरोचकम् ॥ मूर्च्छांछर्दिस्तृषानाहकार्श्यंश्वयथुपीनसान् ॥ १० ॥**

अर्थ—कफसे आमाशयमे प्रगट हुई कृमिये जब बढजाती है तब चारो तरफ डोलती है उनमेसे कोई मोटी चामकी वाधीके सदृश, कोई गिडोहेके आकार, कोई धान्यके अकुरके समान, होती है । कितनी ही छोटी, वडी, चौडी होती है और किसीका वर्ण श्वेत, किसीका तामेके समान होता है उन्होके सात नाम हैं सो इस प्रकार १ अत्राद, २ उदरावेष्ट, ३ हृदय्राद, ४ महारुज, ५ चुरु, ६ दर्भकुसुम और ७ सुगध ये नाम कोई सार्थक है और कोई निरर्थक है । व्यवहारके निमित्त पहले आचार्योंने कहे है इन कृमियोसे वमनकीसी इच्छा होय, मुखसे पानी गिरे अन्नका पाक न होवे, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, प्यास अफरा, शरीर कृश होवे, सूजन और पीनस इतने विकार होतेहैं ॥

रुधिरकी कृमिके लक्षण ।

**रक्तवाहिशिरास्थानारक्तजाजंतवोऽणवः । अपादावृत्तताम्राश्चसौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः ॥ ११ ॥ केशादारोमविध्वंसा रोमद्वीपाउदुंबराः ॥ षट्तेकुष्ठैककर्माणःसहसौरसमातरः ॥ १२ ॥**

अर्थ—रुधिरकी वहनेवाली नाडियोंमे रुधिरसे प्रगट कृमि वारिक, पादरहित, गोल तामेके रगके होते है कोई वहुत वारीक होती है वह देखनेसे भी नहीं दखि ये कृमि छः प्रकारकी है उनके नाम ये हैं १ केशाद, २ रोमविध्वंस, ३ रोमद्वीप, ४ उदुबर, ५ औरस और ६ मातर, ये कुष्ठके पैदा करती हैं ॥

विष्ठासे प्रगट कृमिके लक्षण ।

**पक्काशयेपुरीषोत्थाजायंतेऽधोविसर्पिणः ॥ प्रवृद्धास्तेस्युर्भवेयुश्च ते यदाऽऽमाशयोन्मुखाः ॥ १३ ॥ तदास्योद्गारनिःश्वासा विड्गंधानुविधायिनः ॥ पृथुवृत्ततनुस्थूलाःश्यावपीतसितासिताः ॥ १४ ॥ तेपंचनाम्नाक्रिमयःककेरुकमकेरुकाः ॥ सौसुरादामलूनाश्चलेलिहाजनयंतिच ॥ १५ ॥ विड्भेदशूलविष्टंभकार्श्यपारुष्यपांडुताः ॥ रोमहर्षाग्निसदनंगुदकंडूर्विमार्गगाः ॥ १६ ॥**

अर्थ—पक्काशयमे विष्टासे प्रगट कृमि गुदाके मार्ग होकर बाहर निकसती है जब ये वढ़जाती हैं तव आमाशयमे प्राप्त होकर डकार और श्वाससे विष्टाकीसी वास आने लगती है । ये कृमि,

१ सशूलाख्येतिपाठान्तरम् ।

बडी, छोटी, गोल मोटी, रगमे काली, पीली, सफेद, नीली होती है इनके पाच नाम हैं १ ककेरुक २ मकेरुक, ३ सौसुराद, ४ आमलून, ५ लेलिह । जब ये कृमि मार्गको छोड अन्य मार्गमे जाती है तब इतने रोग प्रगट करै है, दस्तका पतला होना, शूल, आफरा, देहमे कृशता तथा देहमें कठोरता, पांडुरोग, रोमाच, मंदाग्नि और गुदामे खुजलीका होना ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकायांकृमिरोगनिदान समाप्तम् ।

---

# अथ पाण्डुरोगनिदानम् ।

**पांडुरोगाःस्मृताःपंचवातपित्तकफैस्त्रयः ॥**
**चतुर्थःसन्निपातेनपंचमोभक्षणान्मृदः ॥ १ ॥**

अर्थ--मलसे प्रगट कृमिरोग पाडु ( पीलिया ) रोगको प्रगट करे है, इसी कारण कृमिरोगके अनन्तर पाडुरोगका निदान कहा है तहा प्रथम पांडुरोगकी सख्यारूप सम्प्राप्ति कहते हैं १ वातका २ पित्तका, ३ कफका, ४ सन्निपातका और ५ माटीके खानेसे ऐसे पाण्डुरोग पांच प्रकारका कहा है ॥

## पाण्डुरोगके कारण और सम्प्राप्तिके लक्षण ।

**व्यवायमम्लंलवणानिमद्यंमृदंदिवास्वप्नमतीवतीक्ष्णम् ॥**
**निषेव्यमाणस्यविदूष्यरक्तंदोषास्त्वचंपांडुरतांनयंति ॥ २ ॥**

अर्थ–अति मैथुन, खट्टे पदार्थका भोजन, नोनका पदार्थ खानेसे, बहुत मद्य पीनेसे, मिट्टी खानेसे, दिनमे सोनेसे, अत्यत तीखा पदार्थ खानेसे इन कारणोसे तीनो दोष रुधिरको बिगाड देहकी त्वचाको पीलेरगकी कर देते है इस जगह रुधिरका तो उपलक्षणमात्र है रक्तके कहनेसे त्वचा मास इनको दूषित करते हैं यह दृढबलने कहाहै ॥

हारीतने रसको दूष्य कहा है दोष नाम वातादिक और दूष्य कहिये रसरक्तादि ॥

## पूर्वरूप ।

**त्वक्स्फोटनष्ठीवनगात्रसादमृद्भक्षणप्रेक्षणकूटशोथाः ॥**
**विण्मूत्रपीतत्वमथाविपाकोभविष्यतस्तस्यपुरःसराणि ॥ ३ ॥**

अर्थ--त्वचाका फटना, मुखसे वारवार थूकना, अगोका जकडना, मिट्टी खानेकी इच्छा नेत्रोपर सूजन, मल, मूत्र पीले हो, अन्नका परिपाक न होय ये लक्षण पाडुरोग प्रगट होनेवाला होय है तब होते हैं ॥

वातपांडुरोगके लक्षण।

त्वङ्मूत्रनयनादीनारूक्षकृष्णारुणात्मता ॥
वातपांडामयेकंपतोदानाहभ्रमादयः ॥ ४ ॥

अर्थ--वातके पाडुरोगमें त्वचा, मूत्र, नेत्र इनमे रूखापना कालापना और लाली होती है तथा, कप, सूई छेदनेकासा चुभना, आफरा, भ्रम आदिशब्दसे भेद और शूलादिक भी होते है ॥

पित्तजपांडुरोगके लक्षण।

पीतमूत्रशकृन्नेत्रोदाहतृष्णाज्वरान्वितः ॥
भिन्नविट्कोऽतिपीताभःपित्तपांड्वामयीनरः ॥ ५ ॥

अर्थ--पित्तपाडुरोगीके ये लक्षण होते है, मल मूत्र और नेत्र पीले हो, दाह, प्यास ज्वर इनसे पीडित हो, मल पतला हो और उस रोगीके देहकी काति अत्यत पीली होती है ॥

कफ पांडुरोगके लक्षण।

कफप्रसेकश्वयथुतन्द्रालस्यातिगौरवैः ॥
पांडुरोगीकफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥ ६ ॥

अर्थ--मुखसे कफका गिरना, सूजन, तन्द्रा, आलकस, शरीरका भारी होना, त्वचा, मूत्र, नेत्र, मुख इनका सफेद होना इन लक्षणोसे कफका पाडुरोग जानना ।

सन्निपातयुक्त पांडुरोगके असाध्य लक्षण।

ज्वरारोचकहृल्लासच्छर्दितृष्णाक्लमान्वितः ॥
पांडुरोगीत्रिभिर्दोषैस्त्याज्यःक्षीणोहतेंद्रियः ॥ ७ ॥

अर्थ--ज्वर, अरुचि, ओकारी ( उबकाई ) वमन, प्यास और क्लम इतने उपद्रवयुक्त जो त्रिदोषजन्य पाडुरोगी क्षीण होगया हो और इसकी इन्द्रियें अपना अपना विषय ग्रहण करनेकी शक्ति न रखती हों तो उसको वैद्य त्याग दे ॥

मिट्टी खानेसे प्रगट पांडुरोगकी सम्प्राप्ति।

मृत्तिकादनशीलस्यकुप्यत्यन्यतमोमलः ॥ कषायामारुतंपित्तमूषरामधुराकफम् ॥ ८ ॥ कोपयेन्मृद्रसादींश्चरौक्ष्याद्भुक्तंचरू

१ चरकमें लिखाहै--सर्वान्नसेविनः सर्वे दुष्टा दोषास्त्रिदोषजम् । त्रिलिंगं सप्रकुर्वन्ति पाण्डुरोगं सुदुःसहम् । संपूर्ण अन्नोके सेवन करनेवाले पुरुषके तीनो दोष दुष्ट हुए त्रिदोषजपाण्डुरोगको करतेह । जिसमे तीनोदोषोंके लक्षण मिलते है उसको सन्निपातका पाण्डुरोग जानना और वह असाध्यहै ॥

क्षयेत् ॥ पूरयत्यविपक्वैवस्त्रोतांसिनिरुणद्ध्यपि ॥९॥इंद्रियाणां वलंहत्वातेजोवीर्य्यौजसीतथा ॥ पांडुरोगंकरोत्याशुबलवर्णाग्निनाशनम् ॥ १० ॥

अर्थ–मिट्टी खानेका जिस मनुष्यको अभ्यास पडजाय उसके वातादिक दोष कुपित होवें, कसैली मिट्टीसे वात कुपित होय, खारी मिट्टीसे पित्त और मीठी मिट्टीसे कफ कुपित होवे, फिर वही मिट्टी पेटमें जाकर रसादिक धातुओंको रूखा करे। जब रौक्ष्य गुण प्रगट होजाय तब जो अन्न खाय सो रूखा होजाय। फिर वही मिट्टी पेटमें विना पके रसको रस बहनेवाली नसोंमें प्राप्त कर उनके मार्गको रोकदे, रसके वहनेवाली नसोंका मार्ग जब रुकजाय तब इन्द्रियोंका बल अर्थात् अपने अपने विषय ग्रहण करनेकी शक्तिनाश होय शरीरकी कांति, तेज और ओज कहिये सब धातुओंका सार हृदयमें रहता है सो क्षीण होकर पांडुरोग प्रगट करे. उसमें बल, वर्ण और अग्नि इनका नाश होता है ॥

विशेष लक्षण।

शूनाक्षिकूटगंडभ्रूः शूनपन्नाभिमेहनः ॥
क्रिमिकोष्ठोऽतिसार्य्येतमलंचासृक्कफान्वितम् ॥ ११ ॥

अर्थ–नेत्र, कपोल, भृकुटी, पैर, नाभि और लिंग इनमें सूजन हो और कोठेमें क्रिमि पडजायँ तथा रुधिर और कफ मिला दस्त उतरें सब पांडुरोगोंमे जब पेटमें कृमि पडजाये है तब ये पूर्वोक्त लक्षण होते हैं यह जज्जट आचार्यका मत है और कोई कहता है ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोगके लक्षण हैं क्योंकि, मृत्तिकाजन्य पांडुरोगके लक्षण अनंतर लिखे है परंतु विदेहने तो ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोगके लक्षण स्पष्ट कहे है ॥

असाध्य लक्षण।

पांडुरोगश्चिरोत्पन्नःखरीभूतोनसिध्यति ॥ कालप्रकर्षाच्छूनांगोयोवापीतानिपश्यति ॥१२॥ बद्धाल्पविट्सहरितंसकफंयोऽतिसार्यते ॥ दीनःश्वेतातिदिग्धांगश्छर्दिमूर्च्छातृषान्वितः ॥ ॥ १३ ॥ सनास्त्यसृक्क्षयाद्यस्तुपांडुःश्वेतत्वमाप्नुयात् ॥ पांडुदंतनखो यस्तुपांडुनेत्रश्चयोभवेत् ॥ १४ ॥ पांडुसंघातदर्शी चपांडुरोगीविनश्यति ॥ अंतेषुशूनंपरिहीनमध्यंम्लानंतथांतेषुचमध्यशूनम् ॥ १५ ॥ गुदेचशेफस्यथमुष्कयोश्चशूनं

**प्रताम्यंतमसंज्ञकल्पम् ॥ विवर्जयेत्पाण्डुकिनंयशोऽर्थी तथा-तिसारज्वरपीडितंच ॥ १६ ॥**

अर्थ—बहुत दिनका पाडुरोग बहुत काल बीतनेसे पुराना होजाता है सो अच्छा नहीं होय ॥

अथवा—सब देहमे सूजन आगई होवे और उसको पदार्थ पीले दीखे सो भी असाध्य है ॥

अथवा—जिस मनुष्यका बँधा हुआ मल थोडा हरे रगका कफमिश्रित उतरे सो भी असाध्य है ॥

अथवा—जो पुरुष दीन कहिये ग्लानियुक्त हो और जिसकी देहका श्वेत वर्ण हो और वमन, मूर्च्छा, प्यास इनसे पीडित होवे सो पाडुरोगी नष्ट होवे ॥

अथवा—रुधिरक्षय होनेसे जो पाडुरोग श्वेतत्वको प्राप्त होय सो भी असाध्य है जिसके दाँत, नख और नेत्र पीले होयँ वह रोगी असाध्य है। जिसको सब पदार्थ पीलेही पीले दीखे वह रोगी मरे। हाथ, पैर शिर इनमे सूजन हो और जिसका मध्य पतला होय ऐसा पाडुरोगी असाध्य है इससे विपरीत साध्य है ॥

जिस रोगीके देहके मध्यमे सूजन हो और हाथ, पग, शिर ये सूखजायँ तथा गुदा, लिङ्ग इनमे सूजन होय तथा मरेके समान होगया होय ऐसे पाडुरोगीको जिस वैद्यको यशकी इच्छा हो सो त्याग दे। इसीप्रकार अतिसार और ज्वर इनसे पीडित रोगीको वैद्य त्याग देवे ॥ परतु इस अतके श्लोकमे जो "पांडुकिनं" यह पाठ है इस जगह "पालकिनं" ऐसा पाठ कोई आचार्य मानते है सो ठीक है क्योकि ऐसा पढनेसे पाडुरोगकी अवस्था अर्थात् पाडुरोगका भेद जो पालकी है उसके भी लक्षण इस पाठसे आयगयेसो सुश्रुत मे लिखा है और इसीका आशय लेकर किसी अन्यने भी लिखा है। यथा—

**अंतेशूनःकृशोमध्येत्वथवागुदशेफसि ॥**
**शूनोज्वरातिसाराद्यैर्मृतकल्पस्तुपालकी ॥ १७ ॥**

अर्थ—जिस मनुष्यके हाथ पैरो ऊपर सूजन और देहका मध्य कृश होगया अथवा गुदा लिंगपर सूजन हो तथा ज्वर अतिसारकरके मुर्दाके समान हो ये लक्षण पालकी रोगके है। पाडुरोगका भेद कामला है ॥

अथ कामलाके लक्षण।

**पांडुरोगीतुयोऽत्यर्थंपित्तलानिनिषेवते ॥ तस्यापित्तमसृङ्मांसंदग्ध्वारोगायकल्पते ॥ १८ ॥ हारिद्रनेत्रःसभृशंहारिद्रत्वङ्नखाननः ॥ रक्तपित्तशकृन्मूत्रोभेकवर्णोहतेंद्रियः ॥ १९ ॥**

---

१ सकामलापालकिपाडुरोगः कुंभाह्वयो लाघवकोलसाल्यः इति।

**दाहाविपाकदौर्बल्यसदनारुचिकर्षितः ॥**
**कामलाबहुपित्तैषा कोष्ठशाखाश्रयामता ॥ २० ॥**

अर्थ–जो पांडुरोगी अत्यंत पित्तकारक वस्तुओंका सेवन करे उसके पित्त, रुधिर, मांसको जलाय ( दुष्ट कर ) कामलारूप रोग प्रगट करनेको समर्थ होय, उस मनुष्यके नेत्र अत्यंत पीले होयँ, त्वचा, नख और मुख ये पीले होयँ, मल, मूत्र काले होयँ अथवा पीले होयँ वह मनुष्य वर्षाऋतुके मेढकेके समान पीला होवे, इन्द्रियोंकी शक्ति नष्ट होय, दाह, अन्न पचे नहीं, दुर्बलता, अगग्लानि, अन्नमे अरुचि इनसे पीडित होय जिसमे पित्तप्रबल ऐसी यह कामला एक कोष्ठाश्रय और दूसरी शाखा ( रक्तादि धातु ) आश्रित है। जैसे कास रोगसे भी राजयक्ष्मा पैदा होतीहै और स्वतन्त्र भी होतीहै उसीप्रकार कामला स्वतत्र भी होती है ॥

अब कहते हैं कि पाडुरोगकी उपेक्षा करनेसेही कामलादिक होते हैं उसीकी दूसरी अवस्था कुंभकामला है ॥

अथ कुंभकामलाके लक्षण ।

**कालांतरात्खरीभूताकृच्छ्रास्यात्कुंभकामला ॥**

अर्थ–बहुत कालसे पुरानी पडनेसे जो कुंभकामला होवे सो कृच्छ्रसाध्य होती है। कुम्भ कहिये कोष्ठ तद्गत जो कामला उसको कुम्भकामला कहते है अर्थात् कोष्ठाश्रय कामला ॥

असाध्य लक्षण ।

**कृष्णपीतशकृन्मूत्रोभृशंशूनश्चमानवः ॥**
**सरक्ताक्षिमुखच्छर्दिविण्मूत्रोयश्चताम्यति ॥ २१ ॥**

अर्थ–जिस मनुष्यका मल काला और मूत्र पीला हो ओर शरीरपर सूजन विशेष होवे और नेत्र, मुख, वमन, मल और मूत्र ये अत्यंत लाल होयँ, मोह होय वह कामलावान् रोगी बचे नही ॥

दूसरे असाध्य लक्षण ।

**दाहारुचितृडानाहतंद्रामोहसमन्वितः ॥**
**नष्टाग्निसंज्ञःक्षिप्रंचकामलावान्विपद्यते ॥ २२ ॥**

अर्थ–दाह, अरुचि, प्यास, आफरा, तन्द्रा, मोह इन लक्षणयुक्त तथा मन्दाग्नि और विस्मृतिवान् कामलावाला रोगी तत्काल मरे ॥

कुंभकामलाके असाध्य लक्षण ।

**छर्द्यरोचकहृल्लासज्वरक्लमनिपीडितः ॥**
**नश्यंतिश्वासकासार्तोविड्भेदीकुंभकामली ॥ २३ ॥**

---

१ स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च । हृदुण्डुकः फुफ्फुसश्चकोष्ठ इत्यभिधीयते ।

अर्थ-वमन, अरुचि, ओकारीका आना, ज्वर अनायासश्रम इनसे पीडित तथा श्वास खाँसी इनसे जर्जरित और अतिसारयुक्त ऐसा कुम्भकामलावाला रोगी मरजावे ॥

पांडरोगसे हलीमक रोग प्रगट होताहै सो कहते हैं।

**यदातुपांडुवर्णःस्याद्धरितःश्यावपीतकः ॥ बलोत्साहक्षयस्तन्द्रामन्दाग्नित्वंमृदुज्वरः ॥ २४ ॥ स्त्रीष्वहर्षोंगमर्दश्चदाहतृष्णारुचिर्भ्रमः ॥ हलीमकंतदातस्यविद्यादनिलपित्ततः ॥ २५ ॥**

अर्थः-जिस समय पाडुरोगीका वर्ण हरा, काला, पीला होय और बल व उत्साह इनका नाश, तंद्रा, मन्दाग्नि, महीनज्वर, स्त्रीसंभोगकी इच्छाका नाश, अंगोका टूटना, दाह, प्यास, अन्नमे अप्रीति और भ्रम ये उपद्रव वातपित्तसे प्रगट हलीमक रोगके है ॥

पानकीलक्षण।

**सन्तापेभिन्नवर्चस्त्वंबहिरन्तश्चपीतता ॥**
**पांडुतानेत्रयोर्यस्यपालकीलक्षणंभवेत् ॥ २६ ॥**

अर्थ-सन्ताप कहिये इन्द्रिय, मन इनका ताप, मलका पतला होना, भीतर. बाहर पीला होजावे और नेत्रोका पीला होना ये पानकी रोगके लक्षण है ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरविरचितमाधवार्थबोधिन्या भाषाटीकायां पाण्डुकामला-हलीमकनिदानम्।

---

# अथ रक्तपित्तनिदानम्[१]।

पांडरोगके सदृश रक्तपित्तकोभी पित्तजन्य होनेसे तदनन्तर रक्तपित्तनिदानको कहते हैं।

**घर्मव्यायामशोकाध्वव्यवायैरतिसेवितैः ॥ तीक्ष्णोष्णक्षारलवणैरम्लैःकटुभिरेवच ॥ १ ॥ पित्तंविदग्धंस्वगुणैर्विदहत्याशु शोणितम् ॥ ततःप्रवर्त्ततेरक्तमूर्ध्वंवाधोद्विधापिवा ॥ २ ॥**

---

१ रक्तञ्च तत् पित्त रक्तपित्तम्। अथवा रक्तञ्च पित्तञ्चेत्यनयोः समाहारः रक्तपित्तम् तस्य निदानम् ॥

ऊर्ध्वंनासाक्षिकर्णास्यैर्मेढ्रयोनिगुदैरधः॥ कुपितंरोमकूपैश्चसम-स्तैस्तत्प्रवर्त्तते ॥ ३ ॥

**अर्थ**--धूपमे बहुत डोलनेसे, अति परिश्रम करनेसे, शोकसे, बहुत मार्ग चलनेसे, अति मैथुन करनेसे, मिरच आदि तीखी वस्तु खानेसे, अग्निके तापनेसे, जवाखार आदि खार पदार्थ नोनसे आदिले लवणके पदार्थ, खट्टी कडुवी ऐसी वस्तुओके खानेसे कोपको प्राप्त भया जो पित्त सो अपने तीक्ष्ण द्रव पूति इत्यादि गुणोसे रुधिरको विगाडे तव रुधिर ऊपरके अथवा नीचेके मार्ग अथवा दोनोमार्ग होकर प्रवृत्त हो ( निकले ) ऊपरके मार्ग नाक, कान, नेत्र, मुख इनके द्वारा निकले ओर अधोमार्ग कहिये लिंग, गुदा ओर योनि इनके रास्ते होकर निकले और जब रुधिर अत्यत कुपित होय तव दोनो मार्ग और सब रोमछिद्रोके द्वारा निकले है ॥

## पूर्वरूप ।

सदनंशीतकामित्वंकण्ठधूमायनंवमिः ॥
लोहगंधिश्चनिःश्वासोभवत्यस्मिन्भविष्यति ॥ ४ ॥

**अर्थ**--ग्लानि, शीतकी इच्छा, कठसे धूआँ निकलना, वमन ओर तपाये भये लोहपर जल गेरनेसे जैसी गध आवे ऐसी श्वास लेनेसे गधका आना । जिस मनुष्यमे इतने लक्षण मिलते होंय उसको जानना कि, इसके रक्तपित्त प्रगट होवेगा ॥

## कफयुक्तरक्तपित्तके लक्षण ।

सांद्रंसपांडुसस्नेहंपिच्छिलंचकफान्वितम् ॥

**अर्थ**--सघन कुछ पीला ओर कुछ चिकना तथा गाढा ऐसा रक्तपित्त कफमिश्रित जानना ॥

## वातिक रक्तपित्तके लक्षण ।

श्यावारुणंसफेनंचतनुरूक्षंचवातिकम् ॥ ५ ॥

**अर्थ**--नीलावर्ण, लालवर्ण, कुछ झागयुक्त, पतला और रूखा ऐसा रक्तपित्त वातका जानना॥

## पैत्तिकरक्तपित्तके लक्षण ।

रक्तपित्तकषायाभंकृष्णंगोमूत्रसंनिभम् ॥
मेचकागारधूमाभमंजनाभंचपैत्तिकम् ॥ ६ ॥

**अर्थ**--जो रक्तपित्त काढेके रगसमान हो, काला, गौके मूत्र समान हो अथवा मोरकी चन्द्रिकाके समान नीलवर्ण अर्थात् वैंगनी रगकी सदृश होय घरके धूआँके सुर्माके समान हो ये पैत्तिक रक्तपित्तके लक्षण है * **शंका** * क्यो जी केवल पैत्तिक रक्तपित्त न्ही होसकै है कारण इसका यह है कि, जैसे कफसे रक्तपित्तका मार्ग कहा है इसप्रकार पैत्तिक रक्तपित्तका नहीं कहा ?

* उत्तर * तुमने कहा सो ठीक है परन्तु यह मार्ग जो कहा है सो वातकफके लक्षण प्रति नहीं कहा है ॥

द्विदोषजादिलक्षण ।

**संसृष्टलिंगंसंसर्गात्त्रिलिङ्गंसान्निपातिकम् ॥**
**ऊर्ध्वगंकफसंसृष्टमधोगंमारुतान्वितम् ॥ ७ ॥**
**द्विमार्गंकफवाताभ्यामुभाभ्यामनुवर्त्तते ॥**

अर्थ–दो दोषोंके मिलनेसे जो रक्तपित्त होता है उसमे दोनो दोषोके लक्षण मिलनेसे द्विदोषज जानना और जिनमे तीनों दोषोंके लक्षण मिलते हो उसको सन्निपातका रक्तपित्त जानना ऊपरके मार्गसे कफका और नीचेके मार्ग होकर वातका और दोनो मार्गोंसे जो रक्तपित्त निकले सो वात और कफ इन दोषोसे प्रगट भया जानना ॥

ऊर्ध्वगादिकोका साध्यासाध्यविचार ।

**ऊर्ध्वंसाध्यमधोयाप्यमसाध्यंयुगपद्गतम् ॥ ८ ॥**

अर्थ–ऊपरके मार्गसे लोही निकले सो साध्य है (क्यो कि, कफसे प्रगट है, सो कफके रक्तपित्तमे क्वाथ तीखे रस कफ पित्तके हरणकर्त्ता होते है) और नीचेके मार्गसे जिसमे रुधिर गिरे सो याप्य (साध्यासाध्य) है (इसका कारण यह है कि, पित्तके हरणमे विरेचन मुख्य है और इसपर वात पित्त शमन करनेवाला मधुररस प्रधान है वमन देनेसे विरुद्धमार्गी होता है अर्थात् वेगमात्रका अवरोधक है परतु पित्तका हरणकरनेवाला नही है) और दोनो मार्गोंसे गिरनेवाला रक्तपित्त असाध्य है। कारण इसपर विरुद्ध चिकित्सा करनी पड़ती है ॥

साध्य होनेके कारण ।

**एकमार्गंबलवतोनातिवेगंनवोत्थितम् ॥**
**रक्तपित्तंसुखेकालेसाध्यंस्यान्निरुपद्रवम् ॥ ९ ॥**

अर्थ–बलवान् पुरुषके एक मार्ग अर्थात् ऊपरके मार्गसे जाता हो, अतिवेग नही हो, नवीन प्रगट भया हो और हेमन्त शिशिर कालमे प्रगट भया हो और दुर्वलता आदि उपद्रवरहित हो ऐसा रक्तपित्त साध्य होता है ॥

दोषभेदसे साध्यासाध्यलक्षण ।

**एकदोषानुगंसाध्यंद्विदोषंयाप्यमुच्यते ॥**
**त्रिदोषजमसाध्यंस्यान्मंदाग्नेरतिवेगितम् ॥ १० ॥**

१ यदुक्त चरके–"साध्य लोहितपित्त तद्यदूर्ध्वं प्रतिपद्यते । विरेचनस्य योग्यत्वाद्बहुत्वाद्भेषजस्य च ॥ विरेचनहि पित्तस्य जयाय परमौषधम्" इत्यादि ॥–

व्याधिभिःक्षीणदेहस्यवृद्धस्यानश्नतश्चयत् ॥ ११ ॥

अर्थ–एकदोषका रक्तपित्त साध्य है, द्विदोषका याप्य है और तीनों दोषोंका असाध्य है । मन्दाग्नि अतिवेगसे हो, रोगसे क्षीण देहवालेका, वृद्ध मनुष्यका और जिसका आहार थकगया हो ऐसे मनुष्योंका रक्तपित्त असाध्य होता है ॥

रक्तपित्तके उपद्रव ।

दौर्बल्यश्वासकासज्वरवमथुमदाःपांडुतादाहमूर्च्छाभुक्तेघोरो विदाहस्त्वधृतिरपिसदाहृद्यतुल्याचपीडा ॥ तृष्णाकोष्ठस्य भेदःशिरसिचतपनंपूतिनिष्ठीवनत्वंभक्तद्वेषाविपाकौविकृतिर-पिभवेद्रक्तपित्तोपसर्गाः ॥ १२ ॥

अर्थ–अशक्तता, श्वास, खाँसी, ज्वर, वमन, धतूरेके फलखानेसे जैसी अवस्था हो ऐसी अवस्था, शरीरका पीला वर्ण होजाय, दाह, मूर्च्छा अन्न खानेसे अत्यंतदाह हो अधीरजपना, सर्वकाल हृद-यमे विलक्षण पीडा, प्यास, कोष्ठभेद ( अर्थात् मल पतला हो ) मस्तकमें पीडा, दुर्गंधयुक्त थूकना, अन्नमें अरुचि आहारका परिपाक न होना, ये रक्तपित्तकेउपद्रव हैं और इसीप्रकार इस रक्तपित्तकी विकृति भी होय है सो आगे "मांसप्रक्षालनाभ" इत्यादि श्लोककरके कहते हैं ॥

असाध्यलक्षण ।

मांसप्रक्षालनाभंक्वथितमिवचयत्कर्दमांभोनिभंवामेदःपूयास्र कल्पंयकृदिवयदिवापक्वजम्बूफलाभम् ॥ यत्कृष्णं यच्च नीलं भृशमतिकुणपंयत्रचोक्ताविकारास्तद्वर्ज्यंरक्तपित्तंसुरपतिधनु-र्यच्चतुल्यंविभाति ॥ १३ ॥

अर्थ–जो रक्तपित्त, मांस धोये हुए जलके समान हो अथवा सड़े पानीके समान अथवा कीचके समान अथवा जलके समान इसीप्रकार मेद, राध, रुधिर इनके समान अथवा कलेजके टुकडेके समान अथवा पकी जामुनके समान किंवा काले रंगका किंवा नील कहिये पपैया पक्षीके पंखके समान अथवा जिसमें मुरदेकीसी वास आवे और जिसमे पूर्वोक्त कहे श्वासकासादि विकार युक्त हो ऐसा रक्तपित्त वर्जित है और जो रक्तपित्त इन्द्रधनुषके वर्णसमान रंगवाला हो सो भी त्याज्य है अर्थात् ऐसे रक्तपित्तकी वैद्य चिकित्सा न करे ॥

दूसरे असाध्यलक्षण ।

येनचोपहतोरक्तंरक्तपित्तेनमानवः ॥
पश्येद्दृश्यंवियच्चापितच्चासाध्यमसंशयम् ॥ १४ ॥

अर्थ–जिस रक्तपित्तने मनुष्यको ग्रसलिया होय वह दृश्य कहिये घटपटादि और अदृश्य कहिये आकाश इनको रक्तवर्णका देखे वह रोगी निःसन्देह असाध्य जानना ॥

दूसरे असाध्यलक्षण।

लोहितंछर्दयेद्यस्तुबहुशोलोहितेक्षणः ॥
लोहितोद्गारदर्शीचम्रियतेरक्तपैत्तिकः ॥ १५ ॥

अर्थ–जो वारंबार रुधिरकी वमन करे और जिसके लाल नेत्र होयँ तथा डकार भी लाल आवे वह रक्तपित्तवाला रोगी मरजावे ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकायां रक्तपित्तनिदानम्।

---

# अथ राजयक्ष्मनिदानम्।

वेगरोधात्क्षयाच्चैवसाहसाद्विषमाशनात्।
त्रिदोषोजायतेयक्ष्मागदोहेतुचतुष्टयात् ॥ १ ॥

अर्थ–वात, मूत्र, पुरीष आदि वेगोके रोकनेसे, अतिमैथुन, उपवास, ईर्ष्या, खेद इत्यादिक धातुक्षयके कारणोसे, वलवान्से वैर करनेसे, विशमाशन कहिये कुसमय थोडा अथवा बहुत भोजन करनेसे, इन चार कारणोसे तीनो दोषोके कोपसे मनुष्यके राजयक्ष्मा रोग होता है। वेगका रोकना ही वातकोपका कारण है यह सत्य है तथापि वातकोपसे अग्नि दुष्ट होकर कफपित्तका कोपहोता है इन चार हेतुओमे असख्य हेतुओका अन्तर्भाव होता है। रसादि धातुओंके शोषण ( सुखाने ) से इस रोगको ( शोष ) कहते है। तथा शरीरमे पाचनादि सर्व क्रियाओको क्षयकरै है इसीसे इस रोगको ( क्षय ) कहते है। और राजा ( चन्द्र ) इस रोगसे अति पीडित भया इसीसे इस को (राजयक्ष्मा) कहते है। यह सुश्रुत का आशय है। और वाग्भटने इसको सर्व रोगोका राजा कहा है इसीसे इसका ( राजयक्ष्मा ) नाम कहा है इस श्लोकमे जो कहाहै कि त्रिदोषका एक ही यक्ष्मारोग प्रकट होताहै उसका तात्पर्य यहहै कि तीनो दोषोंके कारणभेदसे अनेक प्रकारका नही है सो सुश्रुतमे

---

१ संशोषणाद्रसादीनांशोषइत्यभिधीयते। क्रियाक्षयकरत्वाच्चक्षयइत्युच्यते पुनः॥ राज्ञश्चन्द्रमसो यस्माद भूदेषकिलामयः। तस्मात्तंराजयक्ष्मेतिकेचिदाहुर्मनीषिणः, इति। २ एक एव मतः शोषः सन्निपातात्मको यतः। उद्रेकात्तत्रलिंगानिदोषाणांनिर्मितानि हि, इति।

कहा भी है और इस श्लोकमे "वेगरोधात्" इस पदसे केवल वात, मूत्र, मल इनका ही ग्रहण करना चाहिये भ्रमादिक सबोका ग्रहण नहीं है सो चरकमें लिखा है इति ॥

राजयक्ष्माकी विशिष्टसंप्राप्ति ।

**कफप्रधानैर्दोषैस्तुरुद्धेपुरसवर्त्मसु ॥**
**अतिव्यवायिनोवापिक्षीणेरेतस्यनंतराः ॥ २ ॥**
**क्षीयंतेधातवःसर्वेततःशुष्यतिमानवः ॥**

अर्थ—कफ है प्रधान जिनमे ऐसे जो वातादिक दोष तिनकरके रसके वहनेवाली नाडियोंके मार्ग रुक जानेसे ( इससे यह सूचना करी कि, रसमार्ग बंध होनेसे हृदयमें स्थित जो रस उनको बिगाड़ और उसी स्थानमे विकृति कहिये और प्रकारका स्वरूप करके खांसीके वेगसे मुखमार्ग होकर निकाले ) सो चरक मे लिखा भी है । ( इससे अनुलोमक्षय दिखाय अब प्रतिलोमक्षय कैसा होता है उसको कहते है ) अथवा अतिमैथुन करनेसे मनुष्यका वीर्य क्षीण होता है जब शुक्र क्षीण होजाय तब समीपकी धातु क्षीण होयँ तब पुरुष सूखने लगताहै, जैसे शुक्र क्षीणके अनन्तर मज्जा क्षीण होय, मज्जा क्षीणके अनन्तर हड्डी क्षीण होयँ ऐसे पूर्वपूर्व धातु क्षीण होजाय । * शंका—*क्यो जी रस, रुधिर, मास मेदा हड्डी, मज्जा, शुक्र इनमे क्रमसे प्रत्येकके क्षीण होनेसे शुक्रकाक्षय होना उचित है परतु कार्यभूत शुक्रका क्षय होनेसे कारणभूत धातुओंका नाश कैसे होता है ? * उत्तर *—जब शुक्रका क्षय होता है तब वात कुपित होता है सो तंत्रांतरोंमे लिखा है अर्थात् धातुके नष्ठ होनेसे पवनको वहनेवाली नाडियोका मार्ग बन्द होकर वायुको कुपित करे तब वही पवन समीपकी मज्जा धातुको सुखावे तदनंतर हड्डी और उसके पश्चात् मेदा इसी रीतिसे रसपर्यंत धातुओको सुखावे है इस जगहपर * दृष्टांत—*है जैसे अग्निमे तपाया भया लोहका गोला गीली पृथ्वीमे धरनेसे प्रथम समीपकी पृथ्वीके आर्द्रपनेको शोषण करे पीछे दूरकागीलापना शोषण करे उसी रीतिमे यहां जानना चाहिये ॥

पूर्वरूप ।

**श्वासांगसादकफसंस्रवतालुशोषवम्यग्निसादमदपीनस-**
**कासनिद्राः ॥ शोषेभविष्यतिभवन्तिसचापिजंतुः शुक्ले-**
**क्षणो भवति मांसपरोरिरंसुः ॥ ३ ॥ स्वप्नेषुकाकशुक-**

---

१ ह्रीमत्वाद्वाघृणित्वाद्वाभयाद्वावेगमागतम् । वातमूत्रपुरीषाणानिगृह्णातियदानरः" इत्यादि । २ रससे रुधिर, रुधिरसे, मांस, इसी रीतिसे शुक्रपर्यंत धातुओका क्षय हो सो । ३ शुक्रसे रसपर्यंत धातुओका शोष हो सो । ४ वायोर्धातुक्षयात् कोपो मार्गस्यावरणेन च इति ।

शल्लकिनीलकंठगृध्रास्तथैवकपयःकृकलासकाश्च ॥ तं-
वाहयंतिसनदींविजलाश्चपश्येच्छुष्कांस्तरून्पवनधूम
दवार्दितांश्च ॥ ४ ॥

अर्थ--श्वास, हाथपैरका गलना, कफका थूकना, तालुवेका सुखना, वमन, मन्दाग्नि, उन्मत्तता, पीनस, खासी और निद्रा ये लक्षण धातुशोष होनेवालेके होते है और उस मनुष्यके नेत्र सफेद होते हैं और उस मनुष्यकी मास खानेपर तथा स्त्रीसग करनेकी इच्छा होती है और स्वप्नमे कौआ, तोता, सेह, नीलकंठ, (मोर) गीध, वन्दर, करकेटा इनपर अपनेको बैठा देखे और जलहीन नदीको देखे तथा पवन धूर और धूआँ इनसे पीडित ऐसे वृक्ष देखे चकारसे तृण, केश आदिका गिरना ये होते हैं ये सब स्वप्न क्षयीरोग होनेके पहले दीखते है, सो चरकमें लिखा है * शंका-* क्यो जी शुक्रका तो क्षय होजाता है फिर "रिरंसुः" यह पद क्यो धरा? *उत्तर-* यह केवल व्याधिके वढनेसे मनके दोषसे जानना चाहिये ॥

त्रिरूपक्षयके लक्षण ।

अंसपार्श्वाभितापश्चसंतापःकरपादयोः ॥
ज्वरःसर्वांगगश्चैवलक्षणंराजयक्ष्मणः ॥ ५ ॥

अर्थ-कन्धा और पसवाडोमे पीडा हो, पैरमे जलन और सर्व अगोमे ज्वर ये राजयक्ष्माके लक्षण है ये तीन लक्षण अवश्य होते है ऐसे चरकने कहा है ॥

एकादशरूप षड्रूप और त्रिरूप शोषके लक्षण कहते हैं ।

स्वरभेदोऽनिलाच्छूलंसंकोचश्चांसपार्श्वयोः ॥ ज्वरोदाहोऽति-
सारश्चपित्ताद्रक्तस्यचागमः ॥ ६ ॥ शिरसः परिपूर्णत्वमभ-
क्तच्छन्दएवच॥कासःकंठस्यचोद्धंसोविज्ञेयःकफकोपतः ॥७॥
एकादशभिरेतैर्वाषड्भिर्वापिसमन्वितम् ॥ कासातिसारपा-

---

१ पूर्वरूपप्रतिश्यायोदौर्बल्यंदोषदर्शनम् । अदोषेष्वपिभावेषुकायेवीभत्सदर्शनम् ॥ घृणित्वमश्नतश्चापि-बलमांसपरिक्षयः । स्त्रीमद्यमांसप्रियताप्रियताचावगुंठने ॥ मक्षिकाघूणकेशादितृणानांपतनानिच । प्रायोन्न-पानेकेशानानखानांचाभिवर्द्धनम् । पतत्रिभिः पतंगैश्चश्वापदैश्चापि वर्षणम् । स्वप्नेकेशास्थिराशीनाभस्मनश्चा धिरोहणम् । जलाशयानांशैलानांवनानांज्योतिषामपि । शुष्कतांक्षीयमाणानांपततांचापिदर्शनम् ॥ प्राग्रूपंव हुरूपस्यतज्ज्ञेयंराजयक्ष्मणः, इति । अत्रश्वापदाव्याघ्रादयः ।

**श्वांतिस्वरभेदारुचिज्वरैः ॥ ८ ॥ त्रिभिर्वापीडितंलिङ्गैर्ज्वरका-सासृगामयैः ॥ जह्याच्छोषार्दितंजंतुमिच्छन्सुविपुलंयशः॥९॥**

अर्थ–यह राजयक्ष्मा त्रिदोषसे उत्पन्न है इसमे दोषोके न्यारे न्यारे मिश्रयकार सब ग्यारह रूप है ये व्याधिके प्रभावसे होते है सन्निपातज्वरके सदृश सर्व लक्षण सब दोषोंसे नहीं होते पृथक् पृथक् होते है सो दिखाते हैं । वादीके प्रभावसे स्वरभेद, कन्धे और पसवाडोमें सकोच और पीडा हो, पित्तसे ज्वर, दाह अतिसार और मुखसे रुधिरका गिरना और कफके कोपमे मस्तकका भारीपना, अन्नसे द्वेष, खाँसी, स्वरभेद ये लक्षण होते है इसमे तीन तो वातसे और चार लक्षण पित्तसे तथा चार ही लक्षण कफसे ऐसे सब ग्यारह लक्षणसे अथवा खाँसी अतिसार. पसवाडोंमें पीडा, स्वरभेद, अरुचि और ज्वर इन छः लक्षणोसे अथवा ज्वर, खाँसी और रुधिरविकार इन तीन लक्षणोसे पीडित क्षयीरोगवाले मनुष्य तथा जिसका बल, मांस.क्षीण होगया हो ऐसे रोगीको यशकी इच्छावाला वैद्य त्याग दे ऐसा रोगी असाध्य है ॥

साध्यसाध्यविचार ।

**सर्वैरर्धैस्त्रिभिर्वापिलिङ्गैर्मांसबलक्षये ॥**
**युक्तोवर्ज्यश्चिकित्स्यस्तुसर्वरूपोप्यतोऽन्यथा ॥ १० ॥**

अर्थ–स्वरभेदादिक जो ग्यारह लक्षण कहे उन सब लक्षणोकरके अथवा उनमेसे आधे अर्थात् छ. लक्षणोसे अथवा तीन लक्षण कहे इनसे युक्त जो क्षयी रोगी बल, मास क्षीण होनेपर त्याज्य है । यदि बल, मास, जिसका क्षीण न भया हो परतु सर्वलक्षणयुक्त भी है तथापि त्याज्य नहीं है उसकी चिकित्सा करनी चाहिये ।

असाध्यलक्षण ।

**महाशिनंक्षीयमाणमतिसारनिपीडितम् ॥**
**शूनमुष्कोदरंचैवयक्ष्मिणंपरिवर्जयेत् ॥ ११ ॥**

अर्थ–जो बहुत भोजन करे परतु दिनदिनप्रति क्षीण होता जाय यह असाध्य रोगी है, अतिसार करके अत्यंत पीडित हो सो रोगी भी असाध्य होता है क्यो कि, क्षयी रोगवालेका जीना मलके अधीन है जैसे लिखा है "मलायत्तं बलं पुंसां शुक्रायत्तं तु जीवितम् । तस्माद्यत्नेन संरक्षेद्यक्ष्मिणो मलरेतसी" इति ॥ और जिसके अंडकोश और उदर ये सूज गये हो, ऐसा रोगी असाध्य है, क्यो कि, शोथवाला दस्तके करानेसे अच्छा होता है सो इसपर दस्त कराना वर्जित है इसीसे ऐसे रोगीको वैद्य त्याग दे ॥

कौनसे रोगीको औषध देना योग्य है सो कहते हैं।

**ज्वरानुबंधरहितंबलवन्तंक्रियासहम् ॥**
**उपक्रमेदात्मवंतंदीप्ताग्निमकृशंनरम् ॥ १२ ॥**

**अर्थ**–जिस क्षयी रोगवाले मनुष्यको ज्वरका सम्बन्ध होय नही बलवान् औषधादि उपचारका सहनेवाला और जिसकी इन्द्रियें बलमे हो तथा जठराग्नि जिसकी दीप्त होय और कृश न हो ऐसे रोगीकी चिकित्सा ( उपचार ) करना चाहिये। इस श्लोकमे "अकृशं" इस पदके धरनेका यह प्रयोजन है कि पुष्टदेहवाला भी क्षयी रोगसे हजार दिन बच सके है सोई ग्रन्थान्तरमे लिखा है ॥

असाध्यलक्षण।

**शुक्लाक्षमन्नद्वेष्टारमूर्ध्वश्वासनिपीडितम् ॥**
**कृच्छ्रेणबहुमेहंतंयक्ष्माहंतीहमानवम् ॥ १३ ॥**

**अर्थ**–सफेद नेत्र जिसके होगये हों अन्न जिसको बुरा लगे, ऊर्ध्व श्वाससे पीडित ओर कष्टसे बहुत मूतनेवाला अर्थात् मल मुखसे उतरे इससे यह दिखाया कि जो आहार खाय सो मल होजाय जब आहारका मल होगया तब उसके मांस, रुधिर इनका क्षय होताहै इसीसे यह असाध्य है। शुक्लाक्षादिक ये प्रत्येक अलग अलग भी असाध्य है। अब कहते है कि, अति मैथुनादि करनेसे धातुका क्षय होता है इसीसे क्षयी रोग प्रगट होता है ऐसा नही किन्तु और भी कारणसे होता है उसको कहते है ॥

**व्यवायशोकवार्द्धक्यव्यायामाध्वप्रशोषिणः ॥**
**व्रणोरःक्षतसंज्ञौचशोषिणौलक्षणंशृणु ॥ १४ ॥**

**अर्थ**–अति मैथुनसे शोष, शोकशोषी, वार्द्धक्यशोषी, व्यायामशोषी, मार्गशोषी, व्रणशोषी और उरःक्षतशोषी इनके न्यारेन्यारे लक्षण कहता हू ॥

व्यवायशोषीके लक्षण।

**व्यवायशोषीशुक्रस्यक्षयलिंगैरुपद्रुतः ॥**
**पांडुदेहोयथापूर्वंक्षीयंतेचास्यधातवः ॥ १५ ॥**

**अर्थ**–व्यवायशोषी ( अति मैथुनसे क्षीण भया ) सुश्रुत के कहे अनुसार शुक्रक्षयलक्षणोंसे [ शुक्रक्षय होनेसे लिंग और अंडकोशमे पीडा होय मैथुन करनेमे अशक्त और बलसे मैथुन करे तो बहुत देरमें शुक्रका स्राव हो और वह स्राव बहुत अल्प होय अथवा रुधिरका स्राव होय ]

---

१ परं दिनसहस्रं तु यदि जीवति मानवः। सुभिषग्भिरुपक्रान्तस्तरुणः शोषपीडितः। इति।

पीडित होय उसके देहका वर्ण पीला होजाता है और शुक्रसे मज्जा मज्जासे हड्डी ऐसे उलटे धातु क्षीण होते जाते हैं ॥

### शोकशोषीके लक्षण ।

**प्रध्यानशीलःस्रस्ताङ्गःशोकशोष्यपितादृशः ॥**

अर्थ--शोकशोषी अर्थात् शोचसे जिसको क्षय हो वह चिता करे और हाथ पैर गलने लगे तथा शुक्रक्षयव्यतिरिक्त शोषवान् हो और पाडु देह हो ऐसा शोचसे क्षयवाला पुरुष होता है ॥

### जराशोषीके लक्षण ।

**जराशोषीकृशोमंदवीर्यबुद्धिबलेन्द्रियः ॥१६॥ कंपनोऽरुचिमान्भिन्नकांस्यपात्रहतस्वरः ॥ ष्ठीवतिश्लेष्मणाहीनंगौरवारुचिपीडितः ॥ १७ ॥ संप्रस्रुतास्यनासाक्षःशुष्करूक्षमलच्छविः ॥**

अर्थ-जरा ( बुढापा ) से शोषवाला मनुष्य कृश होताहे, उसके वीर्य, बुद्धि, बल और इन्द्रिय ये मन्द होजाते है कप हो, अन्नमे अरुचि, फूटे कांसीके वासनको लकडीसे बजानेसे जैसा शब्द हो, ऐसा शब्द हो, कफरहित वारवार थूके अर्थात् कफके निकालनेके वास्ते यत्न करे तथापि कफ नहीं निकले, शरीर भारी रहे, अरुचिसे पीडित पुन. अरुचिग्रहण विशेपता द्योतनके वास्ते कहा हैं मुख, नाक और नेत्र इनसे स्राव हो मल शुष्क उतरे और देहकी काति निस्तेज होय ॥

### अध्वप्रशोषीके लक्षण ।

**अध्वप्रशोषीस्रस्तांगः संभृष्टपरुषच्छविः ॥**
**प्रसुप्तगात्रावयवः शुष्कक्लोमगलाननः ॥ १८ ॥**

अर्थ-अध्वप्रशोषी ( अति मार्ग चलनेसे क्षीण हुआ ) मनुष्यके हाथ, पैर शिथिल होजावे, उसके देहका वर्ण भूजेपदार्थके सदृश और खरदरा होय है, सर्व देहमे प्रसुप्तता, हृदयमे प्यासका स्थान है सो गला और मुख इनका सूखना । *शंका-* क्यों जी जराशोषीके अनन्तर व्यायामशोषीके लक्षण कहने चाहिये अध्व ( मार्ग ) शोषीके लक्षण कहने चाहिये फिर माधवाचार्यने अध्वशोषीके लक्षण क्यो कहे ? *उत्तर-*अध्वशोषीके लक्षण इसवास्ते पहले कहे कि, व्यायामशोषीमे इसके सब लक्षण मिलते हैं। अच्छा आप ऐसे कहोगे तो व्यायमशोषीमें अध्वशोषीके कौनसे लक्षण नहीं मिलते ? *उत्तर-* तुमने कहा सो ठीक है परतु अध्वशोषीमे उरःक्षत आदि चिह्न नहीं हैं इससे पूर्व अध्वशोषीके लक्षण कहे ॥

व्यायामशोषीके लक्षण ।

**व्यायामशोषीभूयिष्ठमेभिरेवसमन्वितः ॥**
**लिङ्गैरुरःक्षतकृतैःसंयुक्तश्चक्षतंविना ॥ १९ ॥**

अर्थ--व्यायामशोषी ( अत्यत दंडकसरत आदि श्रमसे क्षीण ) मनुष्य, विशेष करके अध्वशोषीके लक्षण स्रस्तांगतादियुक्त होता है, अर्थात् जो लक्षण अध्वशोषीमे थोडेथोडे होते हैं वे व्यायामशोषीमे अधिक होते हैं और उस मनुष्यके घावके विना ही उरःक्षतके लक्षण मिलते हैं उरःक्षतके लक्षण सुश्रुत[१] में लिखे हैं ॥

तीन कारणोंसे व्रणशोष होय है सो कहते हैं ।

**रक्तक्षयाद्वेदनाभिस्तथैवाहारयंत्रणात् ॥**
**व्रणिनश्चभवेच्छोषःसचासाध्यतमोमतः ॥ २० ॥**

अर्थ—रुधिरके क्षयसे फोड़ाकी पीडासे, तैसेही आहारके घटनेसे, व्रणी पुरुषके जो, शोष होय सो अत्यंत असाध्य जानना ॥

उरःक्षतसे धातुशोष होनेका सम्भव है अतएव शोषप्रकरणमे निदान सहित उरःक्षतरोग कहते हैं ।

**धनुषायस्यतोऽत्यर्थंभारमुद्वहतोगुरुम् ॥ युध्यमानस्यबलिभिः पततोविषमोच्चतः ॥ २१ ॥ वृषंहयंवाधावंतंदम्यंचान्यंनिगृह्ण- तः ॥ शिलाकाष्ठाश्मनिर्घातान्क्षिपतोनिघ्नतःपरान् ॥ २२ ॥ अधीयानस्यवाऽत्युच्चैर्दूरंवाव्रजतोद्रुतम् ॥ महानदीर्वातरतो हयैर्वासहधावतः ॥२३॥ सहसोत्पततोदूरात्तूर्णंवातिप्रनृत्यतः । तथान्यैःकर्मभिःक्रूरैर्भृशमभ्याहतस्यच ॥ २४ ॥ ताडितेवक्ष- सिव्याधिर्बलवान्समुदीर्यते ॥ स्त्रीषुचातिप्रसक्तस्यरूक्षाल्पप्र- मिताशिनः ॥ २५ ॥**

अर्थ—बहुत तीरदाजी करनेसे, बहुत भारी वस्तु उठानेसे, बलवान् पुरुषके साथ युद्ध करनेसे ऊचे स्थानसे गिरनेसे, बैल घोडा हाथी ऊट इत्यादिक दौड़ते हुओको थामनेसे, भारी शिला लकड़ी पत्थर निर्घात ( अस्त्रविशेष ) इनके फेकनेसे शत्रुको मारनेवाला, जोरसे वेदादिक शास्त्रको पढ़नेसे अथवा दूर दिशावर शीघ्र चलकर जानेसे, गगा यमुनादि महानदीको तरनेवाला

१ तस्योरसिक्षतेरक्त पूयः श्लेष्माचगच्छति । कासमानश्छर्दयेच्चपीतरक्तासितारुणम् ॥ सततंवक्षसोत्यर्थं- दयन्तात्परिताम्यति । दुर्गंधोच्छ्वासवदनोभिन्नवर्णस्वरोनरः

अथवा घोडाके साथ दौडनेवाला, अकस्मात् कला खानेवाला, जल्दी जल्दी बहुत नाचनेसे, इसी प्रकार दूसरे मल्लयुद्धादि क्रूरकर्म करनेसे, उर ( छाती ) फट जाती है ऐसे पुरुषकी छाती दूखनेमे बलवान् उरःक्षतरूप व्याधि उत्पन्न होय है और बहुत मैथुन करे तथा रूखा थोडा कुसमय तथा छातीमे चोट लगनेसे अत्यत स्त्रीरमण करनेसे और रूखा थोडा और अनुमानका भोजन. करनेवालेके ॥

उरोविरुज्यतेऽत्यर्थंभिद्यतेऽथविभज्यते ॥ प्रपीड्यतेतथापार्श्वे शुष्यत्यङ्गंप्रवेपते ॥ २६ ॥ क्रमाद्वीर्यंबलंवर्णोरुचिरग्निश्चहीयते ॥ ज्वरोव्यथामनोदैन्यंविड्भेदोऽग्निवधादपि ॥ २७ ॥ दुष्टःश्यावोथ दुर्गंधःपीतोविग्रथितोबहुः ॥ कासमानस्यचाभीक्ष्णंकफःसास्रःप्रवर्त्तते ॥ २८ ॥ सक्षतः क्षीयतेऽत्यर्थंतथाशुक्रौजसोःक्षयात् ॥

अर्थ—पूर्वोक्त लक्षणयुक्त ऐसे पुरुषका हृदय फटेके सदृश मालूम हो अथवा हृदयके दो टूकरकर डाले ऐसा मालूम हो और हृदयमे अत्यत पीडा हो और उसके पसवाडोमे अत्यन्त पीडा हो, अंग सब सूखनेलगे तथा थरथर कापनेलगे और शक्ति मास वर्ण रुचि और अग्नि ये सब क्रमसे घटने लगे ज्वर, रहे, व्यथा हो, मनमे सन्ताप, दीन, होजाय, अग्नि मन्द होनेसे दस्त होनेलगे और बारबार खासते खासते दुष्ट काला अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त पीला गाठके समान बहुत और रुधिर मिला ऐसा कफ गिरे. इस प्रकार क्षतरोगी अत्यत क्षीण होय सो केवल क्षतसे ही क्षीण होजाय ऐसा नहीं किन्तु स्त्रीसेवन करनेसे शुक्र और ओज ( सब धातुओका तेज ) इनका क्षय होनेसे यह मनुष्य क्षीण होजाता है ॥

पूर्वरूप ।

अव्यक्तंलक्षणंतस्यपूर्वरूपमितिस्मृतम् ॥ २९ ॥

अर्थ—उस उरःक्षतके अप्रगट लक्षणोंको पूर्वरूप कहते है ॥

क्षतक्षीणके असाध्य लक्षण ।

उरोरुक्शोणितच्छर्दिःकासोवैशेषिकःकफे ॥
क्षीणेसरक्तमूत्रत्वंपार्श्वपृष्ठकटिग्रहः ॥ ३० ॥

अर्थ–क्षतक्षीण रोगीके हृदयमे पीडा होय, रुधिरकी उलटी करे और विशिष्ट कास अर्थात् पूर्वकहे जो दुष्टश्वासादि लक्षण उन्होसे युक्त हो और रुधिरयुक्त मूत्रका उतरना, पसवाडे पीठ और कमर इनमे पीडा होय ॥

अथ साध्यलक्षण ।

**अल्पलिङ्गस्यदीप्ताग्नेःसाध्योवलवतोनवः ॥**
**परिसंवत्सरोयाप्यःसर्वलिङ्गंविवर्जयेत् ॥ ३१ ॥**

अर्थ–जिसमे थोड़े लक्षण मिलतेहो और जिसकी अग्नि दीप्त हो ऐसे पुरुप, वलवान् हो तथा रोग नवा हो तो वह साध्य है और रोगको भये एक वर्ष व्यतीत होगया हो सो याप्य (साध्यासाध्य) है और जिसमे सर्व लक्षण मिलते हो सो असाध्य है उसको वैद्य त्याग दे ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकाया राजयक्ष्मरोगः समाप्तः ।

---

# अथ कासनिदानम् ।

अथ कारणसम्प्राप्ति और निरुक्ति ।

**धूमोपघाताद्रजसस्तथैवव्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च ॥**
**विमार्गगत्वादपिभोजनस्यवेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव ॥ १ ॥**
**प्राणो ह्युदानानुगतःप्रदुष्टःसंभिन्नकांस्यस्वनतुल्यघोषः ॥**
**निरेतिवक्त्रात्सहसासदोषोमनीषिभिःकासइतिप्रदिष्टः ॥ २ ॥**

अर्थ–नाक मुखमे धूर वा धूआँ जानेसे, दंडकसरत, रूक्षान्न इनके नित्य सेवन करनेसे, भोजनके कुपथ्यसें, मलमूत्रके रोकनेसे, उसीप्रकार छिका अर्थात् छींक आतीहुईके रोकनेसे, प्राणवायु अत्यत दुष्ट होकर और दुष्ट उदानवायुसे मिलकर कफपित्तयुक्त अकस्मात् मुखसे वाहर निकले उसका शब्द फूटे कास्यपात्रके समान हो उसको विद्वान्लोग कास[1] (खाँसी) कहते है ॥

**पंचकासाःस्मृतावातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः ॥**
**क्षयायोपेक्षिताःसर्वेबलिनश्चोत्तरोत्तरम् ॥ ३ ॥**

अर्थ–वात, पित्त, कफ, क्षत और क्षय ऐसे पांच प्रकारकी खासी होती है इनकी ओषध न करे तो सर्वका क्षयरूप होजाता हे ये उत्तरोत्तर वलवान् जाननी जैसे वातसे पित्तकी, पित्तसे कफकी, कफसे क्षतकी क्षतसे क्षयकी खासी प्रवल है ॥

---

१ "कसति गिर. कण्ठादूर्ध्वंगच्छति वायु रिति कास." ।

पूर्वरूप।

**पूर्वरूपंभवेत्तेषांशूकपूर्णगलास्यता॥**
**कंठेकंडूश्चभोज्यानामवरोधश्चजायते॥ ४॥**

अर्थ–मुख और गलेमे कांटेसे पड़जायँ तथा कंठमे खुजली चले भोजन करा न जाय ये खांसी होनेवालेके लक्षण है॥

वातकी खांसीके लक्षण।

**हृच्छंखमूर्धोदरपार्श्वशूलीक्षामाननःक्षीणबलस्वरौजाः॥**
**प्रसक्तवेगस्तुसमीरणेनभिन्नस्वरःकासतिशुष्कमेव॥ ५॥**

अर्थ–हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर, पसवाडा इनमे शूल चले, मुँह उतर जाय बल, स्वर, पराक्रम ये क्षीण पडजायँ वारंवार खासीका उठना, स्वरभेद और सूखी खासी उठे ये वातकी खांसीके लक्षण हैं॥

पित्तकी खांसीके लक्षण।

**उरोविदाहज्वरवक्त्रशोषैरभ्यर्दितस्तिक्तमुखस्तृषार्तः॥**
**पित्तेनपीतानिवमेत्कटानिकासेत्सपांडुःपरिदह्यमानः॥ ६॥**

अर्थ–पित्तकी खासीसे हृदयमे दाह, ज्वर, मुखका सूखना इनसे पीडित हो मुख कडुआ रहे प्यास लगे, पीले रंगकी और कडुवी ऐसी पित्तके प्रभावसे वमन हो, खासीके समय रोगीका पीला वर्ण होजाय और सब देहमे दाह होय॥

कफकी खांसीके लक्षण।

**प्रलिप्यमानेनमुखेनसीदच्छिरोरुजाऽऽर्त्तःकफपूर्णदेहः॥**
**अभक्तरुग्गौरवकंडुयुक्तःकासेद्भृशंसांद्रकफःकफेन॥ ७॥**

अर्थ–कफकी खासीसे मुख कफसे लिपटा रहे, शिरमे दर्द और सब देह कफसे परिपूर्ण रहे अन्नमे अरुचि, शरीर भारी रहे, कंठमे खुजली और रोगी वारबार खासे कफकी गाठ थूकनेसे सुख मालूम होय॥

क्षतकासलक्षण।

**अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्वगजनिग्रहैः॥ रूक्षस्योरःक्षतंवायुर्गृहीत्वाकासमावहेत्॥ ८॥ सपूर्वंकासतेशुष्कंततः ष्ठीवेत्सशोणितम्॥ कंठेनरुजताऽत्यर्थंविरुग्णेनेवचोरसा॥ ९॥ सूचीभिरिवतीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेनशूलिना॥ दुःखस्पर्शेनशूलेन**

भेदपीडाभितापिना ॥ १० ॥ पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैस्वर्यपीडितः ॥ पारावतइवाकूजन्कासवेगात्क्षतोद्भवात् ॥ ११ ॥

अर्थ—बहुत स्त्रीसंग करनेसे, भारके उठानेसे, बहुत मार्ग चलनेसे, मल्लयुद्ध ( कुस्ती ) करनेसे, हाथी घोडा दौडनेको रोकनेसे इनकारणोसे रूक्ष पुरुषका हृदय फुटकर वायुकोप होकर खांसीको प्रगट करे। सो पुरुष प्रथम सूखा खासे पीछे रुधिरमिला थूके कठ अत्यत दूखे हृदय फूटेसदृश मालूम हो ओर तीखी सूईकेसे चभका चले और उसको हृदयका स्पर्श सुहाय नही दोनो पसवाडेमे शूल हो यह वाग्भटकाभी मत है तथा दाह हो उस रोगीके गाठ गाठमे पीडा हो ज्वर, श्वास, प्यास, स्वरभेद इनसे पीडित हो क्षतजन्य खासीके वेगसे रोगी कबूतरकी तरह घुंघुं शब्द करे ॥

क्षयकी खांसीके लक्षण।

विषमासात्म्यभोज्यातिव्यवायाद्वेगनिग्रहात् ॥ घृणिनांशोचतांनृणांव्यापन्नेऽग्नौत्रयोमलाः ॥ १२ ॥ कुपिताःक्षयजंकासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम् ॥ सगात्रशूलज्वरदाहमोहान्प्राणक्षयंचापिलभेतकासी ॥ १३ ॥ शुष्यन्विनिष्ठीवतिदुर्बलस्तुप्रक्षीणमांसोरुधिरंसपूयम् ॥ तंसर्वलिंगंभृशदुश्चिकित्स्यंचिकित्सितज्ज्ञाः क्षयजंवदंति ॥ १४ ॥

अर्थ—कुपथ्य और विषमाशनके करनेसे, अति मैथुन, मलमूत्रादिक वेगधारण इनसे अति दया करनेसे, अति शोक करनेसे, अग्नि मन्द होय अर्थात् आहार थककर वायु कुपित हो अग्निको नष्ट करे। तब तीनो दोष कोपको प्राप्त हो क्षयजन्य देहका नाशक ऐसी खांसीको प्रगट करे तब वह खांसी देहको क्षीण करे शूल, ज्वर, दाह और मोह ये होयँ तब यह प्राणका नाश करे सूखी खांसी रुधिर मांस शरीरका सूखजाना, रुधिर और राध थूके इन सर्व लक्षणयुक्त और चिकित्सा करनेमे अति कठिन ऐसी इस खाँसी को वैद्य क्षयज कहते है ॥

साध्यासाध्य विचार।

इत्येषक्षयजःकासःक्षीणानांदेहनाशनः ॥ साध्योबलवतांवास्याद्याप्यस्त्वेवंक्षतोत्थितः ॥ १५ ॥ नवौकदाचित्सिध्येतामपिपादगुणान्वितौ ॥ स्थविराणांजराकासःसर्वोयाप्यःप्रकीर्तितः ॥ ॥ १६ ॥ त्रीन्पूर्वान्साधयेत्साध्यान्पथ्यैर्याप्यांस्तुयापयेत् ॥ १७ ॥

अर्थ–इस प्रकार यह क्षयज कास ( खाँसी ) क्षीण पुरुषकी घातक होती है, बलवान् पुरुषके असाध्य याप्य ( साध्यासाध्य ) होती है, क्षतज खासी भी इसी प्रकारकी होती है यदि वैद्यादि पादचतुष्टयसंपन्न हो और ये दोनो प्रकारकी खांसी नवीन हो तो कदाचित् साध्य होय और वृद्ध पुरुषके जराकास अर्थात् धातुक्षीण होनेसे भई जो खॉसी सो सब प्रकारकी याप्य है सो सब इन्द्रियोके अतर्गत जाननी। अब कहते है कि, वात, पित्त, कफ ये तीन खासी साध्य हैं और बाकी तीन याप्य हैं वह पथ्य सेवन करनेसे नाश होती है और अवज्ञा करनेसे असाध्य होजाती है॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीमाथुरभाषाटीकायां कासरोगनिदानम्।

# हिक्का–श्वासनिदानम्।

**विदाहिगुरुविष्टंभिरूक्षाभिष्यंदिभोजनैः॥ शीतपानाशनस्नानरजोधूमातपानिलैः ॥ १ ॥ व्यायामकर्मभाराध्ववेगघातापतर्पणैः॥ हिक्काश्वासश्चकासश्चनृणांसमुपजायते ॥ २ ॥**

अर्थ–दाहकारक, भारी, आफराकारक, रूखा, अभिष्यंदी ऐसे भोजन करनेसे, शीतल जल पीनेसे, शीतल अन्न खानेसे, शीत जल करके स्नान करनेसे, रज और धूआँका मुख नाकमे जानेसे, गरमी व हवामे डोलनेसे दंडकसरतके करनेसे भारके उठानेसे वहुत मार्गके चलनेसे मलादिक वेगके रोकनेसे और उपवासके करनेसे मनुष्यके हिक्का ( हिचकी ) श्वास ( दमा ) और कास ( खासी ) ये रोग उत्पन्न होते है॥

हिक्काका स्वरूप और निरुक्ति।

**मुहुर्मुहुर्वायुरुदेतिसस्वनोयकृत्प्लिहांत्राणिमुखादिवाक्षिपन् ॥ सघोषवानाशुहिनस्त्यसून्यतस्ततस्तुहिक्केत्यभिधीयतेबुधैः ॥ ३ ॥**

अर्थ--उदानवायु प्राणवायुके साथ मिलकर जब निकले तब मनुष्य हिग्हिग् ऐसा शब्द करे और कलेजा प्लीहा इनको मुखपर्यंत खींचलावे ( इस स्थानमे मुख शब्द करके प्राण जल, अन्न इनके वहनेवाले मार्ग जानने ) और मुखमे आनकर वडा शब्द निकले उसको वैद्यवर हिक्का ( हिचकी ) रोग कहै हैं यह शीघ्र प्राणोकी हरनेवाली होती है॥

१ पूयाभमस्रं ग्यावहरितपीतनीलकम्। निष्ठीवेच्छ्वासकासार्तोनजीवतिहतस्वरः ॥ कासश्वासक्षयच्छर्दिस्वरभेदादयोगदाः। भवंत्युपेक्षयाऽसाध्यास्तस्मात्तास्त्वरयाजयेत् ॥ इति। २ अत्र प्लिहोह्रस्वेकावान् छन्दोऽनुरोधात्" ३ हिनस्त्यसूनिति। हिक्केति निरुक्तिः, पृषोदरादिना रूपसिद्धिः। हिगिति कृत्वा [illegible] शब्दायते इति हिक्केति शाब्दिकाः॥ ४ उक्तंच–प्राणोदकान्नवाहीनि स्रोतांसि विकृतोनिलः॥ [illegible]ःकरोतिसंरुध्यतासां लिंग पृथक् शृणु, इति।

हिक्काके भेद और संप्राप्ति।

**अन्नजांयमलांक्षुद्रांगंभीरांमहतींतथा ॥**
**वायुःकफेनानुगतः पंचहिक्काः करोतिहि ॥ ४ ॥**

अर्थ—वात कफसे मिलकर १ अन्नजा, २ यमला, ३ क्षुद्रा, ४ गभीरा, और ५ महती ऐसे पाच प्रकारकी हिचकी रोगको प्रगट करे ॥

पूर्वरूप ।

**कंठोरसोर्गुरुत्वंचवदनस्यकषायता ॥**
**हिक्कानापूर्वरूपाणिकुक्षेराटोपएवच ॥ ५ ॥**

अर्थ—कंठ ओर हृदय भारी रहे और वादीसे मुख कसैला रहे, कूखमे आफरा रहे यह हिचकीका पूर्वरूप जानना ॥

अन्नजाके लक्षण ।

**पानान्नैरतिसंभक्तैः सहसापीडितोऽनिलः ॥**
**हिक्कयत्यूर्ध्वगोभूत्वातांविद्यादन्नजांभिषक् ॥ ६ ॥**

अर्थ—अन्न और पानीके वहुत सेवन करनेसे बात अकस्मात् कुपित हो ऊर्ध्वगामी होकर मनुष्यके अन्नजा हिचकी प्रगट करे ॥

यमलाके लक्षण ।

**चिरेणयमलैर्वेगैर्याहिक्कासंप्रवर्त्तते ॥**
**कंपयंतीशिरोग्रीवांयमलांतांविनिर्दिशेत् ॥ ७ ॥**

अर्थ—ठहरठहरके दोदो हिचकी चले, शिरकधाको कपावे वह यमला हिचकी जाननी ॥

क्षुद्राके लक्षण ।

**प्रकृष्टकालैर्यावेगैर्मन्दैःसमभिवर्त्तते ॥**
**क्षुद्रिकानामसाहिक्काजत्रुमूलात्प्रधावति ॥ ८ ॥**

अर्थ—जो हिचकी वहुत देरमे कठ हृदयकी सांधिसे मंदमद चले उसको क्षुद्रा नाम हिचकी कहते है ॥

गंभीराके लक्षण ।

**नाभिप्रवृत्तायाहिक्काघोरागंभीरनादिनी ॥**
**अनेकोपद्रववतीगंभीरानामसास्मृता ॥ ९ ॥**

अर्थ–जा हिचकी नाभिके पाससे उठ घोर गभीर शब्द करे और जिसमें प्यास ज्वरादि अनेक उपद्रव हों उसको गभीरा हिचकी कहते हैं ॥

महती हिचकीके लक्षण ।

मर्माण्युत्पीडयंतीचसततंयाप्रवर्तते ॥
महाहिक्केतिसाज्ञेयासर्वगात्रप्रकंपिनी ॥ १० ॥

अर्थ–जो हिचकी मर्मस्थानमे पीडा करती हुई और सर्व गात्रोको कपावती हुई सब कालमें प्रवृत्त होय उसको महाहिक्का कहते है ॥

असाध्यलक्षण ।

आयम्यतेहिक्कतोयस्यदेहोदृष्टिश्चोर्ध्वंताम्यतेयस्यनित्यम् ॥
क्षीणोऽन्नद्विट्क्षौतियश्चातिमात्रंतौद्वौचांत्यौवर्जयेद्धिक्कमानौ ११॥

अर्थ–जिसका हिचकीसे देह तन जावे, ऊची दृष्टि होजावे और मोह होय, क्षीण पडजाय, भोजनसे अरुचि हो और छींक बहुत आवे इन दोनो हिचकियोवाला रोगी अर्थात् जिसको गम्भीरा और महती हिचकी होय, सो वैद्यको त्याज्य है ॥

असाध्यलक्षण ।

अतिसंचितदोषस्यभक्तच्छेदकृशस्यच ॥ व्याधिभिःक्षीणदेहस्यवृद्धस्यातिव्यवायिनः ॥ १२ ॥ आसांयासासमुत्पन्ना हिक्काहंत्याशुजीवितम् ॥

अर्थ–जिसके अत्यन्त दोषोका सचय होगया हो और जिसका अन्न छूटगयाहो; जो कृश होगयाहो, जिसका अनेक व्याधिसे देह क्षीण होगया हो और जो वृद्ध है, अतिमैथुन करनेवाला है ऐसे पुरुषके ये दोनो हिचकी उत्पन्न होयँ तौ तत्क्षण उस रोगीके प्राणनाश करे ॥

यमिकाके असाध्य लक्षण ।

यमिकाचप्रलापार्त्तिमोहतृष्णासमन्विता ॥ १३ ॥

अर्थ–बकवाद करे, पीडा हो, मोह, प्यास इन लक्षणोसे युक्त जो यमिकानामकी हिचकी सो तत्काल प्राणहरनेवाली जानना ॥

अक्षीणश्चाप्यदीनश्चस्थिरधात्विंद्रियश्चयः ॥
तस्यसाधयितुंशक्यायमिकाहंत्यतोऽन्यथा ॥ १४ ॥

अर्थ–बलवान्, प्रसन्न मन, जिसकी धातु और इन्द्रिय स्थिर हो ऐसे पुरुषकी यमिका हिचकी साध्य है और इससे विपरीत अर्थात् क्षीण, दीन इत्यादि पुरुषको तत्कालही नाश करे। अन्नजा, क्षुद्रा ये दोनो साध्य ही दो बार आनेसे यमिका कहाती है **चरकोक्त** यमला इस जगह नही ग्रहण करनी चाहिये ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायां हिक्कारोगनिदान समाप्तम्।

---

# अथ श्वासनिदानम्।

**महोर्ध्वच्छिन्नतमकक्षुद्रभेदैस्तुपंचधा।**
**भिद्यतेसमहाव्याधिःश्वासएकोविशेषतः ॥ १ ॥**

अर्थ–हिक्का श्वासका एक हेतु होनेसे हिक्काके अनन्तर श्वासरोगको कहते है--महाश्वास, ऊर्ध्वश्वास, छिन्नश्वास, तमकश्वास और क्षुद्रश्वास इन भेदोसे एक श्वासरोग पाच प्रकारका है ॥

श्वासके पूर्वरूपके लक्षण।

**प्राग्रूपंतस्यहृत्पीडाशूलमाध्मानमेवच।**
**आनाहोवक्रवैरस्यंशंखनिस्तोदएवच ॥ २ ॥**

अर्थ–हृदय दूखे, शूल हो, अफरा हो, पेट तनासा हो, कनपटी दूखे, मुखमे रसका स्वाद आवे नही यह श्वासरोगका पूर्वरूप है ॥

श्वासरोगकी सम्प्राप्ति।

**यदास्रोतांसिसंरुध्यमारुतः कफपूर्वकः ॥**
**विष्वग्व्रजतिसंरुद्धस्तदाश्वासान्करोतिसः ॥ ३ ॥**

अर्थ–सर्व देहमे विचरनेवाला पवन जब कफसे मिलकर प्राण अन्न उदक बहनेवाली सब नसोके मार्गको रोकदेवे तब पवन फिरनेसे रुककर श्वासरोगको प्रगट करे ॥

महाश्वासके लक्षण।

**उद्धूयमानवातोयःशब्दवद्दुःखितोनरः ॥ उच्चैःश्वसितिसंरुद्धो मत्तर्षभइवानिशम् ॥ ४॥ प्रणष्टज्ञानविज्ञानस्तथाविभ्रांतलोचनः ॥ विवृताक्ष्याननोबद्धमूत्रवर्चाविशीर्णवाक् ॥ ५ ॥**

**दीनःप्रश्वसितंचास्यदूराद्विज्ञायतेभृशम् ॥ महाश्वासोपसृष्ट-स्तुक्षिप्रमेवविपद्यते ॥ ६ ॥**

अर्थ- जिसका वायु ऊपरको जायके प्राप्तहो ऐसा मनुष्य दुःखित होकर मुखसे शब्दयुक्त श्वासको निकाले, ऊंचे स्वरसे अथवा जैसे मतवाला बैल शब्द करे या प्रकार रात्रिदिन श्वाससे पीडित हो उसके ज्ञान विज्ञान जाते रहैं, नेत्र चचल हो और जिसका श्वास लेनेमे नेत्र और मुख फटजाय, मल मूत्र वन्द होजाय, बोलाजाय नही अथवा बोले, तो मन्द बोल मन खिन्न हो और जिसका श्वास दूरसे सुनाई दे यह महाश्वास जिस पुरुषके हो वह तत्काल मरणको प्राप्त होय ॥

ऊर्ध्वश्वासके लक्षण ।

**ऊर्ध्वंश्वसितियोदीर्घंनचप्रत्याहरत्यधः॥ श्लेष्मावृतमुखस्रोताः क्रुद्धगंधवहार्दितः ॥ ७ ॥ ऊर्ध्वदृष्टिर्विपश्यश्चविभ्रांताक्षइत-स्ततः ॥ प्रमुह्यन्वेदनार्तश्चशुष्कास्योऽरतिपीडितः ॥ ८ ॥**

अर्थ--बहुत देरपर्यंत ऊचा श्वास ले नीचे आवे नही. कफसे मुख भरजाय तथा और सब नाडियोके मार्ग कफसे वन्द होजॉय, कुपित वायुसे पीडित हो, ऊपरको नेत्र कर चचलदृष्टिसे चारो ओर देखे, मूर्च्छाकी पीडासे अत्यत पीडित हो, मुख सूखे तथा वेहोश हो ये ऊर्ध्वश्वासके लक्षण है ॥

ऊपरकोही श्वास ले नीचे नहीं आवे यह जो कहा उसमें कारण कहते हैं.

**ऊर्ध्वश्वासेप्रकुपितेह्यधःश्वासोनिरुध्यते ॥**
**मुह्यतस्ताम्यतश्चोर्ध्वश्वासस्तस्यैवहंत्यसून् ॥ ९ ॥**

अर्थ--ऊपरका श्वास कुपित होनेसे नीचेका श्वास बन्द होय अर्थात् हृदयमे रुकजाय अथवा श्वास कहिये वायु सो नीचे नही उतरे तब मनुष्यको मोह हो ग्लानि हो ऐसे पुरुषके ऊर्ध्वश्वास प्राणको हरण करे ॥

छिन्नश्वासके लक्षण ।

**यस्तुश्वसितिविच्छिन्नंसर्वप्राणेनपीडितः ॥ नवाश्वसितिदुः खार्तो मर्मच्छेदरुगार्दितः॥१०॥आनाहस्वेदमूर्च्छार्तोदह्यमानेन बास्तिना ॥ विप्लुताक्षःपरिक्षीणःश्वसन्रक्तैकलोचनः ॥ ११ ॥ विचेताःपरिशुष्कास्योविवर्णःप्रलपन्नरः॥ छिन्नश्वासेनविच्छि-न्नःसशीघ्रंविजहात्यसून् ॥ १२ ॥**

अर्थ–जो पुरुष ठहर ठहरकर जितनी शक्ति उतनी शक्तिसे श्वासको त्याग करे, अथवा क्लेशको प्राप्तहो श्वासको नही छोडे और मर्म कहिये हृदय बस्ति ( मूत्रस्थान ) और नाडियोंको मानो कोई छेदन करे ऐसी पीडा हो, पेटका फूलना, पसीना और मूर्च्छा, इनसे पीडित हो, बस्ति ( मूत्रस्थान ) मे जलनहो, नेत्र चलायमान हो, अथवा नेत्र आसुओसे भरे हो, श्वास लेते २ थक जाय, तथा श्वास लेते लेते एक नेत्र लाल होजाय, ( यह व्याधिके प्रभावसे होयहै दोपके प्रभावसे होय तो दोनो होजायँ ( उद्विग्न चित्त होजाय, मुख सूखे देहका वर्ण पलट जाय, बकवा-दकरे, संधिके सब बंध शिथिल होजायँ, इस छिन्नश्वासकरके मनुष्य शीघ्र प्राणका त्याग करे ॥

## तमकश्वासके लक्षण।

**प्रतिलोमं यदा वायुः स्रोतांसि प्रतिपद्यते ॥ ग्रीवां शिरश्च संगृह्य श्लेष्माणं समुदीर्य च ॥ १३ ॥ करोति पीनसं तेन रुद्धो घुर्घुरकं तथा ॥ अतीव तीव्रवेगेन श्वासं प्राणप्रपी-डकम् ॥ १४ ॥ प्रताम्यति स वेगेन त्रस्यते सन्निरुध्यते ॥ प्रमोहं कासमानश्च स गच्छति मुहुर्मुहुः ॥ १५ ॥ श्लेष्म-ण्यमुच्यमानेनभृशंभवतिदुःखितः ॥ तस्यैवचाविमोक्षांतेमुहू-र्तंलभतेसुखम् ॥ १६ ॥ तथास्योद्ध्वंसतेकंठःकृच्छ्राच्छक्नो-तिभाषितुम् ॥ नचापिनिद्रांलभतेशयानः श्वासपीडितः ॥१७॥ पार्श्वेतस्यावगृह्णातिशयानस्यसमीरणः॥आसीनोलभतेसौख्य-मुष्णंचैवाभिनन्दति ॥ १८ ॥ उच्छ्रिताक्षोललाटेनस्विद्यता-भृशमार्तिमान् ॥ विशुष्कास्योमुहुः श्वासोमुहुश्चैवावधम्यते ॥ ॥ १९ ॥ मेघांबुशीतप्राग्वातैःश्लेष्मलैश्चविवर्द्धते सयाप्य-स्तमकश्वासःसाध्योवास्यान्नवोत्थितः ॥ २० ॥**

अर्थ–जिसकालमे शरीरकी पवन उलटी गतिसे नाडियोंके छिद्रमे प्राप्त होकर मस्तक तथा कंठका आश्रयकर कफसयुक्त होय, तब कफसे रुककर अतिवेगपूर्वक कंठमे घुर घुर शब्द करे और मस्तकमे पीनसरोग करे और अत्यन्त तीव्र वेगसे हृदयको पीडाका करनेवाला ऐसे श्वासको उत्पन्न करे, उस श्वासके वेगसे मूर्च्छित होय, त्रासको प्राप्त होय चेष्टारहित होय और खासीके उठनेसे बडे मोहको वारवार प्राप्त होय और जब कफ छूटे तब दुःख होय और कफ छूटनेके बाद दो घडीपर्यन्त सुख पावे, कंठमे खुजली चले, बडे कष्टसे बोले, श्वासकी पीडासे नींद न

आवे, सोवे तौ वायुसे पसवाड़ेमे पीडा होय, बैठेही चैन पड़े और गरमीके पदार्थोंसे खुश होय, नेत्रोमे सूजन होय, ललाटमें पसीना आवे अत्यन्त पीडा होय, मुख सूखे, वारंवार श्वास और वारवार हाथीपर बैठनेके सदृश सर्वदेह चलायमान होवे यह श्वास, मेघके वर्षनेसे, शीतसे पूर्वकी पवनसे और कफकारक पदार्थोंके सेवन करनेसे वढेहै यह तमकश्वास याप्य है यदि नया प्रगट भया होय तो साध्य होयहै ॥

पित्तका अनुवन्धहोकर ज्वरादिकोंका योग होनेसे प्रतमक
होय है इसको कहते हैं ।

**ज्वरमूर्च्छापरीतस्यविद्यात्प्रतमकंतुतम् ॥**

अर्थ–इस तमकश्वासमे ज्वर और मूर्च्छा ये दोनो लक्षण होनेसे इनको 'प्रतमकश्वास' कहते हैं ॥

प्रतमकके दूसरे लक्षण और कारण कहते हैं ।

**उदावर्तरजोजीर्णक्लिन्नकायनिरोधजः ॥ २१ ॥**
**तमसावर्धतेऽत्यर्थंशीतैश्चाशुप्रशाम्यति॥**
**मज्जतस्तमसीवास्यविद्यात्प्रतमकंतुतम् ॥ २२ ॥**

अर्थ–उदावर्त्त, धूल, आमादि, अजीर्ण विदग्धान्न, मल मूत्रादि वेगके रोकनेसे अथवा क्लिन्नकाय कहिये वृद्ध मनुष्य और निरोध कहिये वेगरोध इन कारणोसे प्रगट भई जो श्वास सो अधकारसे अथवा तमोगुणसे अत्यन्त वढे और शीतल उपचारसे शीघ्र शांति होजाय, इस श्वासके योगसे रोगीको अन्धकारमे डूबासदृश मालूम होय, इसको प्रतमकश्वास ऐसे कहते है ॥

क्षुद्रश्वासके लक्षण ।

**रूक्षायासोद्भवःकोष्ठेक्षुद्रोवातमुदीरयेत्॥ क्षुद्रश्वासोनसोऽत्यर्थं दुःखेनांगप्रबाधकः ॥ २३ ॥ हिनस्तिनसगात्राणिनचदुःखोयथेतरे ॥ नचभोजनपानानांनिरुणद्ध्युचितांगतिम् ॥ २४ ॥ नेंद्रियाणांव्यथांचापिकांचिदापादयेद्रुजम् ॥ ससाध्यउक्तो**

अर्थ–रूखा पदार्थ खानेसे, श्रमके करनेसे. प्रगट भई जो क्षुद्रश्वास सो पवनको ऊपर लेजाय यह क्षुद्रश्वास अत्यन्त दुःखदायक नही है । तथा अंगोको कुछ विकार नही करे जैसे

ऊर्ध्वश्वासादिक दुःखदायक हैं ऐसे यह नही हैं और भोजनपानादिकोंकी उचित गतिको बन्द नही करे और इन्द्रीनको भी पीडा नही करे और कोई रोगको भी नही प्रगट करे । यह क्षुद्रश्वास साध्य कहा है ॥

बलिनाःसर्वेचाव्यक्तलक्षणाः॥ २५॥क्षुद्रःसाध्यतमस्तेषांतमकः क्षुद्र उच्यते ॥ त्रयः श्वासानसिध्यंतितमकोदुर्बलस्यच ॥ २६ ॥

अर्थ-बलवान् पुरुषके सब महाश्वासादिकोंके लक्षण प्रगट न होंय तौ साध्य है, तिनमे भी क्षुद्रश्वास अत्यन्त साध्य है और तमकको क्षुद्र कहते है । अथवा " तमकः क्षुद्र उच्यते " इस जगह " तमकः कृच्छ्र उच्यते " ऐसा भी पाठ कोई कहते है । उसका अर्थ यह है कि, तमक कृच्छ्रसाध्य है, महान्, ऊर्ध्व और छिन्न ये तीन श्वास सम्पूर्ण लक्षणयुक्त साध्य नही है और निर्बल पुरुषके तमकश्वास भी साध्य नही होय ॥

कामंप्राणहरारोगाबहवोनतुतेतथा ॥
यथाश्वासश्चहिक्काचहरतःप्राणमाशुवै ॥ २७ ॥

अर्थ-प्राणहरण करनेवाले ऐसे सन्निपात ज्वरादिक रोग बहुतसे है सो ठीक है । परंतु श्वास और हिचकी ये जैसे जल्दी प्राण हरण करते है ऐसे और ज्वरादिक नही करे ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकायां
श्वासनिदानं समाप्तम् ।

---

# अथ स्वरभेदनिदानम् ।

अत्युच्चभाषणविषाध्ययनाभिघातसंदूषणैःप्रकुपिताःपवनाद्-यस्तु ॥ स्रोतःसुतेस्वरवहेषुगताःप्रतिष्ठांहन्युःस्वरंभवतिचा-पिहिषड्विधःसः ॥१॥ वातादिभिःपृथक् सर्वैर्मेदसाच क्षयेणच ॥

अर्थ-बहुत जोरके बोलनेसे, विषके खानेसे, ऊँचे स्वरके पाठ करनेसे अर्थात् वेदादि पाठ करनेसे, कंठमे लकड़ी काष्ठ आदिकी चोट लगनेसे कोपको प्राप्तहुए जो वात, कफ,पित्त सो कंठमें

स्वरके वहनेवाली चारों नसे है उनमे प्राप्तहो अथवा उनमे वृद्धिको प्राप्त स्वरको नाश करे यह स्वरभेदरोग वात, पित्त, कफ, सान्निपात, क्षय और मेद इन भेदोसे छः प्रकारका है ॥

वातस्वरभेदके लक्षण ।

**वातेनकृष्णनयनाननमूत्रवर्चाभिन्नंस्वरंवदतिगर्दभवत्खरंच ॥**

अर्थ—वायुसे स्वरभग होय तौ रोगीके नेत्र; मुख, मूत्र और विष्ठा यह काले होयँ वह पुरुष टूटा हुआ शब्द बोले अथवा गधाके स्वरप्रमाण कर्कश बोले ॥

पित्तजस्वरभेदके लक्षण ।

**पित्तेनपीतनयनाननमूत्रवर्चाब्रूयाद्गलेनसचदाहसमन्वितेन ॥२॥**

अर्थ--पित्तस्वरभेदवाले मनुष्यके नेत्र, मुख, मूत्र और विष्ठा ये पीले होतेहै और बोलते समय गलेमे दाह होता है ॥

कफके स्वरभेदके लक्षण ।

**ब्रूयात्कफेनसततंकफरुद्धकंठः**
**स्वल्पंशनैर्वदतिचापि दिवाविशेषात् ॥**

अर्थ—कफके स्वरभेदसे, कठ कफसे रुका रहे और मंद मद तथा थोडा बोले दिनमे बहुत बोले ॥

सन्निपातके स्वरभेदका लक्षण ।

**सर्वात्मकेभवतिसर्वविकारसंपत्तंचाप्यसाध्यमृषयःस्वरभेदमाहुः३ ॥**

अर्थ- सन्निपातके स्वरभेदमे तीनो दोषोंके लक्षण होते है यह स्वरभेद असाध्य है ऐसे ऋषि कहते हैं ॥

क्षयजन्यस्वरभेदके लक्षण ।

**धूम्येतवाक्क्षयकृतेक्षयमाप्नुयाच्चवागेषचापिहतवाक्परिवर्जनीयः ॥**

अर्थ—क्षयीके स्वरभेदवाले पुरुषके बोलते समय मुखसे धूआसा निकले और वाणी क्षय होजाय अर्थात् यथार्थ स्वर नहीं निकले । इस स्वरभेदमे जिस समय वाणी हत होजाय अर्थात् ओजका क्षय होनेसे बोलनेकी सामर्थ्य नहीं हो तब यह असाध्य होता है और ओजका क्षय ( नाश ) नहीं हो तौ साध्य है ॥

---

१ यदुक्तं सुश्रुते–क्षाम्या भाषते क्षाम्यां घोष करोति, भाषणघोषणयोरल्पमहत्वाभ्यां भेदः ।

मेदके स्वरभेदका लक्षण।

अंतर्गतस्वरमलक्ष्यपदंचिरेणमेदोन्वयाद्वदतिदिग्धगलस्तृषार्त्तः ४

अर्थ–मेदके सम्बन्धसे कफ अथवा मेदसे गला लिप्त होय अथवा मेदसे स्वरके मार्ग रुकजानेसे प्यास बहुत लगे, गलेके भीतर बोले और मंद बोले ॥

असाध्य लक्षण।

क्षीणस्यवृद्धस्यकृशस्यचापिचिरोत्थितोयस्यसहोपजातः ॥
मेदस्विनःसर्वसमुद्भवश्चस्वरामयोयोनससिद्धिमेति ॥ ५ ॥

अर्थ–क्षीण पुरुषके, वृद्धके, कृशके, बहुत दिनका, जन्मके सगही प्रगट भया मोटे पुरुषके और सन्निपातोद्भव ऐसा स्वरभेदरोग साध्य नहीं होता ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाथुरीमाधवार्थभाषाटीकायांस्वरभेदनिदान समाप्तम्।

# अथारोचकनिदानम्।

वातादिभिःशोकभयातिलोभक्रोधैर्मनोघ्नाशनरूपगंधैः ॥
अरोचकाःस्युःपरिहृष्टदंतकषायवक्त्रश्चमतोऽनिलेन ॥ १ ॥

अर्थ–पृथक् वातादि दोषोकरके ३, सन्निपातसे १, आगन्तुकसे १ जैसे भयसे अतिलोभसे तथा अतिक्रोधसे ऐसे पाच प्रकारका अरोचक ( अरुचि ) रोगहै। वह मनको क्लेश देनेवाला अन्न, रूप और गध इन कारणोसे प्रगट होताहै सुश्रुत और अन्य ग्रन्थोके मतसे भी पाचही प्रकार मुख्य माने है भय, लोभ, क्रोधकी अरुचिको शोककी ही अरुचिके अन्तर्गत मानते है। वादीकी अरुचिसे दात खट्टे हो और मुख कसेला होय ॥

कट्वम्लमुष्णंविरसंचपूतिपित्तेनविद्याल्लवणंचवक्त्रम् ॥
माधुर्यपैच्छिल्यगुरुत्वशैत्यविबद्ध संबद्धयुतंकफेन ॥ २ ॥

अर्थ–पित्तकी अरुचिसे कडुआ, खट्टा, गरम, विरस, दुर्गंधयुक्तनुनखरा ऐसा मुख होय कफकी अरुचिमे खारा, मीठा, पिच्छल, भारी, शीतल मुख होय है और मुख बँधा सरीखा अर्थात् खाय नही और भीतर कफसे लिप्त होय ॥

---

१ अरोचके भवेद्दोषैरेको हृदयसश्रयैः। सन्निपातेन मनसः सन्तापेन च पञ्चम., इति।

### शोकादि अरुचिके लक्षण।

**अरोचकशोकभयातिलोभक्रोधाद्यहृद्याःशुचिगंधजेस्यात् ॥**
**स्वाभाविकंचास्यमथारुचिश्चत्रिदोषजेनैकरसंभवेत्तु ॥ ३ ॥**

अर्थ–शोक, भय, अतिलोभ, क्रोध, अहृद्य ( मनको बुरी लगे ऐसी वस्तु ) अपवित्र वास इनमे प्रगट हुई अरुचिमे मुख स्वाभाविक रहे अर्थात् वातजादिकोके सदृश कसेला, खट्टा आदि नही होय। सन्निपातकी अरुचिमे अन्नसे अरुचि तथा मुखसे अनेक रस माॡम हो ॥

### वातजादि भेदकरके मुखकी विकृतिको कहकर अन्य ठिकानेपर जो विकृति होय है उसे कहते हैं।

**हृच्छूलपीडनयुतंपवनेनपित्तात्तृड्दाहचोषबहुलंसकफप्रसेकम् ॥**
**श्लेष्मात्मकंबहुरुजंबहुभिश्चविद्याद्वैगुण्यमोहजडताभिरथापरंच ४**

अर्थ–वातकी अरुचिसे हृदयमे शूल और वेदना होती है। पित्तसे प्यास, दाह और चूसनेके सदृश पीडा ये लक्षण होते है। कफकी अरुचिमे मुखसे कफ गिरे, सन्निपातकी अरुचिमे पीडा अत्यन्त होय। वैगुण्य कहिये मनकी व्याकुलता, मोह, जडत्व इन लक्षणोसे अपर कहिये आगतुज अरोचक जाने। भूख होय परंतु खानेकी सामर्थ्य न होना इसको अरुचि कहते हैं। आपको प्रियभी अन्न किसीने दिया हो परतु खाय नहीं उसको अन्नाभिनन्दन कहते हैं। अन्नके स्मरण, श्रवण, दर्शन और वास इनसे जिसको त्रास होय, उसको भक्तद्वेष कहते है। इस प्रकार यह रोग तीन प्रकारका हैं। इसीवास्ते चरक सुश्रुतने अरोचके शब्दकरके सग्रह करा हे ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकाया-
मरुचिरोगनिदान समाप्तम्।

---

१ उक्तं हि वृद्धभोजेन–प्रक्षिप्त यन्मुखेचान्न जतोस्तत्स्वदतेमुहुः। अरोचकः सविज्ञेयो भक्तद्वेषमतंशृणु। चितयित्वानुमनसाहट्वाश्रुत्वाचभोजनम्। द्वेषमायातियोजन्तुर्भक्तद्वेषःसउच्यते ॥ कुपितस्य भयार्त्तस्य अभिचाराभिभूतये। यस्यान्नेनभवेच्छ्रद्धासभक्तद्वेषउच्यते ॥ इति।

# अथ छर्दिनिदानम् ।

छर्दिके कारण और निरुक्ति ।

**दुष्टैर्दोषैःपृथक्सर्वैर्बीभत्सालोकनादिभिः ॥ छर्दयः पंचविज्ञेयास्तासांलक्षणमुच्यते ॥१॥ अतिद्रवैरतिस्निग्धैरहृद्यैर्लवणैरपि ॥ अकालेचातिमात्रैश्चतथासात्म्यैश्चभोजनैः ॥ २ ॥ श्रमाद्भयादथोद्वेगादजीर्णात्क्रिमिदोषतः ॥नार्याश्चापन्नसत्त्वायास्तथातिद्रुतमश्नुतः ॥ ३ ॥ बीभत्सैर्हेतुभिश्चान्यैर्द्रुतमुत्क्लेशितोबलात् ॥ छादयन्नाननंवेगैरर्दयन्नङ्गभञ्जनैः॥ ४ ॥ निरुच्यतेछर्दिरितिदोषोवक्त्रंप्रधावति ॥**

अर्थ–दुष्ट हुऐ पृथक् और सब दोषो करके तथा दुष्ट वस्तुके देखनेसे आदिशब्दकरके दुष्ट गंधके सूंघनेसे पाच प्रकारकी छर्दि जाननी अर्थात् जिसको रद्द, वमन, उलटी कहते हैं उसके लक्षण आगे कहते है अत्यन्त पतले अथवा चिकने अहृद्य ( अप्रिय ) वस्तु, खारके पदार्थ, इनके सेवन करनेसे, कुसमय भोजन करनेसे, अथवा अत्यन्त भोजन करनेसे अथवा जो न पचे ऐसे भोजन करनेसे, श्रम, भय, उद्वेग, अजीर्ण, क्रिमिदोष इन कारणोसे गर्भिणी स्त्रीके गर्भकी पीडासे, तथा जल्दी २ भोजन करनेसे और बीभत्स ( खोटे ) कारणोसे जैसे विष्ठा, राध, आदिका देखना इनसे तीनों दोष कुपित हो बलसे मुखको आच्छादन करे और अंगोको पीडाकर मुखद्वारा भोजन हुआ सब निकाल देयँ इसको ( छर्दि ) उलटी ऐसे मनुष्य कहते है। इसजगे उदान वायु वमन कराती है ॥

पूर्वरूप ।

**हृल्लासोद्गारसंरोधौप्रसेकोलवणास्यता ॥**
**द्वेषोन्नपानेचभृशंवमीनांपूर्वलक्षणम् ॥ ५ ॥**

अर्थ–हृदयमे खारा, खट्टा, प्रथमही निकले अथवा सूखी रद्द होयँ डकार आवे नहीं, लार गिरे, खारी मुख होजाय, अन्न और पानीसे अत्यन्त अरुचि होय ये छर्दि ( छाट के पूर्वरूप हैं ॥

---

१ "छादयति मुखं अर्दयतिचाङ्गानि इति छर्दिः"–

वातकी छर्दिके लक्षण ।

हृत्पार्श्वपीडामुखशोषशीर्षनाभ्यर्त्तिकासस्वरभेदतोदैः ॥
उद्गारशब्दंप्रबलंसफेनंविच्छिन्नकृष्णंतनुकंकषायम् ॥ ६ ॥
कृच्छ्रेणचाल्पंमहताचवेगेनाऽर्तोऽनिलाच्छर्दयतीहदुःखम् ॥

अर्थ—हृदय और पसवाडा इनमे पीडा होय, मुखशोष, मस्तक और नाभि इनमे शूल होय, खांसी, स्वरभेद, सूई चुभनेकी सी पीडा होय, डकारका शब्द प्रबल होय वमनमे झाग आवे, ठहर ठहर कर वमन होय, तथा थोडी होय, वमनका रंग काला होय, पतली और कसैली होय, वमनका वेग वहुत होय परंतु वमन थोडा होय, और वेगके प्रभावसे दुःख वहुत होय ये लक्षण वायुकी छर्दिके हैं ॥

पित्तकी छर्दिके लक्षण ।

मूर्च्छापिपासामुखशोषशीर्षताल्वक्षिसंतापतमोभ्रमार्तः ॥
पीतंभृशोष्णंहरितंसतिक्तंधूम्रंचपित्तेनवमेत्सदाहम् ॥ ७ ॥

अर्थ—मूर्च्छा, प्यास, मुखशोष मस्तक, तलुआ, नेत्र इनमे सन्ताप अर्थात् तपायमान रहे, अंधेरा आवे, चक्कर आवे, रोगी पीला गरम हरा कडुआ धूओंके रंगका और दाहयुक्त ऐसा पित्तको वमन करे यह पित्तकी छर्दिका लक्षण है ॥

कफकी छर्दिके लक्षण ।

तंद्रास्यमाधुर्यकफप्रसेकसंतोषनिद्राऽरुचिगौरवार्त्तः ॥
स्निग्धंघनंस्वादुकफाद्विशुद्धंसरोमहर्षोऽल्परुजंवमेत्तु ॥ ८ ॥

अर्थ—तन्द्रा, मुखमे मिठास, कफका पडना, संतोष ( खाये विनाही तृप्ति ) निद्रा, अरुचि, भारीपना इनसे पीडित हो चिकना, गाढा, मीठा सफेद ऐसे कफको वमन करे । जब रद्द करे तब पीडा थोडी होय, रोमाच हो ये कफकी छर्दिके लक्षण है ॥

त्रिदोषकी छर्दिके लक्षण ।

शूलाविपाकारुचिदाहतृष्णाश्वासप्रमोहप्रबलाप्रसक्तम् ॥
छर्दिस्त्रिदोषाल्लवणाम्लनीलसांद्रोष्णरक्तंवमतांनृणांस्यात् ॥ ९ ॥

अर्थ—शूल, अजीर्ण. अरुचि दाह, प्यास, श्वास, मोह इन लक्षणोसे प्रबल भई

---

१ यदुक्त सुश्रुते—शुद्धं हिम सान्द्रकफं कफेन, इति ।

जो वमन सो सन्निपातसे होती है। रद्द करनेवालेकी वमन खारी, खट्टी, नीली, सघट्ट ( जिसको देशवारी मनुष्य जाडी कहे हैं ) गरम, लाल, ऐसी होय है ॥

असाध्यलक्षण।

**विट्स्वेदमूत्रांबुवहानिवायुःस्रोतांसिसंरुध्ययदोर्ध्वमेति ॥**
**उत्पन्नदोषस्यसमाचितंतंदोषंसमुद्धूयनरस्यकोष्ठात् ॥ १० ॥**
**विण्मूत्रयोस्तत्समगन्धवर्णतृट्श्वासकासार्तियुतंप्रसक्तम् ॥**
**प्रच्छर्दयेदुष्टमिहातिवेगात्तयार्दितश्चाशुविनाशमेति ॥ ११ ॥**

अर्थ–जिस समय यह वायु पुरीप, पसीना, मूत्र और जल इनके वहनेवाली नाडियोंके मार्गको रोककर ऊपर आवे तब ऊपर आनेवाला दोप ( मलमूत्रादि ) कोठेसे बाहर निकाल वमन करावे, उस वमनमे मलमूत्रकी सी दुर्गंध आवे, तथा वर्ण भी मलमूत्रके सदृश हो, प्यास, श्वास, खासी और शूल ये होयँ और यह वमन वारवार बडे वेगसे होय है। इस वमनसे पीडित मनुष्य थाडे कालमे नाशको प्राप्त हो यह भी सन्निपातकी है ऐसे कोई आचार्य कहते हे और अन्य आचार्य कहते हे कि, सब छर्दि प्रवल हे परतु ऐसी छर्दि असाध्य है ॥

आगंतुजछार्दके लक्षण।

**वीभत्सजा दौहृदजाऽमजा च याऽसात्म्यजा वा कृमिजा च याहि ॥**
**सा पंचमी तां च विभावयेत्तु दोषोच्छ्रयेणैव यथोक्तमादौ ॥ १२ ॥**

अर्थ–वीभत्स पदार्थ कहिये मल, राव, रुधिर आदि अपवित्र वस्तुके देखनेसे, गधसे, स्वादसे स्त्रीके गर्भ रहनेसे, आमसे, असात्म्य भोजनसे, अथवा कृमिरोगसे इन कारणोसे प्रगट भई, आगतुज पाचवी छर्दि होती है। उसमे पूर्वोक्त लक्षणोमेसे जिस दोषके अधिक लक्षण मिले उसी दोषको प्रवल जाने ॥

कृमिके छर्दिके लक्षण।

**शूलहृल्लासबहुलाकृमिजाचविशेषतः ॥**
**कृमिहृद्रोगतुल्येनलक्षणेनचलक्षिता ॥ १३ ॥**

अर्थ–कृमिकी छर्दिमे शूल, खाली रद्द ये विशेप होते है ओर बहुवा कृमि और हृदयरोग इनके लक्षणसदृश लक्षण जानना। जैसे पिछाडी कह आये है। "उत्क्लेद ष्ठीवन तोदः शूल हृल्लासकस्तम. अरुचिः स्यात्रनेत्रत्व शोषश्च कृमिजे भवेत्" ॥

साध्यासाध्य लक्षण ।

**क्षीणस्ययाछर्दिरतिप्रसक्तसोपद्रवाशोणितपूययुक्ता ॥**
**सचंद्रिकांतांप्रवदेदसाध्यांसाध्यांचिकित्सेन्निरुपद्रवांच ॥ १४ ॥**

अर्थ–क्षीण पुरुषकी अथवा वारवार एकसी होनेवाली और कासादि उपद्रवयुक्त और रुधिर राध मिली मोरचंद्रिकाके समान ऐसी छर्दी असाध्य है और जो उपद्रवरहित हो उसको साध्य समझकर उपाय करे ॥

उपद्रव ।

**कासश्वासौज्वरोहिक्कातृष्णावैचित्यमेवच ॥**
**हृद्रोगस्तमकश्चैवज्ञेयाश्छर्देरुपद्रवाः ॥ १५ ॥**

अर्थ–खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्यास, बेचेतपना, हृदयरोग, अँधेरा आना ये छर्दिरोगके उपद्रव हैं ॥

मधुकोशं सुनिर्मथ्य सारमाकृष्य वै मया । व्रजभापाकृताटीका माधवार्थप्रकाशिका ॥

इति छर्दिनिदानम् ।

---

# अथ तृष्णानिदानम्

तृष्णाकी सम्प्राप्ति ।

**भयश्रमाभ्यांवलसंक्षयाद्वाप्यूर्ध्वंचितंपित्तविवर्धनैश्च ॥**
**पित्तंसवातंकुपितंनराणांतालुप्रपन्नंजनयेत्पिपासाम् ॥ १ ॥**

अर्थ--भयसे, श्रमसे बलके क्षयसे और पित्तके बढानेवाले क्रोध उपवासादिकोसे अपने स्थानमे सञ्चित हुआ जो पित्त और वात ये कुपित होकर ऊपर तालुए ( पिपासास्थान ) में जाय तृष्णा ( प्यास ) को उत्पन्न करे । इस जगह तालुका तो उपलक्षणमात्रहै तालुके कहनेसे क्लोमस्थान ( हृदयमे जो प्यासका स्थानहै ) उसका भी ग्रहण है, क्योकि वह भी प्यासका स्थानहै सो चरकमें लिखाहै ॥

अन्नजादिक तृष्णाकी सम्प्राप्ति ।

**स्रोतःस्वपांवाहिपुदूषितेपुदोषैश्चतृष्णाभवतीहजंतोः ॥**
**तिस्रःस्मृतास्ताःक्षतजाचतुर्थीक्षयात्तथाह्यामसमुद्भवाच ॥ २ ॥**

---

१ रसवाहिनीश्चधमनीर्जिह्वामूलगलतालुक्लोम्नः । संशोष्य नृणां देहे कुरुतेतृष्णामतिप्रवलाम् ।

भक्तोद्भवासप्तमिकेतितासांनिबोधलिंगान्यनुपूर्वशश्च ॥

अर्थ–जलके बहनेवाली नसके दूषित होनेसे दोप ( अन्न कफ और आम ) इनसे तृष्णा रोग होयहै सो तीनहैं और चौथी क्षतजतृष्णा जो व्रणवाले पुरुषके होती है, पाचवी क्षयसे होती है, छठी आमसे होतीहै, सातवी अन्नसे होतीहै उन्हेके लक्षण क्रमसे कहताहूं इनमे पहिली चार तृष्णा सुखसाध्यहैं और बाकीकी तीन कष्टसाध्यहै * शंका–*क्योंजी ! इस श्लोकमे " स्रोतःसु " यह बहुवचन क्यो धरा यह विरुद्धहै क्योकि, सुश्रुत मे तो जलके वहनेवाली दोही नाडी मानीहै. * उत्तर * उदकके वहाने वाले दो स्रोतो कोही अनेक विस्तार होनेसे बहुवचन कियाहै। यहा पर अन्न, कफ आमको दुष्ट करनेसे तथा दुष्ट रोगोके सम्बन्ध होनेसे अन्न, आम कफको दोषत्व ग्रहणहै यह गयदास का मतहै अथवा दोपके कहनेसे वात, पित्त कफका ही ग्रहण करना चाहिये॥

वातकी तृषाके लक्षण।

क्षामास्यतामारुतसंभवायांतोदस्तथाशंखशिरःसुचापि ॥
स्रोतोनिरोधोविरसंचवक्त्रंशीताभिरद्भिश्चविवृद्धिमेति ॥३॥

अर्थ–वातकी तृषा ( प्यास ) से मुख उतरजाय अथवा दीन होय कनपटी और मस्तक इन ठिकाने नोचनेके समान पीड़ा होय, रस और जल बहनेवाली नाडियोका मार्ग रुक जाय, मुखसे स्वाद जाता रहे और शीतल जलके पनिसे प्यास बढे चकारसे निद्राका नाश होय ॥

पित्तकी तृषाके लक्षण।

मूर्च्छान्नविद्वेषविलापदाहारक्तेक्षणत्वंप्रततश्चशोषः ॥
शीताभिनंदामुखतिक्तताचपित्तात्चपित्तात्मिकायांपरिदूयनंच ॥ ४ ॥

अर्थ–पित्तकी तृषामे मूर्च्छा, अन्नमे अरुचि, बड बड, दाह, नेत्रोमे लाली, अत्यंत शोप, शीत पदार्थकी इच्छा, मुखमे कटुता और सन्ताप ये लक्षण होतेहैं ॥

कफकी तृषाके लक्षण।

वाष्पावरोधात्कफसंवृतेऽग्नौतृष्णाबलासेनभवेत्तथातु ॥
निद्रागुरुत्वंमधुरास्यताचतृष्णार्दितःशुष्यतिचातिमात्रम् ॥ ५ ॥

अर्थ–अपने कारणसे कुपित कफकरके जठराग्नि आच्छादित होय, तब अग्निकी गरमी अधोगत जलके बहनेवाली नाडियोको सुखाय कफकी तृषाको प्रगट करे केवल कफसे तृष्णाको प्रगट होना

१ द्वे उदकवहे इति।

असभवहै, केवल कफ वढे भयका द्रवीभूतधर्म पतला होनेसे प्यासकर्तृत्व असभवहै और वात पित्तको तृषा करनेवाले होनेसे होयहै सो ग्रन्थांतरमे लिखा भी है इसीसे चरकाचार्यने कफकी तृष्णा नही कही, **सुश्रुतने** चिकित्सामे भेद होनेसे कहीहै और **हारीतने** भी सपित्त कफकी तृषा मानीहै, केवल कफकी नही मानी इस तृषामे निद्रा, भारीपना, मुखमे मिठास ये लक्षण होते हैं, इस तृषासे पीडित पुरुष अत्यन्त सूख जाता है ॥

क्षतजतृष्णाके लक्षण ।

**क्षतस्यरुक्शोणितनिर्गमाभ्यांतृष्णाचतुर्थीक्षतजामतातु ॥६॥**

**अर्थ**—शस्त्रादिकके लगनेसे घाव होय तब उस पुरुषके पीडा और रुधिरका स्राव होनेसे जो तृष्णा होय यह चोथी क्षतजतृष्णा जाननी ॥

क्षयजतृष्णाके लक्षण ।

**रसक्षयाद्याक्षयसंभवासातयाभिभूतस्तुनिशादिनेषु ॥**
**पेपीयतेंभःससुखंनयातितांसन्निपातादितिकेचिदाहुः ॥७॥**
**रसक्षयोक्तानिचलक्षणानितस्यासशेषेणभिषग्व्यवस्येत् ॥**

**अर्थ**—रसक्षयसे जो तृष्णा होय उसमे जो लक्षण होतेहै सो सब क्षयजतृष्णामे होते हैं, तिससे पीडित पुरुष रात्रि दिन वारबार पानी पीवे परतु सतोष नही होय । कोई आचार्य इसको सन्निपातसे प्रगट कहते हैं रसक्षयके जो लक्षण कहे वे सब होतेहै सो वैद्योको जानने चाहिये रसक्षय लक्षण **सुश्रुतमे** कहेहै सो इस प्रकारका रसक्षय होनेसे हृदयमे पीडा कप, शोप बधिरता. ( वहरापना ) ओर प्यास होते हैं ॥

आमजतृष्णाके लक्षण ।

**त्रिदोषलिंगाऽऽमसमुद्भवातुहृच्छूलनिष्ठीवनसादकर्त्री ॥ ८ ॥**

**अर्थ**—आमज कहिये अजीर्णसे जो तृष्णा होय उसमे तीनो दोषोके लक्षण होते है सो **सुश्रुतमे** लिखाभीहै ओर हृदयमे शूल लारका गिरना ग्लानि ये सब होते है ॥

---

१ यदुक्तम्, पित्त सवातं कुपित नराणाम् इत्यादि । चरकेप्युक्तम्—नाग्निर्विना सर्प नाद्वा तौ हि शोषणे हेतुः, इति। सुश्रुतेऽप्युक्तम्—मत्स्याग्नेयवायव्यौ गुणावंबुवहानि च । स्रोतांसि शोषयेत्तस्मात्तस्तृष्णा पूवर्तते ॥

२ तदुक्त हारीतेन—स्वाद्वम्ललवणाजीर्णैःकुद्धः श्लेष्मा सहोष्मणा ।प्रपद्याम्बुवहस्रोतस्तृष्णा संजनयेन्नृणाम्॥ शिरसो गौरव तंद्रा माधुर्य वदनस्य च । भक्तद्वेषः प्रसेकश्च निद्राधिक्यं तथैवच ॥ लिंगैरेतैर्विजानीयात्तृष्णा कफसमुद्भवाम् ।

३ रसक्षये हृत्पीडा कपशोष बाधिरता तृष्णा चेति ।

४ अजीर्णात्पवनादीना विभ्रमो वलवान्भवेत्, इति । सततं य. पिबेत्तोयं न तृप्तिमधिगच्छति । पुनः कांक्षति तोय च त तृष्णार्दितमादिशेत् इति ।

अन्नजतृषाके लक्षण ।

**स्निग्धंतथाम्लंलवणंचभुक्तंगुर्वन्नमेवाशुतृषंकरोति ॥**

अर्थ–चिकना, खट्टा, खारा, चकारसे कडुआ, कसेला आदि जानना ऐसे भोजनसे तथा मात्राधिक और भारी, ऐसा अन्न खानेसे, अवश्य ही शीघ्र प्यासको प्रगट करे । **दृढबल** आचार्यने पाचही प्रकारकी तृष्णा कही है वातकी, पित्तकी, क्षयकी, आमकी, उपसर्गकी तहा कफकी आमकी तृषाके अतर्गत कही है और क्षतजा, वातकी तृषाके अतर्गत जाननी और अन्नजा भी वातकी तृषाके अतर्गत कही है क्योकि भोजनसे वातका कोप होता है * **शंका** * क्योजी! सुश्रुतने मद्यके प्रकरणमे मद्यकी तृष्णा कही है फिर **माधवाचार्यने** सात ही तृष्णा कैसे कही है * **उत्तर**– *दृढबलाचार्यके मतसे मद्यपि तृषाको वातकी तृषाके अन्तर्गत होने से **माधवाचार्यने** सातही कही है ॥

उपसर्गज तृषाके लक्षण ।

**दीनस्वरःप्रताम्यन्दीनाननशुष्कहृदयगलतालुः ॥**
**भवतिखलुसोपसर्गातृष्णासाशोषिणीकष्टा ॥ ९ ॥**
**ज्वरमोहक्षयकासश्वासाद्युपसृष्टदेहानाम् ॥ १० ॥**

अर्थ--हीनस्वर, मोह मनमे ग्लानि होय, मुख दीन होजाय, हृदय, गला और तालु, सूखजाय यह तृष्णाके उपद्रवोसे होते है यह मनुष्य को सुखाय डाले और व्याधिसे शरीर कृश होनेसे यह कष्टसाध्य होजाती है । वे उपद्रव ये है ज्वर, मोह, क्षय, खासी, श्वास, आदिशब्दसे अतिसारादिकोंका ग्रहण है ये रोग जिसके होयँ उसके तृष्णा कष्टसाध्य जाननी ॥

असाध्य लक्षण ।

**सर्वास्त्वतिप्रसक्तारोगकृशानांवमिप्रसक्तानाम् ॥**
**घोरोपद्रवयुक्तास्तृष्णामरणायविज्ञेयाः ॥ ११ ॥**

अर्थ–वातजादि सब प्रकारकी तृष्णा अत्यन्त बढी हुई अथवा रोगसे कृश भया ऐसे पुरुषके जो तृष्णा है सो अथवा छर्दिसे प्रगट भई जो तृषा और जो भयकर उपद्रवकरके युक्त ऐसी तृष्णा मारनेका कारण होय है ॥

मधुकोश सुनिर्मथ्य सारमाकृष्य वै मया ।
व्रजभाषाकृता टीका माधवार्थप्रकाशिका ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकाया तृष्णारोगनिदानं समाप्तम् ।

# अथ मूर्च्छानिदानम्।



निदान और संप्राप्ति।

**क्षीणस्यबहुदोषस्यविरुद्धाहारसेविनः॥ वेगाघातादभीघाताद्धीनसत्त्वस्यवापुनः॥१॥ करणायतनेषूग्राबाह्येष्वाभ्यंतरेषुच॥ निविशंतेयदादोषास्तदामूर्च्छंतिमानवाः॥ २॥ संज्ञावहासु नाडीषुपिहितास्वनिलादिभिः॥ ततोभ्युपैतिसहसासुखदुःखव्यपोहकृत्॥ ३॥ सुखदुःखव्यपोहाच्चनरःपततिकाष्ठवत्॥ मोहोमूर्च्छेतितामाहुःषड्विधासाप्रकीर्तिता॥ ४॥ वातादिभिः शोणितेनमद्येनचविषेणच॥ षट्स्वप्येतासुपित्तंतुप्रभुत्वेनावतिष्ठते॥ ५॥**

अर्थ—तृष्णामे मोह होता है, इसीसे तृष्णाके अनन्तर मूर्च्छाको कहते है। क्षीण पुरुपके वहुत दोपके सचय होनेसे, विरुद्ध आहार क्षीर मत्स्यादिकके सेवन करनेसे, मलमूत्रादि वेगके धारण करनेसे, लकडी आदिके चोट लगनेसे, अथवा जिस पुरुपका सत्त्वगुण क्षीण होगया हो ऐसे पुरुषकी मनके आयतन (स्थान) चक्षु आदि है और भीतरके मनका बाहरकी ओर भीतरकी मनके वहाने वाली सोतोमें प्रवल वातादि दोप कुपित हुए जव ठहरते है तब मनुष्य मूर्च्छाको प्राप्त होता है आच्छादित होनेसे सुखदुःखका ज्ञान नष्ट होय तब मनुष्य पृथ्वीपर काष्ठकीसीतरह गिरे। इस रोगको मूर्च्छा अथवा मोह ऐसे कहते है। अथवा बाहरकी इन्द्रिय नेत्र, कान आदि कर्मेंद्रिय और वुद्धीन्द्रिय इनमे वलवान् दोप (वात पित्त, कफ) प्रवेश कर संज्ञाकी बहनेवाली जो नाडी तिनको वह वात, पित्त, कफ, रोक अधकारको प्रगट करे तब मनुष्य काष्ठकीभाँति पृथ्वीपर गिरे उसको मूर्च्छा कहते है। अथवा मोह कहते है। सो मूर्च्छा छः प्रकारकी है। वात, पित्त, कफसे तीन प्रकारकी और रुधिर, विप और मद्य इन भेदोसे तीन प्रकारकी इन तीनो मूर्च्छाओमे पित्त है सो मुख्य प्रधान है अथवा व्यापक है॥

मूर्च्छा पूर्वरूप।

**हृत्पीडाजृंभणंग्लानिःसंज्ञादौर्बल्यमेवच॥**
**सर्वासांपूर्वरूपाणियथास्वञ्चाविभावयेत्॥ ६॥**

१ उक्तचाभिधानातरे—सज्ञोपघातमूर्च्छायामूर्च्छास्यान्मूर्च्छनंतथा। कश्मलप्रलयोमोहःसन्यासस्तुमृतोपम', इति।

अर्थ-हृदयमे पीडा, जभाई, ग्लानि, भ्रांति ये मूर्च्छाके पूर्वरूप है । आगे उस मूर्च्छाके वातादि भेद जानने यह भेद प्रगट हुई रूपावस्थामे जानने चाहिये पूर्व रूपकी अवस्थामे नही जानने चाहिये। यह जेज्जटाचार्यका मत है ॥

वातकी मूर्च्छाके लक्षण ।

नीलंवायदिवाकृष्णमाकाशमथवाऽरुणम् ॥ पश्यंस्तमःप्रविशतिशीघ्रंचप्रतिवुध्यते ॥ ७ ॥ वेपथुश्चांगमर्दश्चप्रपीडाहृदयस्यच ॥ कार्श्यंश्यावारुणच्छायामूर्च्छायेवातसंभवे ॥ ८ ॥

अर्थ-जो मनुष्य नीले रगका अथवा काले रगका तथा लाल रगका आकाशको देखे पीछे मूर्च्छाको प्राप्त होय, और जलदी होश होजाय, देहमे कंप, अंगोका टूटना, हृदयमे पीडा होय, शरीर कृश होजाय, शरीरका रग काला लाल पड़जाय, उसको वातकी मूर्च्छा जाननी ॥

पित्तकी मूर्च्छाके लक्षण ।

रक्तंहरितवर्णंवावियत्पीतमथापिवा ॥ पश्यंस्तमःप्रविशतिसस्वेदश्चप्रवुध्यते ॥ ९ ॥ सपिपासःससंतापोरक्तपीताकुलेक्षणः ॥ संभिन्नवर्चाःपीताभोमूर्च्छाचेत्पित्तसंभवा ॥ १० ॥

अर्थ-जिसको आकाश लाल, हरा पीला दीखे पीछे मूर्च्छा आवै और सावधान होतेसमय पसीना आवे, प्यास होय, सताप होय, नेत्र लाल, पीले होयँ मल पतला होय, देहका वर्ण पीला होय, ये लक्षण पित्तकी मूर्च्छाके है

कफकी मूर्च्छाके लक्षण ।

मेघसंकाशमाकाशमावृतंवातमोघनैः ॥ पश्यंस्तमःप्रविशतिचिराच्चप्रतिवुध्यते ॥ ११ ॥ गुरुभिःप्रावृतैरंगैर्यथैवार्द्रेणचर्मणा ॥ सप्रसेकःसहृल्लासोमूर्च्छायेकफसंभवे ॥ १२ ॥

अर्थ--कफकी मूर्च्छामे आकाशको मेघके समान अथवा अंधकारके समान अथवा बद्दल इनसे व्याप्त देखकर मूर्च्छागत होय, देरमे सावधान होय, भारी वोझासा देहपर भार माळ्म होय, अथवा गीला चमडा धारण करासा माळ्म होय, मुखसे पानी गिरे, रद्द होयगी ऐसा माळ्म होय ॥

सन्निपातकी मूर्च्छाके लक्षण ।

सर्वाकृतिःसन्निपातादपस्मारइवापरः ॥
सजंतुंपातयत्याशुविनाबीभत्सचेष्टितैः ॥ १३ ॥

---

१ "मूर्च्छाय शब्दो मूर्च्छा पर्यायः"

अर्थ–सन्निपातकी मूर्च्छामें सब दोषोंके लक्षण होते हैं, ये रोग दूसरा अपस्मार ( मृगी ) जानना चाहिये । परन्तु अपस्मारमें दाँतोंका चवाना, मुखमें झागका गेरना, नेत्रोंका हाल औरही प्रकारका होजाना, इत्यादिक लक्षण होते हैं सो इस रोगमें नही होते, इतनाही भेद है । *शंका–* क्यो जी पूर्व तो छःप्रकारकी मूर्च्छा कह आये फिर सन्निपातकी मूर्च्छा कैसे कही । *उत्तर–* चरककी अष्टोत्तरीयाध्यायमें लिखा है, जैसे अपस्मार चार प्रकारका हैं वातका, पित्तका, कफका, सन्निपातका, इसीप्रकार मूर्च्छारोगभी चार प्रकारका है यही मतको ग्रहण कर माधवाचार्यने सन्निपातकी मूर्च्छा कही है ॥ प्रथम रक्तजादि छःसुश्रुतके मतसे लिखी हैं और सन्निपातकी चरक मतसे क्योंकि इस संग्रहग्रन्थमें शास्त्रोंके स्वीकार होनेसे सुश्रुत चरक दोनोंकाही मतलिखनापडाहै ॥

## रक्तकी मूर्च्छाके लक्षण ।

**पृथिव्यापस्तमोरूपंरक्तगंधस्तदन्वयः ॥ तस्माद्रक्तस्यगंधेन मूर्च्छंतिभुविमानवाः ॥ १४ ॥ द्रव्यस्वभावइत्येकेदृष्ट्वायदभिमुह्यति ॥**

अर्थ–पृथ्वी और जल ये दोना तमोगुणविशिष्ट हैं सो **सुश्रुतमें** लिखा है । और रुधिरकी गंध भी उन दोनोंसे अर्थात् पृथ्वी और जलसे प्रगट है तो रुधिरकी गंधभी तमोगुणविशिष्टहुई इसीसे जो तामसी पुरुष हैं वे रुधिरकी गधसे मूर्च्छित होते हैं । और जो राजसी, सात्विकी पुरुष हैं सो मूर्च्छित नही होते *शंका–*क्यों जी चपक आदि ( चम्पा ) पुष्पोंकी गधसेभी मुर्च्छा होनी चाहिये क्यों कि, उसमेंभी पार्थिव अर्थात तामसगुणविशिष्ट गध है इसवास्ते कहते हैं "द्रव्यस्वभावइत्येके" अर्थात् कोई आचार्य कहते हैं कि, ये द्रव्यका ही स्वभाव हे अर्थात् रुधिरका यही स्वभाव है कि जिसकी गधसे ही मनुष्य मुर्च्छित होताहै । अब स्वभावको और भी दृढ करते हैं "दृष्ट्वा यदभिमुह्यति" अर्थात् रक्तके देखनेसे भी मूर्च्छित होय सो लिखा भी है ॥

## विष और मद्यसे उत्पन्न मूर्च्छाको कहते हैं ।

**गुणास्तीव्रतरत्वेनस्थितास्तुविषमद्ययोः ॥ १५ ॥ तएवतस्मात्ताभ्यांतुमोहौस्यातांयथेरितौ ॥**

अर्थ–तैलादिकोंमे जो दशगुण[3] है वेही गुण विष और मद्यमें अत्यंत तीव्रतासे रहते

---

१ चतस्रो मूर्च्छा अपस्मारैर्व्याख्याताः । यथा चत्वारोपस्मारा. वातेन, पित्तेन, श्लेष्मणा, सन्निपातेन, तद्वन्मूर्च्छा अपीत्यर्थः । २ तमोबहुला पृथ्वी सत्वतमोबहुला आप इति।यदुक्तं भोजेन–स्तब्धांगदृष्टिर्भवति मूढोच्छ्वासस्तथैव च । दर्शनादसृजस्तस्माद्घ्राणेन प्रमुह्यति । ३ यदुक्तं दृढबलेन–लघु रूक्षमाशु विशदं व्यवायि तीक्ष्णं विकाशि सूक्ष्म च । उष्णमनिर्देश्यरसं दशगुणमुक्तं विष तज्ज्ञै. ।

है । इसी विष और मद्यके सेवन करनेसे मोह होता है, इसमे भी मद्यमे तीव्र रहै और विषमे तीव्रतर रहै इसीसे विषका मोह स्वयं शांत नहीं होता क्यों कि, विष अपाकी है और मद्यका मोह मद्यके नसा उतरेपर शांत होजाता है यह भेद विष और मद्यमें रहता है ॥

रक्तजादि तीन मूर्च्छाओंके लक्षण ।

स्तब्धांगदृष्टिस्त्वसृजामूढोच्छ्वासश्चमूर्च्छितः ॥ १६ ॥ मद्येन विलपञ्छेते नष्टविभ्रांतमानसः ॥ गात्राणिविक्षिपन्भूमौजरायावन्नयातितत् ॥ १७ ॥ वेपथुस्वप्नतृष्णाःस्युस्तमश्चाविषमूर्च्छिते ॥ वेदितव्यंतीव्रतरंयथास्वंविषलक्षणैः ॥ १८ ॥

अर्थ—रुधिरकी मूर्च्छामें अंग और नेत्र निश्चल होजायँ और श्वास अच्छे प्रकार आवे नहीं । बहुत मद्यके पीनेसे जो मूर्च्छा हो उसके ये लक्षण, हैं बहुत बकता हुआ सोय जाय, संज्ञा जाती रहै, भ्रमयुक्त होय और जबतक मद्य न पचे तबतक पृथ्वीमे हाथपैर पटके। विषजन्य मूर्च्छामें काँपे, सोवे, प्यास लगे, और अँधेरा आवे, एवं विष वृक्षके मूल, पत्र, दूध इनके भेदकर जो विषभक्षणसे लक्षण होते हैं सो सब लक्षण होते हैं ॥

मूर्च्छा, भ्रम, तन्द्रा और निद्रा इनके भेद ।

मूर्च्छापित्ततमःप्रायारजःपित्तानिलाद्भ्रमः ॥
तमोवातकफात्तन्द्रानिद्राश्लेष्मतमोभवा ॥ १९ ॥

अर्थ—मूर्च्छामे पित्त और तमोगुण अधिक रहै है । रजोगुण पित्त और वायु इनसे भ्रम होय है । तमोगुण, वायु और कफ इनसे तन्द्रा । और कफ, तथा तमोगुण, इनसे निद्रा उत्पन्न होती है ॥

तन्द्राके लक्षण ।

इन्द्रियार्थेष्वसंप्राप्तिर्गौरवंजृंभणंक्लमः ॥
निद्रार्त्तस्येवयस्यैतेतस्यतंद्रांविनिर्दिशेत् ॥ २० ॥

अर्थ--इन्द्रिय अपने अपने विषयको ग्रहण न करे, देह भारी होजाय, अर्थात् सुस्त होजाय, जंभाई और क्लम होय ये लक्षण निद्रार्त पुरुषके सदृश जिसके होयँ उसको तन्द्रा कहते हैं । इसमें

१ "ये विषस्य गुणाः प्रोक्ताः सन्निपातप्रकोपिणः । त एव मद्ये दृश्यंते विषे तु बलवत्तराः ।" इति ।

२ तत्र भ्रमः स्थाणौ पुरुषज्ञानं पुरुषे विपरीततत्त्वज्ञानादिकम् अन्ये चक्रस्थितस्येव सभ्रमस्तद्दर्शनमिति ।

आधे नेत्र खुले रहते है । निद्रामे इन्द्रिय और मनको मोह होय हे तन्द्रामे केवल इन्द्रियोको ही मोह होता है । निद्रा[1] और भ्रम[2] ये दोनो अतिप्रसिद्ध होनेसे माधवाचार्यने नही कहे, परतु चरकमें कहे है सो इस प्रकार की जिस समय मन और इन्द्रिय खेदको प्राप्त होय, और अपने अपने विषय ( शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गध ) को त्याग देय, तव यह मनुष्यको निद्रा आती है ॥

सन्यासके भेदको कहते हैं ।

**दोषेषुमदमूर्च्छाद्यागतवेगेषुदेहिनाम् ॥**
**स्वयमेवोपशाम्यंतिसंन्यासोनौषधैर्विना ॥ २१ ॥**

अर्थ–दोषोके वेग नष्ट होनेसे मदमूर्च्छादि अपने आप शात होजाते है, परंतु यह सन्यास औषधके विना शांति नही होता है ॥

संन्यासके लक्षण ।

**वाग्देहमनसांचेष्टाआक्षिप्यातिवलामलाः ॥ संन्यस्यंत्यवलं जंतुंप्राणायतनमाश्रिताः ॥ २२ ॥ सनासंन्याससंन्यस्तः काष्ठीभूतोमृतोपमः ॥ प्राणैर्विमुच्यतेशीघ्रंमुक्त्वासद्यःफलां क्रियाम् ॥ २३ ॥**

अर्थ--अत्यत वलिष्ट भये जो दोष, सो वाणी देह और मन इनके व्यापारको वदकर हृदयमे प्राप्त हो निर्वल मनुष्यको मूर्छित करे, वह सन्याससे पीडित मनुष्य काष्टकी भाँति पृथ्वीपर गिरे, उसकी सद्य.फल चिकित्सा अर्थात् सुईसे छेदना, तीखा अजनका लगाना, अनामिकाको पीडित करना, कोचकी फली लगाना, दाह देना, नास देना इत्यादिक क्रिया न करे तो वह रोगी प्राणवियुक्त कहिये मरणको प्राप्त हो अन्यथा बचे है ॥

मधुकोश सुनिर्मथ्य सारमाकृष्य यत्नतः ।
व्रजभाषाकृताटीका माधवार्थप्रकाशिका ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकायां मूर्च्छानिदानम् ॥

---

१ यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मानः क्लमान्विताः । विषयेभ्यो निवर्त्तन्ते तदा स्वपिति मानवः ।
२ चक्रवद्भ्रमतो गात्रं भूमौ पतति सर्वदा । भ्रमरोग इति ज्ञेयो रजःपित्तानिलात्मकः ।

# अथ मदात्ययनिदानम्।

येविषस्यगुणाःप्रोक्तास्तेपिमद्येप्रतिष्टिताः॥ तेनमिथ्योपयुक्तेन भवत्युग्रोमदात्ययः ॥ १ ॥ किंतुमद्यंस्वभावेनयथैवान्नंतथा स्मृतम्॥ अयुक्तियुक्तंरोगाययुक्तियुक्तंयथाऽमृतम्॥ २ ॥

अर्थ—विषके जो गुण कहे हैं सोई गुण मद्यमे है अर्थात् यही मद्य अविधिसे सेवन करा भया घोर भयकर मदात्यय रोग प्रगट करे है कोई ऐसी शंका करे कि, विषके गुण मद्यमे हैं इससे विषके समान मद्यको सेवन न करे इस विषयमे कहते हैं कि,मद्य यह स्वभावसे ही जैसे अन्न देहधारक है ऐसाही है, परन्तु वह मद्य अविधिसे पीवे तो रोगकारक होता हैं और विधिसे सेवन करे तो अमृतके समान गुण करे ॥

विधिसे मद्य पीनेका लक्षण।

विधिनामात्रयाकालेहितैरन्नैर्यथाबलम्॥ प्रहृष्टोयःपिबेन्मद्यंतस्य स्यादमृतंयथा ॥ ३ ॥ स्निग्धैःसदन्नैर्मांसैश्चभक्ष्यैश्चसहसेवितम्॥ भवेदायुःप्रकर्षायबलायोपचयायच ॥ ४ ॥

अर्थ—विधिपूर्वक, प्रमाणके संग, योग्य कालमे, चिकना आदि अच्छे अन्नके सग, बलाबलके अनुसार, अत्यत हर्षके साथ, जो मद्यपान करे, उसको अमृतके तुल्य गुण करे इसके पीनेकी विधि मदात्ययके दूसरे श्लोककी टिप्पणीमे लिख आयेहै तथा ग्रन्थान्तरोमे विधि तथा मात्रा कालका नियम लिखाहै, अर्थात् शुद्ध शरीर होकर प्रातःकाल सोपदेश ( अर्थात् मद्यपान करनेके बाद जो

---

१ विधिश्चाय तद्यथा—कुसुमितलतोपगूढः प्रकटनिरंतरनवाकुरनिकररोमाचैः मधुकरमधुरझकारसीत्कारैर्मुक्तकठकलकंठकूजितैर्दक्षिणसमीरणोद्विजितसमुद्धसितपल्लवकरप्रचारैस्तरुणतरुभिःउपक्रांततरललताभिरतिशोभनेषु वनोपवनेषु तुषारकिरणं रंजितप्रदोषेषु श्रृंगारसमुचितालकृतिकमनीयकामिनीसमर्पितं ललितललनोपनीयमानं सुरभिरुचिररूपरसोपदंशकं नामपरिमितपरार्द्धमधुपानं कं न सुखयति चरकेणतु विस्तरेणैतदुक्तं विद्धि।

२ शुद्धकायः पिबेत्प्रातः सोपदंशपलद्वयम्। मध्याह्ने द्विगुण तच्च स्निग्धाहारेण पाचयेत्। प्रदोषेष्टपलं तद्वन्मात्रामद्ये रसायनम्। आरोग्य धातुसात्म्यं च कांतिपुष्टिबलप्रदम्॥ अनेन विधिना सेव्य मत्र नित्यमतंद्रिते.। अन्यैर्वृद्ध्यादयो यावदुल्लसति निरत्ययाः॥ मात्रेयं विहिता मद्ये पाने रोगाय चापरा। काल इति। तत्र कालो द्विविध' नित्यक' आवश्यकश्च, तत्र नित्यकः ऋतुसंबन्धी यथा ग्रीष्मे शीतमधुर माध्वीकादि शीते उष्णतीक्ष्ण गौडिकपैष्टिकादि। तथा आवश्यके काले वाते स्निग्धापि एवं वयस्युदाहार्यम्।

---

१ मद्यपानान्तर भक्षणीयद्रव्यविशेषः।

चटनी आदि पदार्थ खाये जाते हैं सो ) इन करके सहित दो पल पीवे मध्याह्नको चारपल पीवे तदनंतर चिकना पदार्थ भोजन करे और सायंकालको आठपल पीवे इस जगह पल नाम जैपुर साई १ टके पक्केको कहते है ४ अथवा चिकने अन्नके साथ, मासके साथ, अथवा और भक्ष्य-है उनके साथ मद्यका सेवन करे तो मनुष्यकी आयुष्य बढे, बल बढे, तथा देह पुष्ट हो इस श्लोक में "स्निग्धैः सदन्नै." यह जो पद धरा सो स्निग्धका एक उपलक्षणमात्र है अर्थात् जो मद्यसे विपरीत गुण रखते है जैसे तीक्ष्णादि[१] दश गुण हैं उनसे, विपरीत होय उसके साथ मद्य पीना चाहिय सो तीक्ष्णादि दशगुण ग्रन्थांतरोमे लिखे है और विशेष देखना होय तो भावप्रकाशमें देखलेवे, इस स्थलमे ग्रन्थविस्तारभयसे हमने त्याग दीने है ॥

## विधिसे मद्यपीनेके दूसरे गुण।

**काम्यतामनसस्तुष्टिस्तेजोविक्रमएवच ॥**
**विधिवत्सेव्यमानेतुमद्येसन्निहितागुणाः॥ ५ ॥**

अर्थ—मद्यको विधिपूर्वक पीनेसे सुन्दर वस्तुओमे मनकी वृत्ति, मनको संतोष, उत्साह, दूसरेको जीतनेकी सामर्थ्य इत्यादि हितकारक गुण होते है कही हुई विधिसे विरुद्ध मद्यपान करनेसे मदात्यय रोग होता है सो मदात्यय तीन प्रकारका है पूर्वमद मध्यमद और अन्त्यमद ॥

## पूर्वमदके लक्षण।

**बुद्धिस्मृतिप्रीतिकरःसुखश्चपानान्ननिद्रारतिवर्धनश्च ॥**
**संपाठगीतस्वरवर्धनश्चप्रोक्तोऽतिरम्यःप्रथमोमदोहि ॥ ६ ॥**

अर्थ—बुद्धि, स्मरण और प्रीति इनको करे सुखकरे पान ( पीना ) अन्न, निद्रा और रति इनको बढावे, सुन्दर पाठ और गीत गानेको बढावे, ऐसा प्रथम मद अति रमणीय कहा है * शंका * क्यों जी मद तो मनमें विकार उत्पन्न करे है फिर आप इसको रमणीय कैसे कहतेहो ! * उत्तर * आपने कहा सो ठीक है परन्तु दुःखको दूर करनेसे इसको रमणीयता है, इसी कारण सुश्रुतने हर्षको मनके विकारोमे कहा है ॥

---

१ लघुस्तीक्ष्णो हि सूक्ष्माम्लो व्यवायाशुगमेव च । रूक्ष विकाशि विशदं मद्ये दश गुणाः स्मृताः । तथाच सुश्रुते—"मद्यं ह्यम्लं तथा तीक्ष्ण सूक्ष्म विशदमेव च । रूक्षमाशुकरं चैव व्यवायि च विकाशि च" ॥ इति । अत्र अम्लरसत्वं चास्योद्भूतरसत्वेनोक्त यदुक्तमन्यत्र—"सर्वेषामम्लजातीना मद्यं मूर्ध्नि व्यवस्थितम्" इति ।

द्वितीय मदके लक्षण।

**अव्यक्तबुद्धिस्मृतिवाग्विचेष्टाःसोन्मत्तलीलाकृतिरप्रशातः ॥ आलस्यनिद्राभिहतोमुहुश्चमध्येनमत्तःपुरुषोमदेन ॥ ७ ॥**

अर्थ–मध्यम मदसे मतवाले पुरुषकी बुद्धि स्मरण और वाणी यथार्थ नहीं होय विरुद्ध चेष्टा करे, और बावलेकीसी चेष्टा करे, प्रचड होजाय, वारबार आलकस और निद्रासे पीडित होजाय ॥

तृतीय मदके लक्षण।

**गच्छेदगम्यांनगुरूंश्चपश्येत्खादेदभक्ष्याणिचनष्टसंज्ञः ॥ ब्रूयाच्चगुह्यानिहृदिस्थितानिमदेतृतीयेपुरुषोस्वतंत्रः ॥ ८ ॥**

अर्थ--तीसरे मदमे पुरुष मदके आधीन होकर अगम्या ( गुरुकी स्त्री आदिसे ) गमन करे, बडोका निरस्कार करे जो वस्तु खानेके योग्य नहीं है उसको खाय, संज्ञा जाती रहे और जो गुप्त बात हृदयमें है उनको कहने लगे ॥

चतुर्थ मदके लक्षण।

**चतुर्थेतुमदेमूढोभग्नदार्विवनिष्क्रियः॥ कार्याकार्यविभागाज्ञो मृतादप्यपरोमृतः ॥ ९ ॥ कोमदंतादृशंगच्छेदुन्मादमिव-चापरम् ॥ बहुदोषमिवारूढः कांतारंस्ववशः कृती ॥ १० ॥**

अर्थ–चतुर्थ मदसे मनुष्य मूढ होकर टूटे वृक्षके समान क्रियारहित होय, कार्य (करनेके योग्य ) अकार्य ( नहीं करने योग्य ) इनको न समझे, वह पुरुष मरेसे भी अधिक मराभया है कौन ऐसा स्ववश अथवा सुकृती पुरुष ऐसे निंद्यमद ( अमल ) का सहनशील होता है किंतु कोई नही होता कैसे कि, जैसे सिंह व्याघ्रादि हिंसक पशु जिस वनमें बहुत है ऐसे निर्जन वनमे मार्गमे कौन चतुर मनुष्य जायगा। *शंका*–चरक, विदेह, वाग्भट आदि आचार्योंने तो चतुर्थमद कहा ही नहीं है और सुश्रुतने कहा है इनमें विरोध क्यों है। *उत्तर–* चरकमे जो दूसरे और तीसरेमें अन्तर कहा है सोई सुश्रुतने तृतीयमदको मानकर उसके लक्षण कहे हैं और जो चरकमें तृतीय मदके लक्षण कहे हैं सो सुश्रुतने चतुर्थ मदके लक्षण कहे हैं। ऐसे विरोध नहीं है वास्तवमें तीनही मद हैं * शंका–* क्यों जी एक मद्यसे ३ प्रकारके मद होते है इसमे क्या कारण है ? * उत्तर--* मद्य यह अग्निके समान है जैसे अग्निमे सुवर्ण ( सोना ) तपानेसे

---

१ प्रधानावरमध्याना वक्ष्यमाणा व्यक्तिदर्शकः। यथाग्निरेव सत्त्वानां मद्यं प्रकृतिदर्शकम्।

उत्तम, मध्यम, अधमकी परीक्षा होती है ऐसे ही मद्य भी सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुणवाले रुपोकी प्रकृतिसूचक है अर्थात् सत्त्वगुणवाले पुरुषको प्रथम मद, रजोगुणवाले पुरुषको दूसरा मद, तमोगुणवाले पुरुषको तीसरा मद प्राप्त होता है। सो चरकमें लिखा है ॥

विधिहीन मद्यसेवनसे और विकार होते हैं उनको कहते हैं।

**निर्भुक्तमेकान्ततएवमद्यंनिषेव्यमाणंमनुजेननित्यम् ॥**
**आपादयेत्कष्टतमान्विकारानापादयेच्चापिशरीरभेदम् ॥ ११ ॥**

**अर्थ**–जिस पुरुषने अन्नरहित निरंतर मद्यपान नित्य करा होय वह अत्यंत दुःखदायक विकार ( पानात्ययादिक ) उत्पन्न करे है और शरीका विनाश करे है ॥

अन्नके साथ मद्य सेवन कराभया भी क्रुद्धत्वादिकारणोंसे विकारकर्त्ता होता है सो कहते हैं।

**क्रुद्धेनभीतेनपिपासितेनशोकाभितप्तेनवुभुक्षितेन ॥ व्यायामभाराध्वपरिक्षतेनवेगावरोधाभिहतेनचापि ॥ १२ ॥ अत्यम्लभक्ष्यावततोदरेणसाजीर्णभुक्तेनतथाऽबलेन ॥ उष्णाभितप्तेनचसेव्यमानं करोतिमद्यंविविधान्विकारान् ॥ १३ ॥**

**अर्थ**–क्रोधयुक्त, भयसे पीडित, प्यासा, शोकवान्, क्षुधायुक्त, दंडकसरत और भारसे जो क्षीण होगया होय, मलमूत्रआदि वेगसे पीडित हो, अत्यंत अम्लरस खानेसे जिसका पेट भर रहा होय, अजीर्णमे भोजन करनेवाले पुरुषके, निर्बल पुरुषके गरमीसे तपायमान ऐसे मनुष्यके मद्य सेवन करनेसे अनेक विकार उत्पन्न होते हैं ॥

उन विकारोंको कहते हैं।

**पानात्ययंपरमदंपानाजीर्णमथापिवा ॥**
**पानविभ्रममुग्रंचतेषांवक्ष्यामिलक्षणम् ॥ १४ ॥**

**अर्थ**–पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण और पानविभ्रम इत्यादिक भयंकर विकार होते हैं उनके लक्षण कहता हूं ॥

वातमदात्ययके लक्षण।

**हिक्काश्वासशिरःकंपपार्श्वशूलप्रजागरैः ॥**
**विद्याद्बहुप्रलापस्यवातप्रायंमदात्ययम् ॥ १५ ॥**

अर्थ--हिचकी, श्वास, मस्तकका कंप होना, पसवाडोमे पीडा, निद्राका नाश और अत्यत बकवाद, ये लक्षण जिसमे होयँ उसको वातप्रधान मदात्यय जाननां ॥

पित्तमदात्ययके लक्षण ।

**तृष्णादाहज्वरस्वेदमोहातीसारविभ्रमैः ॥**
**विद्याद्धरितवर्णस्यपित्तप्रायंमदात्ययम् ॥ १६ ॥**

अर्थ--प्यास, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतिसार, विभ्रम ( कुछ कुछ ज्ञान होय ) देहका वर्ण हारा होय, इन लक्षणोसे पित्तप्रधान मदात्यय जानना ॥

कफमदात्ययके लक्षण ।

**छर्द्यरोचकहृल्लासतन्द्रास्तैमित्यगौरवैः ॥**
**विद्याच्छीतपरीतस्यकफप्रायंमदात्ययम् ॥ १७ ॥**

अर्थ--वमन, ( रद ) अन्नमे अरुचि, खालीरद ( ओकारी ) तन्द्रा, देह गीली और भारी, और शीत लगे, इन लक्षणोसे कफप्रधान मदात्यय जानना ॥

सन्निपातमदात्ययके लक्षण ।

**ज्ञेयस्त्रिदोषजश्चापिसर्वलिंगैर्मदात्ययः ॥ १८ ॥**

अर्थ--जिसमें तीनो दोषोके लक्षण मिलतेहो उसको सन्निपातप्रधान मदात्यय जानना ॥

परमदके लक्षण ।

**श्लेष्मोच्छ्रयोंऽगगुरुतामधुरास्यताचविण्मूत्रसक्तिरथतंद्रिररोचकश्च ॥ लिंगंपरस्यतुमदस्यवदंतितज्ज्ञास्तृष्णारुजाशिरसिसंधिषुचातिभेदः ॥ १९ ॥**

अर्थ--कफका कोप ( यह नासास्रावादिक जानना ) देहका जड होना, मुखमे मिठास, मलमूत्रका अवरोध, तन्द्रा, अरुचि, प्यास, मस्तकमे पीडा और सधियोमे कुठारीसे तोडनेसरीखी पीडा होय, ये परमदके लक्षण जानने ॥

पानाजीर्णके लक्षण ।

**आध्मानमुग्रमथवोद्गिरणंविदाहः पानेत्वजीर्णमुपगच्छतिलक्षणानि ॥**

अर्थ--अत्यत पेटका फूलना, वमन अथवा डकारका आना, जलन होना, ये लक्षण जव मद्याजीर्ण होय है तव होते है ॥

पानविभ्रमके लक्षण ।

**हृद्गात्रतोदकफसंस्रवकंठधूममूर्च्छावमिज्वरशिरोरुजनप्रदेहाः ॥२०॥ द्वेषःसुरान्नविकृतेष्वपितेषुतेषुतंपानविभ्रममुशंत्यखिलेनधीराः ॥**

अर्थ–हृदय और गात्र इनमें सुई चुभानेकीसी पीडा होय, कफका स्राव होय, कठसे धूआसा निकलनेकीसी पीडा, मूर्च्छा वमन, ज्वर, शिरमे पीडा, मुख कफसे लिप्तसा होय, अनेकप्रकारकी मैरेय पैष्टिक, इत्यादिक सुराविकृति और लड्डू, पेडा आदि अन्नविकृति-इनमें द्वेष होयं, इन सर्व लक्षणसे इस रोगको ( पानविभ्रम ) ऐसे कहते हैं। सन्निपातके अतर्गत होनेसे ये परमदादिक तीनो **चरकने** नही कहे और पूर्वोक्त मदात्ययके लक्षणोसे विलक्षण होनेसे सुश्रुतमें उक्त त्रिदोपज मदात्ययको पृथक् कहीं है ॥

असाध्यलक्षण ।

**हीनोत्तरोष्ठमतिशीतममन्ददाहंतैलप्रभास्यमतिपानहतंत्यजे- त्तम् ॥ २१ ॥जिह्वौष्ठदंतमसितंत्वथवापिनीलंपीतेचयस्यनयने रुधिरप्रभेवा ॥**

अर्थ–ऊपरके होठसे नीचेका होठ कुछ लम्बा होय देहके वाहर अतिशीत लगे, और भीतर अत्यन्त दाह होय तेलसे लिप्त सदृश मुख हो, जीभ, होठ, दात, ये काले अथवा नीले होजायँ, नेत्र पीले, अथवा रुधिरके समान लाल होय ऐसे अतिपानसे अर्थात् अतिमद्य पीनेसे नष्ट मनुष्यको वैद्य त्याग दे, चरकमे ध्वसक, विक्षेपक, दो मद्यविकार और कहे हैं ॥

उपद्रव कहते हैं ।

**हिक्काज्वरौवमथुवेपथुपार्श्वशूलाः कासभ्रमावपिचपानहतंत्यजेत्तम् ॥ २२ ॥**

अर्थ–हिचकी, ज्वर, वमन, कम्प, पसवाडोमे पीडा होय, खासी, भ्रम ये उपद्रव जिसको होय उसको वैद्य त्यागदे परन्तु **जैज्जट** आचार्य कहते हैं कि, असाध्य लक्षणसे पृथक् पाठ होनेसे और यह लक्षण होनेसे रोगी कृच्छ्रसाध्य जानना, असाध्य न जानना ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकायां मदात्ययरोगनिदानं समाप्तम् ।

---

१ विच्छिन्नमद्यः सहसा योतिमद्य निषेवते । ध्वसो विक्षेपकश्चैव रोगस्तस्योपजायते ॥ १ ॥ श्लेष्मप्रसेकः कठास्यशोषः शब्दासहिष्णुता । निद्रातन्द्रातियोगश्च ज्ञेयं ध्वसकलक्षणम् ॥ २ ॥ हृत्कण्ठरोगसंमोहच्छर्दिरगरुजाज्वरः । तृष्णाकासशिरःशूलमेतद्विक्षेपलक्षणम् ॥ ३ ॥

# अथ दाहनिदानम्।



त्वचंप्राप्तःसपानोष्मापित्तरक्ताभिमूर्च्छितः ॥
दाहंप्रकुरुतेघोरंपित्तवत्तत्रभेषजम् ॥ १ ॥

अर्थ—दाहरोग सातप्रकारका है तिसमे प्रथम मद्यजन्य दाहके लक्षण कहते है मद्यपान करनेसे कुपित भया जो पित्त उस पित्तकी उष्णता पित्तरक्तको बढाय भयंकर दाहरोग उत्पन्न करे इसमें पित्तके समान औषध करे ॥

रक्तज और पित्तज दाहके लक्षण।

कृत्स्नदेहानुगंरक्तमुद्रिक्तंदहतिध्रुवम् ॥ समुष्यतेतृष्यतेचताम्राभस्ताम्रलोचनः ॥ २ ॥ लोहगंधांगवदनोवह्निनेवावकीर्यते ॥ पित्तज्वरसमःपित्तात्सचाप्यस्यविधिःस्मृतः ॥ ३ ॥

अर्थ—सर्व देहका रुधिर कुपित होकर अत्यन्त दाह करे, और वह रोगी अग्निके समीप रहनेसे जैसा तपे है ऐसा तपे, प्यासयुक्त ताम्रके रंगसदृश देहका रंग होय, और नेत्रभी लाल होयँ, तथा मुखसे और देहसे तप्तलोहेपर जल डालनेकीसी गंध आवे, और अंगोमे मानो किसीने अग्नि लगाय दीनी ऐसी वेदना होय, पित्तसे जो दाह होय उसमें पित्तज्वरकेसे लक्षण होते है उसपर पित्तज्वरकी चिकित्सा करनी चाहिये पित्त ज्वरमें और पित्तके दाहमे इतना अन्तर है कि, पित्तज्वरमे अरति और आमाशयका दुष्ट होना होता है और पित्तके दाहमे नही होता, और सब लक्षण होते है ॥

प्यासरोकनेके दाहके लक्षण।

तृष्णानिरोधादब्धातौक्षीणेतेजःसमुद्धतम् ॥ सबाह्याभ्यंतरं देहंप्रदहेन्मंदचेतसः ॥ संशुष्कगलताल्वोष्ठोजिह्वांनिष्कृष्य वेपते ॥ ४ ॥

अर्थ—प्यासके रोकनेसे जलरूप धातु क्षीण होकर तेज कहिये पित्तकी गरमीको वढावे तब वह गरमी देहके बाहर और भीतर दाह करे, इस दाहसे रोगी बेसुध होय, और गला, तालु, होठ यह, अत्यंत सूखें और जीभको बाहर काढदे, काँपे ॥

शस्त्राघातज दाहके लक्षण।

असृजःपूर्णकोष्ठस्यदाहोऽन्यःस्यात्सुदुःसहः ॥ ५ ॥

अर्थ–शस्त्र कहिये तलवार आदिके लगनेसे प्रगटरुधिर उस रुधिरसे कोष्ठ कहिये हृदय भरजाय तब दाह अत्यन्त दुःसह प्रगट होय ॥

धातुक्षयजन्यदाहकेलक्षण ।

**धातुक्षयोत्थोयोदाहस्तेनमूर्च्छातृषान्वितः ॥**
**क्षामस्वरःक्रियाहीनःससीदेद्भृशपीडितः ॥ ६ ॥**

अर्थ–धातुके क्षय होनेसे जो दाह होय उससे रोगीको मूर्च्छा प्यास इनसे युक्त होय, स्वरभंग और चेष्टाहीन होय, और इस दाहसे पीडित होकर यदि चिकित्सा न करावे तो वह रोगी मरणको प्राप्त होय ॥

क्षतज दाहके लक्षण ।

**क्षतजोऽन्नक्षतश्चान्यःशोचतोवाप्यनेकधा ॥**
**तेनांतर्दह्यतेऽत्यर्थंतृष्णामूर्च्छाप्रलापवान् ॥ ७ ॥**

अर्थ--क्षत ( घाव ) के होनेसे जो दाह उससे आहार थोडा रहजावे, और अनेक प्रकारके शोक कर दाह होय, और इस दाहकरके अभ्यन्तर दाह होय,तथा प्यास, मूर्च्छा और प्रलाप ( बकवाद ) ये लक्षण होयँ ॥

मर्माभिघातज दाहके लक्षण ।

**मर्माभिघातजोऽप्यस्तिसोऽसाध्यःसप्तमोमतः ॥**

अर्थ–मर्मस्थान ( हृदय शिर बस्ति ) मे चोट लगनेसे जो दाह होय सो सातवॉ असाध्य है ! अर्थात् और जो छः दाह है वे साध्य हैं ॥

**सर्वएवचवर्ज्याःस्युःशीतगात्रस्यदेहिनः ॥ ८ ॥**

अर्थ–सब दाहोमे शीतल देहवाला रोगी त्याज्य है ॥

इति दाहनिदानम् ।

---

# अथ उन्मादनिदानम् ।

**मदयंत्युद्धतादोषायस्मादुन्मार्गमाश्रिताः ॥**
**मानसोऽयमतोव्याधिरुन्मादइतिकीर्त्यते ॥ १ ॥**

अर्थ–दोष ( वात पित्त कफ ) बढकर अपने २ मार्गको छोड़ अन्य मार्ग अथात्

---

१ "उत ऊर्ध्वं हृदयं गतादोषा मदयन्ति मनोविभ्रम कुर्वन्तीत्युन्मादः–"

मनोवह धमनियोंमे प्राप्त होकर मनको उन्मत्त करे और यह व्याधि मानसी है अत एव इसको उन्माद ऐसे कहते है ॥

एकैकशःसर्वशश्चदोषैरत्यर्थमूर्च्छितैः ॥ मानसेनचदुःखेनसपंचविधउच्यते ॥ २ ॥ विषाद्भवतिषष्ठश्चयथास्वंतत्रभेषजम् ॥ सचाप्रवृद्धस्तरुणोमदसंज्ञांबिभर्तिच ॥ ३ ॥

अर्थ—अत्यन्त कुपितभये पृथक् पृथक् दोषोसे ३ सन्निपात और मानसिक दुःखसे यह रोग पाचप्रकारका और विष खानेसे ६ छठा इनमे यथा दोषानुसार औषध देनी चाहिय, जबतक यह रोग बढे नही और जबतक तरुण रहे तबतक इस रोगको मद ऐसे कहते है ॥

उन्मादके सामान्य कारण और सम्प्राप्ति ।

विरुद्धदुष्टाऽशुचिभोजनानिप्रधर्षणंदेवगुरुद्विजानाम् ॥ उन्मादहेतुर्भयहर्षपूर्वोमनोभिघातोविषमाश्चचेष्टाः ॥ ४ ॥ तैरल्पसत्त्वस्यमलाःप्रदुष्टाबुद्धेर्निवासंहृदयंप्रदूष्य ॥ स्रोतांस्यधिष्ठायमनोवहानिप्रमोहयंत्याशुनरस्यचेतः ॥ ५ ॥

अर्थ--विरुद्ध दुष्ट कहिये जहर मिला अन्न आदि, अशुचि चांडालादिसे स्पर्श करा ऐसा भोजन, देवता, गुरु, ब्राह्मण इनका तिरस्कार करनेसे, भय और हर्षके होनेसे, मनको विगडा सब चेष्टा विपरीत करे ( अर्थात् टेढा तिरछा चले बलवानसे वैर करे बकने लगे ) इस श्लोकमे पूर्व शब्द कारणका है और चकारसे काम क्रोध लोभादिक भी उन्माद रोगके कारण है यह जैज्जटका मत है ॥

इनमे कहे जो कारणोसे अल्प ( सत्त्व गुण वाले ) पुरुषके वातादिक दोष कुपित होकर बुद्धिका निवासस्थान ( रहनेका ठिकाना ) कौन हृदय उसको विगाड मनके बहनेवाले स्रोतोमे प्राप्त हो मनुष्यके अतःकरणको मोहित करे ॥

उन्मादका स्वरूप ।

धीविभ्रमःसत्त्वपरिप्लवश्चपर्याकुलादृष्टिरधीरताच ॥ अबद्धवाक्त्वंहृदयंचशून्यंसामान्यमुन्मादगदस्यचिह्नम् ॥ ६ ॥

अर्थ—बुद्धिमे भ्रम, मनका चञ्चल होना, दृष्टिका सर्वत्र चलना, अधीरजपना (डरपना), कुछका कुछ बोलना, हृदय शून्य होजाय, ( अर्थात् विचार शक्तिका नाश होना ) ये उन्माद रोगके सामान्य लक्षण है ॥

विशेष लक्षण ।

रूक्षाल्पशीतान्नविरेकधातुक्षयोपवासैरनिलोऽतिवृद्धः ॥ चिन्ता-
दिदुष्टंहृदयंप्रदूष्यबुद्धिंस्मृतिंचापिनिहंतिशीघ्रम् ॥७॥ अस्था-
नहास्यस्मितनृत्यगीतवागंगविक्षेपणरोदनानि॥पारुष्यकार्श्या-
रुणवर्णताचजीर्णेबलंचानिलजस्यरूपम् ॥ ८ ॥

अर्थ–रूखा, थोडा और शीतल ऐसा अन्न विरेक इस शब्दसे इस जगह दस्त और वमन जानना, धातुक्षय, और उपवास, इन कारणोसे अत्यन्त बढी जो वायु, सो चिन्ता शोकादिकरके युक्त होकर हृदयको अत्यत दुष्ट कर. बुद्धि और स्मरण इनका शीघ्र नाश करे और हँसनेके कारण विना हँसे,मदमुसकानकरे, नाचे, विना प्रसगके गीत और बोलना करे, हाथोंको सर्वत्र चलावे, रोवे, और शरीर रूखा तथा कृश और लाल होजाय, और आहारका परिपाक भयेपर ज्यादा जोर होय, यह वातज उन्मादके लक्षण है ॥

पित्तजउन्मादके कारण और लक्षण ।

अजीर्णकट्वम्लविदाह्यशीतैर्भोज्यैश्चितंपित्तमुदीर्णवेगम् ॥
उन्मादमत्युग्रमनात्मकस्यहृदिस्थितंपूर्ववदाशुकुर्यात् ॥ ९ ॥
अमर्षसंरम्भविनग्नभावाःसंतर्जनाभिद्रवणौष्ण्यरोषाः॥ प्रच्छा-
यशीतान्नजलाभिलाषःपीतास्यतापित्तकृतस्यलिंगम् ॥ १० ॥

अर्थ–अधकच्ची, कड़वी, खट्टी, दाह करनेवाली और गरम ऐसी ऐसी वस्तु भोजन करनेसे, संचित भया जो पित्त सो तीव्रवेग होकर अजितेंद्रिय पुरुषके हृदयमें प्रवेश करे पूर्ववत् अति उग्र उन्माद तत्काल उत्पन्न करे । इस उन्मादसे असहनशील, हाथ पैरोको पटकनेवाला, नग्न होजाय, डरपे, भोजन लगे, देह गरम होजाय, क्रोध करे, छायामे रहै, शीतल अन्न और शीतल जल इनकी इच्छा, पीला मुख होजाय, यह लक्षण पित्तज उन्मादके हैं ॥

कफजन्यउन्मादके कारण और लक्षण ।

सम्पूरणैर्मन्दविचेष्टितस्यसोष्माकफोमर्मणिसंप्रवृद्धः ॥ बुद्धि
स्मृतिंचाप्युपहन्तिचित्तंप्रमोहयन्संजनयेद्विकारम् ॥ ११ ॥
वाक्चेष्टितंमन्दमरोचकश्चनारीविविक्तप्रियताऽतिनिद्रा ॥ छ-
र्दिश्चलालाचबलंचभुंक्तेनखादिशौक्ल्यंचकफात्मकेस्यात् ॥ १२ ॥

अर्थ—मंद भूखमें पेटभर भोजन कर कुछ परिश्रम न करे, ऐसे पुरुषके पित्तयुक्त कफ हृदयमे अत्यन्त बढकर बुद्धि स्मरण और चित्त इनकी शक्तिका नाश करे, और मोहित कर उन्मादरूप विकारको उत्पन्न करे उस विकारसे वाणीका व्यापार कहिये बोलना इत्यादि मन्द होय, अरुचि होय स्त्री प्यारी लगे, एकांत वास करे, निद्रा अत्यंत आवे, वमन होय, मुखसे लार वहे, भोजन करे पिछाडी इस रोगका जोर हो । नख, आदिशब्दसे त्वचा, मूत्र, नेत्रादिक ये सफेद होयँ ये लक्षण कफके उन्मादके हैं ॥

सन्निपातके उन्मादके लक्षण ।

**यःसन्निपातप्रभवोऽतिघोरःसर्वैःसमस्तैरपिहेतुभिःस्यात् ॥ सर्वाणिरूपाणिबिभर्त्तिताट्टग्विरुद्धभैषज्यविधिर्विवर्ज्यः ॥ १३ ॥**

अर्थ—जो उन्माद वातादिक दोषकरके अथवा तीनों दोषोंके कारणकरके होय वह सन्निपातजन्य उन्माद बहुत भयकर होता है। उसमे सब दोषोंके लक्षण होते है। इसमें विरुद्ध औषधकी विधि वर्जित है। यह उन्माद वैद्योंकरके त्याज्य है कारण यह कि, असाध्य है ॥

शोकज उन्मादके लक्षण ।

**चौरैर्नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यैर्वित्रासितस्यधनबांधवसंक्षयाद्वा ॥ गाढंक्षतेमनसिचप्रिययारिरंसोर्जायेतचोत्कटतरोमनसो विकारः ॥ १४ ॥ चित्रंब्रवीतिचमनोनुगतंविसंज्ञोगायत्यथो हसतिरोदितिचातिमूढः ॥**

अर्थ—चोरोंने, राजोंके मनुष्योंने, अथवा शत्रुओने, इसी प्रकार सिह, व्याघ्र, हाथी आदि किसीने त्रास दिया होय अथवा धन बंधुके नाश होनेसे, ऐसे पुरुषका अन्तःकरण अत्यन्त दूखे, अथवा प्यारी स्त्रीसे सभोग करनेकी इच्छावाले पुरुषके मनमे भयंकर विकार उत्पन्न होय, वह पुरुष गुप्त बातको भी कहने लगे, और अनेक प्रकारसे बोले, विपरीत ज्ञान होय, वह गावे, हँसे, और रोवे तथा मूर्ख होजाय ॥

विषजन्य उन्मादके लक्षण ।

**रक्तेक्षणोहतबलेंद्रियभाःसुदीनःश्यावाननोविषकृतेनभवेद्विसंज्ञः ॥ १५ ॥**

अर्थ—विषसे प्रगट उन्मादमें नेत्र लाल होयँ, बल इन्द्रिय और शरीरकी कान्ति नष्ट हो जाय, अतिदीन होजाय, उसके मुखपर कालोंच आजाय, और सज्ञा जाती रहै ॥

असाध्य लक्षण।

**अवाङ्मुखस्तून्मुखोवाक्षीणमांसबलोनरः ॥**
**जागरूकोह्यसन्देहमुन्मादेनविनश्यति ॥ १६ ॥**

**अर्थ**—जिसका मुख नीचेको हो अथवा ऊपरको हो और जिसका मास और बल क्षीण हो-गया हो, तथा जिसकी निद्रा जाती रही हो, ऐसा मनुष्य निश्चय इस उन्माद करके नाशको प्राप्त हो ॥

भूतज उन्मादके लक्षण।

**अमर्त्यवाग्विक्रमवीर्यचेष्टाज्ञानादिविज्ञानबलादिभिर्यः ॥**
**उन्मादकालोनियतश्चयस्यभूतोत्थमुन्मादमुदाहरेत्तम् ॥ १७ ॥**

**अर्थ**—वाणी, पराक्रम, शक्ति, देहका व्यापार, तत्त्वज्ञान, शिल्पादि ज्ञान, अथवा ज्ञान कहिये शास्त्रज्ञान और विज्ञान नाम तदर्थनिश्चय आदिशब्दसे स्मृत्यादिक ये जिसकी मनुष्यकी सी न होयँ और जिसका उन्मत्त होनेका काल निश्चय होय, ऐसे उन्मादको भूतोन्माद कहते है। भूतशब्दसे यहां आगे कहेगे सो सब देवता जानने ॥

देवग्रहके लक्षण।

**सन्तुष्टःशुचिरतिदिव्यमाल्यगंधोनिस्तंद्रस्त्ववितथसंस्कृतप्र भाषी ॥ तेजस्वीस्थिरनयनोवरप्रदाताब्रह्मण्योभवतिनरःस देवजुष्टः ॥ १८ ॥**

**अर्थ**—सदा सतोषयुक्त रहे, पवित्र रहै, देहमे दिव्यपुष्पके समान सुगध, नेत्रोके पलक लगे नही, सत्य और सस्कृतका बोलनेवाला हो, तेजस्वी, स्थिरदृष्टि, वरका देनेवाला ( तेरा कल्याण हो ऐसे वरदेवे ),ब्राह्मणसे प्रीति राखे, ऐसा मनुष्य देवग्रह पीडित जानना, देवशब्दसे गणमातृकादि ग्राह्य है सो विदेह ने कहा भी है ॥

असुरपीडितके लक्षण।

**संस्वेदीद्विजगुरुदेवदोषवक्ताजिह्माक्षोविगतभयोविमार्गदृष्टिः ॥**
**संतुष्टोनभवतिचान्नपानजातैर्दुष्टात्माभवतिसदेवशत्रुजुष्टः॥ १९ ॥**

**अर्थ**—पसीनायुक्त देह, ब्राह्मण, गुरु और देव इनमे दोपारोपण करनेवाला, टेढी दृष्टिसे देख-नेवाला, निर्भय,वेदविरुद्ध मार्गका चलनेवाला,और बहुत अन्न जलसे भी जिसको सतोप न होय, और दुष्टबुद्धि, ऐसा मनुष्य दैत्य ग्रहपीडित जानना ॥

---

१ कोपनःस्तब्धसर्वांगो लालाफेनाविलाननः। निद्रालुःकंपते मूको गणमातृभिरर्दितः ॥ १ ॥

गंधर्वग्रहके लक्षण ।

हृष्टात्मापुलिनवनांतरोपसेवीस्वाचारःप्रियपरिगीतगंधमाल्यः॥
नृत्यन्वैप्रहसतिचारुचाल्पशब्दंगंधर्वग्रहपरिपीडितोमनुष्यः॥२०॥

अर्थ-गधर्व ग्रहसे पीडित मनुष्य प्रसन्नचित्त, पुलिन और बाग बगीचेमे रहनेवाला, अनिंदित आचारका करनेवाला, गान, सुगंध, और पुष्प ये जिसकों प्यारे लगे वह पुरुष नाचे, हसे, सुन्दर बोले, थोडा बोले ॥

यक्षग्रहके लक्षण ।

ताम्राक्षःप्रियतनुरक्तवस्त्रधारीगम्भीरोद्रुतगतिरल्पवाक्सहिष्णुः ॥ तेजस्वीवदतिचकिंददामिकस्मैयोयक्षग्रहपरिपीडितोमनुष्यः ॥ २१ ॥

अर्थ-यक्षग्रहसे पीडित मनुष्यके नेत्र लाल हो, सुदर वारीक ऐसे रक्तवस्त्रका धारण करनेवाला, गंभीर, बुद्धिवान् जलदी चलनेवाला, प्रमाणका वोलनेवाला सहनशील, तेजस्वी किसको क्या देऊ ऐसे वोलनेवाला, ऐसा होय ॥

पितृग्रहके लक्षण ।

प्रेतानासदिशतिसंस्तरेषुपिंडान्भ्रांतात्माजलमपिचापसव्यहस्तः ॥ मांसेप्सुस्तिलगुडपायसाभिकामस्तद्भक्तोभवतिपितृग्रहाभिजुष्टः ॥ २२ ॥

अर्थ-कुशाके ऊपर प्रेतोको ( पितरोंको ) पिंड दे, चित्तमे भ्रांति रहै, और उत्तरीय वस्त्र अपसव्यकरके तर्पण भी करै, मांस खानेकी इच्छा होय, तथा तिल, गुड, खीर इनपर मन चले । इस कहनेका प्रयोजन यह है कि जिसकी जिस पदार्थपर इच्छा होय उसको उसी पदार्थकी वलि देनेसे उस ग्रहकी शांति होती है ऐसे ही सर्वत्र जानना यह डल्हनका मत है । और वह मनुष्य पितरोकी भक्ति करे ये लक्षण पितृग्रहपीडित मनुष्यके है ॥

सर्पग्रहयुक्तके लक्षण ।

यस्तूर्व्यांप्रसरतिसर्पवत्कदाचित्सृक्किण्यौविलिहतिजिह्वयातथैव ॥ क्रोधालुर्मधुगुडदुग्धपायसेप्सुर्विज्ञेयोभवतिभुजंगमेनजुष्टः॥ २३ ॥

अर्थ--जो सर्पके समान पृथ्वीमे लोटाकरे, अर्थात् छातीके बल चले, तथा सर्पके समान अपने ओष्ठप्रात ( होठोको ) चाटाकरे, सदा क्रोधी रहे शहद, गुड, दूध और खीरकी इच्छा रहे, वह सर्पग्रहग्रस्त जानना ॥

राक्षसग्रहपीडितके लक्षण ।

मांसासृग्विविधसुराविकारलिप्सुर्निर्लज्जोभृशमतिनिष्ठुरोऽति-शूरः ॥ क्रोधालुर्विपुलबलोनिशाविहारीशौचद्विड्भवतिचरा-क्षसैर्गृहीतः ॥ २४ ॥

अर्थ--जो मनुष्य मास, रुधिर, नानाप्रकारके मद्य पीनेकी इच्छा करे, और निर्लज्ज अत्यन्त निष्ठुर, अत्यन्त शूर, क्रोधी, वडा बली, रात्रिमे डोलनेवाला, अपवित्र, ऐसा होय वह राक्षसकरके ग्रस्त जानना ॥

पिशाचजुष्टके लक्षण ।

उद्धस्तःकृशपरुषश्चिरप्रलापीदुर्गंधोभृशमशुचिस्तथाऽति लोलः॥बह्वाशीविजनवनांतरोपसेवीव्याचेष्टन्भ्रमतिरुदन्पि-शाचजुष्टः ॥ २५ ॥

अर्थ--जो अपने हाथ ऊपरको करे, "उद्धस्त्र" ऐसा भी पाठ है उस जगह उद्धस्त्र नाम नगा हो जाय, तेजरहित, वहुत देरपर्यत वकनेवाला, जिसके देहमे दुर्गंध आवै अपवित्र, तथा अति-चचल कहिये सव अन्नपानमे इच्छा करनेवाला खानेको मिलै तो वहुत भोजन करे, एकांत वनातरोमे रहनेवाला, विरुद्ध चेष्टा करनेवाला, रुदन करता, डोलनेवाला ऐसा मनुष्य पिशाचग्रस्त जानना । प्रसगवशसे ब्रह्मराक्षस और भूतोन्मादके लक्षण ग्रंथान्तरोसे लिखते हैं ॥

देवविप्रगुरुद्वेषीवेदवेदांगविच्छुचिः ॥
आशुपीडाकरोऽहिंस्रोब्रह्मराक्षससेवितः ॥ २६ ॥

अर्थ--देव, ब्राह्मण, गुरुसे द्वेषकर्त्ता, वेद और वेदके अग ( शिक्षा, कल्प, व्याकरणादि ) का पढा भया, पवित्र रहनेवाला, शीघ्र पीडाका कर्त्ता, हिसा करे नही, ये लक्षण ब्रह्मराक्षससेवी मनुष्यके हैं ॥

भूतोन्मादके लक्षण।

महापराक्रमोयश्चदिव्यंज्ञानंचभाषते ॥
उन्मादकालोनैश्चित्योभूतोन्मादीसउच्यते ॥ २७॥

अर्थ—महापराक्रमी, और जो श्रेष्ठ ज्ञानको कहे, और जो उन्माद कालका निश्चय न होय, उसको भूतोन्मादी कहते हैं, अब कहते है कि देवादिक ग्रह इस मनुष्यको तीन कार्यके वास्ते ग्रहण करते है, हिंसा अर्थात् मारनेके निमित्त, और पूजाके निमित्त तथा विहारके निमित्त, इस हिंसाके निमित्त ग्रस्त मनुष्य साध्य ( अच्छा ) नहीं होय उसके लक्षण आगे कहते है ॥

**स्थूलाक्षोद्रुतमटनःसफेनलेहीनिद्रालुःपततिचकंपतेचयोहि ॥ यश्चाद्रिद्विरदनगादिविच्युतःस्यात्सोऽसाध्योभवतितथात्रयोदशेऽब्दे ॥ २८ ॥**

अर्थ—नेत्र भयानक होजाय, शीघ्र चले, मुखमे जो झाग है उसको चाटनेवाला और जिसको निद्रा बहुत आवै, तथा गिरपडे, कापे और जो पर्वत, हाथी, अथवा नग नाम वृक्ष, आदिशब्द से भांति, मन्दिर आदि जानने, इनसे गिरकर ग्रहग्रस्त होय, वोह असाध्य है, तैसेही तेरहवे वर्षमे सर्व देवादि उन्मादी असाध्य जानने, विदेहने विशेष लक्षण कहे है सो ग्रन्थान्तरोमे जानलेने

देवादीनामावेशसमयः ।

**देवग्रहाःपौर्णमास्यामसुराःसंध्ययोरपि ॥ गन्धर्वाःप्रायशोऽष्टम्यांयक्षाश्चप्रतिपद्यथ ॥ २९ ॥ पितृग्रहास्तथादर्शेपंचम्यामपिचोरगाः ॥ रक्षांसिरात्रौपैशाचाश्चतुर्दश्यांविशंतिहि ॥ ३० ॥**

अर्थ—देवग्रह पूर्णमासीको प्रवेश करते है, असुरग्रह, सायकोलमे. अपिशब्दसे पूर्णमासीको भी प्रवेश करते है, गन्धर्वग्रह बहुधा अष्टमीको, प्रायश्शब्दसे सन्ध्याको भी गधर्व ग्रह प्रवेश करते है, यक्षग्रह पडवाको, पितृग्रह अमावास्याको, सर्पग्रह पचमीको, अपिशब्दसे अमावास्याकोभी प्रवेश करते हैं, राक्षस रात्रिमे और पिशाच चतुर्दशीको, मनुष्यके देहमे प्रवेश करते है, तिथि कहनेका यह प्रयोजन है कि जिसजिस तिथिको जो २ ग्रह मनुष्यको ग्रस्त करे उसको उसी उसी तिथिमे शांतिके निमित्त बलिदानादिक कराने चाहिये। + शंका—क्यो जी जब ग्रहग्रस्त मनुष्योको उन्माद होता है तौ वह ग्रह मनुष्यकी देहमे प्रवेश करते क्या नही दीखते है इसवास्ते कहते है ॥

**दर्पणादीन्यथाछायाशीतोष्णंप्राणिनोयथा ॥ स्वमणिंभास्क-**

---

१ "सन्ध्यात्रिनाडीप्रमिताऽर्कबिम्बादर्द्धोदितास्तादधऊर्ध्वमत्र" इति।

२ "ग्रहा गृह्णन्ति ये येषु तेषां तेषु विशेषतः । दिनेषु बलिहोमादीन्प्रयुंजीत चिकित्सकः ॥ १ ॥"

राशुश्चयथादेहंचदेहधृक् ॥ विशंतिनचदृश्यंतेग्रहास्तद्वच्छरीरिणाम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—जेसे दर्पणमे मनुष्यका प्रतिविंव पडे है, आदिशब्द इस जगह प्रकारवाची है, अर्थात् जल, तैल आदिमे जेसे छाया पडती है और सरदी, गरमी जैसे मनुष्योको लगती है, अथवा जैसे सूर्यकिरण सूर्यकान्तमणि ( आतसीकाच ) मे प्रवेश करै है अथवा जैसे जीव देहमे प्रवेश करे हैं, इसीप्रकार सव ग्रह मनुष्यके शरीरमे प्रवेश करते हैं परतु दीखते नहीं है इस श्लोकके पोषक दृष्टांत जेज्जट आचार्यने वहुत दीने हैं परन्तु हमने ग्रन्थ वढनेके भयसे नही लिखे ॥

इस उन्मादादिरोगमे सर्वत्र देवशब्दकरके देवताओकेसे आचरणवाले देवताओके अनुचर (दास) जानने चाहिये, क्योकि देवताओको मनुष्यनके अपवित्र देहमे प्रवेश होना असंभव है सो सुश्रुतमे लिखा है ॥

नतेमनुष्यैःसहसंविशन्तिनवामनुष्यान्कचिदाविशन्ति ॥ ये त्वाविशन्तीतिवदन्तिमोहात्तेभूतविद्याविषयादपोह्याः॥ ३२ ॥ तेषांग्रहाणांपरिचारकायेकोटीसहस्त्रायुतपद्मसंख्याः ॥ असृग्वसामांसभुजःसुभीमानिशाविहाराश्चतथाविशंति ॥ ३३॥

अर्थ—जो देवादिक मनुष्यके साथ मिलते नहीं हैं न वे मनुष्योकी देहमे प्रवेश करते है और जो वैद्य प्रवेश करते है ऐसे कहते हैं, वे अज्ञानसे कहते है, ऐसा वैद्य भूतविद्यावाला जानकर त्याज्य है। तो कौन प्रवेश करते है इस वास्ते कहते हैं तेषामिति अर्थात् उन देवताओके परिचारक ( नौकर ) जो करोडो हजारो पद्मसख्याक रुधिर, वसा, मासके भोजन करनेवाले भयकर, रात्रिमे विचरनेवाले है वे प्रवेश करते हैं ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायामुन्मादरोगः समाप्तः।

---

# अपस्मारनिदानम् ।

प्रथम सुश्रुतोक्त इसरोगकी निरुक्ति लिखते हैं।

स्मृतिर्भूतार्थविज्ञानमपस्तत्परिवर्जने ॥
अपस्मारइतिप्रोक्तस्ततोऽयंव्याधिरंतकृत् ॥ १ ॥

अर्थ—स्मृतिशब्द प्राणियोंके अर्थज्ञानको कहता है, और अपशब्द उसका नाशक है, इसीसे स्मृति और अप इन दोनो शब्दोंसे अपस्मार यह शब्द सिद्ध हुआ इसी पूर्वोक्त हेतुके नाशसे यह रोग जन्मादिकके विषे प्रवेश होनेसे प्राणांतकारक है ॥

अपस्मारकी निदानपूर्वक सम्प्राप्ति।

**चिंताशोकादिभिर्दोषाः क्रुद्धा हृत्स्रोतसि स्थिताः॥**
**कृत्वा स्मृतेरपध्वंसमपस्मारं प्रकुर्वते ॥ २ ॥**

अर्थ—चिंता, शोक, आदिशब्दसे क्रोध, लोभ, मोहादिसे कुपित भये जो दोष ( वात पित्त कफ ) सो हृदयमे स्थित जो मनके वहनेवाली नाडी उनमे प्राप्त हो स्मरण ( ज्ञान ) का नाश कर अपस्माररोगको प्रगट करै हैं।

वाग्भटके मतसे निदान।

**मिथ्यायोगेंद्रियार्थानां कर्मणामतिसेवनात्॥ निरुद्धमलिनांकर्मविहारकुपितैर्मलैः॥ ३॥ वेगनिग्रहशीलानामहिताशुचिभोजनात्॥ रजस्तमोभिभूतानां गच्छतां वा रजस्वलाम्॥ तथा-कामभयोद्वेगक्रोधशोकादिभिर्भृशम्॥ चेतसोऽभिभवैः पुंसामपस्मारोऽभिजायते ॥ ४ ॥**

अर्थ—इंद्रियोके अर्थ कहिये विषय और कर्म, उनका मिथ्यायोग, अतियोग और अयोगके सेवन करनेसे, तथा निरुद्धमल भोजन और विहारसे कुपित भये जो दोष उनसे, तथा, मूत्रमलादि वेगोके धारण करनेवालोके अहित और अपवित्र भोजन करनेसे, रजोगुण, तमोगुणी, मनुष्योके रजस्वला स्त्रीगमन करनेसे, तथा काम, भय, उद्वेग, क्रोध, शोक इन कारणोसे; चित्त ( मन ) के बिगडनेसे, मनुष्योके अपस्माररोग प्रगट होता है। तहां श्रवण, स्पर्शन, दर्शन, रसन, घ्राण, ये इन्द्रियोके अर्थ है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये इन्द्रियोंके विषय है। इनके अतिसेवनसे उदाहरण दिखाते हैं। जैसे पुरुषका इष्टनाशादि सुनना, मिथ्यायोग है। पटहादि बाजोंका सुनना अतियोग है। कुछ न सुनना, अयोग है। ऐसेही अपवित्रआदिको छूना, मिथ्यायोग है। अतिशीतल, अतिगरम छूना योग, स्नान उबटना आदिका सेवन अतियोग है, किसीको न छूना अयोग है, छोटी वस्तुका देखना मिथ्यायोग है बडीवस्तुका देखना अतियोग, और किसीको न देखना अयोग है, रसोका अतिसेवन अतियोग है, थोडा सेवन मिथ्यायोग है, असेवन अयोग है। दुर्गंधका सूंघना मिथ्यायोग

है। अतितीक्ष्ण गधका सूवना अतियोग है, किसीको न सूवना अयोग है। तहा कायिक,वाचिक, मानसिक तीनप्रकारका कर्म कहाहै। तहा कायिक कर्म जैसे कुसमयमे दडकसरतका करना मिथ्या योग, वहुत करना अतियोग, कुछ न करना अयोग है। खोटा और झूठ बोलना वाणीका मिथ्या योग है, वहुत बोलना अतियोग, चुप होजाना अयोग है। मानसकर्म जैसे शोकादि चितवन मानसिक मिथ्यायोग है, अत्यत चिता करना अतियोग है। और किसकी चिता न करना अयोग है इति। आगे श्लोक सब माधवके है॥

अपस्मारके सामान्यलक्षण।

**तमःप्रवेशःसंरंभोदोषोद्रेकहतस्मृतिः॥**
**अपस्मारइतिज्ञेयोगदोघोरश्चतुर्विधः॥ १॥**

अर्थ–अन्धकारमे प्रवेश करनेके समान ज्ञानका नाश होना, नेत्र टेढे बाके, फिर दोषोके बढनेसे ज्ञानका नष्ट होना, ये लक्षण जिस रोगमे होयँ ऐसा यह भयंकर अपस्मार रोग चार प्रकारका है इसको लोक ससारमे मिरगी ऐसे कहते है॥

पूर्वरूप।

**हृत्कंपः शून्यतास्वेदोध्यानमूर्छाप्रमूढता॥**
**निद्रानाशश्चतस्मिंस्तुभविष्यतिभवंत्यथ॥ २॥**

अर्थ–जब अपस्मार होनेवाला होय है तब ये लक्षण होते है हृदय कापे और शून्य पडजाय कुछ सूझै नही चिता, मूर्च्छा, पसीने आवे, ध्यान लगजाय, मूर्च्छा कहिये मनका मोह और प्रमूढता कहिये इन्द्रियोका मोह होय निद्रा जाती रहै॥

वातज अपस्मारके लक्षण।

**कंपतेप्रदशेदंतान्फेनोद्वामीश्वसित्यपि॥**
**परुषारुणकृष्णानिपश्येद्रूपाणिचानिलात्॥ ३॥**

अर्थ–वातके अपस्मारसे रोगी कापे दातोको चबावे, मुखसे झाग गेरे, और श्वास भरे, तथा कर्कश अरुणवर्ण और कालवर्ण मनुष्योका दीखे अर्थात् कोई नीलवर्णका मनुष्य मेरे पास दौडा आता है। इसीप्रकार पित्तसे पीलेवर्णका पुरुष दौडा आता है। और कफमे सफेद रगका पुरुष मेरे सामने दौडा आता है ऐसे जानना॥

पित्तकी मृगीके लक्षण ।

**पीतफेनागवक्त्राक्षःपीतासृग्रूपदर्शनः ।**
**सतृष्णोष्णाऽनलव्याप्तलोकदर्शीचपैत्तिकः ॥ ४ ॥**

अर्थ–पित्तकी मिरगीवालेके झाग, देह, मुख ओर नेत्र ये पीले होते है । और वह पीले रुधिरके रंगकीसी सब वस्तु देखे, प्यासयुक्त और गरमीकी साथ अग्निसे व्याप्त भया ऐसा सब जगत्को देखे ॥

कफकी मृगीके लक्षण ।

**शुक्लफेनांगवक्त्राक्षःशीतहृष्टांगजोगुरुः ॥**
**पश्यञ्छुक्लानिरूपाणिमुच्यतेश्लैष्मिकश्चिरात् ॥ ५ ॥**

अर्थ–कफकी मृगीवालेके झाग, अग, मुख ओर नेत्र सफेद होयँ, देह शीतल होय तथा देहके रोमांच खडे रहे, भारी होय, और सब पदार्थ सफेद दीखे यह अपस्मार ( मिरगी ) रोग देरमे छोडे । इससे यह सूचना करी कि वातपित्तकी मृगी जलदी रोगीको छोड देती है ॥

सन्निपातकी मृगीके लक्षण ।

**सर्वैरेतैःसमस्तैश्चलिंगैर्ज्ञेयस्त्रिदोषजः ॥**
**अपस्मारःसंचासाध्योयःक्षीणस्याऽनवश्चयः ॥ ६ ॥**

अर्थ–जिसमे तीनो दोषोके लक्षण मिलतेहो वह त्रिदोषज अपस्मार जानना यह असाध्य है । ओर जो क्षीण पुरुषके होय वहभी असाध्य है । तथा पुराना पडगया होय वहभी अपस्मार ( मिरगी ) रोग असाध्य है ॥

मृगीके असाध्य लक्षण ।

**प्रतिस्फुरन्तंबहुशःक्षीणंप्रचलितभ्रुवम् ॥**
**नेत्राभ्यांचविकुर्वाणमपस्मारोविनाशयेत् ॥ ७ ॥**

अर्थ–वारंवार कंपयुक्त होय, क्षीण होगयाहो, भृकुटी ( भौह ) का चलानेवाला ओर नेत्र टेढे बाके करनेवाला ऐसा अपस्मारी रोगी जीवे नही ॥

मृगीरोगकी पाली ।

**पक्षाद्वाद्वादशाहाद्वामासाद्वाकुपितामलाः ॥**
**अपस्मारायकुर्वन्तिवेगंकिंचिदथोत्तरम् ॥ ८ ॥**

अर्थ–कोपको प्राप्तभये जो दोष सो पंद्रहवे दिन अथवा बारहवे दिन अथवा महीनाभरमें मिरगीरोग प्रकट करे, तिनमे पैत्तिक १५ दिन, वातिक १२ दिन, और श्लैष्मिक ३० दिनमे आती है। इस जगह बारहवे दिनके पिछाडी पक्ष कहना ठीक था फिर पहिले पक्ष धरनेका यह प्रयोजन है कि अधिक कालकरके ही दोष वेग करते हैं यह कहा। "किंचिदथोत्तरम्" इस पदसे यह सूचना करी है कि जिस जिस दोपका जो जो काल कहा है उससे पहिलेभी दोषोंके तारतम्यसे मिरगीरोग होयें है। ऐसे जानना। * शंका * वेग उत्पन्नकरके अपस्मारके प्रगट कर्त्ता दोष देहमे सदा रहते है, फिर वे सर्वकालमें वेग क्यो नही करते द्वादशादि दिनमे क्यो करते हैं? इस विषयमें दृष्टांतरूप समाधान कहते हैं॥

**देवेवर्षत्यपियथाभूमौबीजानिकानिचित्॥**
**शरदिप्रतिरोहन्तितथाव्याधिसमुच्छ्रयः॥ ९॥**

अर्थ–जैसे चातुर्मासमे इन्द्र वर्षेभी है परन्तु कोई जव, गेहू, चना, आदि बीज शरदऋतुमें ही ऊगते हैं तैसेही सर्व रोगके बीजरूप वातादिक दोष कदाचित् किसी अपस्मारादि व्याधि-विशेषके निदानादिकका संगम होनेसे उस रोगको प्रकट करते हैं। अथवा इसका मुख्य प्रयोजन यह है कि बीजके अंकुर फूटनेमे तेज, वायु, पृथ्वी जल ये सहायकभी हैं। परन्तु वे सत्र कालविशेषकी प्रतीक्षा ( इच्छा ) करते है। अकुर आनेको काल ही सहाय चाहिये अर्थात् जिसकालमे जिस अकुरका बीज आता है वह उसी कालमे आवेगा बीचमे कभी नही आनेवाला यही न्याय चातुर्थिक ज्वरादिकोमेभी जानना॥

इत्यपस्मारनिदानम्॥

# अथ वातव्याधिनिदानम्।

**रूक्षशीताल्पलघ्वन्नव्यवायातिप्रजागरैः॥ विषमादुपचाराच्चदोषासृक्स्रावणादपि॥ १॥ लंघनप्लवनात्यध्वव्यायामादिविचेष्टनैः॥ धातूनांसंक्षयाच्चिन्ताशोकरोगातिकर्षणात्॥ २॥ वेगसंधारणादामादभिघातादभोजनात्॥ मर्मबाधाद्गजोष्ट्राश्वशीघ्रयानादिसेवनात्॥ ३॥ देहेस्रोतांसिरिक्तानि पूरयित्वाऽनिलोबली॥ करोतिविविधान्व्याधीन्सर्वांगैकांगसंश्रयान्॥ ४॥**

अर्थ--रूखा, शीतल, थोड़ा और हलका ऐसे अन्न खानेसे, अतिमैथुनके करनेसे, बहुत जागनेसे, विषम उपचार करनेसे दोष ( कफ पित्त मल मूत्र इत्यादिक ) और रुधिर इनके निकलनेसे, अर्थात् वमन विरेचनसे लंघन, अर्थात् अखाडे आदिमें कला खेलनेसे, नदी आदिमें तैरनेसे, बहुत चलनेसे, अति दंडकसरत आदि श्रमके करनेसे, अत्यत विरुद्धचेष्टा करनेसे, रस रुधिर आदि धातुओंके क्षय होनेसे, चिन्ता शोक और रोगद्वारा कृश होनेसे, मल मूत्रादिकोंके वेग रोकनेसे, आगेसे लकडीआदिकी चोट लगनेसे, उपवास ( व्रत ) के करनेसे आदि ले सब मर्मस्थानोमेंके लगनेसे, हाथी ऊट घोडा इत्यादि जल्दी चलनेवाली सवारीपर बैठनेसे, कोपको प्राप्त भई जो बलवान् वायु सो देहमें खाली जो नस उनमें प्राप्त हो सर्वांग, अथवा एक अगमें व्याप्त होनेवाली ऐसी अनेकप्रकारकी वातव्याधि उत्पन्न करे ॥

पूर्वरूप ।

अव्यक्तंलक्षणंतेषांपूर्वरूपमितिस्मृतम् ॥
आत्मरूपंतुतद्व्यक्तमपायोलघुतापुनः ॥ ५ ॥

अर्थ—उस वक्ष्यमाण वातव्याधिके जो अप्रगट लक्षण उसको पूर्वरूप ऐसे कहते है ज्वरादि-कोंके सदृश विशिष्ट नही है । और जो रूप प्रगट होय अर्थात् दोषादि भेदकरके यथार्थ दीखे उसको उस व्याधिका लक्षण जानना । अपानवायुके चचल होनेसे स्तभ संकोच कंपादिकका कदाचित् अभाव होय है । और शरीरकी लघुता ( वायुकरके धातुशोषण होनेसे ) अथवा 'अपायोऽलघुता' कहिये सब वातविकारोका अपाय कहिये अभाव होय, और वातविकारोकी लघुता कहिये अल्पत्वकरके जो स्थिति है सो निःशेष ( बिलकुल ) निवृत्ति नही होय किन्तु कुछ न कुछ अश रहा आवे जैसे बहिरायाम निवृत्त होनेपर भी रूक्षादिकोकी निवृत्ति नही होती है ॥

संकोचःपर्वणांस्तंभोभंगोऽस्थ्नांपर्वणामपि ॥ लोमहर्षःप्रलाप-
श्चपाणिपृष्ठशिरोग्रहः ॥ ६ ॥ खांज्यपांगुल्यकुब्जत्वंशोषोंऽगा-
नामनिद्रता ॥ गर्भशुक्ररजोनाशःस्पंदनंगात्रसुप्तता ॥ ७ ॥
शिरोनासाक्षिजत्रूणांग्रीवायाश्चापिहुंडनम्॥ भेदस्तोदोऽर्तिरा
क्षेपोमोहश्चायासएवच ॥ ८ ॥ एवंविधानिरूपाणिकरोतिकु
पितोऽनिलः ॥ हेतुस्थानविशेषाच्चभवेद्रोगविशेषकृत ॥ ९ ॥

**अर्थ**—संधियोका संकोच और स्तंभ, हड्डियो और संधियोमे फूटनेकीसी पीडा, रोमांच, वाह्यात वकना, हाथ पैर और मुख इनका जकड़जाना, खंजत्व, पांगुला होना. कुवडापना, अंगोका सूखना, निद्राका नाश, गर्भका न रहना, शुक्र और रज ( स्त्रीका आर्त्तव ) इनका नाश, कंप, अंगोमे शून्यता, मस्तक, नाक, मुख, जत्रु और नाड इनका भीतर जाना, अथवा टेढे होजाय, भेदसदृश पीडा, नोचनेकीसी पीडा, शूल, आक्षेपरोग जो आगे कहेंगे, मोह, श्रम, कुपित भई जो वायु इस प्रकार लक्षण करै है। वह वायु हेतु और स्थान इन भेदसे विशिष्ट रोग उत्पन्न करनेवाली होती है। जैसे कफावृत होनेसे मन्यास्तंभ रोग करे यदि पक्काशयमे वात स्थित होय तौ आंतोका गुजना इत्यादि रोग करै है॥

### कोष्ठाश्रितवायुके कार्य।

**तत्रकोष्ठाश्रितेदुष्टेनिग्रहोमूत्रवर्चसोः॥**
**ब्रध्नहृद्रोगगुल्मार्शःपार्श्वशूलंचमारुते॥ १०॥**

**अर्थ**—कोठेमे स्थित वायु दुष्ट होनेसे मलमूत्रका अवरोध होय, बदरोग, हृदयरोग, गोला, बवासीर, और पसवाडेमे पीडा इतने रोग उत्पन्न करे॥

### सर्वांगकुपितवायुके कार्य।

**सर्वांगकुपितेवातेगात्रस्फुरणजृंभणम्॥**
**वेदनाभिःपरीतस्यस्फुटंतीवास्यसंधयः॥ ११॥**

**अर्थ**—सब अंगकी वायु कुपित होनेसे अंगोका फरकना, जभाई और संधि वेदनायुक्त हो, फूटनेकिसी पीडा होय॥

### गुदामें स्थित वायुके कार्य।

**ग्रहोविण्मूत्रवातानांशूलाध्मानाश्मशर्कराः॥**
**जंघोरुत्रिकपात्पृष्ठरोगशोफौगुदस्थिते[१]॥ १२॥**

**अर्थ**—वायु गुदामे स्थित होनेसे मलमूत्र और वायुका रुकना, शूल, अफरा, पथरी, शर्करा, जंघा, ऊरू, त्रिकस्थान, पैर पीठ इनमे पीडा, और सूजन ये रोग होते है॥

### आमाशयस्थितवायुके कार्य।

**रुक्पार्श्वोदरहृन्नाभेस्तृष्णोद्गारविषूचिकाः॥**

---

१ इस जगह गुदाशब्दकरके उत्तरगुदा अर्थात् पक्वाशय जानना गुदा नही जानना क्योंकि, गुदामे रहै तो उसको अश्मरी ( पथरी ) कर्तृत्व नहीं होसके।

**कासःकंठास्यशोषश्च श्वासश्चामाशयेस्थिते ॥ १३ ॥**

अर्थ–वायु आमाशयमे स्थित होनेसे पसवाडा, उदर, हृदय और नाभि इनमे पीडा होय, प्यास डकार, और हैजा ( मुख और गुदाके द्वारा अन्नकी प्रवृत्ति ) खासी, कंठ मुखका सूखना, श्वास ये लक्षण होते हैं।

पक्वाशयस्थवायुके कार्य।

**पक्वाशयस्थोंऽत्रकूजंशूलाटोपौकरोतिच ॥**
**कृच्छ्रमूत्रपुरीषत्वमानाहंत्रिकवेदनाम् ॥ १४ ॥**

अर्थ--वायु पक्वाशयमे होय तो आंतोका गुंजना, शूल, आटोप, गुडगुडाशब्द. मलमूत्र-कष्टसे निकले, अफरा, त्रिकस्थानमे पीडा, इन लक्षणोको करे ॥

इन्द्रियोमे स्थितवायुके कार्य।

**श्रोत्रादिष्विंद्रियवधंकुर्यात्क्रुद्धसमीरणः ॥**

अर्थ–कानमे आदि जो और इन्द्रिये है उनमे कुपितवायु यदि स्थित होय तौ इन्द्रियोका नाश करै ॥

रसधातुगतवायुके लक्षण।

**त्वग्रूक्षास्फुटितासुप्ताकृशाकृष्णाचतुद्यते ॥**
**आतन्यतेसरागाचपर्वरुक्त्वग्गतेऽनिले ॥ १५ ॥**

अर्थ–वायु त्वगत अर्थात् धातुरूप त्वचामे प्राप्त होनेसे त्वचा रूखी, और फटी, शून्य, कर्कश और काली होजाय, और उसमे चमका चलै, तथा तन जाय, कुछ तांबेके समान लाल होजाय, और हृदयादि मर्मोमे पीडा होय।

रक्तगतवायुके लक्षण।

**रुजस्तीव्राःससंतापावैवर्ण्यंकृशतारुचिः ॥**
**गात्रेचारूंषिभुक्तस्यस्तंभश्चासृग्गतेऽनिले ॥ १६ ॥**

अर्थ–वायु रुधिरमिश्रित होनेसे सन्तापयुक्त तीव्रवेदना होय, देहका विवर्ण होय, कृशता, अरुचि और देहमे फोडा, तथा भोजन करनेके उपरात देहका जिकडजाना, ये लक्षण होते है ॥

मांसमेदोगतवायुके लक्षण।

**गुर्वगंतुद्यतेस्तब्धंदंडमुष्टिहतंयथा ॥**
**सरुक्छ्रमितमत्यर्थंमांसमेदोगतेऽनिले ॥ १७ ॥**

अर्थ—मास और मेदमे वायुके पहुंचनेसे अंग भारी होजाय, पीडा होय, अथवा निश्चल होजाय, अथवा मुक्का मारनेकीसी तथा लकड़ी मारनेकीसी पीडा होय थकायन होय ॥

मज्जास्थिगतवायुके लक्षण ।

मेदोऽस्थिपर्वणांसन्धिशूलंमांसबलक्षयः ॥
अस्वप्नःसततारुक्चमज्जास्थिकुपितेऽनिले ॥ १८ ॥

अर्थ—मज्जा और हड्डी इन ठिकानेपर वायुका कोप होनेसे हडफूटनी हो, संधिसधिमे पीडा हो मास ओर वल ये क्षीण होजायँ, निद्रा आवे नही, और निरन्तर पीडा हो ।

शुक्रगतवायुके लक्षण ।

क्षिप्रंमुंचतिबध्नातिशुक्रंगर्भमथापिवा ॥
विकृतिंजनयेच्चापिशुक्रस्थःकुपितोऽनिलः ॥ १९ ॥

अर्थ—शुक्रस्थानकी वायुका कोप होनेसे वह वायु शुक्रको जल्दी पतन करे और बधन करे, अथवा गर्भको जल्दी छोडे और बधन करे, और गर्भका अथवा शुक्रका विकार प्रगट करे ॥

शिरागतवायुके लक्षण ।

कुर्याच्छिरागतःशूलंशिराकुंचनपूरणम् ॥
सबाह्याभ्यन्तरायामंखल्लींकुब्जत्वमेवच ॥ २० ॥

अर्थ—वायु शिरा ( नाडी ) गत होनेसे शूल, नाडीका संकोच, और स्थूलत्व करे । और बाह्यायाम ,आभ्यतरायाम, खल्ली और कुबडापना इन रोगोंको उत्पन्न करे ॥

स्नायुगत और संधिगतवायुके लक्षण ।

सर्वांगैकांगरोगांश्चकुर्यात्स्नायुगतोऽनिलः ॥
हंतिसंधिगतःसंधीञ्छूलशोथौकरोतिच ॥ २१ ॥

अर्थ—वायु स्नायुगत होनेसे सर्वांग और एकांग रोगोको करे, सन्धिगत होनेसे सधिका विश्लेष(जुदा जुदा होना) और सधिका जकडजाना तथा शूल और सूजन इन रोगोको प्रगट करे॥

पित्त और कफ इनसे आवृत हुई प्राणादिकवायुके
आधेआधे श्लोकोंमें लक्षण कहते हैं।

प्राणेपित्तावृतेछर्दिर्दाहश्चैवोपजायते ॥ दौर्बल्यंसदनंतंद्रावैरस्यंचकफावृते ॥ २२ ॥ उदानेपित्तयुक्तेतुदाहोमूर्च्छाभ्रमःक्लमः ॥ अस्वेदहर्षौमन्दाग्निःशीतताचकफावृते ॥ २३ ॥ स्वेदादाहौष्ण्यमूर्च्छाःस्युः समानेपित्तसंयुते ॥ कफेनसंगोविण्मूत्रेगात्रहर्षश्चजायते ॥ २४ ॥ अपानेपित्तयुक्तेतुदाहौष्ण्यंरक्तमूत्रता ॥ अधःकायेगुरुत्वंचशीतताचकफावृते ॥ २५ ॥ व्यानेपित्तावृतेदाहोगात्रविक्षेपणंक्लमः ॥ स्तंभनोदंडकश्चापि शोथशूलौकफावृते ॥ २६ ॥

अर्थ—प्राणवायु पित्तसंयुक्त होनेसे वमन, और दाह उत्पन्न होय। और कफसयुक्त होनेसे दुर्बलपना, ग्लानि, तद्रा और मुखमे विरसता ये होयँ। उदानवायु पित्तयुक्त होनेसे दाह, मूर्च्छा, भ्रम, अनायास, श्रम ये होयँ और कफयुक्त होय तौ पसीना नही आवे रोमांच, अग्नि मंद होय और शीत लगे। समानवायु पित्तयुक्त होनेसे पसीना दाह गरमी और मूर्च्छा ये होते है और पित्तकफयुक्त होनेसे मलमूत्रका रुकना ओर रोमाच होय अपानवायु पित्तयुक्तहोनेसे दाह गरमी लाल मूत्र होताहै और अपान वायु कफयुक्तहो तो कमरके नीचेके भागमे भारीपना और सरदीका लगना होय व्यानवायु पित्तयुक्तहोनेसे दाह गात्रोका विक्षेप अर्थात् इधरउधरको फेरना और श्रम होय, और कफयुक्त होनेसे शरीर लकडीके समान स्तभ होय, सूजन और शूल होय इस जगह प्राणादि पंच वायुओंके परस्पर मिलनेसे वीसप्रकारके आवरण चरकोक्त जान लेने और वाग्भटके मतसे आवरण बाईसप्रकारके हैं हमने ग्रथके विस्तारभयसे छोडदीने है॥

आक्षेपकके सामान्य लक्षण।

यदातुधमनीः[1]सर्वाःकुपितोऽभ्येतिमारुतः ॥ तदाक्षिपत्याशु मुहुर्मुहुर्देहंमुहुश्चरः। मुहुर्मुहुस्तदाक्षेपादाक्षेपकइतिस्मृतः ॥२७॥

अर्थ—जिसकालमे वायु कुपितहोकर सव धमनीनाडियोमे जाकर प्राप्त होय, तव उसजगह वह वारंवार सचार करके देहको वारवार आक्षिप्त करती हैं, अर्थात् हाथीपर बैठनेवाले पुरुषके समान सब देहको चलायमान करे उस देहको वारवार चलानेको आक्षेप रोग कहते हैं॥

---

१ "ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्गाधमनीः।"

आक्षेपकके अपतंत्र और अपतानक ऐसे दोअवस्थाविशेषको कहते हैं ।

क्रुद्धःस्वैःकोपनैर्वायुःस्थानादूर्ध्वंप्रवर्त्तते ॥ पीडयन्हृदयंगत्वा शिरःशंखौचपीडयेत् ॥ २८॥ धनुर्वन्नामयेद्गात्राण्याक्षिपेन्मोह- येत्तथा ॥ सकृच्छ्रादुच्छ्वसेच्चापिस्तब्धाक्षोऽथनिमीलकः ॥२९॥ कपोतइवकूजेच्चानिःसंज्ञःसोपतंत्रकः ॥ दृष्टिंसंस्तभ्यसंज्ञांच हत्वाकंठेनकूजति ॥ ३० ॥ हृदिमुक्तेनरःस्वास्थ्यंयातिमो- हंवृतेपुनः ॥ वायुनादारुणंप्राहुरेकेतदपतानकम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—रूक्षादिस्वकारणोसे कोपको प्राप्तभई जो वायु सो अपने स्थानको छोड ऊपर मार्गको प्राप्त हो. और हृदयमे जाकर पीडा करे. मस्तक और कनपटी इनमे पीडा करे, और देहको धनुष्य के समान नवाय देवे, और चले तो मूर्छित करदे वह रोगी बडे कष्टसे श्वास ले नेत्र स्थिर करले अथवा मिचजावे, कबूतरके समान गूजे. तथा बेहोश होय इस रोगको अपतंत्रक कहते है । दृष्टिका स्तभन होजाय, सज्ञा जाती रहे गलेमे घुरघुर शब्द होय.वायु जब हृदयको छोडे तब रोगीको चेत होय, और वायु हृदयको व्याप्त करे तब फेर मोह होजाय इस भयकर रोगको कोई अपतानक ऐसे कहते हे । अब कहते है कि, दडापतानक, अंतरायाम, बाहिरायाम और अभिघात इन भेदोंसे आक्षेपकरोग चार प्रकारका हे । उनके लक्षण लिखते है ॥

दंडापतनाकलक्षण ।

कफान्वितोभृशंवायुस्तास्वेवयदितिष्ठति ॥
दंडवत्स्तंभयेद्देहंसतुदंडापतानकः ॥ ३२ ॥

अर्थ—वायु अत्यत कफयुक्त होकर सब धमनीनाडियोमे प्राप्त होय तब सब देहको दड (लकडी) के समान स्तब्ध जकडदे वह दडापतानक होता है ।

अब अंतरायाम और बहिरायाम इनके साधारणरूपको कहते है ।

धनुस्तुल्यंनमेद्यस्तुसधनुःस्तंभसंज्ञितः ॥

अर्थ—जो वायु धनुषके समान शरीरको बाका करदे उसको धनुस्तभसज्ञक कहते हैं ।

अंतरायामके लक्षण।

अंगुलीगुल्फजठरहृद्वक्षोगलसंश्रितः ॥ स्नायुप्रतानमनिलो यदाक्षिपतिवेगवान् ॥ ३३ ॥ विष्टब्धाक्षःस्तब्धहनुर्भग्नपार्श्वः कफंवमन् ॥ अभ्यंतरंधनुरिवयदानमतिमानवः ॥ ३४ ॥ तदासोऽभ्यन्तरायामंकुरुतेमारुतोबली ॥ ३५ ॥

अर्थ—पैरकी उगली, घोट्ट, हृदय, पेट, उरःस्थल और गला इन ठिकानोमे रहा जो वायु वह वेगवान् होकर जो वहां नसोका जाल उसको सुखाय बाहर निकालदे, उस मनुष्यके नेत्र स्थिर होजायँ, मेदो रहिजाय, पसवाडोमे पीडा होय, मुखसे कफ गिरे और जिससमय मनुष्य धनुषके सदृश नीचेको नमजाय तब वह बली वायु **अंतरायाम** रोगको करे ॥

वाह्यायामके लक्षण।

वाह्यःस्नायुप्रतानस्थोबाह्यायामंकरोतिच ॥ तमसाध्यंबुधाःप्राहुर्वक्षःकट्यूरुभंजनम् ॥ ३६ ॥

अर्थ—बाहरकी नसोमे रहती जो वात सो, बाह्यायाम अर्थात् पीठको वांकी करदे उर स्थल, कमर और जांघोको मोर दे, ऐसे इस रोगको पडित असाध्य कहते है ॥

अब पूर्वोक्त आक्षेपकका पित्तकफका अनुबंध होय है उसको कहते हैं।

कफपित्तान्वितोवायुर्वायुरेवचकेवलः ॥ कुर्यादाक्षेपकंत्वन्यंचतुर्थमभिघातजम्॥ ३७ ॥

अर्थ—कफपित्तयुक्त वायु, अथवा केवल वायु आक्षेपकरोगको करे, और दूसरा कहिये दडापतानकादि तीनोकी अपेक्षा चतुर्थ अभिघातज आक्षेपक रोगको करे। इसके लक्षण "यदा तु धमनीः सर्वाः" इत्यादि पूर्वोक्त सामान्यलक्षणोसे जानने। इस श्लोकका **गदाधरने** ऐसा अर्थ करा है कि, कफपित्तान्वित इत्यादि निमित्तभेदकरके चार प्रकारका आक्षेपकरोग प्रगट होय, सो ऐसे एक कफान्वित वायुसे, दूसरा पित्तान्वितवायुसे, तीसरा केवलवायुसे, और चौथा दडादिक चोट लगनेसे कुपितवायुसे, इस पक्षमे गर्भपात और रुधिरका अतिस्राव जो होता है सो केवल वातजन्य जानना और उस ठिकाने वारवार आक्षेपक यह होता है इसका कारण यह है कि, ये सब आक्षेपकके भेद है ॥

असाध्यत्वको कहते हैं ।

**गर्भपातनिमित्तश्चशोणितातिस्रवाच्चयः ॥**
**अभिघातनिमित्तश्चनसिध्यत्यपतानकः ॥ ३८ ॥**

अर्थ—गर्भपातके होनेसे, अथवा अतिरक्तस्रावके होनेसे अथवा अभिघात कहिये दण्डादिकोंकी चोट लगनेसे, जो प्रगट अपतानकरोग सो असाध्य है ॥

पक्षाघातके लक्षण ।

**गृहीत्वार्धंतनोर्वायुःशिरास्नायूर्विशोष्यच ॥ पक्षमन्यतरंहन्ति संधिबंधान्विमोक्षयन् ॥ ३९ ॥ कृत्स्नोर्द्धकायस्तस्यस्यादकर्मण्योविचेतनः ॥ एकांगरोगंतंकेचिदन्येपक्षवधंविदुः ॥ ४० ॥**

अर्थ—वायु आधे शरीरको पकड सब शरीरकी नसोंको सुखायकर दहने या बाये अंगके गड्ड कक्षापार्श्वादिकोमेसे किसी एकको नाश करदे और संधिके बंधनोको शिथिल करदे, पीछे उस रोगीके सब या आधे अंग हलें चले नहीं, और उसको थोडा भी देखनेका स्पर्शआदिका ज्ञान नहीं रहै इसको एकांगरोग कहते हैं । दूसरे पक्षवध कहते हैं इसीको पक्षाघात कहते हैं ॥ लोकमे लकवा कहते हैं ॥

सर्वांगरोगके लक्षण ।

**सर्वांगरोगस्तद्वत्स्यात्सर्वकायाश्रितेऽनिले ॥**

अर्थ—तद्वत् कहिये "शिरास्नायू" इत्यादि सम्प्राप्तिलक्षण इससे जानने । सर्व शिराएँ ( नाडियोमे ) वायु प्राप्त होनेसे उसको सर्वांगरोग कोई कहते हैं । अब साध्यासाध्यके ज्ञानार्थ और दोषोका सम्बन्ध कहते हैं ॥

**दाहसंतापमूर्च्छाःस्युर्वायौपित्तसमन्विते ॥ ४१ ॥ शैत्यशोथगुरुत्वानितस्मिन्नेवकफान्विते ॥ शुद्धवातहतंपक्षंकृच्छ्रसाध्यतमंविदुः ॥ साध्यमन्येनसंसृष्टमसाध्यंक्षयहेतुकम् ॥ ॥ ४२ ॥ गर्भिणीसूतिकाबालवृद्धक्षीणेष्वसृक्स्रुतौ ॥ पक्षाघातंपरिहरेद्वेदनारहितोयादि ॥ ४३ ॥**

अर्थ—पक्षवधकी वायु कफपित्तयुक्त होय तो दाह, संताप और मूर्च्छा होय । और वही वायु कफयुक्त होय तो शीत सूजन भारीपन ये लक्षण होयँ । और केवल वायुसे प्रगट पक्षाघात अत्यंत कष्टसाध्य होता है । और दोषोसे ( पित्तसे या कफसे ) संसृष्ट होनेसे साध्य होता है । क्षयसे प्रगट भया पक्षाघात असाध्य होता है । गर्भिणी, बालक, वृद्ध और क्षीण इनके

भया तथा, रुधिरके स्रावसे प्रगट पक्षाघात पीड़ारहित होय तो उसको वैद्य त्यागदे अर्थात् असाध्य जानकर चिकित्सा न करे ॥

## अर्दितरोगके लक्षण।

**उच्चैर्व्याहरतोऽत्यर्थंखादतःकठिनानिच॥हसतोजृंभतोवापिभाराद्विषमशायिनः ॥ ४४ ॥ शिरोनासौष्ठचिबुकललाटेक्षणसंधिगः ॥ अर्दयत्यनिलोवक्त्रमर्दितंजनयत्यतः ॥ ४५ ॥ वक्रीभवतिवक्त्रार्धंग्रीवाचाप्यपवर्तते ॥ शिरश्चलतिवाक्स्तंभो नेत्रादीनांचवैकृतम् ॥ ४६ ॥ ग्रीवाचिबुकदंतानांतस्मिन्पार्श्वेच वेदना ॥ तमर्दितमितिप्राहुर्व्याधिंव्याधिविशारदाः ॥ ४७ ॥**

अर्थ–ऊचे स्वरसे वेदादिकका पाठ करनेसे, अथवा कठिन पदार्थ सुपारीआदिके खानेसे, बहुत हसनेसे, बहुत जभाईके लेनेसे, वोझा ढोनेसे, ऊंचेनीचे स्थानमे सोनेसे, कोपको प्राप्त भई जो वायु मस्तक, नाक, होठ, ठोडी, ललाट और नेत्र इनकी सन्धियोमे प्राप्त हो मुखमे पीडा करे, अर्दित रोग उत्पन्न हुए उस पुरुषका मुख आधा टेढा होजाय, ग्रीवा ( नाड़ ) टेढी होजाय, मस्तक हिला करे, अच्छीतरह वोला जाय नही, नेत्र, भृकुटी, गाल इनकी विकृति कहिये पीडा, फरकना तेढा होना इत्यादि होयँ। और जिस तरफ अर्दित रोग होय उसतरफ नाड, ठोडी और दात इनमे पीडा होय। व्याधि जाननेमें जो कुशल वैद्य है वे इस व्याधिको अर्दितरोग ऐसे कहते है। * शंका–* क्यो जी अर्दित रोगमे और पक्षाघातमे क्या भेद है ? * उत्तर–* वेग होनेसे अर्दित रोगमे कभी २ पीड़ा होती है और पक्षाघातमे सदा पीडा होती है। अर्दितरोग चार प्रकारका है ॥

## अर्दितरोगके असाध्य लक्षण।

**क्षीणस्याऽनिमिषाक्षस्यप्रसक्ताव्यक्तभाषिणः ॥**
**नसिध्यत्यर्दितंगाढं त्रिवर्षंवेपनस्यच ॥ ४८ ॥**

अर्थ–क्षीण पुरुषके, पलक नही लगें ऐसे पुरुषके, अत्यंत शुद्ध बोले नही ऐसे पुरुषके

---

१ अथवा यथोक्त सब लक्षणयुक्त अर्दितरोग है उससे विपरीत अर्द्धांगवातके लक्षण जानने। परंतु सुश्रुतमे मुखमात्रमे ही अर्दितरोग लिखाहै। अर्धशरीरको अर्धाङ्गवात करके लब्ध होनेसे नहीं लिखा, सोई माधवने पाठ लिखाहै।

अर्दित रोगको प्रगटभये तीनवर्ष व्यतीत होगये हो अथवा त्रिवर्ष कहिये मुख, नाक और नेत्र इन तीनोंका स्राव होय, ऐसा ओर कपयुक्त पुरुषका अर्दितरोग साध्य नही होय ॥

अब आक्षपकसे लेकर अर्दितपर्यंत रोगोंका वेग कहते हैं।

**गतेवेगेभवेत्स्वास्थ्यंसर्वेष्वाक्षेपकादिषु ॥**

अर्थ—आक्षेपकादि सब वातरोगोंमे वेग शांत होनेसे स्वास्थ्य कहिये पीडा कम होय जैसे मस्तकके ऊपरका भार ( बोझा ) उतारनेसे सुखकी प्राप्ति होती है ॥

हनुग्रहके लक्षण।

**जिह्वानिर्लेखनाच्छुष्कभक्षणादभिघातनः ॥ कुपितोहनुमूलस्थःस्रंसयित्वाऽनिलोहनुम् ॥ ४९ ॥ करोतिविवृतास्यत्वमथवासंवृतास्यताम् ॥ हनुग्रहःसतेनस्यात्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणम् ॥५० ॥**

अर्थ—जिह्वाके अतिवर्षण करनेसे, चना आदि सूखी वस्तुके खानेसे अथवा किसी प्रकार चोटके लगनेसे, हनुमूल ( कपोल ) के अर्थात् ठोडीकी जडमे रहेनवाली जो वायु सो कुपित होकर हनुमूलको नीचेकर मुखको खुला ही रखदे अथवा मुखको बंद करदे, उसको हनुग्रह रोग कहते हैं। तब उस मनुष्यको खाना, बोलना, कठिनतासे होय ॥

मन्यास्तंभके लक्षण।

**दिवास्वप्नासमस्थानविकृतोर्ध्वनिरीक्षणैः ॥**
**मन्यास्तंभंप्रकुरुतेसएवश्लेष्मणायुतः ॥ ५१ ॥**

अर्थ—दिनमे सोनेसे, नीचेऊंचे स्थानमें सोनेसे, ऊंचेको विकृतिपूर्वक देखनेसे इन कारणोंसे कोपको प्राप्त भई जो वात सो कफयुक्त होकर मन्या ( नाडी ) स्तंभन करे इस रोगको मन्यास्तभ रोग कहते हैं ॥

जिह्वास्तंभके लक्षण।

**वाग्वाहिनीशिरासंस्थोजिह्वांस्तंभयतेऽनिलः ॥**
**जिह्वास्तंभःसतेनान्नपानवाक्येष्वनीशता ॥ ५२ ॥**

अर्थ—वायु वाणीके वहनेवाली नाडियोमे प्राप्त हो जिह्वाका स्तंभन करदे, उसको जिह्वास्तभ रोग कहते हैं। यह अन्नपानकी तथा बोलनेकी सामर्थ्यका नाश करती है ॥

---

१ मन्या—गलेकी नाडीको कहते हैं।

शिराग्रहके लक्षण ।

रक्तमाश्रित्यपवनःकुर्यान्मूर्धधराः शिराः ॥
रूक्षाःसवेदनाःकृष्णाःसोऽसाध्यः स्याच्छिराग्रहः ॥ ५३ ॥

अर्थ-वायु रुधिरका आश्रय कर मस्तकके धारण करनेवाली नाडीको रूखी पीडायुक्त और काली करदे यह शिराग्रहरोग असाध्य है। " शिरोग्रहः " ऐसाभी पाठ है ॥

गृध्रसीके लक्षण ।

स्फिक्पूर्वाकटिपृष्ठोरुजानुजंघापदंक्रमात् ॥
गृध्रसीस्तंभरुक्तोदैर्गृह्णातिस्पंदतेमुहुः ॥ ५४ ॥
वाताद्वातकफात्तन्द्रागौरवारोचकान्विता ॥ ५५ ॥

अर्थ-प्रथम स्फिक् कहिये कमरके नीचेका भाग जिसको कुला कहते हैं उसको स्तंभित कर दे, पछि क्रमसे कमर, पीठ, ऊरू, जानु, जंघा और पग इनको स्तभित करदे, अर्थात् ये रहिजायँ, वेदना और तोद कहिये चोटनेकीसी पीडा होय, और बारबार कम्प होय, यह गृध्रसीरोग वादीसे होता हे। और वातकफसे होय तौ इसमे तन्द्रा और भारीपना और अरुचि, ये विशेष होयँ। इसप्रकार गृध्रसीरोग दो प्रकारका है ॥

विश्वाचीके लक्षण ।

तलंप्रत्यंगुलीनां याः कंडरा बाहुपृष्ठतः ॥
बाह्वोःकर्मक्षयकरीविश्वाचीचेतिसोच्यत ॥ ५६ ॥

अर्थ-बाहुके पिछाडीसे लेकर हाथके ऊपर ले भागपर्यत प्रत्येक उगलीके नचिे मोटी नसेहैं उनको दुष्ट कर हाथसे लेना देना पसारना मुट्ठी मारनी इत्यादिक कार्योंका नाशकर्त्ता जो रोग होय उसको विश्वाची रोग कहते हैं ॥

क्रोष्टुशीर्षके लक्षण ।

वातशोणितजः शोथोजानुमध्येमहारुजः ॥
ज्ञेयःक्रोष्टुकशीर्षस्तुस्थूलःक्रोष्टुकशीर्षवत् ॥ ५७ ॥

अर्थ-वातरक्तसे दोनों जानुओं घेटुओंकी सधिमें अत्यन्त पडाकारक सूजन हो और वे स्याल ( गीदड ) के मस्तकसमान मोटे हो उसको क्रोष्टुशीर्ष ऐसे कहते हैं ॥

खंज और पांगुरेके लक्षण ।

**वायुःकट्याश्रितः सक्थ्नःकंडरामाक्षिपेद्यदा ॥**
**खंजस्तदाभवेज्जंतुःपंगुःसक्थ्नोर्द्वयोर्वधात् ॥ ५८ ॥**

**अर्थ**—कमरमे रहा जो वात सो जघाकी नसोको ग्रहण कर एक पगको स्तभित करदे उसको खोडा कहते है। और दोनों जंघाओकी नसोको पकड दोनो पैरोको स्तभित करदे उसको पागुला कहते है॥

कलायखंजके लक्षण ।

**प्रकामंवेपतेयस्तुखंजन्निवचगच्छति ॥**
**कलायखंजंतंविद्यान्मुक्तसंधिप्रबंधनम् ॥ ५९ ॥**

**अर्थ**—जो पुरुप चलते समय थरथर कापे, और खज अर्थात् एक पैरसे हीन माल्लम होय, इस रोगमे सधिके बधन शिथिल होते हे इस रोगको कलायखज कहते हैं॥

वातकंटकके लक्षण।

**रुक्पादेविषमेन्यस्ते श्रमाद्वाजायते यदा ॥**
**वातेनगुल्फमाश्रित्यतमाहुर्वातकंटकम् ॥ ६०॥**

**अर्थ**—ऊची नीची जगहमे पैर पडनेसे, अथवा श्रमके होनेसे, कुपित वायु टकनोमे प्राप्त होकर पीडा करे तौ इस रोगको वातकटक ऐसे कहते हैं॥

पादहर्षके लक्षण ।

**पादयोःकुरुतेहर्षपित्तासृक्सहितोनिलः ॥**
**विशेषतश्चक्रमतः पादहर्षतमादिशेत् ॥ ६१ ॥**

**अर्थ**—जिसके पैर हर्षयुक्त झनझनाहठ पीडायुक्त होय और अत्यत सोय जाय उसको पादहर्ष रोग कहते हैं। यह कफवातके कोपसे होय है॥

अंसशोष और अपवाहुकके लक्षण।

**अंसदेशेस्थितोवायुःशोषयेदंसबंधनम् ॥**
**शिराश्चाकुंच्यतत्रस्थोजनयेदपवाहुकम् ॥ ६२ ॥**

**अर्थ**—कधामे रहा जो वायु सो कुपित होकर उसके वधनको सुखाय दे तव असशोषरोग प्रगट होय, और कधामे रहा जो वायु सो नसोको सकोचकरके अपवाहुकरोग प्रगट करै॥

सूकादिक तीन रोगोंके लक्षण।

**आवृत्यवायुःसकफोधमनीःशब्दवाहिनीः ॥**
**नरान्करोत्यक्रियकान्मूकमिन्मिनगद्गदान्॥ ६३ ॥**

अर्थ--कफयुक्त वायु, शब्दके वहनेवाली नाडियोमे प्राप्त होकर मनुष्योका वचन क्रियारहित मूक, मिन्मिन और गद्गद ऐसा करदे। मूक कहिये जिससे बोला न जाय, मिन्मिन कहिये गिन गिनायकर नाकसे बोले, और गद्गद बोलतेसमय बीचके पद और व्यजनोको न बोले, और मंद बोले इन रोगोके कारण सदृश होकर रोगोके भिन्नभिन्न प्रकार होते है। वे दोषोंके उत्कर्ष करके अथवा प्रारब्धवशसे होते है ऐसा जानना ॥

तूनीरोगके लक्षण।

**अधोयावेदनायातिवर्चोमूत्राशयोत्थिता ॥**
**भिन्दन्तीवगुदोपस्थंसातूनीनामनामतः ॥ ६४ ॥**

अर्थ–पक्काशय और मूत्राशयसे उठी जो पीडा सो नीचे जाकर प्राप्त हो और गुदा तथा उपस्थ कहिये स्त्रीपुरुषोके गुह्यस्थान इनमे भेद करे, अर्थात् पीडा करे उसको तूनी-रोग कहते हैं ॥

प्रतूनीके लक्षण।

**गुदोपस्थोत्थिताचैवप्रतिलोमंप्रधावति ॥**
**वेगैःपक्काशयंयातिप्रतूनीचेहसोच्यते ॥ ६५ ॥**

अर्थ–गुदा और उपस्थ इनसे उठी जो पीडा उलटी ऊपर जायकर प्राप्त हो और जोरसे पक्काशयमे प्राप्त हो और तूनीके समान पीडा करे उसको प्रतूनी कहते हैं ॥

आध्मानरोगके लक्षण।

**साटोपमत्युग्ररुजमाध्मानमुदरंभृशम् ॥**
**आध्मानमितिजानीयाद्घोरंवातनिरोधजम् ॥ ६६ ॥**

अर्थ--गुड़गुड़ शब्दयुक्त अत्यंत पीडायुक्त ऐसा उदर (पक्काशय) अत्यन्त फूले अर्थात् बादीसे भरकर चामकी थैलीके समान होजाय इस भयकर रोगको आध्मानरोग कहते हैं यह वातके रुकनेसे होता है ॥

प्रत्याध्मानके लक्षण।

**विमुक्तपार्श्वहृदयंतदेवामाशयोत्थितम् ॥**
**प्रत्याध्मानंविजानीयात्कफव्याकुलितानिलम् ॥ ६७ ॥**

---

१ 'अध इति गुदोपस्थम्'

**अर्थ**—और वही आध्मान रोग आमाशयमे उत्पन्न होय तो उसको प्रत्याध्मान कहते है इसमे पसवाड़े और हृदयमे पीडा नही होय, और वायु, कफकरके व्याकुल हो ॥

वातोष्ठीलाके लक्षण।

**नाभेरधस्तात्संजातःसंचारीयदिवाऽचलः ॥**
**अष्ठीलावद्घनोग्रंथिरूर्ध्वमायतउन्नतः ॥६८॥**
**वाताष्ठीलांविजानीयाद्बहिर्मार्गावरोधिनीम्॥**

**अर्थ**—नाभीके नीचे उत्पन्न भई और इधर उधर फिरे, अथवा अचल अष्ठीला ( गोल-पापाण ) के समान कठिन और ऊपरका भाग कुछ लंबा होय, और आडी कुछ ऊंची होय और बहिर्मार्ग कहिये अधोवायु मल मूत्र इनका अवरोध कहिये ( रुकना ) हो ऐसी गाठको वातष्ठीला कहते है ॥

प्रत्यष्ठीलाके लक्षण।

**एतामेवरुजायुक्तांवातविण्मूत्ररोधिनीम् ॥ ६९ ॥**
**प्रत्यष्ठीलामितिवदेज्जठरेतिर्यगुत्थिताम् ॥**

**अर्थ**—वाताष्ठीलाही अत्यतपीडायुक्त वात मूत्र मलके रोधकरनेवाली और जो उदरमे तिरछी प्रगट भई होय उसको प्रत्यष्ठीला कहते है ॥

मूत्रावरोधके लक्षण।

**मारुतेविगुणेबस्तौमूत्रंसम्यक्प्रवर्त्तते ॥ ७० ॥**
**विकाराविविधाश्चापिप्रतिलोमेभवंतिहि ॥**

**अर्थ**—वस्ती ( मूत्रस्थान ) मे वायु अनुलोमगतिसे गमन करै, तौ मूत्र अच्छी रीतिसे उतरे ऐसे प्रतिलोमसे गमन करे तो अनेक प्रकारके पथरी मूत्रकृच्छ्रादि विकार उत्पन्न होयँ ॥

कंपवायुके लक्षण।

**सर्वांगकंपःशिरसोवायुर्वेपथुसंज्ञकः ॥ ७१ ॥**

**अर्थ**—सब अगोको और मस्तकको जो कंपाये उस वायुको वेपथु ( कप ) वायु कहते हैं ॥

खल्लीके लक्षण।

**खल्लीतुपादजंघोरुकरमूलावमोटिनी ॥**

---

१ "श्रमातुरेण पानीयं पीत्वा वेगविधारणम्। धावित वा पिबेत्तोय भुजतो वा विदाहि च ॥ तथा पयोम्बुपानाद्वा दुर्जरा पललेन वा। साष्ठीलानाम विख्याता गुर्वी कुक्षिश्रितापि वा॥" इति आत्रेयः!

अर्थ-और जो वायु पैर, जघा, ऊरु और हाथके मूलमे कंपन करे उसको खल्ली ( मूला मना रोग कहते हैं ।

ऊर्ध्ववातके लक्षण टीकाकारने लिखे हैं ।

**अधःप्रतिहतोवायुःश्लेष्मणामारुतेनच ॥ ७२ ॥**
**करोत्युद्गारबाहुल्यमूर्ध्ववातंप्रचक्षते ॥ ॥**

अर्थ-कफवातकरके पीडित नीचेकी वायु डकार बहुत लावे उस वातको ऊर्ध्व कहते हैं, परतु टोडरानंदने कुछ विलक्षण लिखा है ॥

यथा-

**भुक्तेप्यभुक्तेसुप्तेवायस्योद्गारःप्रजायते ॥ ७३ ॥**
**सततंघोषवांश्चातिह्यूर्ध्ववातंतमादिशेत् ॥**

अर्थ-भोजन करनेके अथवा भोजनके पहिले अथवा सोनेके समय डकार निरन्तर शब्दवान् आवे उसको ऊर्ध्ववात कहते है ॥

प्रलापके लक्षण ।

**स्वहेतुकुपिताद्वातादसंवद्धानिरर्थकम् ॥ ७४ ॥**
**वचनंयन्नरोब्रूतेसप्रलापःप्रकीर्तितः ॥**

अर्थ-अपने हेतुओसे कुपित भई जो वात सो असवद्ध ( अर्थरहित ) वाणी वोले, अर्थात् वकवाद करे अथवा वडवड शब्द करे उसको प्रलाप कहते हैं ॥

रसाज्ञानके लक्षण ।

**भुंजानस्य नरस्यान्नं मधुरप्रभृतीन्रसान् ॥ ७५ ॥**
**रसज्ञो यन्नजानातिरसाज्ञानंतदुच्यते ॥**

अर्थ-जो मनुष्य भोजन करे उसकी जीभको मधुर ( मीठा ) खट्टा इत्यादिक रसोका ज्ञान न होय उस रोगको रसाज्ञान कहते है ॥

अनुक्तवातरोगसंग्रहार्थ कहते हैं।

**स्थाननामानुरूपैश्चलिंगैःशेषान्विनिर्दिशेत् ॥ ७६ ॥**
**सर्वेष्वेतेषुसंसर्गपित्ताद्यैरुपलक्षयेत् ॥**

अर्थ--स्थान और नाम इनके अनुरूप कहिये तुल्य ऐसे लक्षणोसे शेष वातव्याधि जाननी । स्थानानुरूप कहिये जैसे कुक्षिशूल, नखभेद इत्यादिक । नामानुरूप कहिये जैसे शूलके कहनेसे

कीलनिखातवत् पीडा जाननी । उसी प्रकार तोदभेदादिक करके भी पीडाविशेष जाननी चाहिये । और पित्त, कफ, रुधिर इनके संसर्गसे द्विदोपजव्याधि जाननी चाहिये ॥

साध्यासाध्यविचार ।

**हनुस्तंभार्दिताक्षेपपक्षाघातापतानकाः ॥ ७७ ॥**
**कालेनमहताव्यानांयत्नात्सिध्यंतिवानवा ॥**
**नरान्बलवतस्त्वेतान्साधयेन्निरुपद्रवान् ॥ ७८ ॥**

अर्थ—हनुस्तंभ, आर्दित आक्षेप, पक्षाघात, अपतानक ये वातव्याधि बहुत दिनमें बडे परिश्रमसे धनीपुरुषोकेही यत्नसे साध्य होतीहै । अथवा कभी साध्य नहीं होय । परंतु बलवान पुरुषके ये वातव्याधि नई प्रगट भई हो और उपद्रवरहित हो तो उसकी चिकित्सा करनी चाहिये ॥

वातव्याधिके उपद्रव ।

**विसर्पदाहरुक्संगमूर्च्छारुच्यग्निमार्दवैः ॥**
**क्षीणमांसबलंवाताघ्नंतिपक्षवधादयः ॥ ७९ ॥**

अर्थ—विसर्परोग, दाह, शूल, मलमूत्रका निरोध, मूर्च्छा, अरुचि, मंदाग्नि इन लक्षणयुक्त जो और बलक्षीण होगया होय ऐसे पुरुषोको पक्षवधादिक विकार मारक अर्थात् प्राणके हरण कर्त्ता होते हैं ॥

असाध्य लक्षण ।

**शूनंसुप्तत्वचंभग्नंकंपाध्माननिपीडितम् ॥**
**रुजार्तिमंतंचनरंवातव्याधिर्विनाशयेत् ॥ ८० ॥**

अर्थ—सूजनवाला, जिसकी त्वचा सोई गई होय, अर्थात् जिसको स्पर्श होनेका ज्ञान न होय जिसकी हड्डी टूटगई होय, कंप और अफरा इनसे अत्यन्त पीडित होय रुजा और आर्ति कहिये शूलयुक्त ऐसे मनुष्यको यह वातव्याधिरोग नाश करता है ॥

अब पांचप्रकारकी प्रकृतिस्थ वायुके लक्षण और कार्य कहते हैं ।

**अव्याहतगतिर्यस्यस्थानस्थःप्रकृतौस्थितः ॥**

**वायुःस्यात्सोधिकंजीवेद्वीतरोगःसमाःशतम् ॥ ८१ ॥**

अर्थ—जिस पुरुषकी वायु अव्याहतगति, और अपने, आश्रयसे रहनेवाली, और

प्रकृतिस्थित कहिय न वृद्ध क्षीण होय, वह पुरुष निरोगी होकर "अधिकसमाःशतम्" कहिये एकसौ वीसवर्ष और पांच दिन पर्यन्त जीवे ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधमार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायां वातव्याधि-निदानं समाप्तम्।

# वातरक्तनिदानम्।

* शंका-*क्योजी सुश्रुतमे तो वातव्याधिअध्यायमे वातरक्त कहा है फिर **माधवने** पृथक् क्यो कहा? *उत्तर*तुमने कहा सो ठीक है परंतु क्रियाविशेषज्ञापनार्थ माधवने अलग लिखा है, और इसी रीतिसे **चरकमें** भी वातव्याधि अध्यायके पीछे वातरक्ताध्याय कही है ॥

**लवणाम्लकटुक्षारस्निग्धोष्णाजीर्णभोजनैः ॥**
**क्लिन्नशुष्कांबुजानूपमांसपिण्याकमूलकैः ॥ १ ॥**
**कुलित्थमाषनिष्पावशाकादिपललेक्षुभिः ॥**
**दध्यारनालसौवीरसक्तुतक्रसुरासवैः ॥ २ ॥**
**विरुद्धाध्यशनक्रोधदिवास्वप्नप्रजागरैः ॥**
**प्रायशःसुकुमाराणांमिथ्याहारविहारिणाम् ॥ ३ ॥**
**स्थूलानांसुखिनांचाथवातरक्तंप्रकुप्यति ॥ ४ ॥**

**अर्थ**-नोन, खटाई, कडवी, खारी, चिकना, गरम, कच्चा ऐसे भोजनसे सडे और सूखे ऐसे जलसचारी जीवोके और जलके समीप रहनेवाले जीवोके माससे, पिण्याक ( खल ) मूली, कुलथी उडद, निष्पाव ( मटर ) शाक, ( तरकारी ) पलल ( मांस ) ईख, दही, कांजी, सौवीर, मद्य, सिरकाआदि, सत्तु छाछ, दारू आसव ( मद्यविशेष ) विरुद्ध, जैसे दूध मछली अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन ) क्रोध, दिनमे निद्रा, रातमे जागना, इन कारणोसे विशेषकरके सुकुमार पुरुषोके और मिथ्या आहार विहार करनेवाले पुरुषोके, और जो मोटा होय, तथासुखी होय ऐसे मनुष्योके वातरक्तरोग होता है ॥

वातरक्तकी सम्प्राप्ति।

**हस्त्यश्वोष्ट्रैर्गच्छतश्चाश्नतश्चविदाह्यन्नंसविदाहाशनस्य ॥**

---

१ "रुजस्तीव्राः ससन्तापा इत्यादिना रक्तगतस्य वातस्य लक्षणं वातव्याधावेवोक्तं ततश्च वातरक्ताभिधानं पुनरुक्त स्यान्नैवम्, वातरक्तंहि दुष्टेन वातेन रक्तेन च विशिष्टसम्प्राप्तिकं विकारान्तरमेव। रक्तगतवाते तु वात एव दुष्टो रक्तमदुष्टमेव गच्छतीति भेदः।

कृत्स्नंरक्तंविदहत्याशुतच्चस्रस्तंदुष्टंपादयोश्चीयतेतु ॥ तत्संपृक्तं वायनादूषितेनतत्प्राबल्यादुच्यतेवातरक्तम् ॥ ५ ॥

अर्थ—हाथी, घोडा, ऊंट इनपर बैठकर जानेसे ( यह वायुके बढनेका और विशेषकरके रुधिर के उतरनेका कारण है ) विदाहकारी अन्नके खानेवाले पुरुषके इसीसे दग्धरुधिरकी वृद्धि होती है, गरमागरम अन्नके खानेवाले ऐसे पुरुषके सब शरीरका रुधिर दुष्ट होकर पैरोमे इकट्ठा होय, और वह दुष्ट वायुसे दूषित होकर मिले, इस रोगमे वायु प्रबल हैं इसीसे इस रोगको वातरक्त ऐसे कहते हैं॥

पूर्वरूप ।

स्वेदोऽत्यर्थंनवाकार्ष्ण्यंस्पर्शाज्ञत्वंक्षतेऽतिरुक् ॥
सन्धिशैथिल्यमालस्यं सदनं पिटिकोद्गमः ॥ ६ ॥
जानुजंघोरुकट्यंसहस्तपादांगसंधिषु ॥
निस्तोदःस्फुरणंभेदोगुरुत्वंसप्तिरेवच ॥ ७ ॥
कंडूःसंधिषुरुग्भूत्वाभूत्वानश्यातिचासकृत् ॥
वैवर्ण्यंमंडलोत्पत्तिर्वातासृक्पूर्वलक्षणम् ॥ ८ ॥

अर्थ—पसीने वहुत आवैं अथवा नहीं आवै शरीर काला होजाय, शरीरमे स्पर्शका ज्ञान जाता रहे, और थोडीसी चोट लगनेसे पीडा अधिक होय संधि ढीली होजायँ आलस्य आवे, ग्लानी हो शरीरमे फुन्सी उठे घोटू, जघा, ऊरू, कमर,कंधा,हाथ, पैर,सन्धि और अंगमे सूईके चुभानेकीसी पीडा होय, स्फुरण ( फरकना ) तोडनेकीसी पीडा, भारीपना, बधिरता ये लक्षण होते हैं और संधियोमे खुजली, चले और शूल होकर बारबार नाश होजाय, शरीरका विवर्ण होजाय, रुधिरके चकत्ता देहमे पडजाय, ये वातरक्तके पूर्वरूप होते हैं ॥

अब वातरक्तको अन्यदोषोंका संसर्ग होनेसे उसके लक्षण न्यारेन्यारे लिखते हैं ।

वाताधिकेऽधिकंतत्रशूलस्फुरणतोदनम् ॥
शोथश्चरौक्ष्यंकृष्णत्वंश्यावतावृद्धिहानयः ॥ ९ ॥
धमन्यंगुलिसंधीनांसंकोचोंऽगग्रहोऽतिरुक् ॥
शीतद्वेषानुपशयस्तंभवेपथुसुप्तयः ॥ १० ॥

अर्थ–वाताधिक वातरक्तमे शूल, अंगोका फरकना, चोटनेकीसी पीडा, ये अधिक होते है । सूजन, रुखापना, नीलापना, अथवा श्यामवर्णता, एवं वातरक्तके लक्षणोकी वृद्धि होय, और क्षण भरमे ह्रास ( कम ) हो, धमनी और अंगुलियोकी संधियोमे सकोच, शरीर जकड्बध होय, अत्यंत पीडा होय, सर्दी बुरी लगे और शीतके सेवन करनेसे दुःख होय, स्तभ होय,कंप और शून्यता होय ये लक्षण होते है ॥

रक्ताधिकके लक्षण ।

**रक्तेशोफोऽतिरुक्क्लेदस्ताम्रश्चिमचिमायते ॥**
**स्निग्धरूक्षैःशमंनैतिकंडूक्लेदसमन्वितः ॥ ११ ॥**

अर्थ–रक्ताधिक वातरक्तमे सूजन,अत्यन्त पीड, और उसमेसे तामेके रगका क्लेद वहे, उस सूजनमें चिमचिम वेदना होय, स्निग्ध अथवा रूखे पदार्थोंसे शांति न होय, उसमे खुजली और पानी निकले ॥

पित्ताधिकके लक्षण ।

**पित्तेविदाहःसंमोहः स्वेदोमूर्च्छामदः सतृट् ॥**
**स्पर्शासहत्वंरुग्रागःशोफःपाकोभृशोष्णता**

अर्थ–पित्ताधिक वातरक्तमे अत्यन्त दाह, इद्रियोको मोह, पसीना, मूर्च्छा मस्तपना, प्यास, स्पर्श बुरा मालूम हो, पीडा, लाल रग, सूजन, छोटेछोटे पीले फोडा, अत्यन्त गरमी ये लक्षण होते है ॥

कफाधिकके लक्षण ।

**कफेस्तैमित्यगुरुतासुप्तिस्निग्धत्वशीतताः ॥**
**कंडूर्मन्दाचरुग्द्वंद्वेसर्वलिङ्गंचसंकरात् ॥ १३ ॥**

अर्थ–कफाधिक वातरक्तमे स्तैमित्य ( गीले कपडासे आच्छादितसमान ), भारीपना, शून्यता, चिकनापना, शीतलता, खुजली और मन्द पीडा ये लक्षण होते है ॥

दो दोषोके वातरक्तमे दो दोषोंके लक्षण और तीनो दोषोके वातरक्तमे तीनो दोषोके लक्षण होते है । पैरोमे वातरक्त हुआ होय उसकी उपेक्षा करनेसे हाथोमे होय हैं उसको कहे है ॥

**पादयोर्मूलमास्थायकदाचिद्धस्तयोरपि ॥**
**आखोर्विषमिवक्रुद्धंतद्देहमनुसर्पति ॥ १४ ॥**

अर्थ–वोह वातरक्त पैरोके मूलमे होकर कदाचित् हाथोमे भी होय है । सो आखु ( मूसे ) के

विषसदृश सर्वदेहमे मंदमंद फैल जाय, यह वातरक्त चरकने दो प्रकारका कहा है एक उत्तान, दूसरा गभीर, त्वचा और मांस इनमे होय सो उत्तान और गभीर इसकी अपेक्षा भीतरी होय है ॥

## असाध्य लक्षण ।

आजानुस्फुटितंयच्चप्रभिन्नंप्रस्रुतंचयत् ॥
उपद्रवैर्यच्चजुष्टंप्राणमांसक्षयादिभिः ॥ १५ ॥
वातरक्तमसाध्यंस्याद्याप्यंसंवत्सरोत्थितम् ॥

अर्थ–आजानु ( जघाके नीचेके भाग ) पर्यन्त गयाभया वातरक्त असाध्य है जिसकी त्वचा फटगई होय, चिरगया होय, और जो स्रावयुक्त होय ऐसा वातरक्त प्राण मांसक्षयादि उपद्रवयुक्त होय, आदिशब्दसे जो आगे ( श्रम अरोचक श्वास ) इत्यादिक कहेगे वे भी लक्षण होयँ सो भी असाध्य है । वातरक्त प्रगट भये वर्षदिन व्यतीत होगया होय सो याप्य होय है, वर्षदिनके पहिले साध्य होय है, परन्तु उसमे स्फुटितादि लक्षण न होयँ तो साध्य है ॥

## उपद्रव ।

अस्वप्नारोचकश्वासमांसकोथशिरोग्रहः ॥ १६ ॥
संमूर्च्छाऽमन्दरुक्तृष्णाज्वरमोहप्रवेपकाः ॥
हिक्कापांगुल्यवीसर्पपाकतोदभ्रमक्लमाः ॥ १७ ॥
अंगुलीवक्रतास्फोटदाहमर्मग्रहार्बुदाः ॥
एतैरुपद्रवैर्वर्ज्यंमोहेनैकेनचाऽपियत् ॥ १८ ॥

अर्थ–निद्रानाश, अरुचि, श्वास, मासका सड़ना, मस्तकका जकडना, मूर्च्छा अत्यन्त पीडा, प्यास, ज्वर, मोह, कप, हिचकी, पागुलापना, विसर्परोग, पकना, नोचनेकीसी पीडा, भ्रम, अनायास श्रम, उंगली टेढी होजाय, फोडा, दाह, मर्मस्थानोमे पीडा, अर्बुद ( गाठ ) हो इन उपद्रवयुक्त वातरक्तवाला रोगी असाध्य है । अथवा एक मोहयुक्तही होय तौ भी असाध्य जानना ॥

## साध्यासाध्यविचार ।

अकृत्स्नोपद्रवंयाप्यंसाध्यंस्यान्निरुपद्रवम् ॥
एकदोषानुगंसाध्यंनवंयाप्यंद्विदोषजम् ॥
त्रिदोषजमसाध्यंस्याद्यस्यचस्युरुपद्रवाः ॥ १९ ॥

अर्थ–जिस वातरक्तमे सव उपद्रव होवे नही वह याप्य है, और निरुपद्रव साध्य है। ओर जो एक दोषका होय वह साध्य है। और त्रिदोपज याप्य, और त्रिदोपज तथा उपद्रवयुक्त होय तो वातरक्त असाध्य है। यह श्लोक क्षेपक है माधवका नही है॥

इति वातरक्तम्।

# ऊरुस्तंभनिदानम्।

शीतोष्णद्रवसंशुष्कगुरुस्निग्धैर्निषेवितैः॥
जीर्णाजीर्णातपायाससंक्षोधस्वप्नजागरैः॥ १॥
सश्लेष्ममेदःपवनःसाममत्यर्थसंचितम्॥
अभिभूयेतरंदोषमूरूचेत्प्रतिपद्यते॥ २॥
सक्थ्यस्थीनिप्रपूर्यांतःश्लेष्मणास्तिमितेनच॥
तदास्तभ्नातितेनोरूस्तब्धौशीतावचेतनौ॥ ३॥
परकीयाविवगुरूस्यातामतिभृशव्यथौ॥
ध्यानाङ्गमर्दस्तैमित्यतंद्राच्छर्द्यरुचिज्वरैः॥ ४॥
संयुतौपादसदनकृच्छ्रोद्धरणसुप्तिभिः॥
तमूरुस्तंभमित्याहुराढ्यवातमथापरे॥ ५॥

अर्थ–शीतल, गरम, पतले, शुष्क, भारी, चिकने, ऐसे परस्पर विरुद्ध भोजनसे, जीर्ण, अजीर्ण, उसीप्रकार दंडकसरतके करनेसे, चित्तके क्षोभसे, दिनमे सानेसे, रात्रिमे जागना इन कारणोंसे कफ मेदयुक्त अत्यन्त सचित भया आमयुक्त वात इतर दोपो अर्थात् पित्तको आच्छादित-कर ऊरुओमे आयकर प्राप्त होय, और ऊरुओके हाडोको आर्द्रकफसे परिपूर्ण करे, तव उनके ऊरुस्तभित हो ( जकडजॉय ) और शीतल तथा निर्जीव होजाय। और दूसरे पुरुषके ऊरूके समान उठरके चलना इस विषयमें असमर्थ होय और भारी, अत्यन्त पीडायुक्त होय चिता, अगोका गोड़ना, आर्द्रता ( गीला ), तन्द्रा, वमन, अरुचि, ओर ज्वरसहित मनुष्यके दोनो ऊरू जकड़ जायँ, वडे कष्टसे चले और शून्यता होय, इस रोगको ऊरुस्तभ ऐसे कहते है ओर कोई आढ्य-वात कहते है॥

पूर्वरूप ।

प्राग्रूपंतस्यनिद्राऽतिध्यानंस्तिमितताज्वरः ॥
लोमहर्षोऽरुचिश्छर्दिर्जंघोर्वोःसदनंतथा ॥ ६ ॥

अर्थ--निद्रा बहुत आवे, अत्यत चिंता, मदता, ज्वर, रोमाच, अरुचि, वमन, जंघा और ऊरु इनमे पीडा होय, यह ऊरुस्तभके पूर्वरूप होते हैं ॥

ऊरुस्तंभके लक्षण ।

वातशंकिभिरज्ञानात्तस्यस्यात्स्नेहनात्पुनः ॥
पादयोःसदनं सुप्तिःकृच्छ्रादुद्धरणंतथा ॥ ७ ॥
जंघोरुग्लानिरत्यर्थंशश्वदाहवेदना ॥
पादंचव्यथतेऽत्यर्थंशीतस्पर्शंनवेत्तिच ॥ ८ ॥
संस्थानेपीडनेगत्यांचलनेचाप्यनीश्वरः ॥
अन्यस्येवहिसंभग्नावूरूपादौचमन्यते ॥ ९ ॥

अर्थ--पैरोका सोना, सकोच होना, इत्यादिक वातरोगके समान चिह्न मिलनेसे उस मनुष्यको वातरोगकी शका होय । तव वह मनुष्य तैलादिक स्नेहन चिकित्सा करे तो उसके दूनारोग बढे, पैरोमे पीडा होय, तथा पैर सोय जावे वडे कष्टसे पैर उठाया और धराजाय, जंघा और ऊरुओमे अधिक पीडा होय, और निरन्तर दाह तथा वेदना होय, पैरोमे व्यथा होय, शीतल पदार्थका स्पर्श मालूम न होय पैरके उठानेमे रगड़नेमे अथवा चलनेमे अथवा हिलानेमे असमर्थ होय, पैर और ऊरु ये टूटेसे तथा अन्य मनुष्यकेसे मालूम हो, ये लक्षण ऊरुस्तभके हैं । व्याधिके स्वभावसे यह ऊरुस्तभ त्रिदोषका एकही है वातादि भेदोसे अनेक प्रकारका नही है ॥

असाध्य लक्षण ।

यदादाहार्त्तितोदार्तोवेपनःपुरुषोभवेत् ॥
ऊरुस्तंभस्तदाहन्यात्साधयेदन्यथानवम् ॥ १० ॥

अर्थ--जिस समय पुरुष दाह, शूल और तोद ( नोचनेकीसी पीडा ) इनसे पीडित होकर कपयुक्त होय उस समय वह ऊरुस्तंभरोग उसका नाश करे है । और ये लक्षण न होयँ और रोग नया होय तो यह रोग साध्य है ॥

इति ऊरुस्तभनिदानम् ।

# आमवातनिदानम्।

विरुद्धाहारचेष्टस्यमन्दाग्नेर्निश्चलस्यच॥ स्निग्धंभुक्तवतोह्यन्नं व्यायामंकुर्वतस्तथा॥ १ ॥ वायुनाप्रेरितोह्यामःश्लेष्मस्थानं प्रधावति॥ तेनात्यर्थंविदग्धोऽसौधमनीःप्रतिपद्यते॥२॥वात-पित्तकफैर्भूयोदूषितःसोन्नजोरसः॥ स्रोतांस्यभिस्पंदयतिनाना-वर्णोऽतिपिच्छिलः॥ ३ ॥ जनयत्याशुदौर्बल्यं गौरवं हृदयस्य च॥ व्याधीनामाश्रयोह्येषआमसंज्ञोऽतिदारुणः॥ ४ ॥युगपत्कु-पितावेतौत्रिकसंधिप्रवेशकौ ॥ स्तब्धंचकुरुतोगात्रमामवातः सउच्यते॥ ५ ॥

अर्थ–विरुद्ध आहार ( क्षीरमत्स्यादि ) और विरुद्ध विहार करनेवाले मनुष्यकी मद अग्निवाले के, जो दडकसरत न करे और चिकना अम्ल खायकर दडकसरत करनेवाले, ऐसे पुरुषको आम-वायुसे प्रेरित होकर कफके आमाशयादिस्थानके प्रति जायकर प्राप्त होय, और उस कफसे अत्यन्त दूषित होकर वही आम, धमनी नाडियोमे प्राप्तहोकर भीतर वह अन्नका रस ( आम ) वात और कफपित्तसे दूषित होकर नाडियोके छिद्रोमे भरजाय, वह अनेक प्रकारके रंगका अतिगाढा होय है और शीघ्र दुर्बलताको तथा हृदयको भारी करता है व्याधिके उत्पन्न करनेका ( आश्रय ) स्थान है अर्थात् प्रायः रोग आमाशयके विकृत होनेपरही होता है इस अत्यन्त भयकर रोगकी आमसंज्ञा कही है। पीछे यह वात कफ एकही कालमे कुपित होकर त्रिकसंधियोमे जायके प्रवेश करे तब देह जकडीसी होजाय, इस रोगको आमवात ऐसे कहते है॥

आमवातके सामान्यलक्षण।

अङ्गमर्दोऽरुचिस्तृष्णाआलस्यंगौरवंज्वरः॥
अपाकःशूनतांगानामामवातःसउच्यते॥ ६ ॥

अर्थ–अगोका टूटना, अरुचि, प्यास, आलकस, भारीपना, ज्वर, अन्नका न पचना और देहमें सूजनसी होजाय, इस रोगको आमवात कहते हैं॥

---

१ अविपक्करस पृक्त दुर्गंध बहुपिच्छिलम्। सदनं सर्वगात्राणामाम इत्यभिधीयते॥आममन्नरसं केचित्के-चित्त मलसञ्चयम्। प्रथमां दोषदुष्टि वा केचिदाम प्रचक्षते॥ आहारस्यरसः शेषोयोनपक्वोग्निलाघवात्। स मूल सर्वरोगाणामाम इत्यभिधीयते॥

अब अत्यन्त वढगया होय आमवात उसके लक्षण कहते हैं ।

**सकष्टःसर्वरोगाणांयदाप्रकुपितोभवेत्॥हस्तपादशिरोगुल्फत्रिकजानूरुसंधिषु ॥ ७ ॥ करोतिसरुजंशोथंयत्रदोषःप्रपद्यते ॥ सदेशोरुजतेऽत्यर्थंव्याविद्धइववृश्चिकैः ॥ ८ ॥ जनयेत्सोऽग्निदौर्बल्यंप्रसेकारुचिगौरवम्॥उत्साहहांनिंवैरस्यंदाहंचवहुमूत्रताम् ॥ ९॥ कुक्षौकठिनतांशूलंतथानिद्राविपर्ययम् ॥ तृट्छर्दिभ्रममूर्च्छाश्चहृद्ग्रहंविड्विबंधताम् ॥ १० ॥ जाड्यांत्रकूजमानाहंकष्टांश्चान्यानुपद्रवान् ॥ ११ ॥**

अर्थ–यह आमवात जिससमय वढे उससमय रोगोमें कष्टकर्ता होती है, अर्थात् सब रोगोसे वढकर कष्टदायक है । हाथ, पैर, मस्तक, घोटू, त्रिकस्थान, जानू, जंघा इनकी सन्धियोंमें पीडा युक्त सूजन करे और जिस जिस ठिकाने आम जाय उसी उसी ठिकाने वींछूके डक मारनेकिसी पीडा करे, यह रोग, मदाग्नि, मुखसे पानीका गिरना, अरुचि, देह भारी, उत्साहका नाश, मुखमे विरसता, दाह, वहुत मूत्रका उतरना, कूखमे कठिनता, शूल, दिनमे निद्रा आवे, रातिसे जागे, प्यास, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदयमे दुःख, मलका अवरोध, जडता, ( काम करनेकी शक्तिसे रहित ) आंतोका गूंजना, अफरा तथा अत्यन्त उपद्रव कहिये वातव्याधिमें कहे कलायखंजादिकोको करे ॥

विशेषलक्षण ।

**पित्तात्सदाहरागंचसशूलंपवनानुगम् ॥**
**स्तैमित्यंगुरुकंडूकंकफजुष्टंतमादिशेत् ॥ १२ ॥**

अर्थ–पित्तसे जो आमवात होय उसमे दाह और लाल रग होय है वादीके आमवात मे शूल होय है । कफसम्बन्धी आमवातमे देहमें आर्द्रता, गीला और भारीपना तथा खुजली चले है ॥

साध्यासाध्यविचार ।

**एकदोषानुगःसाध्योद्विदोषोयाप्यउच्यते ॥**
**सर्वदेहचरःशोथःसकृच्छ्रःसान्निपातिकः ॥ १३ ॥**

अर्थ–एक दोपका आमवातरोग साध्य है, दो दोपोका याप्य है और सर्व देहमे विचरनेवाली सूजन अथवा त्रिदोपसे प्रगट आमवातरोग कष्टसाध्य जानना ॥

इति आमवातनिदानम् ।

# शूलनिदानम्।



दोषैःपृथक्समस्तामद्वंद्वैःशूलोष्टधाभवेत् ॥
सर्वेष्वेतेषुशूलेषुप्रायेणपवनःप्रभुः ॥ १ ॥

अर्थ—वात, पित्त, कफ इनसे तीनप्रकारका, एक सन्निपातसे, एक आमसे और तीन द्वंद्वज ऐसे सब मिलकर आठप्रकारका शूलरोग है। इन सब शूलोंमें वादीका शूल प्रबल है। ज्वरके समान शूलरोगकी प्रथम उत्पत्ति हारीतमें कही है सो इस प्रकार कामदेवके नाश करनेके अर्थ शिवने क्रोध करके त्रिशूलको फेंका, उस त्रिशूलको अपने सन्मुख आता हुआ देख कामदेव भयभीत होकर विष्णु भगवान्के देहमे प्रवेश करगया। तदनतर वह त्रिशूल विष्णुकी हुकारसे मूच्छित होकर गिरा तो पृथ्वीमे शूल इस नामसे प्रसिद्ध भया, तबसे वह शूल पंचभूतात्मक देहधारी मनुष्योको पीडा करने लगा। इसप्रकार इसकी उत्पत्ति है, शिवके त्रिशूलसे उत्पन्न भया तथा शूलके घावके समान पीडा करे है इसीसे इसको शूल ऐसे कहते हैं ॥

वातशूलके कारण और लक्षण।

व्यायामयानादतिमैथुनाच्च प्रजागराच्छीतजलातिपानात् ॥
कलायमुद्गाढकिकोरदूषादत्यर्थरूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥२॥
कषायतिक्तादिविरूढजान्नविरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् ॥विट्
शुक्रमूत्रानिलवेगरोधाच्छोकोपवासादतिहास्यभाषात् ॥३॥
वायुःप्रवृद्धोजनयेद्धिशूलंहृत्पार्श्वपृष्ठत्रिकबस्तिदेशे ॥ जीर्णे
प्रदोषेचघनागमेचशीतेचकोपंसमुपैतिगाढम्॥ ४ ॥ मुहुर्मु-
हुश्चोपशमप्रकोपौविण्मूत्रसंस्तंभनतोदभेदैः ॥संस्वेदनाभ्यं-
जनमर्दनाद्यैःस्निग्धोष्णभोज्यैश्चशमंप्रयाति ॥ ५ ॥

अर्थ—दडकसरत, वहुतचलना, अति मैथुन, अत्यंत जागना, बहुत शीतल जल पीना, मटर, मूग, अरहर, कोंदो, अत्यन्त रूखे पदार्थके सेवनसे, और अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन) लकडी आदिके लगनसे कसैली, कडवी, भीगा अन्न जिसमे अंकुर निकस

१ अनंगनाशाय हरस्त्रिशूलं मुमोच कोपान्मकरध्वजश्च। तमापततं सहसा निरीक्ष्य भयार्दितो विष्णुतनु प्रविष्टः ॥ स विष्णुहुंकारविमोहितात्मा पपात भूमौ प्रथितस्स शूलः। सपंचभूतानुगतः शरीरं प्रदूषयत्यस्य हि पूर्वसृष्टिः ॥

आये हो, विरुद्ध क्षीर मछली आदि सूखा मास सूखा शाक ( कचरिया आदि ) इनके सेवन करनेसे, मल, मूत्र, शुक्र और अधोवायु इनके वेगको रोकनेसे, शोकसे, उपवास ( व्रत ) के करनेसे, अत्यन्त हँसनेसे, बहुत बोलनेसे, कोपको प्राप्त भई जो वात सो बढकर हृदय पसवाडा पीठ त्रिकस्थान मूत्रस्थानमे शूलको करे । और वह भोजन पचनेके पीछे प्रदोपकालमे, वर्षाकालमें शीतकालमे इन दिनोमे शूल अत्यत कोप करे । और वारंवार कोप होय, मलमूत्रका अवरोध, पीडा और भेद ये लक्षण वातशूलके हैं । तथा स्वेदन और अभ्यंजन तथा मर्दन इत्यादिकसे और चिकने गरम अन्नसे यह शूल शात होता है ॥

पित्तशूलके कारण और लक्षण ।

क्षारातितीक्ष्णोष्णविदाहितैलनिष्पावपिण्याककुलित्थयूषैः ॥
कट्वम्लसौवीरसुराविकारैः क्रोधानलायासरविप्रतापैः ॥ ६ ॥
ग्राम्यातियोगादशनैर्विदग्धैः पित्तं प्रकुप्याशुकरोतिशूलम् ॥
तृण्मोहदाहार्तिकरंहिनाभ्यांसंस्वेदमूर्च्छाभ्रमशोषयुक्तम् ॥ ७ ॥
मध्यंदिनेकुप्यति चार्धरात्रे विदाहकाले जलदात्यये च ॥
शीतेतुशीतैःसमुपैतिशांतिंसुस्वादुशीतैरपिभोजनैश्च ॥ ८ ॥

अर्थ—यवक्षारआदि खार, मरिचआदि तीखी और गरम, विदाहकारक, वास और करील आदि तेल, सिवी खल, कुलथी, यूप कडुवा, खट्टा, सौवीर ( काजी ), सुराविकार ( मद्यविशेष ),क्रोधसे अग्निके समीप रहना,परिश्रम, सूर्यकी तीव्र धूपमें डोलना, अतिमैथुन करना, विदाहकारक अन्नआदि इन करणोंसे पित्त कुपित होकर नाभिस्थानमे शूल उत्पन्न करताहै वह शूल तृपा, मोह, दाह, पीडा इनको करे । और पसीना मूर्च्छा, भ्रम, शोष इनको करे, दुपहरके समय, मध्यरात्रिमे,अन्नके विदाहकालमे, शरत्कालमे, शूल अधिक होय । शीतकालमे शीतल पदार्थसे और अत्यत मधुर मीठ शीतल अन्नसे यह शूल शात होता है ॥

कफशूलके कारण और लक्षण ।

आनूपवारिजाकिलाटपयोविकारैर्मांसेक्षुपिष्टकृशरातिलशष्कुलीभिः ॥ अन्यैर्बलासजनकैरपिहेतुभिश्चश्लेष्माप्रकोपमुपगम्यकरोतिशूलम् ॥ ९ ॥ हृल्लासकाससदनाऽरुचिसंप्रसेकै-

शमाशयेस्तिमितकोष्ठशिरोगुरुत्वैः ॥ भुक्तेसदैवहिरुजंकुरु-
तेऽतिसात्रंसूर्योदयेचशिशिरेकुसुमागमेच ॥ १० ॥

अर्थ—जलके समीप रहनेवाले पक्षियोका मास, मछली आदिका मास दही, घृत, मक्खनआदि दूधके विकार, मास, ईखका रस, पिसा अन्न, उडदकी पिट्ठी वगैरह खिचडी, तिल, पूरी, कचौडी आदि और कफकारक पदार्थ खानेसे कफ कुपित होकर आमाशयमे शूलरोगको प्रगट करे उसमे सूखी रद्द, खासी, ग्लानि, अरुचि, मुखसे लार गिरे बद्धकोष्ठता, मस्तक भारी हो, ये लक्षण होयँ भोजन करतेसमय पीडा होय, सूर्योदयके समय, शिशिरऋतुमे और वसंतकालमे शूल बहुत होय।

सन्निपातशूलके लक्षण।

सर्वेषुदोषुच सर्वलिङ्गंविद्याद्भिषक्सर्वभवंहिशूलम् ॥
सुकष्टमेनं विषवज्रकल्पं विवर्जनीयं प्रवदन्तितज्ज्ञाः॥ ११ ॥

अर्थ—सम्पूर्ण दोषोके कोपहोनेमे वात पित्त कफ तीनो शूलके लक्षण होते है उसीको सन्निपातकाशूलकहते हैं यह बडा दुःख दायक है विष और वज्रके तुल्य है इसको विद्वान् असाध्य कहते हैं।

आमशूलके लक्षण।

आटोपहृल्लासवमीगुरुत्वस्तैमित्यमानाहकफप्रसेकैः ॥
कफस्यलिङ्गेनसमानलिङ्गमामोद्भवंशूलमुदाहरन्ति ॥ १२ ॥

अर्थ—पेटमे गुडगुडाहट होय, उबाकिओका आना, रद्द, देह भारी, मंदता, अफरा, मुखसे कफका स्राव, इन लक्षणोसे तथा कफशूललक्षणोके समान ऐसे शूलको आमशूल कहते है ॥

द्वंद्वजशूलोंके लक्षण।

वस्तौहृत्कंठपार्श्वेषुसशूलःकफवातिकः ॥
कुक्षौहृन्नाभिपार्श्वेषुसशूलःकफपैत्तिकः ॥ १३ ॥
दाहज्वरकरोघोरोविज्ञेयोवातपैत्तिकः ॥
एकदोषोत्थितःसाध्यःकृच्छ्रसाध्योद्विदोषजः ॥ १४ ॥
सर्वदोषोत्थितोघोरस्त्वसाध्योभूर्युपद्रवः ॥

अर्थ—वस्ति ( मूत्रस्थान ), हृदय, कंठ, पसवाडे, इन ठिकाने शूल होय वह ( कफवातिक ) जानना, कूखमे, हृदय, नाभि और पसवाडे इनमे कफपित्तका शूल होय है दाह ज्वर करनेवाला ऐसा भयङ्कर शूल होय वह वातपित्तका जानना, एक दोषका शूलरोग साध्य है, दो दोषोका कृच्छ्रसाध्य और तीनो दोषोका भयंकर और बहुत उपद्रवयुक्त होय वह शूल असाध्य जानना ॥

ग्रन्थांतरोक्तशूलके स्थान।

"वातात्मकंबास्तिगतंवदंतिपित्तात्मकंचापिवदन्तिनाभ्याम् ॥
हृत्पार्श्वकुक्षौकफसन्निविष्टंसर्वेषुदेशेषुचसन्निपातात् ॥ १ ॥

अर्थ—वातका शूल वस्तिमे होताहै और पित्तका नाभिमे कफका हृदय पसवाडा कोखमे सन्निपातका सब जगह होताहै ॥

शूलके लक्षण।

वेदनाचतृषामूर्च्छाआनाहोगौरवारुची ॥
कासश्वासौचहिक्काचशूलस्योपद्रवाःस्मृताः ॥ २ ॥"

परिणामशूलनिदान।

स्वैर्निदानैःप्रकुपितोवायुःसन्निहितस्तथा ॥ कफपित्तेसमावृत्यशूलकारीभवेद्बली ॥ १५ ॥ भुक्तेजीर्यतियच्छूलंतदेवपरिणामजम् ॥ तस्यलक्षणमप्येतत्समासेनाभिधीयते ॥ १६ ॥

अर्थ—अपने रौक्ष्यआदि कारणोंसे वायु कुपित होकर कफपित्तके समीप जाय उसको आवृत कर बली होकर शूलको उत्पन्न करे आहार पचनेके समय जो शूल होय उसको परिणामशूल कहते हैं। उसके लक्षण संक्षेपसे कहता हूँ ॥

वातिकपरिणामशूलके लक्षण।

आध्मानाटोपविण्मूत्रविबंधारतिवेपनैः ॥
स्निग्धोष्णोपशमप्रायंवातिकंतद्वदेद्भिषक् ॥ १७ ॥

अर्थ—पेटका फूलना, तथा पेटमें गुडगुडशब्द, मल मूत्रका अवरोध, अरति ( मनका न लगना ), कप, ये लक्षण हों। और चिकना, गरम पदार्थसे शांत होय ऐसे शूलको वातिक कहतेहैं।

पैत्तिकपरिणामशूलके लक्षण।

तृष्णादाहरतिस्वेदकट्वम्ललवणोत्तरम् ॥
शूलंशीतशमप्रायंपैत्तिकंलक्षयेद्बुधः ॥ १८ ॥

अर्थ—प्यास, दाह, चित्तका न लगना, पसीना, ये लक्षण होयँ। तीखा, खट्टा, नोनका ऐसे पदार्थ खानेसे वढनेवाला और शीतल पदार्थके सेवनसे शांत होय ऐसा शूल पित्तका जानना ॥

श्लैष्मिकपरिणामशूलके लक्षण।

छर्दिहृल्लाससंमोहस्वल्परुग्दीर्घसंतति ॥
कटुतिक्तोपशांतेश्चतच्चज्ञेयंकफात्मकम् ॥ १९ ॥

अर्थ—वमन, अफारा, और समोह, ( इन्द्रिय और मनको मोह ) ये लक्षण जिसमे बहुत होयँ पीडा थोडी होय, शूल बहुत दिन रहै कडुवे और तीखे पदार्थसे शान्ति होय उस शूलको कफात्मक जानना ॥

द्विदोषज और त्रिदोषजके लक्षण।

संसृष्टलक्षणंयच्चद्विदोषंपरिकल्पयेत् ॥
त्रिदोषजमसाध्यंतुक्षीणमांसबलानलम् ॥ २० ॥

अर्थ—जिसमे दो दोषोके लक्षण मिलेहो उसको द्वन्द्वज कहते हैं और तीन दोषोके लक्षणोसे त्रिदोषज जानना, मांस बल और अग्नि ये जिसके क्षीण होगये हो ऐसा शूलरोग असाध्य जानना ॥

अन्नके उपद्रवसे प्रगटशूलके लक्षण।

जीर्णेजीर्यत्यजीर्णेवायच्छूलमुपजायते ॥
पथ्यापथ्यप्रयोगेणभोजनाभोजनेनच ॥
नशमंयातिनियमात्सोऽन्नद्रवउदाहृतः॥ २१ ॥

अर्थ—अन्न पचगया होय, अथवा पचरहा हो अथवा अजीर्ण हो अर्थात् सर्वदा जो शूल प्रगट होय, वह पथ्यापथ्यके योगसे अथवा भोजन करनेसे,किंवा न भोजन करनेसे नियमसे शांत नही होय, उसको अन्नद्रवशूल कहते हैं, यह शूल त्रिदोषविकृतिसे एक प्रकारका है, परन्तु असाध्य नही है, क्यों कि. इसकी चिकित्सा कही है ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरविरचितमाधवार्थबोधिनीभाषाटीकायां परिणामशूल-निदानं समाप्तम् ।

---

# उदावर्तनिदानम्।

उदावर्तके कारण।

वातविण्मूत्रजृंभास्रक्षवोद्गारवमींद्रियैः ॥
क्षुत्तृष्णोच्छ्वासनिद्राणांधृत्योदावर्त्तसंभवः ॥ १ ॥

अर्थ—अधोवायु, विष्ठा, मूत्र जभाई,अश्रुपात, छींक, डकार, वमन, शुक्र, भूख, प्यास, श्वास, और निद्रा इन तेरह वेगोके रोकनेसे उदावर्त्तरोग उत्पन्न होताहै, तेरहके नियमके करनेसे यह प्रयोजन है कि—क्रोध, लोभ, मन इत्यादि वेगोके धारण करनेसे रोग उत्पन्न, नही होता। क्यो कि, इनके रोकनेमे तो स्वस्थता प्राप्त होती है। सब उदावर्त्तोमे मुख्य कारण वायु है उदावर्त्तकी निरुक्ति इसप्रकार है ( उद्धूतेन वेगविधारणेन आवृत्तस्य वायोरावर्त्तनमुदावर्त्तः ॥ )

तरह उदावर्त्तोंके लक्षण क्रमसे कहते हैं ।

**वातमूत्रपुरीषाणांसंगाध्मानंक्लमोरुजः ॥**
**जठरेवातजाश्चान्येरोगाःस्युर्वातनिग्रहात् ॥ २ ॥**

अर्थ–अधोवायुके रोकनेसे अधोवायु, मल, मूत्र ये बन्द होजायँ, पेट फूलजावे. अनायास श्रम और पेटमे वादीसे पीडा होय, तथा और वातकृत तोद ( शूलादि पीडा ) होय ॥

**आटोपशूलौपरिकर्त्तिकाचसंगःपुरीषस्यतथोर्ध्ववातः ॥**
**पुरीषमास्यादथवानिरेतिपुरीषवेगेऽभिहतेनरस्य ॥ ३ ॥**

अर्थ--मलके वेग रोकनेसे पेटमे गुडगुडाहट होयं, शूल होय, गुदामें कतरनेकीसी पिडा होय, मल उतरे नही, डकार आवे, अथवा मल मुखके द्वारा निकले ॥

**वस्तिमेहनयोःशूलंमूत्रकृच्छ्रंशिरोरुजा ॥**
**विनामोवंक्षणानाहःस्याल्लिंगंमूत्रनिग्रहे ॥ ४ ॥**

अर्थ--मूत्रके वेग रोकनेसे बस्ति ( मूत्राशय ) और शिश्न इन्द्रिय इनमे पीडा होय मूत्र कष्टसे उतरे, मस्तकमे पीडासे शरीर सीधा होय नही पेटमे अफरा होय ॥

**मन्यागलस्तंभशिरोविकाराजृंभोपरोधात्पवनात्मकाःस्युः ॥**
**तथाक्षिनासावदनामयाश्चभवंतितीव्राःसहकर्णरोगैः ॥ ५ ॥**

अर्थ–जभाई आती हुईके रोकनेसे, मन्या कहिये नाडीके पीछेकी नस और गला इनका और वातजन्य विकार मस्तकमे होयँ, उसी प्रकार नेत्ररोग, नासारोग, मुखरोग और कर्णरोग ये तीव्र होते है ॥

**आनन्दजंवाप्यथशोकजंवानेत्रोदकंप्राप्तममुंचतोहि ॥**
**शिरोगुरुत्वंनयनामयाश्चभवंतितीव्राःसहपीनसेन ॥ ६ ॥**

अर्थ–आनदसे अथवा शोकसे प्रगट अश्रुपातोको जो मनुष्य नही त्याग करे, उसके इतने रोग प्रगट होयँ, मस्तक भारी रहे, नेत्ररोग, और पीनस ये प्रबल हो ॥

**मन्यास्तंभःशिरःशूलमर्दितार्धावभेदकौ ॥**
**इन्द्रियाणांचदौर्बल्यंक्षवथोःस्याद्विधारणात् ॥ ७ ॥**

अर्थ–मन्या ( नाडके पीछाडीकी नस ) का स्तंभ कहिये जकडजाना, शिरमे शूलका

चलना, आधा मुख टेढा होजाय, अर्धांगवात, और सब इन्द्रिय दुर्बल होजायँ इतने रोग आतीहुई छींक रोकनेसे होते है ॥

**कंठास्यपूर्णत्वमतीवतोदःकजश्चवायोरथवाऽप्रवृत्तिः ॥**
**उद्गारवेगेऽभिहतेभवंतिघोराविकाराःपवनप्रसूताः ॥ ८ ॥**

अर्थ–आतीहुई डकारके वेग रोकनेसे वातजन्य इतने रोग होते है। कठ और मुख भारीसा माळूम होय. अत्यत नोचनेकीसी पीडा होय, अव्यक्तभाषण ( जो समझमे न आवे ), ॥

**कंडूकोठारुचिव्यंगशोफपांड्वामयज्वराः ॥**
**कुष्टहृल्लासवीसर्पाश्छर्दिनिग्रहजागदाः ॥ ९ ॥**

अर्थ–जो मनुष्य आतीहुई वमनके वेगको रोके उसके अङ्गोमे खुजली चले, देहमे चकत्ते होजायँ, अरुचि, मुखपर झाँइसी पडे, सूजन, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ट, खाली रद्द, विसर्परोग ये होयँ ॥

**मूत्राशयेवैगुदमुष्कयोश्चशोथोरुजामूत्रविनिग्रहश्च ॥**
**शुक्राश्मरीतत्स्रवणंभवेच्चतेतेविकाराभिहतेचशुक्रे ॥ १० ॥**

अर्थ–मैथुन करतेसमय वीर्य निकलनेको जो मनुष्य रोके अथवा और प्रकारसे शुक्रके वेगको रोके उसके मूत्राशयमे सूजन होय, तथा गुदामे और अडकोशोमे पीडा होय, मूत्र बडे कष्टसे उतरे शुक्राश्मरी ( पथरीके निदानमे आगे कहेगे ) सो होय, शुक्रका स्राव होय, ऐसे अनेक प्रकारके रोग होयँ ॥

**तन्द्रांगमर्दावरुचिःश्रमश्चक्षुधाभिघातात्कृशताचदृष्टेः ॥**

अर्थ–भूखके रोकनेसे तन्द्रा, अगोका टूटना, अरुचि, श्रम और दृष्टिका मन्द होना ये रोग प्रगट होयँ। चकारसे कृशता और दुर्बलता होयँ यह अन्य ग्रन्थसे जानना ॥

**कंठास्यशोषःश्रवणावरोधस्तृषाभिघाताद्धृदयेव्यथावै ॥ ११ ॥**

अर्थ–प्यासके रोकनेसे कठ और मुखका सूखना, कानोसे मन्द सुनना, और हृदयमे पीडा ये लक्षण होयँ ॥

**श्रांतस्यनिःश्वासविनिग्रहेणहृद्रोगमोहावथवापिगुल्मः ॥**

अर्थ–जो मनुष्य हारगया हो और वह श्वासको रोके उसके हृदयरोग, मोह और वायगोल इतने रोग होयँ ॥

जृंभांगमर्दाक्षिशिरोतिजाड्यंनिद्राभिघातादथवापितंद्रा ॥ १२ ॥

अर्थ--आती हुई निद्राके रोकनेसे जंभाई, अगोका टूटना, नेत्र और मस्तककी अत्यत जडता होना, और तन्द्रा होय। इसप्रकार वेग रोकनेसे प्रगट रोगोको कहकर अब रूक्षादिकारणोसे कुपितवायुसे उत्पन्न होनेवाले उदावर्त्तरोगोको कहते है ॥

वायुःकोष्ठानुगोरूक्षैःकषायकटुतिक्तकैः ॥
भोजनैःकुपितःसद्यउदावर्त्तंकरोतिच ॥ १३ ॥
वातमूत्रपुरीषाश्रुकफमेदोवहानि वै ॥
स्रोतांस्युदावर्तयतिपुरीषंचातिवर्त्तयेत् ॥ १४ ॥
ततोहृद्बस्तिशूलार्त्तोहृल्लासारतिपीडितः
वातमूत्रपुरीषाणिकृच्छ्रेणलभते नरः ॥ १५ ॥
श्वासकासप्रतिश्यायदाहमोहतृषाज्वरान् ॥
वमिहिक्काशिरोरोगमनःश्रवणविभ्रमान् ॥ १६ ॥
बहूनन्यांश्चलभतेविकारान्वातकोपजान् ॥ १७ ॥

अर्थ--रूखा, कसैला, तीखा और कडुवा ऐसे भोजन करनेसे कोष्ठगत वायु, मलमूत्र अश्रुपात, कफ और मद इनके बहनेवाली नाडियोके मार्गको रोकदे मलको सुखाय दे तब रोगी हृदय मूत्रस्थानमे शूलके होनेसे विकल हो, सूखी रद्द, अस्वस्थपना इनसे पीडित हो, मलमूत्र और वात ये कष्टसे उतरे, और श्वास, खांसी, पीनस दाह, मोह, प्यास, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग मनकी भ्रांति, मन्दसुने तथा वातकोपसे और भी बहुतसे विकार होयँ ॥

आनाहरोगनिदान।

आमं शकृद्वानिचितं क्रमेण भूयोविबद्धं विगुणानिलेन ॥
प्रवर्त्तमानंनयथास्वमेनं विकारमानाहमुदाहरंति ॥ १ ॥
तस्मिन्भवत्यामसमुद्भवेतुतृष्णाप्रतिश्यायशिरोविदाहाः ॥
आमाशयेशूलमथोगुरुत्वंहृत्स्तंभउद्गारविघातनंच ॥ २ ॥
स्तंभः कटीपृष्ठपुरीषमूत्रे शूलेऽथमूर्च्छाशकृतश्च छर्दिः ॥
श्वासश्चपक्वाशयजेभवंतितथालसोक्तानिचलक्षणानि ॥ ३ ॥

अर्थ—आम अथवा पुरीष क्रमसे संचित हो त्रिगुण वायुसे वारवार विबद्ध होकर अपने मार्गसे अच्छी रीतिसे प्रवृत्त होय नहीं, इस विकारको आनाह कहते हैं। आमसे प्रगट आनाहरोगसे प्यास, पीनस, मस्तकमें दाह, आमाशयमें शूल, देहमे भारीपना, हृदयका जकड जाना, शूल, मूर्च्छा, डकार, कमर, पीठ, मल, मूत्र इनका रुकना, शूल, मूर्च्छा और विष्ठा मिली हुई रद और श्वास, ये लक्षण होयँ। पक्काशयमें आनाहरोग होनेसे आल्सरोगोक्त लक्षण (आध्मान वातरोधादिक) होते हैं॥

असाध्य लक्षण।

**तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरुपद्रुतम॥**
**शकृद्वमंतं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत्॥ ४॥**

अर्थ—प्यासते पीडित, क्लेशयुक्त, क्षीण, शूलसे पीडित और मलकी रद करनेवाला, ऐसे उदावर्त्तरोगीको वैद्य त्याग दे॥

इति उदावर्त्तनिदानम्।

---

## अथ गुल्मनिदानम्।

**दुष्टावातादयोऽत्यर्थमिथ्याहारविहारतः॥ कुर्वन्तिपञ्चधागुं-ल्मंकोष्ठांतर्ग्रन्थिरूपिणम्॥ १॥ तस्यपञ्चविधंस्थानंपार्श्वहृन्नाभिबस्तयः॥**

अर्थ—मिथ्या आहार और मिथ्या विहार करनेसे अत्यन्त दुष्ट भये वातादि दोषकोष्ठ (पेट) मे ग्रंथिरूप (गाठ) पाचप्रकारका गुल्मरोग उत्पन्न करें हैं। उस गुल्म, रोगके पांच स्थान है दोनो पसवाडे, हृदय नाभि और बस्ति॥

गुल्मके सामान्यरूप।

**हृन्नाभ्योरन्तरेग्रन्थिः संचारीयदिवाऽचलः॥**
**वृत्तश्चयोपचयवान्सगुल्मइतिकीर्तितः॥ २॥**

अर्थ—हृदय और नाभि तथा बस्ती (मूत्रस्थान) इनमे चलायमान अथवा निश्चल गोल कभी घटे कभी वढे ऐसी ग्रन्थि (गाठ) होय उसको गुल्म गोलाका रोग कहते हैं। इस श्लोकमे नाभिशब्दसे बस्तीका ग्रहण करा है॥

---

१ सपिण्डितदोषो गुडकेन मीयत इति गुल्म इति निरुक्तिः।

सम्प्राप्ति ।

**सव्यस्तैर्जायतेदोषैः समस्तैरपिचोच्छ्रितैः ॥**
**पुरुषाणांतथास्त्रीणांज्ञेयोरक्तेनचापरः ॥ ३ ॥**

अर्थ-कुपित भये दोषोंसे पृथक् २ और सब दोष मिलकर एक, ये चार प्रकारके गुल्म पुरुषोंके होते हैं । और स्त्रियोंके रक्त ( रज ) के दोषसे एक प्रकारका गुल्म होय है, परन्तु प्रथम जो लिख आये हैं कि, गुल्मरोग पांचप्रकारका है सो इसका निश्चय नहीं है, क्यों कि, रक्तगुल्म स्त्रियोंके होता है पुरुषोंके नहीं होता, धातुरूप रक्तजगुल्म जो है सो स्त्री पुरुष दोनोंके होता है, यह क्षारपाणी[1]का मत है । पांच प्रकारका गुल्म है इसपर बहुत शास्त्रार्थ और मतमतांतर हैं जिनको देखनेकी इच्छा हो सो मधुकोश और आतंकदर्पण टीकामें देखलेवे ॥

पूर्वरूप ।

**उद्गारबाहुल्यपुरीषबंधतृप्त्यक्षमत्वांत्रनिकूजनानि ॥**
**आटोपमाध्मानमपक्तिशक्तिरासन्नगुल्मस्यवदन्तिचिह्नम्॥४॥**

अर्थ-डकार बहुत आवे, मलका अवरोध होय, अन्नमें अरुचि होय, सामर्थ्यका नाश होना, आंत बोले, पेटमें गुडगुड शब्द होय, और अफरा होय, मंदाग्नि होना ये लक्षण होयँ तो जानना कि, गुल्म ( गोला ) रोग शीघ्र प्रगट होना चाहता है अर्थात् ये गुल्मके पूर्वरूपके लक्षणहैं ।

गुल्मके साधारणलक्षण ।

**अरुचिःकृच्छ्रविण्मूत्रवातेनांत्रविकूजनम् ॥**
**आनाहश्चोर्ध्ववातत्वंसर्वगुल्मेषुलक्षयेत् ॥ ५ ॥**

अर्थ-अरुचि, मलमूत्र कष्टसे उतरे, वादीसे आंत बोले, पेट फूलआवे, ऊर्ध्ववात होय, ये लक्षण सब गुल्मोंमें होते हैं । सब गुल्मरोगमें वात कारण है सो चरक और सुश्रुत[2]मेंभी लिखा है ॥

वातगुल्मके कारण और लक्षण ।

**रूक्षान्नपानंविषमातिमात्रंविचेष्टनंवेगविनिग्रहश्च ॥ शोका-**

---

१ क्षारपाणिः-स्त्रीणामार्तवजोगुल्मोनपुंसामुपजायते । अन्यस्त्वसृग्भवो गुल्मः स्त्रीणांपुंसांचजायते ॥

२ गुल्मिनामनिलशांतिरुपायैः सर्वशोविधिवदाचरणीया । मारुतेऽत्र विजितेऽन्यमुदीर्णदोषमल्पमपि कर्मनिहन्यात् इति ।

३ कुपिताऽनिलमूलत्वाद्गूढमूलोदयादपि । गुल्मवद्वाविशालत्वाद्गुल्म इत्यभिधीयते इति ।

भिघातोऽतिमलक्षयश्चनिरन्नताचानिलगुल्महेतुः ॥ ६ ॥ यः स्थानसंस्थानरुजाविकल्पंविड्वातसङ्गंगलवक्त्रशोषम् ॥ श्यावारुणत्वंशिशिरज्वरंचहृत्कुक्षिपार्श्वांसशिरोरुजश्च ॥ ७ ॥ करोतिजीर्णेऽप्यधिकंचकोपंभुक्तेमृदुत्वंसमुपैतिपश्चात् ॥ वातात्सगुल्मोनचतत्ररूक्षंकषायतिक्तंकटुचोपशेते ॥ ८ ॥

अर्थ–रूखा, विषम और अतिमात्र ऐसे अन्नपान सेवन करनेसे, बलवान् पुरुषसे लडना, मल मूत्र आदि वेगोंके धारण करनेसे, शोक और अभिघात ( लकडी आदिकी चोट ) विरेचन आदिसे, मलका क्षय करना, उपवास ये सब वातगुल्मके कारण है ॥ जो गुल्म कभी नाभी, कभी बस्ती पसवाडेमे चलाजाय, तथा कभी लंबा कभी मोटा गोला अथवा छोटा होय, तथा उसमे पीडा कभी थोडी कभी बहुत होय, तोदभेद ( सुईचुभानेकीसी पीडा ) होय, अथवा अनेक प्रकारकी पीडा होय, मलकी और अधोवायुकी अच्छी रीतिसे प्रवृत्ति होय नही, गला और मुख सूखे, शरीरका वर्ण नीला अथवा लाल होय, शीतज्वर, हृदय, कूख, पसवाडे, कंधा और मस्तक इनमे पीडा होय, और गोला जीर्ण होनेपर, अधिक कोप करे, और भोजन करनेके पिछाडी नरम होजाय, वह गोला वादीसे प्रगट होय है । उसमे रूखा कसैला कडुवा तीखा पदार्थ खानेसे सुख नही होय ॥

## पित्तगुल्मके लक्षण ।

कटम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्षंक्रोधातिमद्यार्कहुताशसेवा ॥ आमाभिघातोरुधिरंचदुष्टंपैत्तस्यगुल्मस्यनिमित्तमुक्तम् ॥ ९ ॥ ज्वरःपिपासावदनाङ्गरागःशूलंमहज्जीर्यतिभोजनेच ॥ स्वेदोविदाहोव्रणवच्चगुल्मःस्पर्शासहःपैत्तिकगुल्मरूपम् ॥ १० ॥

अर्थ--कटु, खट्टा, तीक्ष्ण रस, दाहकारक ( वशकरीलादिक ), रूखा, ऐसे भोजन करनेसे, क्रोधसे, अति मद्यपान, सूर्यकी धूपमे डोलनेसे, अग्निके समीप रहनेसे, विदग्ध अजीर्णसे दुष्ट भया रस उससे अभिघात कहिये लकडी आदिलगनेसे रुधिरका बिगडना, ये पित्तगुल्मके कारण कहे है । ज्वर, प्यास, मुख और अंगोमे लालपना, अन्न पचनेके समय अत्यन्त शूल होय, पसीना आवे जलन होय, फोडाके समान स्पर्श सहा न जाय, ये पित्तगुल्मके लक्षण है ॥

## कफके और सन्निपातके गुल्मके कारण और लक्षण ।

शीतंगुरुस्निग्धमचेष्टनंचसंपूरणंप्रस्वपनंदिवाच ॥ गुल्मस्य

हेतुःकफसंभवस्यसर्वस्तुदुष्टोनिचयात्मकस्य ॥ ११ ॥ स्तैमित्यशीतज्वरगात्रसादहृल्लासकासारुचिगौरवाणि ॥ शैत्यं रुगल्पाकठिनोन्नतत्वंगुल्मस्यरूपाणिकफात्मकस्य ॥ १२ ॥

अर्थ--शीतल, भारी, चिकने ऐसे पदार्थके सेवनसे तृप्तिकी अपेक्षा अधिक भोजन करना, दिनमे सोना, यह कफोत्पन्नगुल्म होनेके कारण हैं । और जो वातजादि तीनो गुल्मोके कारण कहे है, वे सब सन्निपातगुल्मके कारण जानने । देहका गीलापना, शीतज्वर, शरीरकी ग्लानि, सूखी रद्द ( उबाकी ), खासी, अरुचि, भारीपना, शीतका लगना, थोडी पीडा होय, गुल्म( गोला ) कठिन होय और ऊंचा होय, इतने ये सब कफात्मकगुल्मके लक्षण हैं ।

द्वंद्वजगुल्मके लक्षण ।

निमित्तलिङ्गान्युपलभ्यगुल्मेसंसर्गजेदोषबलाबलंच ॥ व्यामिश्रलिङ्गानपरांश्चगुल्मांस्त्रीनादिशेदौषधकल्पनार्थम् ॥ १३ ॥

अर्थ--द्वंद्वज गुल्ममे कारण लक्षण और दोषोंका बलाबल जानकर चिकित्सा करनेके वास्ते मिश्र लक्षणके और तीन गुल्म समझने चाहिये, अर्थात् एक दोष बलवान् होय तौ चिकित्सा करनी चाहिये और द्विदोष बलवान् वा त्रिदोष बलवान् होयँ तौ चिकित्सा न करे ॥

सन्निपातगुल्मके लक्षण ।

महारुजंदाहपरीतमश्मवद्घनोन्नतंशीघ्रविदाहदारुणम्॥मनःशरीराग्निबलापहारिणंत्रिदोषजंगुल्ममसाध्यमादिशेत् ॥ १४ ॥

अर्थ--भारी पीडा करनेवाला, दाहकरके व्याप्त, पत्थरके समान कठिन तथा ऊंचा और शीघ्र दाहकरके भयकर, मन, शरीर, अग्नि और बल इनका नाश करनेवाला ( अर्थात् मनको विकल करनेवाला, शरीरको कृश करनेवाला, और विवर्णकरनेवाला अग्निवैषम्यादिकारक, असामर्थ्य करनेवाला ) ऐसा त्रिदोषज गुल्म असाध्य जानना ॥

रक्तगुल्मके लक्षण ।

नवप्रसूताऽहितभोजनायायाचामगर्भंविसृजेदृतौवा ॥ वायुर्हितस्याःपरिगृह्यरक्तंकरोतिगुल्मंसरुजंसदाहम् ॥ १५ ॥ पैत्तस्यलिङ्गेनसमानलिङ्गंविशेषणंचाप्यपरंनिबोध ॥ यः स्पंदते पिंडितएवनाङ्गैश्चिरात्सशूलःसमगर्भलिङ्गः ॥ १६ ॥ सरौधिरःस्त्रीभवएवगुल्मोमासेव्यतीतेदशमेचिकित्स्यः ॥

अर्थ—नई प्रसूत भई स्त्रीके अपथ्य सेवन करनेसे, अथवा अपक्व गर्भपात होनेसे, अथवा ऋतुकालके समय अपथ्य भोजन करनेसे, वायु कुपित होकर उस स्त्रीके रुधिर ( जो ऋतुसमय निकले उसको ) लेकर गुल्म करे। वह गुल्म पीडायुक्त व दाहयुक्त होय है और पित्तगुल्मके जो लक्षण कहे हैं वे सब इसमे होजाते हैं और इसमे दूसरे विशेष लक्षण होते है उनको कहता हू सुनो। यह गुल्म बहुत देरमे गोल गोल हिले, अवयव कहिये हाथ पैरके साथ नही हिले, शूलयुक्त होय, गर्भके समान सब लक्षण मिले, ( अर्थात् मुखसे पानी छूटे,मुख पीला पड़जाय,स्तनका अग्रभाग काला होजाय और दोहदादि लक्षण सब मिले, ये सब लक्षण व्याधिके प्रभावसे होते है। जैसे क्षयी रोगवालेको स्त्रीरमणकी इच्छा, और काले नख ताल्वादिक होते है ) यह रक्तजगुल्म स्त्रियोंके होय है, दश महीना व्यतीत होजाय तब इस रक्तगुल्मकी चिकित्सा करनी चाहिये। कोई कहते है कि यह गर्भ हैं, अथवा रक्तगुल्म है, यह शका जानकर माधवाचार्यने ( दश महीने व्यतीत होनेपर ) ऐसा कहा है कारण इसका यह है कि, नवमा और दशमा महीना यह प्रसूत होनेका समय है * शंका * क्योजी " यः स्पंदते पिंडित एव नांगैः " इत्यादिक विशेषणोंसे स्पष्ट प्रतीति होय है क्यो कि, गर्भ तो निरतर प्रत्येक अवयवके साथ शूलरहित फडकता है, और रक्तगुल्मके इससे विपरीत लक्षण हैं फिर दश महीना व्यतीत होनेपर चिकित्सा करनी चाहिये यह क्यों कहा ? * उत्तर *—इसका कारण इस प्रकार है कि, इस रोगमे जब दश महीना व्यतीत होजायँ तब चिकित्सा करै तो सुखसाध्य होय है, कुछ प्रसवके नियमसे नहीं कहा क्यों कि, प्रसव ग्यारह बारह महीनामे भी होय है सो चरकमेभी लिखा है " त स्त्री प्रसूते सुचिरेण गर्भ स्पष्टो यदा वर्षगणैरपि स्यात् " जैसे जीर्णज्वर होनेपर दूध पीना, और दस्तका लेना हितकारक होय हे। इसीसे ग्रन्थान्तरोमेभी लिखाहै " ज्वरे तुल्यर्तु दोषत्व प्रमेहे तुल्यदूष्यता। रक्तगुल्मे पुराणत्व सुखसाध्यस्य लक्षणम् " इस रक्तगुल्मको दश महीना व्यतीत होनेपर पुरानापना होय है। और जैजटनेभी कहा है कि, दश महीनाके पहिले मर्दनादि क्रिया करनेसे गर्भाशयको विकार होय हे क्यो कि, रुधिर उस ठिकानेपर जमा होय हे, और ग्यारहवे महीनेमे गुल्मका गोला बहुत अच्छा जमजाता है इसीसे ग्यारहवे महीने स्नेहादिककरके सब शरीर मृदु ( नरम ) करनेसे भेदन करै तो गर्भाशय भले प्रकार अच्छा रहे, अब कहते हैं कि, बहुत दिनका गुल्मरोग ऐसी अवस्था होनेपर असाध्य होजाय है उसको कहते हैं॥

**सञ्चितःक्रमशोगुल्मोमहावास्तुपरिग्रहः॥ कृतमूलःशिरानद्धोयदाकूर्मइवोन्नतः॥ १७॥ दौर्बल्यारुचिहृल्लासकासच्छर्घरतिज्वरैः॥ तृष्णातंद्राप्रातिश्यायैर्युज्यतेनससिध्यति॥ १८॥**

अर्थ—क्रमक्रमसे बढा गुल्म जब सब उदर ( पेट ) मे फैलजाय, और धातुओमे उसका मूल जाय पहुचे, तथा उसपर नाडियोका जाल लिपटजाय और कछुवाकी पीठके समान गुल्म उचा

होय, तब इस रोगीके निःसत्त्वपना, अरुचि, सूखी रद्द, खांसी, वमन, अरति और ज्वर तथा श्वास, तन्द्रा और पीनस, ये लक्षण होयँ, ऐसा रोगी असाध्य है ॥

असाध्य लक्षण।

**गृहीत्वासज्वरःश्वासच्छर्द्यतीसारपीडितम् ॥ हृन्नाभिहस्तपादेषु शोथःक्षिपतिगुल्मिनम् ॥ १९ ॥ श्वासःशूलंपिपासान्नविद्वेषोग्रन्थिमूढता ॥ जायतेदुर्बलत्वंचगुल्मिनांमरणायवै ॥ २० ॥**

**अर्थ**—वमन और अतिसार इनसे पीडित ऐसा गुल्मरोगीका हृदय, नाभी, हाथ, पैर इन ठिकाने सूजन होय। और ज्वर, दमा जिसके होय, ऐसे लक्षण होनेसे रोगी बचे नही ॥

श्वास, शूल, प्यास, अन्नमे अरुचि, और गुल्मकी गाठका एकाएकी नष्टता होजाना और दुर्बलता, ये लक्षण होनेसे जानना कि, गुल्मरोगवालेकी मृत्यु समीप है * **शंका**—*क्यो जी अतर्विद्रधि और गुल्मरोग इनमे क्या भेद है इन दोनोके स्थान और स्वरूप तौ एकसे हैं फिर भेद क्या है ? * **उत्तर**—* तुमने कहा सो ठीक है अन्तर्विद्रधि पचता है और गुल्म नहीं पचे है इसका कारण यह है कि, गुल्म तौ निराश्रय हैं सो सुश्रुतने कहाभी है ॥

**न निबंधोस्तिगुल्मस्यविद्रधिः सनिबन्धनः ॥**
**गुल्मस्तिष्ठतिदोषेस्वेविद्रधिर्मांसशोणिते ॥**
**विद्रधिःपच्यतेतस्माद्गुल्मःक्वापिनपच्यते ॥ २१ ॥**

**अर्थ**—गुल्मका निर्बंध नहीं है, और विद्रधिका निर्बंध है, गुल्म अपने दोषोमे रहता है, और विद्रधिका ठिकाना मांस रुधिरमे है, इसीसे विद्रधिका पाक होय है, और गुल्मका पाक नही होय,

इति गुल्मनिदानम्।

---

# अथ हृद्रोगनिदानम्।

**अत्युष्णगुर्वम्लकषायतिक्तैःश्रमाभिघाताध्यशनप्रसंगैः ॥**
**संचिन्तनैर्वेगविधारणैश्चहृदामयःपंचविधःप्रदिष्टः ॥ १ ॥**

**अर्थ**—अतिगरम, अतिभारी, अतिखट्टा, अतिकपैला, अतिकडुवा ऐसे पदार्थसेवन करनेसे श्रम, ( धनुष्यआदिका खेचना ) अभिघात ( हृदयमे चोट लगना ) और भोजनके ऊपर भोजन नित्य करनेसे, संचितन ( राजाके भयसे चिता ) मलमूत्रआदि वेगोके रोकनेसे, वातादिकके क्षय और सन्निपातकरके तथा कृमिसे हृदयका रोग होता है वह पांच प्रकारका है ॥

उसकी संप्राप्ति और सामान्य लक्षण ।

दूषयित्वारसंदोषाविगणाहृदयंगताः ॥
हृदिबाधांप्रकुर्वन्तिहृद्रोगंतंप्रचक्षते ॥ २ ॥

अर्थ–कुपित भये दोष रसको जोकि, हृदयमे रहता है दुष्टकरके हृदयमे अनेक प्रकारकी पीडा करे उसको हृदयरोग कहते है ॥

वातहृद्रोगके लक्षण ।

आयम्यतेमारुतजेहृदयंतुद्यतेतथा ॥
निर्मथ्यतेदीर्यतेचस्फोट्यतेपाट्यतेऽपिच ॥ ३ ॥

अर्थ–वातज हृदय रोगमे हृदय ईचासरीखा, सुईसे चोंटनेसरीखा, फोडनेसरीखा दो टुकडा करनेके समान मथनेके समान कुहाड़ीसे फोड़नेके समान पीडा करै है ॥

पित्तके हृद्रोगके लक्षण ।

तृष्णोष्णदाहमोहाःस्युःपैत्तिकेहृदयक्लमः ॥
धूमायनंचमूर्च्छाचस्वेदःशोषोमुखस्यच ॥ ४ ॥

अर्थ–पित्तके हृदय रोगमे प्यास, किंचित् दाह, मोह और हृदयकी ग्लानि धूआ निकलतासा माॡम होय मूर्च्छा, पसीना और मुखका सूखना ये लक्षण होते हैं ॥

कफके हृदयरोगके लक्षण ।

गौरवंकफसंस्रावोऽरुचिःस्तंभोऽग्निमार्दवम् ॥
माधुर्यमपिचास्यस्यबलासोवर्ततेहृदि ॥ ५ ॥

अर्थ--कफसे हृदय व्याप्त होनेसे भारीपना, कफका गिरना, अरुचि, हृदय जकडजाय, मंदाग्नि, मुखमे मिठास ये लक्षण होते हैं ॥

त्रिदोषजके लक्षण ।

विद्यात्त्रिदोषंत्वपिसर्वलिङ्गम् ॥

अर्थ–जिसमे सब लक्षण मिलते होयँ वह त्रिदोषका हृद्रोग जानना, इसमे कुछ भी अपथ्य होनेस गांठ उत्पन्न होती है, उस गाठसे कृमि पैदा होती है, ऐसे चरकमें कहा है ॥

---

१ त्रिदोषजे तु हृद्रोगे यो दुरात्मा निषेवते । तिलक्षीरगुडादींश्चग्रंथिस्तस्योपजायते ॥ मर्मैकदेशे संक्लेद रसश्चाप्युपगच्छति । संक्लेदात्कृमयश्चास्य भवंत्युपहतात्मनः ॥

### कृमिज हृद्रोगके लक्षण ।

**तीव्रार्तितोदंक्रिमिजंसकण्डूम्॥उत्क्लेदःष्ठीवनं तोदः शूलंहल्ला-
सकस्तमः ॥ अरुचिःश्यावनेत्रत्वंशोषश्चक्रिमिजेभवेत् ॥ ६ ॥**

अर्थ–तीव्र पीडाकरके, तथा नोचनेकीसी पीडाकरके, तथा खुजलीकरके युक्त ऐसा हृद्रोग कृमिजन्य जानना । उत्क्लेद ( ओकारी आनेके समान मालूम हो ),थूकना, तोद ( सुंई चुभानेकीसी पीडा ), शूल, हृल्लास, अँधेरा आवे, अरुचि, नेत्र काले पडजायँ और मुखशोष ये लक्षण कृमिज हृदयरोगमे होते हैं । जैज्जटका यह मत है कि, उत्क्लेदसे लेकर तमपर्यंत त्रिदोषके लक्षण कहे हैं जैसे तोद, शूल ये वादीसे होयँ उत्क्लेद, हृल्लास और ष्ठीवन ये कफसे । और तम यह पित्तसे लक्षण होता है और अरुचिसे लेकर शोषपर्यन्त कृमिज हृद्रोगके लक्षण जानने, इस विषयमें प्रत्येक आचार्योंके भिन्न भिन्न मत है ॥

### सबोंकेउपद्रव ।

**क्लोमःसादोभ्रमःशोषोज्ञेयास्तेषामुपद्रवाः ॥
कृमिजेकृमिजातीनांश्लैष्मिकाणांचयेमताः ॥ ७ ॥**

अर्थ–क्लोम कहिये पिपासा ( प्यास ) स्थान उसमे ग्लानि होय, भ्रम, शोष, ये सब उन हृद्रोगोके उपद्रव जानने । और कफकी कृमिरोगके जो उपद्रव पिछाडी कहआये सोई कृमिज हृद्रोगके लक्षण होते है । तथा " हृल्लासमास्यस्त्रवणमविपाकमरोचकम् " इत्यादि ॥

इति हृद्रोगनिदानम् ।

# अथ मूत्रकृच्छ्रनिदानम् ।

**व्यायामतीक्ष्णौषधरूक्षमद्यप्रसंगनित्यद्रुतपृष्ठयानात् ॥
आनूपमांसाध्यशनादजीर्णात्स्युर्मूत्रकृच्छ्राणिनृणामिहाष्टौ १॥**

अर्थ–व्यायाम ( दडकसरत आदि ) तीक्ष्णौषध ( राईआदि ) रूखा पदार्थ और नित्यप्रति मद्यपान करना इनसे और निरंतर घोडेपर चढनेसे और जलसमीप रहनेवाले पक्षी ( हस, सारस, चकवा,आदि)का मास खानेसे भोजनके ऊपर भोजन करनेसे और कच्चे पदार्थ इत्यादिकोके खानेसे मनुष्योके आठ प्रकारका मूत्रकृच्छ्ररोग होता है । पृथक् दोषोसे ३, सन्निपातसे १, चोट लगनेका १. मल रोकनेका १, वीर्य रोकनेका १, और पथरीका १, ये सब मिलकरके आठ ८ भये ॥

संप्राप्ति ।

पृथङ्मलाःस्वैःकुपितानिदानैःसर्वेऽथवाकोपमुपेत्यवस्तौ ॥
मूत्रस्यमार्गंपरिपीडयंतियदातदामूत्रयतीहकृच्छ्रात् ॥ २ ॥

अर्थ--अपने अपने कारणोसे कुपित भये जो वातादिक सब अलग अलग दोष वस्तीमे कुपित होकर मूत्रके मार्गको पीडित करे, तब, मनुष्यके बडे कष्टसे मूत्र उतरै ॥

वातिकमूत्रकृच्छ्रके लक्षण ।

तीव्रार्तिरुग्वंक्षणवस्तिमेढ्रेस्वल्पंमुहुर्मूत्रयतीहवातात् ॥

अर्थ—वातके मूत्रकृच्छ्रसे वक्षण ( जाघ और ऊरू इनकी संधि ) मूत्राशय और इन्द्रिय इनमे पीडा होय और मूत्र बारंबार थोडा थोडा उतरे ॥

पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रके लक्षण ।

पीतंसरक्तंसरुजंसदाहंकृच्छ्रंमुहुर्मूत्रयतीहपित्तात् ॥ ३ ॥

अर्थ—पैत्तिक मूत्रकृच्छ्रसे पीला, कुछ लाल, पीडायुक्त जलनके साथ बारबार कष्टसे मूत्र उतरै ॥

कफमूत्रकृच्छ्रके लक्षण ।

बस्तेःसलिंगस्यगुरुत्वशोथौमूत्रंसपिच्छंकफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—कफके मूत्रकृच्छ्रमे लिंग और मूत्राशय भारी हो, तथा सूजन होय और मूत्र चिकना होय ॥

सन्निपातमूत्रकृच्छ्रके लक्षण ।

सर्वाणिरूपाणितुसन्निपाताद्भवन्तितत्कृच्छ्रतमंहिकृच्छ्रम् ॥ ४ ॥

अर्थ—सन्निपातसे सर्व लक्षण होते है यह मूत्रकृच्छ्र कष्टसाध्य है

शल्यजमूत्रकृच्छ्रके लक्षण ।

मूत्रवाहिषुशल्येनक्षतेष्वभिहतेषुच ॥
मूत्रकृच्छ्रंतदाघाताज्जायतेभृशदारुणम् ॥
वातकृच्छ्रेणतुल्यानितस्यलिंगानिलक्षयेत् ॥ ५ ॥

अर्थ—मूत्र बहानेवाले स्रोत ( मार्ग ) शल्य ( तीर आदि ) से बिधजाय, अथवा पीडित होय तो उस घातसे भयंकर मूत्रकृच्छ्र होय है इसके लक्षण वातमूत्रकृच्छ्रके समान होयँ ॥

मलके मूत्रकृच्छ्रके लक्षण।

शकृतस्तुप्रतीघाताद्वायुर्विगुणतांगतः ॥
आध्मानंवातसंगंचमूत्रसंगंकरोतिच ॥ ६ ॥

अर्थ–मलके ( विष्टाके ) अवरोध होनेसे वायु विगुण ( उलटा ) होकर अफरा वातशूल और मूत्रनाश करे तब मूत्रकृच्छ्र प्रगट होय ॥

अश्मरीजन्यमूत्रकृच्छ्र।

अश्मरीहेतुतत्पूर्वंमूत्रकृच्छ्रमुदाहरेत् ॥ ७ ॥

अर्थ–पथरीके योगसे जो मूत्रकृच्छ्र होय उसको पथरीका मूत्रकृच्छ्र कहते हैं ॥

शुक्रजमूत्रकृच्छ्रके लक्षण।

शुक्रदोषैरुपहतेमूत्रमार्गेविधारिते ॥
सशुक्रंमूत्रयेत्कृच्छ्राद्बस्तिमेहनशूलवान् ॥ ८ ॥

अर्थ--दोषोके योगसे शुक्र ( वीर्य ) दुष्ट होकर मूत्रमार्गमे गमन करे, तब उस मनुष्यके मूत्राशय और लिंग इनमे शूल होय, और मूततेसमय मूत्रके संग वीर्यपतन होय ॥

अश्मरी और शर्करा इनके साम्य और अवान्तरभेद।

अश्मरीशर्करा चैव तुल्यसम्भवलक्षणे ॥ विशेषणं शर्करायाः शृणु कीर्त्तयतो मम ॥ ९ ॥ पच्यमानाऽश्मरी पित्ताच्छोष्यमाणाचवायुना विमुक्तकफसंधानाक्षरंतीशर्करामता ॥ १० ॥ हृत्पीडावेपथुः शूलं कुक्षावग्निश्चदुर्बलः ॥ तयाभवति मूर्च्छा च मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥ ११ ॥

अर्थ–अश्मरी, ( पथरी ) और शर्करा इन दोनोकी संप्राप्ति और लक्षण समान हैं। परन्तु इनमे थोडासा भेद है उसको कहता हू, पित्तसे पकनेवाली, और वायुसे शुष्क होनेवाली ऐसी पथरी कफसे बधी न होय, तब मूत्रके मार्गसे रेतके समान झरने लगे, उसको शर्करा कहते हैं उस शर्करायोगसे हृदयमे पीडा, कम्प, कूखमे शूल, मंदाग्नि, मूर्च्छा और भयंकर मूत्रकृच्छ्र ये रोग होयँ ॥

इति मूत्रकृच्छ्रनिदानम्।

# अथ मूत्राघातनिदानम्।

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्मूत्राघातास्त्रयोदश ॥
प्रायो मूत्रविघाताद्यैर्वातकुण्डलिकादयः॥ १ ॥

अर्थ—मूत्रके वेग रोकनेसे ( आदि शब्दसे मल शुक्रादि वेग रोकना और रूक्ष भोजन आदि जानना ) कुपित भये दोषोंसे वातकुण्डलिकादिक तेरह प्रकारके मूत्राघातरोगको करे॥

वातकुण्डलिकाके लक्षण।

रौक्ष्याद्वेगविघाताद्वावायुर्वस्तौसवेदनः ॥
मूत्रमाविश्य चरति विगुणःकुण्डलीकृतः ॥ २ ॥
मूत्रमल्पाल्पमथवा सरुजं संप्रवर्तते ॥
वातकुण्डलिकांतांतुव्याधिं विद्यात्सुदारुणम् ॥ ३ ॥

अर्थ—रूखे पदार्थ खानेसे, अथवा मऊमूत्रादिवेगोके धारण करनेसे, कुपित भई जो वायु सो वस्ती ( मूत्राशय ) मे प्राप्त हो पीडा करे, और मूत्रसे मिलकर मूत्रके वेगको विगुण ( उलटा ) करके वहा आप कुण्डलके आकार ( गोलाकार ) मूत्राशयमे विचरे तब मनुष्य उस वातसे पीडित हो मूत्रको वारवार थोडाथोडा पीडाके साथ त्याग करे इस दारुण व्याधिको वातकुण्डलिकारोग कहते हैं॥

अष्ठीलाके लक्षण।

आध्मापयन्बस्तिगुदं रुद्धावायुश्चलोन्नताम् ॥
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्ठीलांमूत्रमार्गावरोधिनीम् ॥ ४ ॥

अर्थ—वस्ति ( मूत्राशय ) और गुदा इनमे यह वायु अफरा करे, तथा वस्ति और गुदाकी वायुको रोककर चञ्चल और उन्नत ( ऊची ) ऐसी अष्ठीला ( पत्थरकी पिण्डीके सदृश ) को प्रगट करे, यह मूत्रके मार्गको रोकनेवाली और भयकर पीडा करनेवाली हे॥

वातवस्तिके लक्षण।

वेगंविधारयेद्यस्तुमूत्रस्याकुशलोनरः ॥ निरुणद्धि मुखं तस्य बस्तेर्वस्तिगतोऽनिलः ॥ ५ ॥ मूत्रसंगोभवेत्तेनवस्तिकुक्षिनिपीडितः ॥ वातबस्तिःसविज्ञेयोव्याधिःकृच्छ्रप्रसाधनः॥ ६॥

अर्थ–जो मनुष्य अड ( जिद्द ) से मूत्रबाधाको रोके उसके वस्ति ( मूत्राशय ) का वायु वस्तिके मुखको वन्द करदे तव उसका मूत्र वद होजाय, और वह वायु वस्तिमे और कूखमें पीडा करे उस व्याधिको वातवस्ति ऐसे कहते हैं । यह बडे कष्टसे साध्य होय ॥

## मूत्रातीतके लक्षण ।

**चिरंधारयतोमूत्रंत्वरयानप्रवर्तते ॥**
**मेहमानस्यमन्दंवामूत्रातीतःसउच्यते ॥ ७ ॥**

अर्थ–मूत्रको वहुत देर रोकनेसे पीछे वह जल्दी नही उतरे और मूततेसमय धीरे धीरे उतरे इस रोगको मूत्रातीत कहते हैं ॥

## मूत्रजठरके लक्षण ।

**मूत्रस्यवेगेऽभिहतेतदुदावर्त्तहेतुकः ॥**
**अपानःकुपितोवायुरुदरंपूरयेद्भृशम् ॥ ८ ॥**
**नाभेरधस्तादाध्मानंजनयेत्तीव्रवेदनाम् ॥**
**तन्मूत्रजठरं विद्यादधोवस्तिनिरोधजम् ॥ ९ ॥**

अर्थ–मूत्रके वेग रोकनेसे मूत्रवेगधारणजनित, उदावर्त्तका कारणभूत, ऐसा अपानवायु कुपित होकर पेट वहुत फूलजाय और नाभिके नीचे तीव्र वेदनासंयुक्त अफरा करे, अधोबस्तिका रोध करनेवाला ऐसे इस रोगको मूत्रजठर ऐसे कहते हैं ॥

## मूत्रोत्सगके लक्षण ।

**वस्तौ वाप्यथवानालेमणौवायस्यदेहिनः ॥**
**मूत्रंप्रवृत्तंसज्जेतसरक्तंवाप्रवाहतः ॥ १० ॥**
**स्रवच्छनैरल्पमल्पंसरुजंवाथनीरुजम् ॥**
**विगुणानिलजोव्याधिःसमूत्रोत्संगसंज्ञितः ॥ ११ ॥**

अर्थ–प्रवृत्त भया मूत्र, वस्तिमे अथवा शिश्नमें ( लिंगमे ) अथवा शिश्नके अग्रभागमे अटक जाय, और वलसे मूत्रको करेभी तो वादीसे वस्तिको फाडकर जो मूत्र निकले वह मद मंद थोड़ा थोड़ा पीडाके साथ अथवा पीडारहित रुधिरसहित निकले ऐसे विगुण वायुसे उत्पन्न हुई इस व्याधिको मूत्रोत्संग कहते हैं ॥

मूत्रक्षयके लक्षण।

रूक्षस्य क्लांतदेहस्यवस्तिस्थौ पित्तमारुतौ ॥
मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥ १२ ॥

अर्थ—रूखाभया अथवा श्रांत ( थकगया ) देह जिसका ऐसे पुरुषके वस्ति ( मूत्राशयमे ) स्थित जो पित्त और वायु सो मूत्रका क्षय करे और पीडा तथा दाह होता है उसको मूत्रक्षय ऐसे कहते हैं

मूत्रग्रन्थिके लक्षण।

अन्तर्वस्तिमुखेवृत्तः स्थिरोऽल्पःसहसाभवेत् ॥
अश्मरीतुल्यरुग्ग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते ॥ १३ ॥

अर्थ—वस्तिके मुखमें गोल स्थिर छोटीसी गांठ अकस्मात् होय उसमे पथरीके समान पीडा होय इस रोगको मूत्रग्रन्थि ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रशुक्रके लक्षण।

मूत्रितस्यस्त्रियंयातोवायुनाशुक्रमुद्धतम् ॥ स्थानाच्च्युतंमूत्र-यतःप्राक्पश्चाद्वाप्रवर्तते ॥ १४ ॥ भस्मोदकप्रतीकाशंमूत्रशु-क्रंतदुच्यते ॥

अर्थ—मूत्रबाधाको रोकके जो मनुष्य स्त्रीसङ्ग करे उसके वायु शुक्रको उडाय स्थानसे भ्रष्ट करे, तब मूतनेके पहिले अथवा मूतनेके पीछे शुक्र गिरे, और उसका वर्ण राखमिला पानीके समान होय, उसको मूत्रशुक्र ऐसे कहते हैं ॥

उष्णवातका लक्षण।

व्यायामाध्वातपैःपित्तंबस्तिंप्राप्यानिलायुतम् ॥ १५ ॥ बस्तिं मेढ्रंगुदंचैव प्रदहेत्स्रावयेदधः॥मूत्रंहारिद्रमथवा सरक्तंरक्तमेव च ॥ १६ ॥ कृच्छ्रात्पुनःपुनर्जंतोरुष्णवातंवदंतितम् ॥

अर्थ--व्यायाम ( दडकसरत ) अति मार्गका चलना और धूपमे डोलना इन कारणोसे कुपित भया जो पित्त सो वस्तिमे प्राप्त हो वायुसे मिल वस्ति लिंग और गुदा इनमे दाह करे और हलदीके समान अथवा कुछ रक्तसे युक्त वा लाल ऐसा मूत्रका स्राव बारबार कष्टसे होय, उसको उष्णवात रोग कहते हैं। यहीरोग सुजाकके नामसे भाषामे बोलाजाताहै ॥

मूत्रसादके लक्षण ।

पित्तं कफो द्वावपिवा संहन्येतेऽनिलेनचेत् ॥१७॥ कृच्छ्रान्मूत्रं तदा पीतंरक्तंश्वेतंघनंसृजेत्॥सदाहं रोचनाशंखचूर्णवर्णं भवेत्तु तत् ॥ १८ ॥ शुष्कंसमस्तवर्णं वा मूत्रसादंवदंतितम् ॥

अर्थ–पित्त अथवा कफ वा दोनो वायुकरके विगडे हुए होयँ तव मनुष्य पीला लाल सफेद, गाढा ऐसा कष्टसे मूते और मूतनेके समय दाह होय और जव वह मूत्र पृथ्वीमे सूखजाय तव गोरोचन, शखका चूर्ण ऐसा वर्ण होय, अथवा सर्व वर्णका होय इस रोगको मूत्रसाद कहे है ॥

विड्विघातके लक्षण ।

रूक्षदुर्वलयोर्वातेनोदावर्त्तंशकृद्यदा ॥ १९ ॥ मूत्रस्रोतोऽनुपद्येतविड्संसृष्टं तदानरः॥ विड्गंधं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं विनिर्दिशेत् ॥ २० ॥

अर्थ–रूक्ष और दुर्वल पुरुपके शकृत् ( मल ) जव वायुकरके प्रेरित उदावर्तको प्राप्त हो तव वह मल मूत्रके मार्गमे आवे उस समय मनुष्य मूतने लगे तौ बडे कष्टसे मूत्र उतरे, और उसके मूत्रमे विष्टाकीसी दुर्गंध आवे, उसको विडिवात कहते है ॥

वस्तिकुंडलरोगके लक्षण ।

द्रुताध्वलंघनायासैरभिघातात्प्रपीडनात् ॥
स्वस्थानाद्वस्तिरुद्वृत्तःस्थूलस्तिष्ठतिगर्भवत् ॥ २१ ॥
शूलस्पन्दनदाहार्तो विन्दुंविन्दुं स्रवत्यपि ॥
पीडितस्तु सृजेद्धारां संरंभोद्वेष्टनार्तिमान् ॥ २२ ॥
वस्तिकुंडलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविषोपमम् ॥
पवनप्रवलं प्रायो दुर्निवारमवुद्धिभिः ॥ २३ ॥

अर्थ--जल्दी चलनेसे, लंघन करनेसे, परिश्रमसे, लकडी आदिकी चोट लगनेसे पीडासे वस्ति अपने स्थानको छोड ऊपर जाय मोटी होकर गर्भके समान कठिन रहे उससे शूल, कम्प और दाह ये होयँ । मूतकी एक एक बून्द गिरे, यदि वास्ति जोरसे पीडित होय तौ बडी धार पडे, वेगसे इठनेके समान पीडा होय इस रोगको वस्तिकुण्डल ऐसे कहते है यह शस्त्रके समान जल्दी प्राणनाशक, और विपके समान कालातरमे प्राणका नाश कर्त्ता भयकर हे । इसमे प्रायः वायु प्रवल

है, मन्दबुद्धिवाले वैद्योंसे इसका निवारण ( चिकित्सा ) करना कठिन है इसको अन्य दोपोके सम्बन्ध होनेसे जो लक्षण होते हैं उनको कहताहूं ॥

तस्मिन्पित्तान्विते दाहः शूलं मूत्रविवर्णता ॥
श्लेष्मणा गौरवं शोथः स्निग्धं मूत्रं घनं सितम् ॥ २४ ॥

अर्थ–वही बस्तिकुंडल पित्तयुक्त होनेसे दाह और मूत्रका बुरा रंग होय, और कफयुक्त होनेसे जडत्व, सूजन, मूत्र चिकना, गाढा सफेद ऐसा होय ॥

साध्यासाध्यलक्षण ।

श्लेष्मरुद्धबिलो बस्तिः पित्तोदीर्णो न सिध्यति ॥
अविभ्रांतबिलः साध्यो न च यः कुण्डलीकृतः ॥ २५ ॥

अर्थ–कफकरे जिसका मुख बन्द होय ऐसा और पित्तकरके व्याप्त भई ऐसी बस्ति साध्य नहीं होय, और जिस बस्तिका मुख खुला होय तथा कुण्डलीकृत होय सो साध्य नहीं है ॥

कुण्डलीभूतके लक्षण ।

स्याद्बस्तौ कुण्डलीभूते तृण्मोहः श्वास एव च ॥ २६ ॥

अर्थ–बस्ति कुण्डलीभूत होनेसे प्यास मूर्छा और श्वास ये लक्षण होयँ ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीमाथुरभाषाटीकायां मूत्राघातनिदानं समाप्तम् ।

---

# अथ अश्मरीरोगनिदानम् ।

वातपित्तकफैस्तिस्रश्चतुर्थी शुक्रजाऽपरा ॥
प्रायः श्लेष्माश्रयाः सर्वा अश्मर्यः स्युर्यमोपमाः ॥ १ ॥

अर्थ–वात, पित्त, कफ इनसे ३, चौथी शुक्रसे, अश्मरीरोग ( पथरी ) होय है यह पथरी विशेषकरके कफाश्रित है, " यमोपमा " कहिये अच्छी चिकित्सा न होय तौ ये अवश्य प्राणनाशक है ॥

अश्मरीकीसम्प्राप्ति ।

विशोषयेद्बस्तिगतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा ॥
यदा यदाश्मर्युपजायते चक्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः ॥ २ ॥

अर्थ–जिन मनुष्योंको वायु वास्तिमे प्राप्त होय, शुक्रयुक्त अथवा पित्तयुक्त मूत्र अथवा कफको सुखावे तब उस स्थानमे पथरी प्रगट होती है। जैसे गऊके पित्तमे गोरोचन जमे है उसी प्रकार वास्तिमे वीर्यसे पथरी होय है॥

पूर्वरूप।

नैकदोषाश्रयाःसर्वाअश्मर्याःपूर्वलक्षणम् ॥
वस्त्याध्मानंतदासन्नदेशेषुपरितोऽतिरुक् ॥ ३ ॥ ॥
मूत्रेवस्तसगंधत्वंमूत्रकृच्छ्रंज्वरोऽरुचिः ॥

अर्थ–सब अश्मरी ( पथरी ) एक दोषके आश्रय नही हैं अर्थात् अनेक दोषाश्रित हैं वास्तिका फूलना, वस्तीके आसपास अत्यत पीडा होनी, मूत्रमे बकराके पेशावकीसी दुर्गंध आवे, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, अरुचि, ये पथरीके पूर्वरूप जानने ॥

पथरीके सामान्य लक्षण।

सामान्यलिंगंरुङ्नाभिसेवनीबस्तिमूर्धसु ॥ ४ ॥
विशीर्णधारंमूत्रंस्यात्तयामार्गेनिरोधिते ॥
तद्व्यपायात्सुखंमेहेदच्छगोमेदकोपमम् ॥ ५ ॥
तत्संक्षोभात्क्षतेसास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत् ॥

अर्थ–नाभिसेवनी ( अंडकोशके समीपका सीमनका भाग ) और वास्तिका अग्रभाग इनमे शूल होय, पथरीके योगसे मूत्रमार्ग रुकनेसे मूत्रकी धार फटी निकले पथरी मूत्रमार्गके पाससे हटजाय तो मूत्र अच्छी रीतिसे उतरे, और स्वच्छ गोमेदमणिके समान होय, अश्मरी ( पथरी ) के योगसे वस्तिमे घाव होनेसे रुधिर मिला मूत्र उतरे, और मूतते समय जोर करनेस वडा क्लेश और पीडा होय ये सामान्य लक्षण जानने ॥

वातकी पथरीके लक्षण।

तत्रवाताद्भृशंचार्तोदन्तान्खादतिवेपते ॥ ६ ॥
मृद्नातिमेहनंनाभिंपीडयत्यनिशंक्वणन् ॥
सानिलंमुंचतिशकृन्मुहुर्मेहतिबिन्दुशः ॥ ७ ॥
श्यावारूक्षाऽश्मरीचास्यस्याच्चिताकंटकैरिव ॥

अर्थ–वायुकी पथरीसे रोगी अत्यत पीडा करके व्याप्त होय, दातोको चबावे, कापे, लिंगको हाथसे रगडे, नाभिको रगडे और रातदिन दुःखसे रोवे, और मूत्र आनेके समय पीडा होनेके कारण

अधोवायुका परित्याग करे, मूत्र वारंवार टपक टपक गिरे उसके पथरीका रग नीला और रूखा होय उसके ऊपर काटे होयँ ॥

पित्तकी पथरीके लक्षण।

पित्तेनदह्यतेवस्तिःपच्यमानइवोष्मवान् ॥ ८ ॥
भल्लातकास्थिसंस्थानारक्तापीतासिताश्मरी ॥

अर्थ–पित्तकी पथरीसे रोगीके वस्तिमे दाह होय, और खारसे जैसा दाह होय ऐसी वेदना होय, वस्तिके ऊपर हाथ धरनेसे गरम मालूम होय, और भिलाएकी मीगीके समान होय, लाल, पीली, काली होय ॥

कफकी पथरीके लक्षण।

वस्तिर्निस्तुद्यतइवश्लेष्मणाशीतलोगुरुः ॥ ९ ॥
अश्मरीमहतीश्लक्ष्णामधुवर्णाथवासिता ॥

अर्थ–कफकी पथरीसे वस्तिमें सुई चुभने कीसी पीडा होय, शीतलपना होय, और पथरी बडी मुर्गीके अंडेसमान, चिकनी और मद्य ( दारू ) के रंगकीसी अर्थात् कुछ पीली सफेद मिली हुईसी होय, यह कफकी पथरी वहुधा वालकोके होतीहै सो कहे हैं– ॥

एताभवंतिवालानामेषामेवचभूयसा ॥ १० ॥
आश्रयोपचयाल्पत्वाद्ग्रहणाहरणेसुखा ॥

अर्थ–पूर्वोक्त त्रिदोपजा अश्मरी ( पथरी ) विशेपकरके वालकोके होतीहै, भूयसा इसपदके कहनेसे त्रिदोपज अश्मरी वालकोके अतिरिक्त वडोके भी होतीहै कारण उनका भारी मीठा शीतल चिकना आहार हे, और उनकी वस्तिछोटी तथा पुष्टता थोडी होय है इसीसे वैद्योको उसका चीरना फाड़ना काटना निकालना कठिन नही होय सो सुश्रुतने भी कहा है ॥

शुक्राश्मरीके लक्षण।

शुक्राश्मरीतुमहतांजायतेशुक्रधारणात् ॥ ११ ॥
स्थानाच्च्युतममुक्तंहिमुष्कयोरन्तरेऽनिलः ॥
शोषयत्युपसंहृत्यशुक्रंतच्छुष्कमश्मरी ॥ १२ ॥
वस्तिरुक्कृच्छ्रमूत्रत्वंमुष्कश्वयथुकारिणी ॥
तस्यामुत्पन्नमात्रायांशुक्रमेतिविलीयते ॥ १३ ॥
पीडितेत्ववकाशेस्मिन्नश्मर्येवचशर्करा ॥

अर्थ–शुक्राश्मरी यह शुक्र ( वीर्य ) के रोकनेसे वडे मनुष्योको ही यह पथरी होती है । मैथुन करनेके समय अपने स्थानसे चलायमान होगया वह वीर्य उस समय मैथुन न करे तव शुक्र (वीर्य) बाहर नही निकले, भीतर ही रहे तब वायु उस शुक्रको उठाकर सुखा देता है । उसीको शुक्राजाश्मरी कहते है । इस करिके अडकोपोमे सूजन वलिमे पीडा और मूत्रकृच्छता होती है । शुक्राश्मरीकी आदिमे लिग और अडकोप पेडू इनमे पीडा होती है वीर्यके नाश होनेके कारण पथरीकी नाई शर्करा उत्पन्न होती है ॥

पथरीशर्कराके उपद्रव ।

अणुशोवायुनाभिन्नासातस्मिन्ननुलोमगे ॥ १४ ॥
निरेतिसहमूत्रेणप्रतिलोमेविबध्यते ॥
मूत्रस्रोतःप्रवृत्तासासक्ताकुर्यादुपद्रवान् ॥ १५ ॥
दौर्बल्यंसदनंकार्श्यंकुक्षिशूलमथारुचिम् ॥
पांडुत्वमुष्णवातंचतृष्णांहृत्पीडनंवमिम् ॥ १६ ॥

अर्थ--वायु वस्तिमे अनुलोमगतिसे प्रवेश होय तौ वह शर्करा वायुकरके छोटे छोटे इकट्ठी होकर मूत्रके साथ बाहर निकले, और यदि वायु प्रतिलोम होय तौ मूत्रमार्गको रोक दे, यदि मूत्रमार्गमे प्राप्त होय तौ मूत्रके वहनेवाले छिद्रोको रोक दे, फिर इतने उपद्रवोको प्रगट करे । दुर्बलता, ग्लानि, कृशता, कूखमे शूल, अरुचि, पाण्डुरोग, उष्णवार्त, प्यास, हृदयमे पीडा, वमन ये सब उपद्रव होयँ ॥

असाध्यलक्षण ।

प्रशूननाभिवृषणंबद्धमूत्रंरुजान्वितम् ॥
अश्मरीक्षपयत्याशुशर्करासिकतान्विता ॥ १७ ॥

अर्थ–जिसकी नाभि और वृपण सूजजाय, मूत्र उतरे नही, शूलसे पीडित होय, ऐसे पुरुषके शर्करा और सिकतायुक्त पथरी प्राणनाश करै ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवार्थबोधिनीमाथुरभाषाटीकायामश्मरीनिदान समाप्तम् ।

# माधवनिदानका उत्तरभाग ।



## प्रमेहनिदान ।

**आस्यासुखंस्वप्नसुखंदधीनिग्राम्यौदकानूपरसाःपयांसि ॥ नवान्नपानंगुडवैकृतंचप्रमेहहेतुःकफकृच्चसर्वम् ॥ १ ॥**

अर्थ–बैठनेके सुखसे, निद्राके सुखसे अथवा स्वप्नसुख कहिये स्वप्नमे स्त्रीप्रसग आदि सुखसे, दही, ग्रामके सचारी जीव भेड बकरी आदि, जलके सचारी जीव मच्छी कछुआ आदि, अनूप ( जलसमीप ) के रहनेवाले जीव हस चकवा आदि प्राणियोके मासरस, दूध, नया अन्न और नया जल तथा शर्कराआदि गुडके पदार्थ अथवा गुडके विकार ये और जितने कफकारक पदार्थ है सो सब प्रमेह होनेके कारण है ॥

## कफपित्तवातप्रमेहोंकी क्रमसे संप्राप्ति ।

**मेदश्चमांसंचशरीरजंचक्लेदंकफोवस्तिगतःप्रदूष्य॥करोतिमेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तानेवपित्तंपरिदूष्यचापि ॥ २ ॥ क्षीणेषुदोषेष्ववकृष्यधातून्संदूष्यमेहान्कुरुतेऽनिलश्च ॥ साध्याः कफोत्थादशपित्तजाःषड्याप्यानसाध्याःपवनाच्चतुष्काः ॥ ३ ॥ समक्रियत्वाद्विपसक्रियत्वान्महात्ययत्वाच्चयथाक्रमंते ॥**

अर्थ–वस्ति ( मूत्रस्थान ) गत कफ मेदमास और शरीरके क्लेदको बिगाड कर प्रमेहको उत्पन्न करेहै. इसी प्रकार गरम पदार्थसे पित्त कुपित होकर पूर्वोक्त मेद मासको बिगाडकर प्रमेहको उत्पन्न करेहै, और लवन रूक्षादि पदार्थोंके सेवनेसे कुपित हुआ वायु दोप ( पित्तकफ ) के क्षीण होनेसे धातु (वसा मज्जा ओज लसीका) को ईचकर वस्तीके मुखपर लायकर प्रमेहको प्रगट करेहै, कफसे प्रगट दशप्रमेह साध्य हे कारण इसका यह है कि कफदोप ओर मेदःप्रभृति दूष्य इनपर कटुतिक्तादि क्रिया समान हैं अर्थात् कटुतिक्तादिकोसेविकृत कफ तथा मेदोमासादि शात होते हैं इस रोगमे रोगका ही प्रभाव ऐसा है कि इसमे तुल्यदूष्यको साध्यकहा है और प्रमेहके बिना और रोगोको अतुल्य ( असमान दूष्यत्व साध्य ) का हेतु होय हे पित्तकी छःप्रमेह विपम चिकित्सा करनेसे याप्य होयहे अर्थात् पित्त हरण करनेवाले जो शीत मधुर आदि द्रव्य वह मेदको बढानेवाले हे और मेद हरणकर्त्ता उष्णकटुकादि द्रव्य वह पित्तकर्त्ता हैं ऐसे क्रिया विपम हे वादीसे प्रगट चार प्रमेह

---

१ ज्वरे तुल्यर्तुदोषत्वं प्रमेहे तुल्यदूष्यता । रक्तगुल्मे पुराणत्वं सुखसाध्यस्य लक्षणम् ॥ १ ॥

मज्जादिगम्भीर धातुके आकर्षण करनेसे अत्यन्त पीडाकर्त्ता है और इनकी ( महात्ययं ) बडी कठिन क्रिया है कोई कोई चकारसे विषमक्रिया ही कहते है इसीसे ये चार असाध्य है ॥

## प्रमेहका दोषदूष्यसंग्रह ।

**कफःसपित्तंपवनश्चदोषामेदोस्रशुक्रांबुवसालसीकाः ॥**
**मज्जारसौजःपिशितंचदूष्याःप्रमेहिणांविंशतिरेवमेहाः ॥ ४ ॥**

अर्थ–कफ पित्त और वादी ये दोष और मेद रुधिर शुक्र जल मांस स्नेह ( चर्वी ) लसिका[१] ( मासका जल ) मज्जारस ओज और मास ये दूष्य जानने इन दोष और दूष्य दोनोंसे वीश प्रकारके प्रमेह होतेहैं ॥

## पूर्वरूप ।

**दन्तादीनांमलाढ्यत्वंप्राग्रूपंपाणिपादयोः ॥ ५ ॥**
**दाहश्चिक्कणतादेहेतृट्श्वासश्चोपजायते ॥**

अर्थ–दातोमे, आदिशब्दसे जिह्वा तालु आदिका ग्रहण है इनमे मैल बहुत रहै हाथ पैरमे दाह, अंगका चिकनापना, प्यास, श्वास, चकारसे केशो ( वालो ) का आपसमे लिपट जाना और नखोका बढना जानना ये प्रमेहके पूर्वरूप होते हैं ॥

## सामान्य लक्षण ।

**सामान्यंलक्षणंतेषांप्रभूताविलमूत्रता ॥ ६ ॥**

अर्थ–बहुत और गाढा मूत्र उतरे ये प्रमेहके सामान्य लक्षण है ॥

## प्रमेहके कारण ।

**दोषदूष्याविशेषेपितत्संयोगविशेषतः ॥**
**मूत्रवर्णादिभेदेनभेदोमेहेषुकल्प्यते ॥ ७ ॥**

अर्थ–दोष और दूष्य इनके भेद न होनेसे परंतु दोष और दूष्य इनके संयोगभेदसे मूत्र वर्णादि भेद करके प्रमेहमे भेद होते हैं दश छः चार इत्यादिक दोष ( वात पित्त कफ ) दूष्य ( मांस मेद मज्जादि ) जैसे सफेद पीला काला तामेके रंगका और श्याम इन पांच रंगोके संयोग करनेसे पिंगल पाटलादि अनेक वर्णभेद होतेहै इसीप्रकार दोषादिकोके संयोगसे नानाप्रकारके प्रमेह होतेहै संयोग भेदकी कैसे प्रतीति हो ऐसे कोई पूछे तो उसके वास्ते कहते हैं मूत्रके वर्णादिभेदसे समान कारणोके भेद कल्पना करने चाहिये जैसे घट ( घडा ) बनानेके समय मृत्तिकादि कारण सामग्रीमे भेद नहीं है परन्तु कुम्भकारादिका ( कुम्हारआदि ) प्रयत्न

१ यत्तुमांसत्वगन्तरे उदकं तल्लसीका शब्दं लभते ।

भेद करके वडा सरवा मटकना आदि अनेक जातिभेद होजाते है और यहातो तत्तत् ( उनउन ) आहारादिको का जो अदृष्ट फल है वेही सयोगभेदके हेतुहैं ॥

कफकी १० प्रमेहके लक्षण ।

अच्छंवहुसितंशीतंनिर्गंधमुदकोपमम् ॥ मेहत्युदकमेहेनकिंचिदाविलपिच्छिलम् ॥ ८ ॥ इक्षोरसमिवात्यर्थंमधुरंचेक्षुमेहतः ॥ सांद्रीभवेत्पर्युषितंसान्द्रमेहेनमेहति ॥ ९ ॥ सुरामेहीसुरातुल्यमुपर्यच्छमधोघनम् ॥ संहृष्टरोमापिष्टेनपिष्टवद्बहुलंसितम् ॥ १० ॥शुक्राभंशुक्रमिश्रंवाशुक्रमेही प्रमेहति ॥ मूत्राणून्सिकतामेहीसिकतारूपिणोमलान् ॥ ११ ॥ शीतमेहीसुबहुशोमधुरंभृशशीतलम् ॥ शनैःशनैःशनैर्मेहीमन्दंमन्दं प्रमेहति ॥ १२ ॥ लालातंतुयुतंमूत्रंलालामेहेनपिच्छिलम् ॥

अर्थ—१ उदकप्रमेहकरके—स्वच्छ वहुत सफेद शीतल गधरहित पानीके समान कुछ गाढा, और चिकना मूते हैं ॥

२ इक्षुप्रमेहसे—ईखके रससमान अत्यत मीठा ऐसा मूत्र होय ।

३ सान्द्रप्रमेहसे-रात्रिमे पात्रमें धरनेसे जेसा होवे ऐसा मूत्र होय ।

४ सुराप्रमेहसे—दारूके समान ऊपर निर्मल और नींचे गाढा ऐसा मूते ।

५ पिष्टप्रमेहसे—पिसे चावलोंके पानीसमान सफेद और वहुत मूते तथा मूतते समय रोमाच होय ।

६ शुक्रप्रमेहसे—शुक्र ( वीर्य ) के समान अथवा शुक्रमिला मूत्र होय ।

७ सिकतामेहसे—मूत्रके कण और वालूरेतके समान मलके रवा गिरे ।

८ शीतमेहसे—मधुर तथा अत्यत शीतल ऐसा वारवार वहुत मूते ।

९ शनैर्मेहसे—धीरे धीरे और मद मद मूते ।

१० लालाप्रमेहसे—लारके समान तारयुक्त और चिकना मूत्र होय है ।

पित्तकी ६ प्रमेहके लक्षण ।

गंधवर्णरसस्पर्शैःक्षारेणक्षारतोयवत् ॥ १३ ॥
नीलमेहेननीलाभंकालमेहीमषीनिभम् ॥
हारिद्रमेहीकटुकंहारिद्रासन्निभंदहत् ॥ १४ ॥

विस्रंमाजिष्ठमेहेनमंजिष्ठासलिलोपमम् ॥
विस्रमुष्णंसलवणंरक्ताभंरक्तमेहतः ॥ १५ ॥

अर्थ–११ क्षारप्रमेहसे–खारीजलके समान गंध वर्ण रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है ।
१२ नीलप्रमेहसे–नीले रंगका अर्थात् पपैया पक्षीके पखके सदृश मूते ।
१३ कालप्रमेहसे–स्याईके समान काला मूते ।
१४ हारिद्रप्रमेहसे–तीक्ष्ण हलदीके समान और दाहयुक्त मूते ।
१५ माजिष्ठप्रमेहसे–आम दुर्गंध और मजीठके समान मूते ।
१६ रक्तप्रमेहसे–दुर्गंधयुक्त गरम खारी और रुधिरके समान लाल मूत्र करे ॥

वातकी ४ प्रमेहके लक्षण ।

वसामेहीवसामिश्रंवसाभंमूत्रयेन्मुहुः ॥ मज्जाभंमज्जामिश्रंवा मज्जमेहीमुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥ कषायमधुरंरूक्षंक्षौद्रमेहंवदेद्बुधः ॥ हस्तीमत्तइवाजस्रंमूत्रंवेगविवर्जितम् ॥ सालसीकंविबद्धंचहस्तिमेहीप्रमेहति ॥ १७ ॥

अर्थ–१७ वसाप्रमेही–वसा ( चर्बी ) युक्त अथवा वसाके समान मूते ।
१८ मज्जाप्रमेही–मज्जाके समान अथवा मज्जामिला वारवार मूते ।
१९ क्षौद्रप्रमेही–कसैला मीठा और चिकना ऐसा मूते ।
२० हस्तिप्रमेही–मस्त हाथीके समान निरंतर वेगरहित जिसमे तार निकले और ठहर ठहरके मूते ।

कफप्रमेहके उपद्रव ।

अविपाकोऽरुचिश्छर्दिर्ज्वरःकाशः सपीनसः ॥
उपद्रवाः प्रजायन्तेमेहानांकफजन्मनाम् ॥ १८ ॥

अर्थ–अन्नका परिपाक न होय अरुचि वमन ज्वर खासी पीनस कफप्रमेहके उपद्रव है ।

पित्तप्रमेहके उपद्रव ।

वस्तिमेहनयोःशूलंमुष्कावदरणंज्वरः ॥
दाहस्तृष्णाम्लिकामूर्च्छाविड्भेदःपित्तजन्मनाम् ॥ १९ ॥

अर्थ–वस्ति और लिंगमे पीडा होय, अंडकोशोका पककर फटना, ज्वर, प्यास खट्टीडकार, मूर्च्छा और पतला दस्त होय ये पित्तमेहके उपद्रव हैं ॥

वातप्रमेहके उपद्रव ।

**वातजानामुदावर्तकंठहृद्ग्रहलोलताः ॥**
**शूलमुन्निद्रताशोषःकासःश्वासश्चजायते ॥ २० ॥**

अर्थ–उदावर्त्त–गला हृदय इनका रुकना, लोलता ( सर्वरसभक्षणेच्छा ) शूल, निद्रानाश, शोष, सूखी खासी, श्वास ये वातप्रमेहके उपद्रव हैं ॥

प्रमेहके असाध्य लक्षण ।

**यथोक्तोपद्रवाविष्टमतिप्रस्नुतमेवच ॥**
**पिडिकापीडितंगाढंप्रमेहोहन्तिमानवम् ॥ २१ ॥**

अर्थ–ऊपर कहिआये जो अग्निपाकादि उपद्रव वे सब होयँ जिसके मूत्रका स्राव बहुत हुआ होय शराविकाआदि जो पिडिका आगे कहेंगे वे होयँ रोगका अंगमें प्रवेश हो ऐसे लक्षण होनेसे वह प्रमेह मनुष्यको मारडाले ॥

दूसरे असाध्य लक्षण ।

**जातःप्रमेहीमधुमेहिनावानसाध्यरोगःसहिबीजदोषात् ॥**

अर्थ–मधुमेही पुरुषसे उत्पन्न भया जो प्रमेहवान् पुरुषका रोग बीजदोषके कारणसे साध्य नहीं होय इस जगह मधुमेहशब्दसे साधारण प्रमेह जानना इस जगहभी मधुकोशटीकावालेने मधुमेहशब्दपर बहुतसा शास्त्रार्थ लिखा है ॥

कुलपरंपरागत अन्य विकारोंका असाध्यत्व कहते हैं ।

**येचापिकेचित्कुलजाविकाराभंवन्तितांस्तान्प्रवदन्त्यसाध्यान् ॥ २२ ॥**

अर्थ–जो कोई कुष्ठादिक कुलपरंपरागत विकार हैं वे सब असाध्य हैं अब कहते हैं सर्व प्रमेहोकी उपेक्षा करनेसे मधुमेहत्वको प्राप्त होतेहैं इसको कहते हैं ।

सर्व प्रमेहकी उपेक्षा करनेसे मधुमेह होताहै ।

**सर्वएवप्रमेहास्तुकालेनाप्रतिकारिणः ॥**
**मधुमेहत्वमायांतितदाऽसाध्याभवंतिहि ॥ २३ ॥**

अर्थ--सब प्रमेह औषधके विना कालकरके मधुमेहत्वको प्राप्त होतेहैं तब वे असाध्य होजातेहैं धातुक्षय ओर आवरण इनसे कुपित भयी वायु मधुमेहका संभव होती है ॥

**मधुमेहेमधुसमंजायतेसकिलद्विधा ॥**
**क्रुद्धेधातुक्षयाद्वायौदोषावृतपथेऽथवा ॥ २४ ॥**

अर्थ—मधुमेहमे मूत्र, मधु ( शहद ) के समान होय है सो दो प्रकारका है एक तो धातुक्षय होनेसे वायु कुपित होकर होय और दूसरा दोषोकरके पवनका मार्ग आवृत ( ढकने ) करके होय है॥

आवरणके लक्षण ।

**आवृतोदोषलिंगानिसोनिमित्तंप्रदर्शयन् ॥**
**क्षीणःक्षणात्पुनःपूर्णोभजतेकृच्छ्रसाध्यताम् ॥ २५ ॥**

अर्थ—आवृत वायुसे प्रगट मधुमेह जिस पित्तादिदोषकरके आच्छादित होय उसके लक्षण अकस्मात् दीखे क्षणभरमे क्षीण होय क्षणमे पूर्ण होय वह कष्टसाध्य जानना ॥

मधुमेहशब्दकी प्रवृत्ति विषय निमित्त ।

**मधुरंयच्चमेहेषुप्रायोमध्विवमेहति ॥**
**सर्वेऽपिमधुमेहाख्यांमाधुर्याच्चतनोरतः ॥ २६ ॥**

अर्थ—प्रमेहोमे रोगी प्रायशः मधु ( शहद ) के समान मीठा मूते और सब शरीरको मीठा करदे इसीसे सर्व प्रमेहको मधुप्रमेहसंज्ञा दीनी है और अमृतसागरमे जो छःप्रमेह आत्रेयके मतसे लिखे हैं वे प्रमाणरहित है और प्रसिद्धिमे भी प्रमेह वीस प्रकारके है इसीसे हमने छोडदीने हैं॥

इति दत्तरामकृतमाधवार्थबोधिनीमाथुरभाषाटीकायां प्रमेहनिदान समाप्तम् ।

---

# प्रमेहपिडकानिदानम् ।

**शराविकाकच्छपिकाजालनीविनताऽलजी ॥**
**मसूरिकासर्षपिकापुत्रिणीसविदारिका ॥ १ ॥**
**विद्रधिश्चेतिपिडिकाःप्रमेहोपेक्षयादश ॥**
**संधिमर्मसुजायन्तेमांसलेषुचधामसु ॥ २ ॥**

अर्थ—प्रमेहकी उपेक्षा करनेसे शराविकादि दश पिडिका संधि मर्म और मासल ठिकानोमे होतीहै ॥

सबके लक्षण ।

**अंतोन्नताचतद्रूपानिम्नमध्याशराविका ॥ सदाहाकूर्मसंस्थाना ज्ञेयाकच्छपिकाबुधैः ॥ ३ ॥ जालनीतीव्रदाहातुमांसजालसमावृता ॥ अवगाढरुजोत्क्लेदापृष्ठेवाप्युदरेऽपिवा ॥ ४ ॥ सह-**

तीपिडिकानीलासाबुधैर्विनतास्मृता ॥ रक्तासितास्फोटवती दारुणात्वलजी भवेत् ॥ ५ ॥ मसूरदलसंस्थानाविज्ञेयामसूरिका॥ गौरसर्षपसंस्थाना तत्प्रमाणाचसर्षपी ॥ ६ ॥ महत्यल्पचिताज्ञेयापिडिकाचापिपुत्रिणी॥ विदारीकंदवद्वृत्ताकठिनाचविदारिका ॥ ७ ॥ विद्रधेर्लक्षणैर्युक्ताज्ञेयाविद्रधिकातुसा॥

अर्थ--१शराविका—यही पिटिका ऊपरके भागमे ऊची और मध्यमे वैठीसी होय जैसा मिट्टीका शराव होय है ऐसी होयहै।

२ कच्छपिका—ये कछुवाके पीठके समान कुछ दाहयुक्त ऐसी होय है ।

३ जालनी—ये तीव्र दाहकरके सयुत और मांसके जालसे व्याप्त होय है ।

४ विनता—ये फुन्सी पीठमे अथवा पेटमे होय है इस्की पीडा बहुत होय ठढी होय तथा वडी और नीले रगकी होय है।

५ अलजी—लाल काली वारीक फोडोकरके व्याप्त भयकर होय है ।

६ मसूरिका—मसूरकी दालके समान वडी होय है।

७ सर्षपिका—सपेद सरसोके समान वडी होय है ।

८ पुत्रिणी—ये वीचमे एक वडी फुन्सी होय उसके चारो ओर छोटी २ फुन्सी और होयँ उसको पुत्रिणी कहते है ।

९ विदारिका—यह विदारीकंदके समान गोल और करडी होय है ।

१० विद्रधिका—यह विद्रधिके लक्षणकरके युक्त होय है भोज और सुश्रुतके मतसे नौ पिडिका है और चरकके मतसे सातही है ॥

## पिटिका कैसे उत्पन्न होती हैं।

येयन्मयाःस्मृतामेहास्तेषामेतास्तुतन्मयाः ॥ ८ ॥
विनाप्रमेहमप्येताजायन्तेदुष्टमेदसः ॥
तावच्चैतानलक्ष्यन्तेयावद्वास्तुपरिग्रहः ॥ ९ ॥

अर्थ—जो प्रमेह जिस दोषकरके उल्वण होय है तिसकरके तिसी दोषके उल्वणकरके पिटिका होतीहै ये पिटिका प्रमेहके विना दुष्टमेदके होनेसेभी प्रगट होती है जवतक इनकी गाठ नही वधे तवतक नही दीखे "ये यन्मयाः स्मृता मेहाः" इस पदके ऊपर मधुकोशवालेने शास्त्रार्थ लिखा है ग्रन्थ वढनेके भयसे हमने नही लिखा ॥

असाध्यपिटिकालक्षण ।

**गुदेहृदिशिरस्यंसेपृष्ठेमर्मसुचोत्थिताः ॥**
**सोपद्रवादुर्बलाग्नेःपिडिकाःपरिवर्जयेत् ॥ १० ॥**

अर्थ–गुदामे हृदयमे शिरमे कधामें पीठमे और मर्मस्थानमे उठी पिटिका और उपद्रव युक्त हो तथा दुर्बलाग्नि पुरुपकी पिटिका त्याज्य है पिटिकाके उपद्रव **चरकने** कहे हैं सो इस प्रकार "**तृट्कासमांससंकोचमोहहिक्कामदज्वराः । विसर्पमर्मसंरोधाः पिटिकानामुपद्रवाः**" इसका अर्थ सुगम है इसीसे नही लिखा * **शंका** * क्योर्ज स्त्रियोको प्रमेह क्यो नही होय * **उत्तर** * इसका कारण और ग्रन्थोमें इस प्रकार लिखा है "**रजःप्रसेकान्नारीणांमासिमासि विशुध्यति । कृत्स्नंशरीरंदोषाश्चनप्रमेहंत्यतःस्त्रियः ॥** " अर्थ–स्त्रियोके महीनाके महीना रज बहाकरै है इसीसे सर्व देह और दोप शुद्ध होते हैं इसीसे स्त्रियोको प्रमेह नही होय और स्त्रियोको प्रमेह होना कहीं नही देखा यह भी एक बलवान् कारण है और सोमादिक रोग होते हैं कदाचित् कोई कहे कि और रोगका होना असभव है तौ यह केवल झगडेका स्थान है इसका किसीने यथार्थ निर्णय नही करा प्रमेहनिवृत्तिके लक्षण **सुश्रुतमे** कहे है यथा "**प्रमेहिणोयदामूत्रमनाविलमपिच्छिलम् । विशदंकटुतिक्तंचतदारोग्यंप्रचक्षते ॥**"

इति प्रमेहमधुमेहपिटिकानिदानम् ।

---

# अथ मेदोनिदानम् ।

कारण और सम्प्राप्ति ।

**अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः ॥**
**मधुरोऽन्नरसःप्रायःस्नेहान्मेदोविवर्द्धते॥ १ ॥**
**मेदसावृत्तमार्गत्वात्पुष्यंत्यन्येनधातवः ॥**
**मेदस्तुचीयतेयस्मादशक्तःसर्वकर्मसु ॥ २ ॥**

अर्थ–दड कसरतके न करनेसे दिनमें सोनेसे और कफकारक पदार्थोके सेवन करनेसे ऐसी रीतिसे वर्त्तनेवाले पुरुपका अन्नरस केवल मधुर कहिये आमरूप हो स्नेहकरके मेदको बढावे मेद करके मार्ग बद होनेसे अन्य धातु ( हाड मज्जा वीर्य आदि ) पुष्ट होते नही और मेद बढे तब वह पुरुष सर्व कर्म करनेको अशक्त होय ॥

मेदस्वी पुरुषके लक्षण।

क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः ॥ युक्तःक्षुत्स्वेददौर्गंध्यै-
रल्पप्राणोल्पमैथुनः ॥ ३ ॥ मेदस्तुसर्वभूतानामुदरेष्वस्थि-
षुस्थितम् ॥ अतएवोदरेवृद्धिः प्रायोमेदस्विनोभवेत् ॥ ४ ॥

अर्थ--क्षुद्र श्वास "रूक्षायासोद्भव" इत्यादिक पिछाडी कहि आये सो तृषा मोह निद्रा अकस्मात् श्वासका रोग अगग्लानि भूख पसीना और दुर्गंधि इन लक्षणोकरके वह पुरुष युक्त होय उसकी शक्ति घटजाय ओर मैथुन करनेमे उत्साह न होय मेद यह सब प्राणिमात्रोंके उदर और हड्डियोंमेरहै हे इसीसे मेदवाले पुरुषका पेट वढाकरता है ॥

मेदस्वीकी अवस्थाविशेष।

मेदसावृतमार्गत्वाद्वायुःकोष्ठेविशेषतः ॥
चरन्संधुक्षयत्यग्निमाहारंशोषयत्यपि ॥ ५ ॥
तस्मात्सशीघ्रंजरयत्याहारंचापिकांक्षति ॥
विकारांश्चाश्नुतेघोरान्कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥ ६ ॥
एतावुपद्रवकरौविशेषादग्निमारुतौ ॥
एतौहिदहतःस्थूलंवनंदावानलोयथा ॥ ७ ॥

अर्थ--मेदसे मार्ग रुकजानेसे कोठेमे पवनका संचार विशेष होय तब अग्निको यह पवन वढावे भोजन किये आहारको तुरन्त शोषण करे तब वह आहार शीघ्र पचकर फेर भोजनकी इच्छाको प्रगट करे और भोजन करनेमे कालका व्यतिक्रम होनेसे भयकर वातके रोग उत्पन्न होयँ यह अग्नि ओर वायु बडा उपद्रव करे हैं जैसे दावानल (वनअग्नि) वनको जलावे हे उसी प्रकार ये दोनों उस स्थूल ( मोटे ) पुरुषको जलाती हैं ॥

अत्यंत भेद वढनेका परिणाम।

मेदस्यतीवसंवृद्धेसहसैवानिलादयः ॥
विकारान्दारुणान्कृत्वानाशयंत्याशुजीवितम् ॥ ८ ॥

अर्थ--मेद अत्यन्त वढनेसे वायु आदि ये अकस्मात् भयकर ( प्रमेहपिटिका ज्वर भगंदर विद्रधि वातरोग इत्यादि ) उत्पन्न करके शीघ्रही जीवका नाश करैं।

स्थूललक्षण ।

मेदोमांसातिवृद्धत्वाचलस्फिगुदरस्तनः ॥
अयथोपचयोत्साहोनरोऽतिस्थूलउच्यते ॥ ९ ॥

अर्थ–मेद और मास ये अत्यन्त बढनेसे जिस पुरुषके कूले पेट और स्तन ये थल थल हले और उसके शरीरकी स्थूलता बढी होय अर्थात् जैसी चाहिये तैसी न होय तथा उत्साह ( हुशयारी ) न रहै ऐसे मनुष्यको अतिस्थूल कहते है ।

इति माधवभावार्थबोधिनीमाथुरीटीकायामेदोनिदानम् ।

---

# कार्श्यनिदानम् ।

प्रसंगवशसे कार्श्य ( क्षीणता ) रोगका निदान ग्रन्थान्तरसे लिखते हैं ।

वातोरूक्षान्नपानानिलंघनंप्रमिताशनम् ॥
क्रियातियोगःशोकश्चवेगनिद्राविनिग्रहः ॥ १ ॥
नित्यंरोगोरतिर्नित्यंव्यायामोभोजनाल्पता ॥
भीतिर्धनादिचिंताचकार्श्यकारणमीरितम् ॥ २ ॥
क्रोधोतिमैथुनंचैवशुक्रव्याधिस्तथैवच ॥
कार्श्यस्यहेतवःप्रोक्ताःसमस्तैरपितांत्रिकैः ॥ ३ ॥

अर्थ–कुपित वायु रूखा अन्न ( चना कांगुनी सामकिया आदि ) रूक्षपान ( औटाया जल आदि ) लवन ( थोडा भोजन ) क्रियातियोग कहिये वमन विरेचनका वहुत होना, शोक ( बवुवियोगादिक ) मूत्र मल आदि वेगोका रोकना निद्राका रोकना नित्य ही रोगी रहना सर्वदा अरत्रि होना व्यायाम ( दंड कसरत ) और मार्गका चलना आदि श्रम अतिभय, धनआदिकी चिन्ता, क्रोध, अतिमैथुन,शुक्रव्याधि ( प्रमेहरोगादिक ) ये सर्व कार्श्य ( क्षीणता ) होनेके कारण वैद्य कहते हैं ॥

कृश मनुष्यके लक्षण ।

शुष्कस्फिगुदरग्रीवाधमनीजालसन्ततिः ॥
अस्थिशेषोतिकृशतःस्थूलपर्वनरोमतः ॥ ४ ॥

अर्थ—जिसके कूले, पेट, गरदन और धमनी कहिये नाडियोका जाल ये सव सूख जायॅ तथा हड्डी सूख जायॅ और पर्व कहिये जोड मोटे होयॅ वह पुरुष कृश ( लटा ) कहाता है ॥

अतिकृशको वर्जनीय वस्तु ।

**व्यायाममतिसौहित्यंक्षुत्पिपासामहौषधम् ॥**
**नकृशः सहतेतद्वदतिशीतोष्णमैथुनम् ॥ ५ ॥**

अर्थ—व्यायाम ( दंडकसरत ) का करना, अतिसौहित्य, ( अतितृप्तहोवे तवतक भोजन ) भूख प्यास, उत्कट औषध तथा अतिशीतलता, अतिगरमी और अतिमैथुन इनको कृश मनुष्य नही सहसके है इसीसे इनको त्याग दे ॥

अतिकृशके जे रोग होते हैं उनको कहते हैं ।

**प्लीहा कासःक्षयःश्वासगुल्मार्शांस्युदराणिच ॥**
**भृशंकृशंप्रधावंतिरोगाश्चग्रहणीमुखाः ॥ ६ ॥**

अर्थ—जो मनुष्य ज्वरादि रोगोसे कृश होय अथवा वातरूक्षान्नपानादिकोसे कृश होय और वह कुपथ्य करे तौ इतने रोग होयॅ जो विदाही और अभिष्यंदी वस्तु खाइ तौ प्लीहा ( तापतिल्ली) होय और खटाई खाय तौ खासी होय और अतिमैथुन करे तौ क्षयीका रोग होय और व्यायाम शीतल भोजनपानादिक करै तौ श्वासरोग होय, तौ रूखा अन्नपान कडुवा खट्टा भक्षण और शीतल भारी चिकना आदिका सेवन करे तौ गुल्म ( गोल ) होय और अर्श ( ववासीर ) कारक पदार्थ सेवनसे ववासीर होय इसी प्रकार उदररोग सग्रहणीआदि रोग होते है अव कहते हैं कि कोई कृश भी वलवान् होय हे इसमे क्या हेतु है ॥

**आधानसमयेयस्यशुक्रभागोधिकोभवेत् ॥**
**मेदोभागस्तुहीनःस्यात्सकृशोऽपिमहावलः ॥ ७ ॥**

अर्थ-गर्भ रहनेके समय शुक्रका भाग अधिक होय और मेदका भाग थोडा होय तौ मेद थोडे होनेसे तो कृश होय और शुक्राधिक्य होनेसे वलवान् होय ॥

कोई स्थूलहोनेपरभी निर्वल होता है इसका कारण कहते हैं ।

**मेदसोंशोधिकोयस्यशुक्रभागोल्पकोभवेत् ॥**
**सस्निग्धोपिसुपुष्टोपिवलहीनोविलोक्यते ॥ ८ ॥**

अर्थ-गर्भ रहते समय मेदका भाग अधिक होय और शुक्रका भाग थोड़ा होय तो वह पुष्टभी है परंतु बलहीन होता है ॥

दृष्टान्त ।

**यथापिपीलिकास्वल्पायथाचवरटीबलात् ॥**
**स्वतश्चतुर्गुणंभारंनीत्वागच्छतिसम्मुखम् ॥ ९ ॥**

अर्थ-जैसे पिपीलिका ( चैंटी ) आप अतिकृश है ओर खानेकी वस्तु दाल चावल आदि भारीभी हैं परतु उनको खीचकर बिलमे लेजातीहै ओर वरटी ( पीली माखी ) झींगर आदि आपे से चौगुने भारीभी हे परन्तु खीचकर अपने स्थानमे लेजाती है इसी प्रकार बलवान् पुरुष जानना॥

असाध्यकार्श्यकहतेहैं ।

**स्वभावात्कृशकायोयःस्वभावादल्पपावकः ॥**
**स्वभावादबलोयश्चतस्यनास्तिचिकित्सितम् ॥ १० ॥**

अर्थ-जिसका स्वतः स्वभावसे कृश शरीर हे और जिसकी स्वभावसे मदाग्नि है और जो स्वभावसे बलहीन है उसकी चिकित्सा नही है ॥

इति कार्श्यरोगनिदानम् ।

---

# उदररोगनिदानम् ।

अग्निका दुष्ट होना यही उदर रोगका विशेषकरके कारण है ।

**रोगाःसर्वेऽपिमन्देऽग्नौसुतरामुदराणिच ॥**
**अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्जायन्तेमलसंचयात् ॥ १ ॥**

अर्थ-अग्नि मन्द होनेसे सब रोग होते है और उदर तो विशेषकरके होयहे कारण यह है कि अग्निमांद्य यह त्रिदोषजनक है और अजीर्णसे मलिन अन्नसे ( विरुद्ध अध्यशनादिक ) और मल ( दोष तथापुरीषादिक ) इनके संचयसे उदररोग होयहै । इस जगह उदरशब्दकरके उदरस्थित रोग जानने सो ग्रथान्तरमें लिखा है ॥

---

१ तेजसाग्निबलेहीनेकुप्यतिपवनादय ॥ इति ।

२ तत्स्यतद्धर्मताऽर्थाचतत्समीपतयापिच । तत्साहचर्याच्छब्दानांवृत्तिरेषाचतुर्विधेति ।

३ आतस्यचिजदोनाणापानकर्मचकुर्वताम । उदराण्युपजायंतेमन्दाग्नीनांविशेषतः ॥

उदरकी सम्प्राप्ति।

रुद्ध्वास्वेदाम्बुवाहीनिदोषाःस्रोतांसिसंचिताः ॥
प्राणाग्न्यपानान्संदूष्यजनयंत्युदरंनृणाम् ॥ २ ॥

अर्थ—वातादिदोष स्वेद ( पसीना ) वहनेवाली और जलको बहनेवाली नाडियोंके मार्गको रुद्ध ( रोक ) कर और वे दोष बढकर प्राणवायु अग्नि और अपानवायु इनको अत्यन्त दुष्टकर मनुष्योंके उदररोग उत्पन्न करै हैं॥ उदररोगका पूर्वरूप सुश्रुतमें लिखाहे " तत्पूर्वरूपंबलवर्णकांक्षावलीविनाशोजठरेतुराज्यः। जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्योबस्तौरुजःपादगतश्चशोथः ॥"

उदरके सामान्यरूप।

आध्मानंगमनेऽशक्तिर्दौर्बल्यंदुर्बलाग्निता ॥
शोथः सदनमंगानांसंगोवातपुरीषयोः ॥ ३ ॥
दाहस्तंद्राचसर्वेषुजठरेषुभवंतिहि ॥

अर्थ—अफरा, चलनेकी शक्तिका नाश, दुर्बलता, मदाग्नि, सूजन, अगग्लानि, वायुका तथा मलका रुकना, दाह, तन्द्रा ये लक्षण सब उदरमे होते है॥

उदररोगकी संख्या।

पृथग्दोषैः समस्तैश्चप्लीहबद्धक्षतोदकैः ४ ॥
संभवंत्युदराण्यष्टौतेषांलिंगंपृथक्छृणु ॥

अर्थ—पृथक् दोषोसे अर्थात् वातसे, पित्तसे, कफसे, सन्निपातसे ( सन्निपातोदर ) प्लीहोदर, बद्धोदर, क्षतोदर, और जलोदर, सब मिलायकर ८ भये उनके लक्षण पृथक् पृथक् कहते हैं।

तिनमें वातोदरके लक्षण।

तत्रवातोदरेशोथः पाणिपान्नाभिकुक्षिषु ॥ ५ ॥
कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरुक्पर्वभेदनम् ॥
शुष्ककासोऽगमर्दोऽधोगुरुतामलसंग्रहः ॥ ६ ॥

---

१ स्रोतोरोधश्चात्र बहिरेव न पुनरन्तः यदुक्तं चरके—" स्वेदस्तु बाह्येषु स्रोतःसु प्रतिहतगतिस्तिर्य्यगवतिष्ठमानस्तदेवोदकमाप्याययति " अतएवोदपूर्णता अन्नरसेनभवति।

२ स्वेदाम्बुवहाना स्रोतसा भेदमाह स्वेदवहाना मेदोमूलं लोमकूपश्च उदकवहाना स्रोतसा तालुमूलं क्लोम च।

श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्वृद्धिह्रासवत् ॥
सतोदभेदमुदरंतनुकृष्णशिराततम् ॥ ७ ॥
आध्मातदृतिवच्छब्दमाहतंप्रकरोतिच ॥
वायुश्चात्रसरुक्छब्दोविचरेत्सर्वतोगतिः ॥ ८ ॥

अर्थ—वातोदरमे हाथ पैर नाभि ओर कूख इनमे सूजन होय, सधियोका टूटना तथा कूख पसवाडे पेट कमर पीठ इनमे पीडा, सूखी खासी, अंगोका टूटना, कमरसे नीचेके भागमें भारीपना, मलका सग्रह होना, त्वचा नख नेत्रादिकका काला लाल होना पेट अकस्मात् ( निमित्तके विना ) बडा होजाय, अथवा छोटा होजाय, सूई चुभानेकीसी तथा नोचनेकीसी पीडा होय, पेटमे चारोतरफ बारीक काली शिराओ (नाडियो ) से व्याप्त होय, चुटकी मारनेसे फूली पखालके समान शब्द होय इस उदरमे वायु चारोतरफ डोलकर शूल करे तथा गूंजे ॥

पित्तोदरके लक्षण ।

पित्तोदरेज्वरोमूर्च्छादाहस्तृट्कटुकास्यता ॥ भ्रमोतिसारः पीतत्वंत्वगादावुदरंहरित् ॥ ९ ॥ पीतताम्रशिरानद्धंसस्वेदंसोष्मदह्यते ॥ धूमायतेमृदुस्पर्शंक्षिप्रपाकंप्रदूयते ॥ १० ॥

अर्थ—पित्तके उदररोगमे ज्वर, मूर्च्छा, दाह, प्यास, मुखमे कडुआट, भ्रम, आतिसार, त्वगादिक ( नख नेत्र ) इनमे पीलापना, पेट हरा होय, पीली तामेके रगकी नाडियोसे उदर व्याप्त हो, पसीना आवे गरमीसे सब देहमे दाह होय, आतोसे धूँआसा निकलता दीखे, हाथके स्पर्श करनेसे नरम मालुम हो, शीघ्र पाक होय अर्थात् जलोदरत्वको प्राप्त होय और उसमे घोर पीडा होय ॥

कफोदरके लक्षण ।

श्लेष्मोदरेऽगसदनं स्वापश्वयथुगौरवम् ॥ निद्रोत्क्लेशोऽरुचिः श्वासःकासः शुक्लत्वगादिता ॥ ११ ॥ उदरंस्तिमितंस्निग्धंशुक्लराजीततंमहत् ॥ चिराभिवृद्धिकठिनशीतस्पर्शंगुरुस्थिरम् ॥ १२ ॥

अर्थ—कफके उदररोगमे हाथ पैर आदि अगोमे शून्यता हो और जकडजाय, सूजन, होय अग भारी होजाय, निद्रा आवै, वमन होयगी ऐसा मालूम होय, अरुचि होय, श्वास, खासी, होय, त्वचा नख नेत्रादिक सफेद हो, पेट निश्चल चिकना सफेद नाडियोसे व्याप्त हो, इसकी वृद्धि बहुत कालमे होय, पेट करडा और शीतल मालूम होय तथा भारी और स्थिर होय ॥

### सन्निपातोदरके लक्षण ।

**स्त्रियोऽन्नपानंनखरोममूत्रविडार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः ॥ यस्मै प्रयच्छंत्यरयोगरांश्चदुष्टांवुदूषीविषसेवनाद्वा ॥ १३ ॥तेनाशुर क्तंकुपिताश्चदोषाःकुर्युःसुघोरंजठरंत्रिलिंगम् ॥ तच्छीतवातेभृ शदुर्दिनेवाविशेषतःकुप्यतिदह्यतेच ॥ १४ ॥ सचातुरोमूर्च्छति हिप्रसक्तंपांडुःकृशःशुष्यतितृष्णयाच॥दूष्योदरंकीर्तितमेतदेव**

अर्थ–खोटे आचरणवाली स्त्री जिस पुरुपका नख केश ( वाल ) मल मूत्र आर्त्तव ( रजोदर्शका रुधिर ) मिला अन्नपान देय, अथवा जिसका शत्रु विप देवे, अथवा दुष्टांबु ( जहरमिलामछली तिनका पत्ता आदि औटाहुआ ऐसा जल ) और दूपीविषे,[1] ( मान्दविप ) इनके सेवन करनेसे रुधिर ओर वातादिक दोप शीघ्र कुपित होकर अत्यन्त भयकर त्रिदोपात्मक उदररोग उत्पन्न करै है, वे शीतकालमे, अथवा शीतल पवन चले उस समय, अथवा जिस दिन वर्पाका झड लगे उस दिन विशेपकरके कोपको प्राप्त हो और दाह होय ( इसका कारण यह कि, उस समय दूपीविपका कोप होय है ) वह रोगी निरन्तर विपके सयोगसे मूर्च्छित होय, देहका, पीला वर्ण तथा कृश होय, और परिश्रम करनेसे शोप होय, प्यास होय तो इस्को दूष्योदर[2] ऐसे कहते है ॥

### प्लीहोदरके लक्षण ।

**प्लीहोदरंकीर्तयतोनिवोध ॥ १५ ॥ विदाह्यभिष्यंदिरतस्यजंतोःप्रदुष्टमत्यर्थमसृक्कफश्च ॥ प्लीहाभिवृद्धिंकुरुतःप्रवृद्धोप्लीहोत्थमेतज्जठरंवदन्ति॥ १६ ॥ ताद्वामपार्श्वेपरिवृद्धिमेतिविशेषतः सीदतिचातुरोऽत्र ॥ मन्दज्वराग्निःकफपित्तलिंगैरुपद्रुतःक्षीण वलोऽतिपांडुः ॥ १७ ॥**

अर्थ–अव प्लीहोदरके लक्षण कहताहू तू सुन । विदाही ( वशकरीरादि अर्थात् दाह करनेवाली और अभिष्यदी ( दध्यादि ) अर्थात् स्रोत ( छिद्र रोकनेवाली ) ऐसे अन्न निरंतर सेवन करनेवाले पुरुपके अत्यत दुष्ट भये जे रुधिर और कफ वढकर प्लीहा ( तापितिल्ली ) को वढावैं इस

---

१ यदुक्तम्–जीर्णं विपघ्नौपधिभिर्हत वा दावाग्निना वाऽऽतपशोपित वा । स्वभावतो वा गुणविप्रहीणं विप हि दूपीविषतामुपैति ॥ इति ॥

२ एतदेव सन्निपातोदर दूष्योदर कीर्तितं न पुनराधिकम् इत्यर्थः । रक्त दूष्य दूपयित्वा भवतीति दूष्योदर किंवा परस्पर दूषयतीति दोषा एव दूष्यास्तैः कृतमुदर दूष्योदरम् ।

उदरको प्लीहोत्य उदर कहते है, यह बाँईतरफ बढता है इस अवस्थामे रोगी बहुत दुःख पाता है; देहमे मदज्वर होय, मदाग्नि होय; तथा कफपित्तोदरके लक्षण इसमें मिलते हैं, बल क्षीण होय अत्यंत पीला वर्ण होय ॥

## यकृदाल्युदरके लक्षण ।

**सव्यान्यपार्श्वेयकृतिप्रदुष्टेज्ञेयंयकृद्दाल्युंदरंतदेव ॥ १८ ॥**

**अर्थ**—दहने तरफ जो यकृत् कहिये कलेजा है वह दुष्ट कहिये रोगयुक्त होनेसे प्लीहोदरके समान उदर होय उसको यकृद्दाल्युदर कहते है । दोषोकरके यकृत्का भेद होय है इसीसे यकृद्दाल्युदर कहते है ॥

## इसमें दोषोंका संबंध कहतेहैं ।

**उदावर्तरुजानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः ॥**
**गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्रमलान्क्रमात् ॥ १९ ॥**

**अर्थ**—उदावर्त्त, शूल, अफरा इनसे वायु, मोह, प्यास, ज्वर इनसे पित्त और भारीपना अरुचि कठिनता इनसे कफ ऐसे क्रमपूर्वक दोषोका संबंध जानना ॥

## बद्धगुदोदरके लक्षण ।

**यस्यांत्रमन्नैरुपलेपिभिर्वावालाश्मभिर्वापिहितंयथावत् ॥**
**संचीयतेतस्यमलःसदोषःशनैःशनैःसंकरवच्चनाड्याम् ॥ २० ॥**
**निरुध्यतेतस्यगुदेपुरीषंनिरेतिकृच्छ्रादतिचाल्पमल्पम् ॥**
**हृन्नाभिमध्येपरिवृद्धिमेतितस्योदरंबद्धगुदंवदन्ति ॥ २१ ॥**

**अर्थ**—जिस पुरुषकी आत उपलेप कहिये गाढे अन्नकरके (शाकादिक अथवा वाल तथा बारीक पत्थरके टुकडे करके बद्ध होजाय, उस पुरुषका दोषयुक्त मल धीरे धीरे आतडीके नलीमे होकर जैसे बुहारीसे झारा तृण धूर आदि क्रमसे बढै है, उसी प्रकार बढे, और वह मल बडे कष्टसे गुदाद्वारा थोडा थोडा निकले, जब मलका निकलना बंद होजाय तब मल दोषो करके गुदासे ऊपर आवै इसीसे उदर बढै हे अर्थात् हृदय और नाभिके मध्य अन्नपाकस्थानकी वृद्धि होय इसीसे इस उदरको बद्ध गुदोदर कहते है । अथवा गुदाके ऊपर आतोको बद्ध होनेसे बद्धगुद कहते है यह चरकका मत हैं ॥

---

१ यकृद्दालयति दोषैर्भेदयतीति यकृद्दाल्युदरम् ।

क्षतोदरके लक्षण।

शल्यंतथान्नोपहितंयदंत्रंभुक्तंभिनत्त्यागतमन्यथावा॥ तस्मात्स्रुतोंऽत्रात्सलिलप्रकाशः स्रावः स्रवेद्वैगुदतस्त भूयः॥ २२ ॥ नाभेरधश्चोदरमेतिवृद्धिंनिस्तुद्यते दाल्यतिचातिमात्रम् ॥ एतत्परिस्राव्युदरंप्रदिष्टं-

अर्थ—काटा धूलआदि अन्नके साथ मिलकर पेटमे चला जाय अथवा पक्काशयसे शल्यादि युक्त अन्न विलोम ( टेढा तिरछा ) चलाजाय तब आतोंको काटे और सीधा जाय तो नहीं काटे अथवा जभाई अतिअशन करनेसे आत फटजाय सो चरकमें लिखा भी है उन फटे आतोंसे गलित पानीके समान स्राव पुनः गुदाके मार्ग होकर झरै, नाभिके नीचेका भाग बढे, नोचने-कीसी तथा भेद ( चीरने ) कीसी पीडासे अत्यन्त व्यथित होय, इस क्षतोदरको ग्रन्यातरमे परि-स्रावि उदर कहते है और इसीको छिद्रोदर कहते हैं यह गयदासका मत है॥

जलोदरकी उत्पत्तिसह।

दकोदरंकीर्तयतोनिबोध॥ २३ ॥ यःस्नेहपीतोप्यनु-वासितोवावांतोविरिक्तोऽप्यथवानिरूढः॥पिबेज्जलंशी-तलमाशुतस्यस्रोतांसिदूष्यन्तिहितद्वहानि ॥ २४ ॥ स्नेहोपलिप्तेष्वथवापितेषुदकोदरंपूर्ववदभ्युपैति॥स्निग्धं महत्तत्परिवृद्धनाभिसमाततंपूर्णमिवांबुनाच ॥ २५ ॥ यथादृतिःक्षुभ्यतिकंपतेचशब्दायतेचापिदकोदरंतत् ॥

अर्थ—अब जलोदर कैसे होय है उसको कहते है जिसने स्नेह ( घृततैलादि ) पान करा होय, अथवा अनुवासनबस्ति करी हो, वमन करा हो, अथवा दस्त करे हो. अथवा निरूह बस्तिकरी होय, ऐसा पुरुष शीतल जल पीवै तब उसकी जल वहनेवाली नसोके मार्ग तत्काल दुष्ट होय है, वे उदक वहनेवाले स्रोत( मार्ग )स्नेहसे उपलिप्त ( चीकने ) होनेसे पूर्ववत् (अर्थात् अन्न-रस उपस्नेह, न्यायकरके अर्थात् इनको बाहर लायकर उदरको उत्पन्न करे ) जलोदर होय है उसमे चिकनापन दीखे, ऊचा होय, नाभिके पास बहुत ऊचा होय, चारा ओर तनासा मालूम होय, पानीकी पोट भरीसी होय, जैसी पानीसे भरी पखालमे जल हलै है उसी प्रकार हले. गडगड शब्द करे, कापे, इनको—जलोदर अर्थात् जलधर कहते है॥

---

१ "शर्करातृणलोष्टास्थिकटकैरन्नसंयुतैः। भिद्येतान्त्र यदा भुक्तैर्जृम्भयात्यशनेन वा" इति।

साध्यसाध्यविचार।

जन्मनैवोदरंसर्वंप्रायः कृच्छ्रतमंविदुः॥ २६॥
बलिनस्तदजातांबुयत्नसाध्यंनवोत्थितम्॥

अर्थ—सर्व प्रकारके उदर जन्मसेही प्रायः अत्यन्त कष्टसाध्य होते है बलवान् पुरुषके नवीन प्रगट भया हो और उसमें पानी नही प्रगट भया हो ऐसा बडे यत्नसे साध्य होय॥

पानी नही प्रगट भया हो ऐसे उदरके लक्षण चरकमे कहे है॥

अशोथमरुणाभासंसशब्दंनातिभारिकम्॥ २७॥
सदागुडगुडायंतंशिराजालगवाक्षितम्॥
नाभिंविष्टभ्यपायौतुवेगंकृत्वाप्रणश्यति॥ २८॥
हृद्वंक्षणकटीनाभिगुदप्रत्येकशूलिनः॥
कर्कशंसृजतोवातंनातिमन्देचपावके॥ २९॥
लालयाविरसे चास्यमूत्रेऽल्पेसंहतेविशि॥
अजातोदकमित्येतैर्युक्तंविज्ञायलक्षणैः॥ ३०॥

जातोदकके लक्षणभी चरकमें, इस प्रकार कहे हैं सो लिखते हैं।

यथा।

पयःपूर्णादृतिरिवक्षोभंशब्दकरंमृदु॥अप्रव्यक्तशिरंशूनं नितान्तमुदरंमहत्॥ ३१॥ आलस्यमास्यवैरस्यंमूत्रंबहुशकृत्स्रुतम्॥ जातोदकस्यलिंगंस्यान्मंदोऽग्निःपांडुतापिच॥ ३२॥

इति।

पक्षाद्बद्धगुदंतूर्ध्वंसर्वंजातोदकंतथा॥
प्रायोभवत्यभावायच्छिद्रांत्रंचोदरंनृणाम्॥ ३३॥

अर्थ—बद्धगुदोदर १५ दिवसके पिछाडी असाध्य होता है, उसी प्रकार सब प्रकारके उदक (पानी) उत्पन्न होनेसे नाशकारक होता है, और छिद्रात्रोदर यह प्रायः नाशक होता है। कदाचित् शल्य अथवा शस्त्रचिकित्सा जैसी होनी चाहिये ऐसी होय तो उदक (पानी) प्रगट भया उदररोग छिद्रात्र अथवा बद्धगुद साध्य होता है, यह **प्रायः** इस पदसे सूचना करी॥

असाध्य लक्षण।

शूनाक्षंकुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम् ॥
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणंचवर्जयेत् ॥ ३४ ॥

अर्थ–जिस उदररोगीके नेत्रोंपर सूजन होय, लिंग टेढा होगया हो, पेटकी त्वचा गीली तथा पतली हो गई होय, बल, रुधिर, मास और अग्नि ये जिसके क्षीण होगये हो ऐसा रोगी त्याज्य है॥

दूसरे असाध्य लक्षण।

पार्श्वभङ्गान्नविद्वेषशोथातीसारपीडितम् ॥
विरिक्तंचाप्युदरिणंपूर्यमाणंविवर्जयेत् ॥ ३५ ॥

इत्युदरनिदानम्।

अर्थ–पार्श्वभग ( पसलियोमे पीडा ) अन्नमे अरुचि, शोथ, अतिसार, इनसे पीडित ओर दस्त करानेसे जिसका पेट फिर पानीसे भरजाय; ऐसा उदर रोगीको वैद्य त्यागदेय॥

इति श्रीदत्तरामकृतमाथुरटीकायामुदररोगनिदान समाप्तम्।

# अथ शोथरोगनिदानम्।



शोथकी सम्प्राप्ति।

रक्तपित्तकफान्वायुर्दुष्टोदुष्टान्बहिःशिराः ॥
नीत्वारुद्धगतिस्तैर्हिकुर्यात्त्वङ्मांससंश्रयम् ॥
सोत्सेधंसंहतंशोथंतमाहुर्निचयादतः ॥ १ ॥

अर्थ–कुपित भई वायु स्वकारणसे दुष्ट भये रक्तपित्तकफको बाह्यशिरामे ( बाहरकी नाडियोमे ) प्राप्त करके पुन. उनही रक्तपित्तकफसे रुकगयाहै मार्ग जिसका ऐसी वह पवन त्वचा और मास इनके आश्रयसे सूजन उत्पन्न करे, वह सूजन ऊची और कठिन होय, इसको रक्तसहित त्रिदोषोको संबध है, इससे इस शोथको सन्निपातात्मक कहते है। "त्वङ्मांससंश्रयम्" इस पदसे व्रणशोथसे शोथका भेद दिखाया, क्योकि व्रण शोथकी उत्पत्ति आठ व्रणवस्तुओमे होतीहै सो कहा भी है "त्वङ्मांसशिरास्नाय्वस्थिसन्धिकोष्ठमर्माणि इति अष्टौ व्रणवस्तूनि भवंति" इति॥

सर्वहेतुविशेषैस्तुरूपभेदान्नवात्मकम् ॥
दोषैःपृथग्द्वयैःसर्वैरभिघाताद्विषादपि ॥ २ ॥

अर्थ—वह सूजन कारणभेदसे कार्यभेद होकर ९ नौ प्रकारका होय है । यथा अलग अलग दोषोंसे ३, द्वंद्वज ३, सन्निपातज १, अभिघातज १ और विषसे १ ऐसे सब मिलकर नौ प्रकारका शोथरोग भया ॥

## निदान ।

शुद्धामयाभक्तकृशाबलानांक्षाराम्लतीक्ष्णोष्णगुरूपसेवा ॥
दध्याममृच्छाकविरोधिपिष्टगरोपसृष्टान्ननिषेवणंच ॥ ३ ॥ अ-
र्शांस्यचेष्टावपुषोह्यशुद्धिर्मर्माभिघातोविषमाप्रसूतिः ॥ मिथ्यो-
पचारःप्रतिकर्मणांचनिजस्यहेतुःश्वयथोःप्रदिष्टः ॥ ४ ॥

अर्थ—वमनआदि ज्वरादिक, अभोजन ( विगुण भोजन ) इनसे जो कृश और बलहीन मनुष्योंके क्षारादिकका सेवन सूजनेका कारण होयहै तहा नोन, खटाई, तीखी, उष्ण, भारी वस्तुओंका सेवन, दही, अपक्व, मिट्टी, निषिद्धसाग, विरुद्ध ( क्षीरमत्स्यादिक ) पिठी या मैदावगैरहकी वस्तु सयोगजविषसे दूषित भया अन्नके सेवन करनेसे, बवासीर, दंडकसरतके न करनेसे, शोधनके योग्य दोषोंके न शोधनेसे हृदयादि दोषज कर्मोंके उपघातसे, कच्चा गर्भपात होना वमनादि पंचकर्मोंका मिथ्यायोग ये सर्व दोषज सूजनके कारण कहेहैं ॥

## पूर्वरूप ।

तत्पूर्वरूपंदवथुःशिरायामोऽङ्गगौरवम् ॥ ५ ॥

अर्थ—संताप, नसोंकी तननेके समान पीडा, देह भारी ये लक्षण सूजन होनेवाले पुरुषके होते हैं ॥

## सामान्यलक्षण ।

सगौरवंस्यादनवस्थितत्वंसोत्सेधमूष्माचशिरातनुत्वम् ॥
सलोमहर्षश्चविवर्णताचसामान्यलिंगंश्वयथोःप्रदिष्टम् ॥ ६ ॥

अर्थ--अंग भारी हो, चित्तमें स्वस्थता न होना, ऊंची सूजन और दाह, नस पतली होजायँ रोमांच और देहका रंग बदल जाय ये सूजनके सामान्य लक्षण है ।

१ बाह्य हेतुसे उत्पन्न हुआ जो मर्मोका उपघातहै वहतो आगन्तुज शोथकाही हेतु है ।

वातजशोथके लक्षण।

चलस्तनुत्वक्परुषोऽरुणोऽसितः ससुप्तिहर्षार्तियुतोऽनिमित्ततः ॥
प्रशाम्यतिप्रोन्नमतिप्रपीडितोदिवाबलीस्याच्छ्वयथुःसमीरणात् ॥७॥

अर्थ—वादीकी सूजन चचल, त्वचा पतली होजाय,कठोर हो, लाल, काली तथा त्वचा शून्य पडजाय, भिन्न भिन्न वेदना हो अथवा रोमांच और पीडा हो कदाचित् निमित्तके विना शाति होजाय उस सूजनके दावनेसे तत्क्षण ऊपरको उठ आवे, दिनमे जोर बहुत करे ॥

पित्तजशोथके लक्षण।

मृदुःसगंधोऽसितपीतरागवान्भ्रमज्वरस्वेदतृषामदान्वितः ॥
यउष्यतेस्पर्शरुगक्षिरागकृत्सपित्तशोथोभृशदाहपाकवान् ॥ ८ ॥

अर्थ—पित्तकी सूजन-नरम, कुछ दुर्गंधयुक्त, काली, पीली, और लाल होय,उसके होनेसे भ्रम, ज्वर, पसीना प्यास और मस्तपना ये लक्षण होयँ, दाह होय, हाथ लगानेसे दूखे, इसीसे नेत्र लाल हो, उसमे अत्यन्तदाह तथा पाक होय॥

कफजशोथके लक्षण।

गुरुःस्थिरःपांडुररोचकान्वितःप्रसेकनिद्रावमिवह्निमांद्यकृत् ॥
सकृच्छ्रजन्मप्रशमोनिपीडितोनचोन्नमेद्रात्रिबलीकफात्मकः ॥९॥

अर्थ--कफकी सूजन भारी, स्थिर, पीली होय है इसके योगसे अन्नद्वेष,लारोंका गिरना, निद्रा, वमन, मन्दाग्नि ये लक्षण होयँ तथा इस सूजनकी उत्पत्ति और नाश बहुतकालमे होय, इसको दवानेसे ऊपरको नहीं उठे, रात्रिमे इसकी प्रवलता हो ॥

द्वंद्वज और संनिपातज शोथके लक्षण।

निदानाकृतिसंसर्गाच्छ्वयथुःस्याद्द्विदोषजः ॥
सर्वाकृतिःसन्निपाताच्छोथोव्यामिश्रलक्षणः ॥ १० ॥

अर्थ—दो दोषोंका लक्षण और कारण एकत्र मिलनेसे द्वंद्वज शोथ जानना और सन्निपातसे सूजन होय उसमें वातादिक तीनो दोपोके लक्षण होते है ॥

अभिघातजशोथके लक्षण।

अभिघातेनशस्त्रादिच्छेदभेदक्षतादिभिः ॥
हिमानिलोदध्यनिलैर्भल्लातकपिकच्छुजैः ॥ ११ ॥

रसैःशुकैश्चसंस्पर्शाच्छ्वयथुःस्याद्विसर्पवान् ॥
भृशोष्मालोहिताभासःप्रायशःपित्तलक्षणः ॥ १२ ॥

अर्थ—काष्ठादिककी चोट लागनेसे, शस्त्रादिकसे, छेदन होनेसे पत्थर आदिसे फूटनेसे, अथवा घावके होनेसे आदिशब्दसे, लकड़ी आदिके प्रहार शीतल पवन लगनेसे, समुद्रकी पवन लगनेसे, भिलावेके तेल लगजानेसे, और कौंचकी फलीके स्पर्श होनेसे,जो सूजन होय सो चारो तरफ फैल जाय, अत्यन्त दाह होय, उसका, रग लाल होय और विशेपकरके इससे पित्तके लक्षण होतेहैं॥

विषजशोथके लक्षण ।

विषजःसविषप्राणिपरिसर्पणमूत्रणात् ॥
दंष्ट्रादंतनखाघातादविषप्राणिनामपि ॥ १३ ॥
विण्मूत्रशुक्रोपहतमलवद्वस्त्रसंकरात् ॥
विषवृक्षानिलस्पर्शाद्गरयोगावचूर्णनात् ॥ १४ ॥
मृदुश्चलोवलंबीचशीघ्रोदाहरुजाकरः ॥

अर्थ—विपवाले प्राणियोंके अगपर चलनेसे, अथवा मूतनेसे अथवा निर्विप ( विपरहित मनुष्यादिक ) प्राणियोके दाढ दात नख लगनेसे, अथवा सविप प्राणियोका विष्टा मूत्र शुक्र इनसे भरा, अथवा मलिन वस्त्र अगमे लगनेसे अथवा विपवृक्षकी हवाके लगनेसे, अथवा सयोगजविपका अंगमें लगनसे जो सूजन उत्पन्न होय सो विपज कहलाताहै वह सूजन नरम, चचल, भीतर प्रवेश करनेवाली, जल्दी प्रगट होनेवाली, दाह और पीडा करनेवाली होती है ॥

जिस जिस ठिकाने दोष सूजन उत्पन्न करे उनको कहते हैं ।

दोषाःश्वयथुमूर्ध्वंहिकुर्वंत्यामाशयस्थिताः ॥ १५ ॥
पक्काशयस्थामध्येतुवर्चःस्थानगतास्त्वधः ॥
कृत्स्नदेहमनुप्राप्ताःकुर्युःसर्वसंतथा ॥ १६ ॥

अर्थ—आमाशयस्थित दोप ऊपर (उरःस्थानादिकोमे) सूजनको करे, पक्काशयमे स्थितदोप मध्य कहिये उर और पक्काशय इन दौनोके बीचमे सूजन करे, मलस्थानगतदोप नीचेके स्थान ( पैरआदि ) मे सूजन करे, ओर सर्व देहमे दोप स्थित होनेसे सब देहमे सूजनको करते हैं ॥

सूजनके कृच्छ्रादिभेद ।

योमध्यदेशेश्वयथुःसकष्टःसर्वगश्चयः ॥
अधोऽगेऽरिष्टभूतःस्याद्यश्चोर्ध्वंपरिसर्पति ॥ १७ ॥

अर्थ-जो सूजन मध्यदेशमे तथा सब शरीरमे होय अथवा सान्निपातिक होय वह कष्टसाध्य है और सूजन पुरुषके नीचेके अंगमें प्रगट हो ऊपरको चढे वह असाध्य है। और चकारसे स्त्रीकी सूजन ऊपरसे नीचेको उतरे वहभी असाध्य है ॥

असाध्यलक्षण।

**श्वासःपिपासाछर्दिश्चदौर्बल्यंज्वरएवच ॥**
**यस्यचान्नेरुचिर्नास्तिशोथिनंपरिवर्जयेत् ॥ १८ ॥**

अर्थ-श्वास, प्यास, वमन, दुर्बलता, ज्वर, ये लक्षण होयँ; और जिसकी अन्नमे अरुचि होय, ऐसे सूजनवाले रोगीको वैद्य त्याग दे ॥

**अनन्यो[1]पद्रवकृतःशोथःपादसमुत्थितः ॥**
**पुरुषंहंतिनारींतुमुखजोगु[2]ह्यजोद्वयम् ॥ १९ ॥**
**नवोऽनुपद्रवःशोथः साध्योऽसाध्यःपुरेरितः ॥**

अर्थ-अन्यरोगोके उपद्रवसे प्रगट न भई हो अर्थात् शोथकेही उपद्रवसे पैदा हुई ऐसी सूजन पहिले पैरोमे उत्पन्न हो फिर मुखआदि उपरके स्थानोमे प्राप्त होय, (उसको उलटी सूजन कहते हैं) वह पुरुषका नाश करे और जो प्रथम मुखपर पीछे होकर पैरोपै उतरे वह सूजन स्त्रियोको घातक है, और जो प्रथम बस्तिमे उत्पन्न होकर सब देहमे व्याप्त हो वह स्त्रीपुरुष दोनोंकी नाशक है ॥

नवीन और उपद्रवरहित जो सूजन होय वह साध्य है और "अधोंगेरिष्टभूतः" इत्यादि श्लोकमें कहीहुई सूजन असाध्य है ॥

शोथके उपद्रव।

**छर्दिस्तृष्णारुचिःश्वासोज्वरोऽतीसारएवच ॥**
**सप्तकोयंसदौर्बल्यःशोथोपद्रवसंग्रहः ॥ २० ॥**

अर्थ-छर्दि, प्यास, अरुचि, श्वास, ज्वर, अतिसार, दुर्बलता ये सात सूजनके उपद्रव है यह चरकमे लिखा है।

---

[1] "अन्यस्यउपद्रवास्तद्विपरीताअनन्योपद्रवाः। एतेनायमर्थः-शोथस्यैवयेउपद्रवास्तैः कृत.। अथवा अन्यमुपद्रव करोतीत्यन्योपद्रवकृत् नान्योपद्रवकृदित्यनन्योपद्रवकृत्ततोऽनन्योपद्रवकृत. स्वनिदानाजात इति शेषः।

[2] "यस्तु पादाभिनिर्वृत्तः शोथः-सर्वाङ्गगो भवेत्। पुरुषं हन्ति नारीञ्च मुखजो गुह्यजोद्वयम् ॥

विवर्जयेत्कुक्ष्युदराश्रितंच तथा गलेमर्मणिसंश्रितञ्च ॥
स्थूलःखरश्चापिभवेद्विवर्ज्यो यश्चापिबालस्थविराबलानाम् ॥२१॥

अर्थ–जो सूजन कोख और उदरमे हो तथा कंठ और मर्म स्थानमे हो मोटी और खरखरी होतो असाध्य जाननी चाहिये। बालक तथा वृद्ध और स्त्रीके भी स्थूल और खरखरी हुई सूजन असाध्य जानकर छोड देनी चाहिये ॥

इति माथुरटीकायां शोथरोगनिदानम्।

---

# अंडवृद्धिनिदानम्।

सम्प्राप्ति।

क्रुद्धोऽनूर्ध्वगतिर्वायुः शोथशूलकरश्चरन् ॥
मुष्कौवंक्षणतःप्राप्यफलकोशाभिवाहिनीः ॥ १ ॥
प्रपीड्यधमनीर्वृद्धिंकरोतिफलकोशयोः ॥

अर्थ–कुपित भई अधोगमन शील (नीचे विचरनेवाली) तथा सूजन और शूल उत्पन्न करनेवाली वायु संचार करती हुई वंक्षण ( लिंग और जंघाकी संधि ) से अंडकोशोमें आयकर अंड और कोश अथवा अण्डोके कोशोके वहानेवाली धमनियोको दुष्टकर अंडकोशकी ( दोनो अंडोंकी अथवा एक ओरके अंडकी ) वृद्धि करै है ॥

दोषास्रमेदोमूत्रांत्रैःसवृद्धिःसप्तधागदः ॥ २ ॥
मूत्रांत्रजावप्यनिलाद्धेतुभेदस्तुकेवलम् ॥

अर्थ–वह वृद्धि रोग तीनो दोषोसे ३, रुधिरमे १, मेद १, मूत्र १, और आंतोसे १, सातप्रकारका है। मूत्रज और अंत्रजवृद्धि ए दोनो वायुसे होती है परन्तु इन दोनोका निदान और चिकित्सामें भेद होनेसे पृथक् ग्रहण करा है। सो लिखाभी है "मूत्रांत्रजावप्यनिलाद्धेतुभेदस्तु केवलमिति ॥"

वातकी अण्डवृद्धिके लक्षण।

वातपूर्णादतिस्पर्शोरूक्षोवातादहेतुरुक् ॥ ३ ॥

अर्थ–वातसे भरी मसक जैसी हाथके लगनेसे मालूम होय ऐसा मालूम होय रूक्ष और विना कारण दुखने लगे, वह वातकी अंडवृद्धि जाननी ॥

---

१ "क्योंकि कहा-नीहै–दोषदूष्यससर्गादायतनविशेषात् निमित्ततश्चैपाव्याधीनामेदः"

तथा पित्तकी अंडवृद्धिके लक्षण।

**पक्वोदुम्बरसंकाशःपित्ताद्दाहोष्मपाकवान् ॥**

अर्थ–पित्तकी अंडवृद्धि पके गूलरके समान होय है, तथा दाह और गरमी तथा पकनेवाली होय है ॥

कफकी अंडवृद्धीके लक्षण।

**कफाच्छीतोगुरुःस्निग्धःकंडूमान्कठिनोल्परुक् ॥ ४ ॥**

अर्थ–कफसे अडवृद्धि शीतल, भारी, चिकनी, तथा खुजलीयुक्त, कठिन, और थोडी पीडायुक्त होय है ॥

रक्तजवृद्धिके लक्षण।

**कृष्णस्फोटावृतःपित्तवृद्धिलिंगैश्चपित्तजः ॥**

अर्थ–काले फोडाओसे व्याप्त तथा जिसमे पित्तवृद्धिके लक्षण मिलते होयँ, उस अडवृद्धिके-पित्तकी तथा रक्तकी कहते हैं।

मेदोज अण्डवृद्धिके लक्षण।

**कफवन्मेदसोवृद्धिर्मृदुस्तालफलोपमः ॥ ५ ॥**

अर्थ–मेदसे जो अडवृद्धि होयहै वह कफकी वृद्धिके समान मृदु (नरम) तथा तालफलके समान हो अर्थात् पीले रंगकी और गोल होय है ॥

मूत्रवृद्धिके लक्षण।

**मूत्रधारणशीलस्यमूत्रजःसचगच्छति ॥**
**अंभोभिःपूर्णदृतिवत्क्षोभंयातिसरुङ्मृदुः ॥**
**मूत्रकृच्छ्रमधःस्याच्चचालयन्फलकोशयोः ॥ ६ ॥**

अर्थ–मूत्रको रोकनेका जिसका स्वभाव होय उसको यह रोग होय है, वह पुरुष जब चले तब पानीसे भरी पखालके समान डवकडवक हले, तथा बजे, और उसमे पीडा थोडी होय हाथके छूनेसे नरम माळूम होय उसमे मूत्रकृच्छ्रकीसी पीडा होय फल और कोश दोनों इधरउधर चलायमान होयँ ॥

अंत्रवृद्धिके लक्षण।

**वातकोपिभिराहारैःशीततोयावगाहनैः ॥ धारणेरणभाराध्वविषमागप्रवर्त्तनैः ॥ ७ ॥ क्षोभणैःक्षुभितोऽन्यैश्चक्षुद्रांत्रावय-**

वंयदा ॥ पवनोविगुणीकृत्यस्वनिवेशादधोनयेत् ॥ कुर्याद्वंक्षण संधिस्थोग्रंथ्याभंश्वयथुंतदा ॥ ८ ॥

अर्थ–वात कोपकारक आहारके सेवन करनेसे शीतल, जलमे प्रवेशकरके स्नान करनेसे, उपस्थित मूत्रादिवेगोके धारण अप्राप्तवेग ( अर्थात् करनेकी इच्छा न होय ) उसको बलपूर्वक प्रेरणा करनेसे, भारी बोझके उठानेसे, अतिमार्गके चलनेसे, अंगोकी विषमचेष्टा ( अर्थात् टेढा तिरछा अगोकरके गमनादिक करना ) बलवान्से वैर करना कठिन धनुषका ईचना इत्यादिक ऐसेही और कारणोसे कुपित भई जो वायु सो छोटी आतोके अवयवोके एकदेशको बिगाडकर अर्थात् उनका संकोचकर अपने रहनेके स्थानसे उसको नीचे लेजाय तब वंक्षण संधिमे स्थित होकर उस स्थानमे गाठके समान सूजनको प्रगट करे ॥

इसकी औषध न करनेका परिणाम ।

उपेक्षमाणस्यचमुष्कवृद्धिमाध्मानरुक्स्तंभवतींसवायुः ॥ प्रपीडितोंऽतःस्वनवान्प्रयातिप्रध्मापयन्नेतिपुनश्चमुक्तः ॥ ९ ॥

अर्थ–जिस अडवृद्धिसे अफरा होय, पीडा होय, जडता होय, उसकी उपेक्षा करनेसे अर्थात् औषध न करनेसे, तथा अंडकोशोके दाबनेसे जो वायु कोकोशब्द करे, तथा हाथके दाबनेसे वायु ऊपरको चढजाय, और छोडनेसे फिर नीचे उतरकर अडोको फूलाय दे ये होतेहैं ॥

असाध्यलक्षण ।

क्षुद्रांत्रावयवान्क्लेष्मामुष्कयोर्वातसंचयात् ॥ १० ॥ अंत्रवृद्धिरसाध्योऽयंवातवृद्धिसमाकृतिः ॥

अर्थ–छोटी आंतोके अवयव ( अगवाला ) कफवातके सचयसे मुष्कके विषे प्राप्त होय, तथा जिसमे वातके लक्षण कहे वे सब मिलते होय, वह अडवृद्धि असाध्य है ॥ वर्ध्म अर्थात् बदरोगका निदान ग्रन्थान्तरमे लिखा है. यथा–

वर्ध्मरोगनिदान ।

अत्यभिष्यंदिगुर्वान्नसेवनान्निचयंगतः ॥ ११ ॥
करोतिग्रन्थिवच्छोफंदोषोवंक्षणसन्धिषु ॥
ज्वरशूलांगदाहाढ्यंतंवर्ध्मेतिनिर्दिशेत् ॥ १२ ॥
यस्यपूर्वंफिरंगाख्योरोगोभूत्वाप्रशाम्यति ॥
तस्यजंतोर्वर्ध्मरोगइत्युक्तंसुश्रुतादिभिः ॥ १३ ॥

तथोष्णवातजुष्टस्यमेढ्रव्रणयुतस्यच ॥
तस्यपुंसोवध्मरोगंप्रवदन्तिभिषग्वराः ॥ १४ ॥

अर्थ–अभिष्यदिवस्तुके खानेसे, भारी अन्नके खानेसे, कच्चे अन्नके खानेसे, वृद्धिको प्राप्त हुए दोष अथवा "अत्यभिष्यंदिगुर्वाम" इस जगह "अत्यभिष्यंदिगुर्वन्नशुष्कपूज्यामिषाशनात्" ऐसा भी पाठ है अर्थात् अभिष्यदि भारी अन्नके खानेसे, तथा सूखा और पूज्य कहिये गौ आदिक मांस खानेसे, दोष ( वात पित्त कफ ) कुपित होकर वक्षणकी सन्धिमे अर्थात् वास्तिस्थानके समीप जिनको नल कहते हैं उन्मे सूजनको प्रगट करे, उस सूजनके होनेसे ज्वर होय, तथा सूजनमे पीडा होय, अगोमे अत्यत दाह होय, जिस मनुष्यके पहिले फिरंग ( गरमी )का रोग होकर शान्ति होगया होय, उसके यह वदकारोग होता है, अथवा गरमवाले पुरुषके लिगमे व्रण घाव होय उसके यह वदरोग होता है ॥

इति अडवृद्धिनिदान समाप्तम् ।

# अथ गलगंडनिदानम् ।

निवद्धःश्वयथुर्यस्यमुष्कवल्लंवतेगले ॥
महान्वायदिवाह्रस्वोगलगंडंतमादिशेत् ॥ १ ॥

अर्थ–जिसके गलेमे अनुवंधयुक्त वडी अथवा छोटी अडकोशके समान सूजन होकर लटके उसको गलगंड कहते हैं ॥

गलगंडकी संप्राप्ति ।

वातःकफश्चापिगलेप्रदुष्टोमन्येससाश्रित्यतथैवमेदः ॥
कुर्वन्तिगंडंक्रमशस्त्रिलिंगैःसमन्वितंतंगलगंडमाहुः ॥२॥

अर्थ–गलेमे दुष्टभये वात कफ और उसी प्रकार मेद गलेकी दोनो मन्यानाडियोका आश्रय लेकर क्रमसे आपअपने लक्षणसयुक्त गेड ( गोला ) उत्पन्न करैं है उसको गलगडरोग कहते हैं । यह रोग वात कफ और मेद इन कारणोसे तीन प्रकारका है यह रोग अपने ही स्वभावसे पैत्तिक नहीं होय है, जैसे चातुर्थिकज्वर अपने प्रभावसे जवोमे कफका और मस्तकमे वातका प्रथम आता है इसमे भी पित्तका नहीं होय है, उसी प्रकार इस रोगमे भी जानो ॥

वातिकगलगंडके लक्षण।

तोदान्वितःकृष्णशिरावनद्धःश्यावोऽरुणोवापवनात्मकस्तु ॥

पारुष्ययुक्तश्चिरवृद्धिपाकोयदृच्छयापाकमियात्कदाचित् ॥ ३ ॥
वैरस्यमास्यस्यचतस्यजन्तोर्भवेत्तथातालुगलप्रशोषः ॥

अर्थ—वातकी गलगड, काली नसोंसे व्याप्त होय, और उसमें सूईके चुभानेकीसी पीडा होय उसका रंग काला और लाल होय, तथा कठोर हो, बहुतकालमें बढे, तथा पके नहीं, और जो पके तो कदाचित् यदृच्छापूर्वक पके उस रोगीके मुखमें विरसता होय, तथा तालु व गलेमें शोष होय ॥

कफजगलगंडके लक्षण।

स्थिरःसवर्णोगुरुरुग्रकंडूःशीतोमहांश्चापिकफात्मकस्तु ॥ ४ ॥
चिराभिवृद्धिंभजतेचिराद्वाप्रपच्यतेमन्दरुजःकदाचित् ॥
माधुर्यमास्यस्यचतस्यजंतोर्भवेत्तथातालुगलप्रलेपः ॥ ५ ॥

अर्थ--कफकी गलगड स्थिर, त्वचाके रंगके समान वर्ण होय, भारी हो, खुजली बहुत चले, शीतल और बडी होय है. वह बहुतदिनमें बढे, और बहुत कालमें पके, पीडा थोडी होय, मुखमें मिठास होय, तथा गलेमें और तालुयेमें कफ लिहिसासा होय ॥

मेदजगलगंडके लक्षण।

स्निग्धोगुरुःपांडुरनिष्टगंधोमेदोभवःस्वल्परुजोऽतिकंडूः ॥
प्रलंबतेऽलावुवदल्पमूलोदेहानुरूपक्षयवृद्धियुक्तः ॥ ६ ॥
स्निग्धास्यतातस्यभवेच्चजंतोर्गलेऽनुशब्दंकुरुतेचनित्यम् ॥

अर्थ—मेदसे प्रगट गलगड चिकना होय, भारी, पीलावर्ण, दुर्गंधयुक्त मंद पीडा करनेवाला, और अत्यन्त खुजली चले, वह तुंबीफलके समान लंबा होय उसकी जड छोटी होय और देहानुरूप क्षय और वृद्धि इनसे युक्त होय, अर्थात् देहके क्षीण होनेसे क्षीण होजाय, देहके बढनेसे बढजाय, उसका मुख तेल लगा होय ऐसा चिकना होय और बोलतेसमय गलेसे दो शब्द निकले ॥

असाध्य लक्षण।

कृच्छ्राच्छ्वसन्तंमृदुसर्वगात्रंसंवत्सरातीतमरोचकार्तम् ॥ ७ ॥
क्षीणंचवैद्योगलगण्डजुष्टंभिन्नस्वरंचापिविवर्जयेत्तु ॥ ८ ॥

अर्थ—बडे कष्टसे श्वास लेनेवाला, नरम शरीरवाला, जिसके गलगंड होकर वर्षदिन व्यतीत होगया हो, अरुचिसे पीडित, क्षीण होगया हो, और स्वरभेदयुक्त ऐसा गलगडपीडित मनुष्यको वैद्य त्याग दे ॥

इति गलगडनिदानम्।

# अथ गंडमालानिदानम् ।

कर्कंधुकोलामलकप्रमाणैःकक्षांसमन्यागलवंक्षणेषु ॥
मेदःकफाभ्यांचिरमंदपाकैःस्याद्गंडमालाबहुभिश्चगंडैः ॥ १ ॥

अर्थ–मेद और कफ इनसे प्रगट भया काख, कंधा, नाड़के, पिछाडि मन्या नाड़ीमे, गलेमे, और वक्षण ( जानुमेढ्संधि ) इन ठिकाने छोटे वेरके वरावर, बडे वेरके समान, आमलेके समान, ऐसी अनेकप्रकारकी गड होती हैं वे वहुत दिनमे हौले हौले पके उनको गडमाला कहते है ॥

अपचीके लक्षण ।

तेग्रंथयःकेचिदवाप्तपाकाःस्रवन्तिनश्यंतिभवन्तिचान्ये ॥
कालानुबंधंचिरमादधातिसैवापचीतिप्रवदंतितज्ज्ञाः ॥ २ ॥

अर्थ–अब गडमालाका भेद अपची है उसको कहतेहै पूर्वोक्त गडमालाकी गाठ पके नहीं अथवा पाक होनेसे स्रवे कोई नष्ट होजाय दूसरी नवीन उठे ऐसी पीडा वहुत दिन रहे उसको कोई अपची ऐसे कहते है ॥

असाध्य और साध्यके लक्षण ।

साध्यास्मृतापीनसपार्श्वशूलकासज्वरच्छ-
र्दियुतानसाध्या ॥ इत्यपचीनिदाम् ॥

अर्थ–पूर्वोक्त अपची रोग साध्य है । और उसमे पीनस होय, पसवाडोमे शूल, खांसी, ज्वर, वमन ये होयँ तो वह अपची असाध्य है ॥

इति अपचीनिदानम् ।

# अथ ग्रंथिनिदानम् ।

वातादयोमांसमसृक्प्रदुष्टाःसंदूष्यमेदश्चतथाशिराश्च ॥
वृत्तोन्नतंविग्रथितंतुशोथंकुर्वंत्यतोग्रंथिरितिप्रदिष्टः ॥ १ ॥

अर्थ–अत्यत दुष्ट हुए वातादि दोष, माम, रुधिर, और मेद, उसी प्रकार शिरा ( नस ) इनको दुष्ट कर ( इस जगह दुष्टिका अर्थ वृद्धि करना चाहिये क्षयरूप न करना चाहिये कारण इस

का यह है कि, क्षीण विकारोकी सामर्थ्य रोग करनेकी नही होती है ) गोल, ऊची, गांठके समान, अथवा कठिन सूजनको उत्पन्न करे उसको ग्रथि ( गाठ ) ऐसे कहते हैं ॥

वातजग्रंथिके लक्षण ।

**आयम्यतेवृश्च्यतितुद्यतेचप्रत्यस्यतेमथ्यतिभिद्यतेच ॥**
**कृष्णोमृदुर्बस्तिरिवाततश्चभिन्नःस्रवेच्चानिलजोऽस्रमच्छम् ॥ २ ॥**

अर्थ–वादीकी गांठ तनेके समान करडी मालूम हो, छीलनेके समान मालूम हो, सुई चुभनेकी सी पीडा होय, मानो गिरा चाहती है, मथनेकी पीडा होय, फोडनकीसी पीडा होय, काला वर्ण हो, नरम हो, बस्तिके समान चौडी और भारी होय, और उसके फूटनेसे स्वच्छ रुधिर निकले ॥

पित्तकी ग्रंथिके लक्षण ।

**दंदह्यतेधूप्यतिचूष्यतेचपापच्यतेप्रज्वलतीवचापि ॥**
**रक्तःसपीतोऽप्यथवापिपित्ताद्भिन्नः स्रवेदुष्टमतीवचास्रम् ॥ ३ ॥**

अर्थ–पित्तकी गाठ आगसे भरेके समान अत्यन्त दाहकरै, आतोसे धूआँ निकलतासा मालूम हो, चूष्यते कहिये मानो सिगी लगायके कोई चूसै है, खार लगानेके सदृश पका मालूम होय, अग्निके समान जलीसी मालूम होय, उस गाठका रग लाल, अथवा किंचित् पीला होय । और फूटनेसे उसमेसे दुष्ट रुधिर बहुत निकले ॥

कफकी ग्रंथिके लक्षण ।

**शीतोविवर्णोऽल्परुजोतिकंडूःपाषाणवत्संहननोपपन्नः ॥**
**चिराभिवृद्धिश्चकफप्रकोपाद्भिन्नःस्रवेच्छुक्लघनंचपूयम् ॥ ४ ॥**

अर्थ–कफकी ग्रथि (गाठ) शीतल,प्रकृतिसमान वर्ण, (कोई किंचित विवर्ण हो ऐसे कहते है) थोडी पीडा हो, अत्यन्त खुजली चले, पत्थरके समान कठिन बडी होय, और चिरकालमे बढनेवाली होय फूटनेसे उसमेसे सफेद गाढी राध निकले ॥

मेदजग्रंथिके लक्षण ।

**शरीरवृद्धिक्षयवृद्धिहानिःस्निग्धोमहान्कंडुयुतोऽरुजश्च ॥**
**मेदःकृतोगच्छतिचात्रभिन्नेपिण्याकसर्पिःप्रतिमंतुमेदः ॥ ५ ॥**

अर्थ--मेदकी ग्रथि शरीरके बढनेसे बढै, और शरीरके क्षीण होनेसे क्षीण होजाय, चिकनी बडी, खुजलीयुक्त पीडारहित होय है । और जब वह फूटजाय तब उसमेसे तिलकल्कके समान अथवा घृतके समान मेदा निकले ॥

शिराजग्रंथिके लक्षण ।

व्यायामजातैरबलस्यतैस्तैराक्षिप्यवायुस्तुशिराप्रतानम् ॥
संकुच्यसंपिण्ड्यविशोष्यचापिग्रंथिंकरोत्युन्नतमाशुवृत्तम् ॥ ६ ॥

अर्थ—निर्बल पुरुष शरीरको परिश्रमकारक कर्म करे तब वायु कुपित होकर शिराके-जलको सकुचित कर एकत्र कर और सुखाय कर ऊची गाठको शीघ्र प्रगट करै है ॥

साध्यासाध्यके लक्षण ।

ग्रंथिःशिराजःसचकृच्छ्रसाध्योभवेद्यदिस्यात्सरुजश्चलश्च ॥
अरुक्सएवाप्यचलोमहांश्चममोत्थितश्चापिविवर्जनीयः ॥ ७ ॥

इति ग्रंथिनिदानम् ।

अर्थ—वह शिरा ( कहिये नसकी ) गाठ कृच्छ्रसाध्य है, यदि वह पीडायुक्त, तथा चचल होय तो वह गांठ साध्य है। और पीडारहित तथा निश्चल वडी और मर्मस्थानमे प्रगट भई होय तो वह असाध्य है, उसको वैद्य त्यागदे ॥

इति ग्रंथिनिदानं समाप्तम् ।

---

# अथार्बुदनिदानम् ।



संप्राप्ति ।

गात्रप्रदेशेक्वचिदेवदोषाःसमुच्छ्रितामांसमसृक्प्रदूष्य ॥
वृत्तंस्थिरंमंदरुजंमहान्तमनल्पमूलंचिरवृद्ध्यपाकम् ॥ १ ॥
कुर्वंतिमांसोच्छ्रयमत्यगाधंतदर्बुदंशास्त्रविदोवदन्ति ॥

अर्थ—शरीरके किसीभागमे दुष्ट भये जो दोष सो मास रुधिरको दुष्टकर गोल, स्थिर, मद, पीडायुक्त, यह ग्रथि रोगसे वडी होय है, वडी जिसकी जड होय, वहुत कालमे बढनेवाली तथा पकनेवाली न होय ऐसी मासकी गांठ उठे उसको वैद्य अर्बुद ऐसे कहते हैं ॥

वातेनपित्तेनकफेनचापिरक्तेनमांसेनचमेदसाच ॥ २ ॥
तज्जायतेतस्यचलक्षणानिग्रंथेःसमानानिसदाभवंति ॥

अर्थ—वह अर्बुदरोग वादीसे, कफसे,पित्तसे, रुधिरसे, मांससे और मेदसे, ऐसे छःप्रकारका-है । उसके लक्षण सर्वदा ग्रथिके सदृश होते हैं ॥

रक्तार्बुदके लक्षण।

**दोषःप्रदुष्टोरुधिरंशिराश्चसंकुच्यसंपीड्यततस्त्वपाकम् ॥ ३ ॥**
**सास्त्रावमुन्नह्यतिमांसपिंडंमांसांकुरैराचितमाशुवृद्धम् ॥**
**करोत्यजस्त्रंरुधिरप्रवृत्तिमसाध्यतेतद्रुधिरात्मकंतु ॥ ४ ॥**
**रक्तक्षयोपद्रवपीडितत्वात्पांडुर्भवेत्सोर्बुदपीडितस्तु ॥**

अर्थ-दुष्टभए दोप रुधिरको नसोको तथा सकोच कर तथा पीडितकर मासके गोलाको प्रगट करे वो यत्किंचित् पकनेवाला तथा कुछ स्रावयुक्त हो मांसपिंडको ऊचा करता हो और मांसांकुरसे व्याप्त और शीघ्र बढनेवाला ऐसा होय है, उसमेसे रुधिर निरन्तर बहाकरै यह रक्तार्बुद असाध्य है वो रक्तार्बुदपीडित रोगी रक्तक्षयके उपद्रवोकरके पीडित होनेसे उसका वर्ण पीला होजाय ये रक्तार्बुदके लक्षण है ॥

मांसजार्बुदकी संप्राप्ति।

**मुष्टिप्रहारादिभिरर्दितेऽगेमांसंप्रदुष्टंजनयेद्धिशोथम् ॥ ५ ॥**
**अवेदनंस्निग्धमनन्यवर्णमपाकमश्मोपममप्रचाल्यम् ॥**
**प्रदुष्टमांसस्यनरस्यगाढमेतद्भवेन्मांसपरायणस्य ॥ ६ ॥**
**मांसार्बुदंत्वेतदसाध्यमुक्तं-**

अर्थ-मुक्काआदिके लगनसे अंगमे पीडा होय,उस पीडासे दुष्ट भया मास सो सूजन उत्पन्न करे, उस सूजनमे पीडा नही होय और वहे चिकनी देहके वर्ण होय, पके नही, पत्थरके समान कठिन, हले नहीं ऐसी होय है जिस मनुष्यका मास बिगडजाय और नित्य मासको खाया करे उसको यह अर्बुदरोग होता है यह मासार्बुद असाध्य कहा है कोई मासार्बुदका भेद रसोली कहते हैं ॥

साध्यमे असाध्य प्रकार।

**साध्येष्वपीमानितुवर्जयेच्च ॥ संप्रस्रुतंमर्मणि**
**यच्चजातंस्रोतःसुवायच्चभवेदचाल्यम् ॥ ७ ॥**

अर्थ-साध्यमेभी यह इन लक्षणोवाला अर्बुदरोग वार्जित है,स्राव ( झरे ) और मर्मस्थानमे प्रगट भया हो, अथवा नासा आदि स्रोत (मार्ग,मे प्रगट भई हो और जो स्थिर होय, वह असाध्य है ॥

अध्यर्बुदके लक्षण।

**यज्जायतेऽन्यत्खलुपूर्वजातेज्ञेयंतदध्यर्बुदमर्बुदज्ञैः ॥**

अर्थ--पहिले जिस ठिकानेपर अर्बुद भया होय, उसी ठिकानेपर दूसरा अर्बुद प्रगट होय उसको अध्यर्बुद कहते हैं ॥

द्विरर्बुदके लक्षण।

यद्द्वंद्वजातंयुगपत्क्रमाद्वाद्विरर्बुदंतच्चभवेदसाध्यम् ॥ ८ ॥

अर्थ--एक कालमे दो अर्बुद, अथवा एकके पिछाडी दूसरा अर्बुद क्रमसे प्रगट होय, उसको द्विरर्बुद कहते है यह असाध्य है ॥

अर्बुद न पकनेका कारण।

नपाकमायांतिकफाधिकत्वान्मेदोबहुत्वाच्चविशेषतस्तु ॥

दोषस्थिरत्वाद्ग्रथनाच्चतेषांसर्वार्बुदान्येवनिसर्गतस्तु ॥ ९ ॥

इति गलगंड-गडमाला-अपची-ग्रन्थ्यर्बुदनिदानम्।

अर्थ--कफ अधिक होनेसे, अथवा विशेषकरके मेद अधिक होनेसे, तथा दोषोके स्थिर होनेसे, अथवा दोषोंके ग्रंथिरूप होनेसे, सर्व प्रकारकी अर्बुद स्वभावसेही पके नहीं है ॥

इति गलगंडगडमालाअपचीग्रंथ्यर्बुदानिदान समाप्तम्।

---

# अथ श्लीपदनिदानम्।

संप्राप्ति।

यःसज्वरोवंक्षणजोभृशार्तिःशोथोनृणांपादगतःक्रमेण ॥

तच्छ्लीपदंस्यात्करकर्णनेत्रशिश्नौष्ठनासास्वपिकेचिदाहुः ॥ १ ॥

अर्थ--जो सूजन अत्यन्त पीडायुक्त प्रथम वंक्षणमे उत्पन्न होकर धीरे धीरे पैरोमे आवे और उसके साथ ज्वरभी होय तो इस रोगको श्लीपद कहते हैं यह श्लीपद हाथ, कान, नेत्र, शिश्न, होठ, नाक, इसमेभी होती है ऐसे कोई कहते हैं ॥

वातज श्लीपद।

वातजंकृष्णरूक्षंचस्फुटितंतीव्रवेदनम् ॥

अनिमित्तरुजंतस्यबहुशोज्वरएवच ॥ २ ॥

अर्थ--वातकी श्लीपद काली, रूखी, फटी और जिसमे तीव्र पीडा होय, विनाकारणके दुखे, और उसमे ज्वर बहुत होय।

पित्तज श्लीपद।

पित्तजंपीतसंकाशंदाहज्वरयुतंमृदु ॥

अर्थ--पित्तकी श्लीपद पीले रंगकी दाह और ज्वरयुक्त होय, तथा नरम होय है ॥

श्लैष्मिक श्लीपद।

**श्लैष्मिकंस्निग्धवर्णंच्श्वेतंपांडुगुरुस्थिरम् ॥ ३ ॥**

अर्थ–कफकी श्लीपदका वर्ण चिकना, सफेद, पीला, भारी ओर कठिन होय है ॥

असाध्य लक्षण।

**वल्मीकमिवसंजातंकंटकैरुपचीयते ॥**
**अब्दात्मकंमहत्तच्चवर्जनीयंविशेषतः ॥ ४ ॥**

अर्थ–सर्पकी वावीके समान, वढीहुई और जिसके ऊपर काटे होयँ, ऐसी एक वर्षकी होगई हो, और वडी होय, उसको वैद्य त्याग दे ॥

श्लीपदमें कफको प्राधान्य अव्यभिचारकरके है उसको कहते हैं।

**त्रीण्यप्येतानिजानीयाच्छ्लीपदानिकफोच्छ्रयात् ॥**
**गुरुत्वंचमहत्त्वंचयस्मान्नास्तिविनाकफात् ॥ ५ ॥**

अर्थ–इन पूर्वोक्त तीनो श्लीपदोमे कफकी अधिकता है कारण इसका यह है कि, भारी और महत्त्व ये दोनो कफके विना नहीं होते ॥

श्लीपद कौनसे देशमें उत्पन्न होता है उसको कहते हैं।

**पुराणोदकभूयिष्ठाःसर्वर्तुषुचशीतलाः ॥**
**येदेशास्तेषुजायन्तेश्लीपदानिविशेषतः ॥ ६ ॥**

अर्थ–वर्षाऋतुमे पानी अधिक वर्षे परतु पृथ्वीके नीचे होनेसे सूखे नही इसीसे पुराने पानीका संच्य ( इकट्ठा ) होय, और सर्व ऋतुमे सरदी रहाकरे ऐसे जो अनूप देश ( पूर्व आदि देश ) उनमे यह श्लीपदरोग विशेषकरके होय है। जागल देशोमे अग्निका अधिक अश होय है इससे उन देशोमे जलको पुराणत्व नही होय है, और अनूप देशमे गरमी मद पडनेसे उष्ण ऋतुमे भी शीतलता होय है, हाथ कान आदिमे श्लीपद रोगकी शका होनेसे दोपोके कोपद्वारा ज्वर कहके श्लीपदको जान ले ॥

असाध्य लक्षण

**यच्छ्लेष्मलाहारविहारजातंपुंसःप्रकृत्याचकफात्मकस्य ॥**
**सास्रावमत्युन्नतसर्वलिंगंसकंडुरंश्लेष्मयुतंविवर्ज्यम् ॥ ७ ॥**

इति श्लीपदनिदानम्।

अर्थ–जो श्लीपद कफकारक आहार विहारसे प्रगटभया, तथा कफप्रकृतिवाले पुरुषके

कफसे प्रगटभया होय, तथा स्रावयुक्त तथा जिस दोषसे प्रगटभया होय उस दोषके लक्षण उसमें बढगए होयँ, जिसमें खुजली बहुत होय और कफयुक्त होय सो श्लीपदरोगी वैद्यकरके त्याज्य है ॥

इति श्लीपदनिदान समाप्तम्।

# अथ विद्रधिनिदानम्।

**त्वग्रक्तमांसमेदांसिप्रदूष्यास्थिसमाश्रिताः ॥ दोषाःशोथंशनै-घोरंजनयंत्युच्छ्रिताभृशम् ॥ १ ॥ महाशूलंरुजावंतंवृत्तंवाप्य-थवायतम् ॥ सविद्रधिरितिख्यातोविज्ञेयःषड्विधश्चसः ॥ २ ॥**
**पृथग्दोषैःसमस्तैश्चक्षतेनाप्यसृजातथा ॥**
**षण्णामपिहितेषांतुलक्षणंसंप्रचक्षते ॥ ३ ॥**

अर्थ--अत्यन्त बढे तथा अस्थि ( हड्डी ) का आश्रय करके रहनेवाले वातादि दोष त्वचा, रुधिर, मांस और मेद इनको दुष्टकर धीरे धीरे भयंकर शोथ उत्पन्न करें, उसकी जड हड्डीपर्यंत पहुँच जाय, उत्पत्तिकालमें अत्यन्त पीडाकारक तथा गोल अथवा लंबा जो शोथ ( सूजन ) होय, उसको विद्रधि कहते हैं पृथक् दोषोंसे ३, सन्निपात १, क्षत ( घाव ) से १, और रुधिरसे १, मिलकर छः प्रकारकी विद्रधि होय है उन छःहो विद्रधिके लक्षण कहते हैं ॥

वातजविद्रधिके लक्षण।

**कृष्णोऽरुणोवाविषमोभृशमत्यर्थवेदनः ॥**
**चित्रोत्थानप्रपाकश्चविद्रधिर्वातसंभवः ॥ ४ ॥**

अर्थ--जो विद्रधि काली लाल विषम कहिये कदाचित् छोटी कदाचित् मोटी हो अत्यन्त वेदनायुक्त और उसका प्रगट होना तथा पाक ये नानाप्रकारके होय, उसको वातविद्रधि कहते हैं ॥

पित्तकी विद्रधिके लक्षण।

**पक्कोदुंबरसंकाशःश्यावोवाज्वरदाहवान् ॥**
**क्षिप्रोत्थानप्रपाकश्चविद्रधिःपित्तसंभवः ॥ ५ ॥**

अर्थ--पित्तकी विद्रधि पके गूलरके समान होय, अथवा काला वर्ण होय, ज्वर, दाह, करनेवाली उसको प्रगट और पाक शीघ्र होय ॥

### कफकी विद्रधिके लक्षण

**शरावसदृशःपांडुःशीतःस्निग्धोऽल्पवेदनः ॥**
**चिरोत्थानप्रपाकश्चविद्रधिःकफसंभवः ॥ ६ ॥**

अर्थ—कफकी विद्रधि शराव ( मिट्टीके शराव ) सदृश बडी होय, पीलावर्ण, शीतल, चिकनी, अल्पपीडा होय उसको उत्पत्ति और पाक देरमे होयहै ।

### पकनेके अन्तर उनका स्राव ।

**तनुपीतसिताश्चैषामास्रावाःक्रमशःस्मृताः ॥**

अर्थ—ये तीनप्रकार विद्रधि पकनेके अनन्तर होते है इनसे वातादिकोके क्रमसे अर्थात् वातसे पतली, पित्तसे पीली, कफसे सफेद राध निकलती है ।

### सन्निपातकी विद्रधिका लक्षण ।

**नानावर्णरुजास्रावोघाटालोविषमोमहान् ॥ ७ ॥**
**विषमंपच्यतेचापिविद्रधिःसान्निपातिकः ॥**

अर्थ—सन्निपातकी विद्रधिमे अनेकप्रकारका वर्णकालापीलाआदि अनेकप्रकारकी पीडा, जैसे तोद, दाह, खुजली, पीडा,तथा अनेकप्रकारका स्राव जैसे पतला,पीला,सफेद स्राव, होय, घाटाल कहिये नीचे स्थूल होय और ऊपर पतरी हो, अर्थात् अग्रभाग अतिऊंचा होय,छोटी बडी कदाचित् पके कदाचित् नही पके ऐसी होय ॥

### आगंतुजविद्रधिकी सम्प्राप्ति ।

**तैस्तैर्भावैरभिहतेक्षतेवाऽपथ्यकारिणः ॥ ८ ॥**
**क्षतोष्मावायुविसृतःसरक्तंपित्तमीरयेत् ॥**
**ज्वरस्तृष्णार्त्तदाहश्चजायतेतस्यदेहिनः ॥ ९ ॥**
**आगंतुविद्रधिर्ज्ञेयःपित्तविद्रधिलक्षणः ॥**

अर्थ--तिन तिन भाव कहिये लकडी पत्थर ढेला आदिका अभिघात ( चोटलगना पिचजाना इत्यादि ) होनेसे, अथवा तलवार, तीर, बरछी, इत्यादिक लगनेसे घाव होजानेसे, अपथ्य करनेवाले पुरुषके कुपित वायुकरके विसृत ( फैला ) क्षतोष्मा ( घावकी गरमी ) और रुधिरसहित पित्तको कोप करे उस पुरुषके ज्वर, प्यास और दाह होय । और उसमे पित्तकी विद्रधिके लक्षण मिलते होय इनको आगतुजविद्रधि जाननी ॥

रक्तजविद्रधिके लक्षण।

**कृष्णस्फोटावृतःश्यावस्तीव्रदाहरुजाकरः ॥**
**पित्तविद्रधिलिंगस्तुरक्तविद्रधिरुच्यते ॥ १० ॥**

अर्थ--काले फोडोसे व्याप्त, श्यामवर्ण, दाह, पीडा और ज्वर, ये उसमे तीव्र होंय, तथा पित्तकी विद्रधिके लक्षणोकरके युक्त होय, उसको रक्तविद्रधि जानना ॥

अंतर्विद्रधिके लक्षण।

**पृथक्संभूयवादोषाःकुपितागुल्मरूपिणम् ॥**
**वल्मीकवत्समुन्नद्धमंतःकुर्वंतिविद्रधिम् ॥ ११ ॥**

अर्थ--कुपितभये पृथक् २ अथवा मिलेहुए दोष शरीरमे गोलाके और वाबीके समान बडी ऐसी विद्रधि उत्पन्न करैहै ॥

विद्रधिके स्थान।

**गुदेवस्तिमुखेनाभ्यांकुक्षौवंक्षणयोस्तथा ॥**
**वृक्कयोःप्लीह्नियकृतिहृदयेक्लोम्निचाप्यथ ॥ १२ ॥**
**एषामुक्तानिलिंगानिबाह्यविद्रधिलक्षणैः ॥**
**गुदेवातनिरोधस्तुबस्तौकृच्छ्राल्पमूत्रता ॥ १३ ॥**
**नाभ्यांहिक्कातथाऽऽटोपःकुक्षौमारुतकोपनम् ॥**
**कटिपृष्ठग्रहस्तीव्रोवंक्षणोत्थेचविद्रधौ ॥ १४ ॥**
**वृक्कयोःपार्श्वसंकोचः प्लीह्न्युच्छ्वासावरोधनम् ॥**
**सर्वांगप्रग्रहस्तीव्रोहृदिकंपश्चजायते ॥ १५ ॥**
**श्वासोयकृतिहिक्काचक्लोम्निपेपीयतेपयः ॥**

अर्थ--गुदा, वस्ति, मुख, नाभि, कूख, वक्षण, वृक्क, ( कूखपिडी प्लीह ) यकृत् ( कलेजा ) हृदय, क्लोम, ( प्यासका स्थान ) इन ठिकानोंपर विद्रधि होतीहैं, इनके लक्षण बाह्यविद्रधिके समान जानने।

गुदामे--विद्रधि होनेसे अधोवायुका रोध होय।

वस्तिमें--अर्थात् मूत्राशयमे होनेसे कठिनतासे थोडा २ मूते।

नाभिमें--होनेसे हिचकी तथा गुडगुड शब्द होताहै।

कूखमें--होनेसे पवनका कोप होय।

वंक्षणमें--होनेसे कमर और पीठका बलपूर्वक जकड जाना होय।

कूखके पिंडमे–होनेसे पसवाडोका संकोच होय।

प्लीहमे–होनेसे श्वास रुकजाय।

हृदयमे–होनेसे सब अंग जिकडजायँ और कंप होय।

कलेजेमे–होनेसे श्वास और हिचकी होय।

क्लोममे–अर्थात् पिपासास्थानमें विद्रधि होनेसे वारंवार पानी पीनेकी इच्छा होयहै।

स्रावनिर्गम।

**नाभेरुपरिजाःपक्वायांत्यूर्ध्वमितरेत्वधः ॥ १६ ॥**

**अधःस्रुतेषुजीवेत्तुस्रुतेषूर्ध्वंनजीवति ॥**

अर्थ–नाभिके ऊपर जो विद्रधि होय उनके पकनेसे जो स्राव कहिये राध आदिका वहना होय वह मुखके रास्ते होय है और नाभिके नीचे होनेसे जो स्राव होय वह गुदाके मार्गसे होय है और नाभिके समीप होनेवाली विद्रधियोका स्राव दोनो मार्गोंसे होय जिनका स्राव नीचेके मार्ग हो वह रोगी जीवे और ऊपरके मार्ग जिसका स्राव होय वह रोगी वचे नही ॥

विद्रधिमें साध्यासाध्य।

**हृन्नाभिवस्तिवर्ज्यायेतेषुभिन्नेषुवाह्यतः ॥ १७ ॥**

**जीवेत्कदाचित्पुरुषोनेतरेषुकथंचन ॥**

**साध्याविद्रधयःपंचविवर्ज्यःसान्निपातिकः ॥**

**आमपक्वविदग्धत्वंतेषांशोथवदादिशेत् ॥ १८ ॥**

अर्थ–हृदय, नाभि और वस्ति इन ठिकानोको छोडकर प्रगट जो विद्रधि अर्थात् प्लीहा क्लोम इत्यादि ठिकाने वाहर फूटनेसे कदाचित् पुरुष वचजाय और ठिकानेपर फूटनेसे नही वचे ॥

पहली पाच विद्रधि साध्य है, सन्निपातकी विद्रधि असाध्य है, इन विद्रधियोको आम, पक्व और विदग्ध ये तीन अवस्था शोथ रोगके समान जाननी चाहिये ॥

असाध्यलक्षण।

**आध्मातंवद्धनिष्यंदंछर्दिहिक्कातृषान्वितम् ॥**

**रुजाश्वाससमायुक्तंविद्रधिर्नाशयेन्नरम् ॥ १९ ॥**

अर्थ–अफरायुक्त, मूत्र रुकगया होय, हिचकी, वमन और प्यास इनसे पीडित, शूल, श्वास इनकरके युक्त ऐसे मनुष्यके विद्रधिरोग असाध्य होय है।

इति माधवभावार्थदीपिकाभाषाटीकायां विद्रधिनिदान समाप्तम्।

# व्रणनिदानम् ।



एकदेशोत्थितःशोथोव्रणानांपूर्वलक्षणम् ॥
षड्विधःस्यात्पृथक्सर्वैरक्तागंतुनिमित्तजः ॥ १ ॥
शोथाःषडेतेविज्ञेयाःप्रागुक्तैः शोथलक्षणैः ॥
विशेषःकथ्यतेतेषांपक्कापक्कविनिश्चये ॥ २ ॥

अर्थ--एक ठिकानेपर सूजन उत्पन्न होनेसे जाने कि, इसके व्रण ( फोडा ) होगा सो व्रणरोग पृथक् दोषोसे ३, सन्निपातसे १, रुधिरसे १, और आगंतुज १, ऐसे मिलकर छः प्रकारका है, इन छहो व्रणोमे जो प्रथम सूजन होय उसके लक्षण. शोथरोगलक्षणके समान जानने इनमें पक्क ( पकने ) अपक्क ( न पकने ) के विषयमे जो विशेषता है उसको इस जगह कहते हैं ॥

वातादिभेदसे व्रणके लक्षण ।

विषमंपच्यतेवातात्पित्तोत्थश्चाचिराच्चिरम् ॥
कफजःपित्तवच्छोफोरक्तागंतुसमुद्भवः ॥ ३ ॥

अर्थ--वादीसे विषम पाक होय अर्थात् कहीं पके कहीं नहीं पके, पित्तसे बहुत जल्दी पके, कफका फोडा देरमे पके, और रुधिरका तथा आगंतुज फोडेका पकना पित्तके समान् अर्थात् जल्दी पके है ॥

कच्चे फोडेके लक्षण ।

मंदोष्मताऽल्पशोथत्वंकाठिन्यंत्वक्सवर्णता ॥
मंदवेदनताचैवशोथानामामलक्षणम् ॥ ४ ॥

अर्थ--सूजन हाथके छूनेसे थोड़ी गरम लगे, थोडी सूजन होय, फोड़ेका स्थान करडा होय, तथा देहके रंग समान उसका रंग होय और उसमे पीडा मंद होय, ये कच्ची सूजनके लक्षण है॥

पच्यमानव्रणके लक्षण ।

दह्यतेदहनेनेवक्षारेणेवचपच्यते ॥
पिपीलिकागणेनेवदश्यतेछिद्यतेतथा ॥ ५ ॥
भिद्यतेचैवशस्त्रेणदंडेनेवचताड्यते ॥
पीड्यतेपाणिनेवांतः सूचीभिरिवतुद्यते ॥ ६ ॥

सोषाचोषोविवर्णःस्यादंगुल्येवावपाट्यते ॥
आसनेशयनस्थानेशांतिंवृश्चिकविद्धवत् ॥ ७ ॥
नगच्छेदाततःशोथोभवेदाध्मानवस्तिवत् ॥
ज्वरस्तृष्णाऽरुचिश्चैवपच्यमानस्यलक्षणम् ॥ ८ ॥

अर्थ–जिस समय व्रण पकनेको होय उस समय ये लक्षण होते है, अग्निसे जले हुएके समान जलन होय फोडेको स्थान मालूम हो, खार लगानेकासा चिनमिनावै, चैंटी काटनेकीसी पीडा होय, वह दो टूक करनेसे समान, तथा शस्त्रसे फारनेके समान, दंड आदिके मारनेके समान तथा हाथसे मींडनेके समान, तथा भीतर सूईसे छेदनेके समान पीडा होय और उसमे अत्यंत दाह होय, अग्निसे सेकनेके समान उसमे वेदना होय, उस फोडेका रंग बदल जाय, उंगलीके लगानेसे उखारनेकीसी पीडा होय, बैठनेमे सोनेमे खडे रहनेमे बीछू काटनेकीसी घोर पीडा होय, वो पीडा कभी शांति नहीं होय, वो सूजन फूली हुई वस्ती ( मूत्रस्थानके सदृश तनीसी होय उसमे ज्वर प्यास अरुचि लक्षण होते है ॥

पक्वव्रणके लक्षण ।

वेदनोपशमःशोथोलोहितोऽल्पोनचोन्नतः ॥
प्रादुर्भावोवलीनांचतोदःकंडूर्मुहुर्मुहुः ॥ ९ ॥
उपद्रवाणांप्रशमोनिम्नतास्फुटनंत्वचाम् ॥
वस्ताविवाम्बुसंचारःस्याच्छोथेऽंगुलिपीडिते ॥ १० ॥
पूयस्यपीडयत्येकमंतमंतेचपीडिते ॥
भक्ताकांक्षाभवेच्चैवशोथानांपक्वलक्षणम् ॥ ११ ॥

अर्थ–व्रणपकनेसे पीडा शांत होजाय, उसकी सूजन तामेके रंगकी होय और थोडी होय, ऊंची न होय उसमे गुलझट पडे सुई चुभानेकीसी पीडा होय, बारंवार खुजली चले, पित्तके कोपसे दाहादि उप द्रवोंकी शांति हो, स्वभावसेही व्रणकी जगह गढेला होजाय, त्वचाये फटजांय, सूजन, अंगुलिसें दबानेसे जैसे बस्तिमे पानी इधर उधर होय, उसी प्रकार शोथमे राध इधर उधर होय, व्रणके अन्त अवयवके दबानेपर राध एक देशको पीडित करती है अर्थात् राध एक जगहसे निकलने लगती है अन्नमे इच्छा हो ये पक्व व्रणके लक्षण हैं ।

एकदोषसे सूजन उत्पन्न होय उसमें पकनेके समय तीनों दोषोंका संबंध होय है ।

नर्तेऽनिलाद्रुङ्विनानपित्तंपाकःकफंवापिविनानपूयः ॥

तस्माद्धिसर्वेपरिपाककालेपचन्तिशोथास्त्रिभिरेवदोषैः ॥ १२ ॥

अर्थ–वादीके विना पीडा नहीं होय, पित्तके विना पाक नही होय और कफके विना राध नही होय अर्थात् पकनेके समय तीनो दोषोके मिलनेसे सब प्रकारकी सूजन पकती है। रक्तपाकलक्षण ग्रन्थांतरोंमे कहे हैं, यथा–"कफजेषुचशोथेषुगंभीरपाकमेत्यसृक्। पक्कलिंगंततःस्पष्टंयत्रस्याक्लिन्नशोफता॥ त्वक्सावर्ण्यंरुजोल्पत्वंघनस्पर्शत्वमश्मवत्। रक्तपाकमितिब्रूयात्तप्राज्ञोमुक्तसंशयः॥" इसका अर्थ सुगम है॥

राध न निकालनेसे जो परिणाम होय है उसको दृष्टांत देकर कहते हैं।

कक्षंसमासाद्ययथैववह्निर्वाय्वीरितःसंदहतिप्रसह्य॥
तथैवपूयोप्यविनिःसृतोहिमांसंशिराःस्नायुचखादतीह॥ १३ ॥

अर्थ–फूसके गजमे लगी हुई आग पवनकी सहायता पाकर जैसे वह फूसको जलाकर खाक करदे उसी प्रकार व्रणमेसे राध न निकालनेसे वह राध मास शिरा और स्नायु इनको खाय लेती है॥

आमादि लक्षणज्ञानसे वैद्यके गुणदोष दिखाते हैं।

आमंविदह्यमानंचसम्यक्पक्वंचयोभिषक्॥
जानीयात्सभवेद्वैद्यःशेषास्तस्करवृत्तयः॥ १४ ॥

अर्थ–आम (कच्चा) पच्यमान और जो अच्छी रीतिसे पकगया हो ऐसे व्रणके लक्षण जो वैद्य जाने है, उसीको वैद्य जानना चाहिये, बाकीके सब चोर है॥

अपक्कका छेदन और पकेकी उपेक्षा करनेमें दोष।

यश्छिनत्त्याममज्ञानाद्यश्चपक्कमुपेक्षते॥
श्वपचाविवमंतव्यौतावनिश्चितकारिणौ॥ १५ ॥

अर्थ–जो अज्ञानसे कच्चे फोडेको पका समझकर फोडे और जो पके फोडेको कच्चा समझकर चीरे नहीं ये दोनो अविचारवान् वैद्य चांडालके समान जानने॥

इति व्रणशोथनिदानम्।

अथ शारीरव्रणनिदानम्।

द्विधाव्रणःसविज्ञेयःशारीरागन्तुभेदतः॥
दोषैराद्यस्तयोरन्यःशस्त्रादिक्षतसंभवः॥ १ ॥

अर्थ–शारीर और आगंतुक इन भेदोसे वह व्रण दो प्रकारका है, पहिला शारीर दोषोके कोपसे होय है और दूसरा शस्त्रादिककरके घावके होनेसे होय है॥

---

१ "व्रण गात्रविचूर्णने," इत्यस्माद्धातोर्व्रणस्यसाधुत्वम्। व्रणनिरुक्तिश्च सुश्रुते "व्रणोति यस्माद्रूढेऽपि व्रणवस्तु न नश्यति। आदेहधारणाज्जन्तोर्व्रणस्तस्मान्निरुच्यते" इति।

वातिकव्रण ।

**स्तब्धःकठिनसंस्पर्शोमन्दस्रावोमहारुजः ॥**
**तुद्यतेस्फुरतिश्यावोव्रणोमारुतसंभवः ॥ २ ॥**

अर्थ—वादीसे प्रगट व्रणमे जकड़ना, तथा हाथके छूनेसे कठिन मालूम होय, उसमेसे थोड़ा स्राव होय, सूईके चुभानेकीसी पीडा होय तथा फडकताहोय और उसका रंग नीला होय ॥

पित्तव्रणके लक्षण ।

**तृष्णामोहज्वरक्लेददाहदुष्टयवदारणैः ॥**
**व्रणंपित्तकृतंविद्याद्गंधैःस्रावैश्चपूतिकैः ॥ ३ ॥**

अर्थ—प्यास, मोह, ज्वर, क्लेद, दाह, सड़ना, चिरासा होय, बास आवे, दुर्गन्धयुक्त स्राव होय, ये पित्तव्रणके लक्षण हैं ॥

कफव्रणके लक्षण ।

**वहुपिच्छोगुरुःस्निग्धःस्तिमितोमन्दवेदनः ॥**
**पांडुवर्णोऽल्पसंक्लेदीचिरपाकीकफोद्भवः ॥ ४ ॥**

अर्थ--कफका स्राव अत्यत गाढा, भारी, चिकना, निश्चल, मन्द, पीडा, पीला रग, थोडा स्रवनेवाला और बहुत कालमे पके ॥

रक्तजद्वन्द्वजव्रण ।

**रक्तोरक्तस्रुतीरक्ताद्द्वित्रिजःस्यात्तदन्वयैः ॥ ५ ॥**

अर्थ—जो रक्तके कोपसे व्रण होय वह रक्तवर्ण, उसमेसे रुधिर स्रवे एक दोष और रुधिरके संबन्धसे जो होय वह द्वन्द्व और दो दोष अथवा तीन दोष तथा रुधिर इनके मिलनेसे सन्निपातका व्रण जानना, इस प्रकार तीनो दोषोमे रुधिरके सम्बन्धकी कल्पना करना चाहिये ॥

सुखव्रणके लक्षण ।

**त्वङ्मांसजःसुखेदेशेतरुणस्यानुपद्रवः ॥**
**धीमतोऽभिनवःकालेसुखसाध्यःसुखव्रणः ॥ ६ ॥**

अर्थ—जो व्रण त्वचा और मास तथा मर्मरहित स्थानमे उपद्रवरहित होय और जो तरुण तथा हिताहितजाननेवाले पुरुषके हेमंत शिशिरकालमे नवीन प्रगट होय, उसको सुखव्रण कहते है वह सुखसाध्य है ॥

कृच्छ्रसाध्य और असाध्य लक्षण ।

**गुणैरन्यतमैर्हीनस्ततःकृच्छ्रोव्रणःस्मृतः ॥**
**सर्वैर्विहीनोविज्ञेयःसोऽसाध्योभूर्युपक्रमः ॥ ७ ॥**

अर्थ-जो पूर्व श्लोकमें लक्षण कह आये उनमेंसे कुछ लक्षण थोडे होनेसे व्रण कृच्छ्रसाध्य होय है और सब गुणरहित होय बहुत उपद्रवयुक्त होय वह असाध्य है उसकी चिकित्सा न करनी चाहिये ॥

दुष्टव्रणके लक्षण।

पूतिपूयातिदुष्टासृक्स्राव्युत्संगीचिरस्थितिः ॥
दुष्टोव्रणोऽतिगंधादिःशुद्धलिंगविपर्ययः ॥ ८ ॥

अर्थ-जिसमेंसे दुर्गंधयुक्त राध और अत्यन्त सड़ा भया रुधिर बहे जो ऊपरसे उठाहुआ हो, बहुत दिन रहनेवाला हो, अत्यन्त दुर्गन्ध दुर्वर्ण स्राव पीडा युक्तहोय उसको दुष्टव्रण कहते हैं वह वक्ष्यमाण शुद्धलिंगके विपरीत होता है ॥

शुद्धव्रणके लक्षण।

जिह्वातलाभोऽतिमृदुःश्लक्ष्णःस्निग्धोऽल्पवेदनः ॥
सुव्यवस्थोनिरास्रावःशुद्धोव्रणइतिस्मृतः ॥ ९ ॥

अर्थ-जो व्रण जीभके नीचे भागके समान अत्यन्त नरम होय, स्वच्छ, चिकना, थोड़ी पीडा युक्त भले प्रकारका कहिये ऊंचा आदि जो दुष्ट व्रणादिकमे लक्षण कहे वे न होयँ दोषकृत रक्तादिस्रावरहित होय उसको शुद्धव्रण जानना ॥

भरनेवाले व्रणके लक्षण।

कपोतवर्णप्रतिमोयस्यांताःक्लेदवर्जिताः ।
स्थिराश्चपिडिकावंतोरोहतीतितमादिशेत् ॥ १० ॥

अर्थ-जिसका घाव कबूतरके रंगसदृश होय और जिसमे क्लेद न बहता होय और घाव स्थिर हो, जिसमे फुन्सीसी मालूम हो उसको वैद्य जाने कि, यह व्रण ( घाव ) स्थिर भरनेवाला है ॥

जो व्रण भरगयाहो उसके लक्षण।

रूढवर्त्मानमग्रंथिमशूनमरुजंव्रणम् ॥
त्वक्सवर्णसमतलंसम्यग्रूढंतमादिशेत् ॥ ११ ॥

अर्थ-जिसका मार्ग भरगया होय, गाठ रहित होय, सूजन और पीडा जिसमे होय नहीं, त्वचाके समान वर्ण होगया हो घावका गढेला भरकर बराबर होगया हो वह व्रण उत्तम भरा जानना ॥

व्याधिविशेषकरके व्रण कृच्छ्रसाध्य होताहैं सो कहते हैं।

**कुष्ठिनांविषजुष्टानांशोषिणांमधुमेहिनाम् ॥**
**व्रणाःकृच्छ्रेणसिध्यंतियेषांचापिव्रणेव्रणाः ॥ १२ ॥**

**अर्थ**—कोढीपुरुष,विषवाला पुरुष, क्षयीरोगवाला, मधुमेही पुरुष, ऐसो का व्रण बडे कष्टसे साध्य होता है और जिसके पहिले व्रणमे व्रण प्रगट होय, उसके ये व्रण कष्टसाध्य होते हैं॥

साध्यासाध्य लक्षण।

**वसांमेदोऽथमज्जानमस्तुलुंगंचयःस्रवेत् ॥**
**आगन्तुजोव्रणःसिध्येन्नसिध्येद्दोषसंभवः ॥ १३ ॥**

**अर्थ**—जिस व्रणमेसे चर्बी, मेद, मज्जा, और बस्ति स्नेह, ये बहे वह व्रण आगतुज होय तो साध्य है और दोषकृत् होय तो साध्य नही होय॥

असाध्यव्रणके लक्षण।

**मद्यागुर्वाज्यसुमनःपद्मचन्दनचम्पकैः ॥**
**सुगंधादिव्यगंधाश्चमुमूर्षूणांव्रणाःस्मृताः ॥ १४ ॥**

**अर्थ**—मद्य, अगर, घृत, फूल, कमल, चन्दन और चपाके फूलके समान अथवा चमत्कारी पारिजात आदि फूलकीसी गध जिस व्रणमेसे आवै वह व्रण मरनेवाले रोगीके जानना॥

दूसरे असाध्य लक्षण।

**येचमर्मस्वसंभूताभवंत्यत्यर्थवेदनाः॥दह्यन्तेचान्तरत्यर्थंबहिःशीताश्चयेव्रणाः॥ १५ ॥ दह्यन्तेबहिरत्यर्थंभवंत्यंतश्चशीतलाः॥ प्राणमांसक्षयश्वासकासारोचकपीडिताः ॥ १६॥ प्रवृद्धपूयरुधिराव्रणायेषाचमर्मसु॥क्रियाभिःसम्यगारब्धानसिध्यन्तिचयेव्रणाः ॥ १७॥ वर्जयेदेवतान्वैद्यःसंरक्षन्नात्मनोयशः॥**

**अर्थ**—जे व्रण मर्मस्थानमे प्रगट हुए हो और उनमे अत्यत पीडा होय वे तथा जिस जिस व्रणके भीतर दाह होय और बाहर शीतल होय वे अथवा बाहर दाह होय और भीतर शीतलता होय वे तथा जिनमे बल, मास इनका क्षय होय श्वास, खासी, अरुचि, इनसे अत्यत पीडित होय ऐसे, अथवा जे व्रण मर्मस्थानमे प्रगट भये हो उनमेसे राध, रुधिर, बहुत बहे वे अथवा जिन व्रणोकी अच्छी चिकित्सा करनेसे भी अच्छे न होयँ ऐसे व्रणोको अपने यशकी रक्षा करनेवाला वैद्य त्यागदे॥

व्रणरोगमें अपथ्य ।

व्रणेश्वयथुरायासात्सचरागश्चजागरात् ॥
तौचरुक्चदिवास्वापात्ताश्चमृत्युश्चमैथुनात् ॥ १८ ॥

अर्थ–परिश्रम करनेसे व्रणमे सूजन होती है और जागनेसे ललोही होती है और दिनमे सोनेसे सूजनपर लाली आयकर पीडा होती है और मैथुन करनेसे सूजन लाली पीडा होकर मृत्यु होय ॥

इति श्रीमाधवभावार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायांशारीरव्रणनिदानं समाप्तम् ।

---

# आगंतुव्रणनिदानम् ।

नानाधारामुखैःशस्त्रैर्नानास्थाननिपातितैः ॥
भवंतिनानाकृतयोव्रणास्तांस्तान्निबोधमे ॥ १ ॥

अर्थ–अनेक प्रकारकी धारवाले तथा मुखवाले शस्त्र अनेक ठिकानेपर लगनेसे अनेक प्रकारकी आकृति ( स्वरूप ) के व्रण होते हैं उनको कहता हू ॥

संख्यासंप्राप्ति ।

छिन्नंभिन्नंतथाविद्धंक्षतंपिच्चितमेवच ॥
घृष्टमाहुस्तथाषष्ठंतेषांवक्ष्यामिलक्षणम् ॥ २ ॥

अर्थ–छिन्न, भिन्न, विद्ध, क्षत, पिच्चित, और छठा घृष्ट, ऐसे आगतु व्रण छः प्रकारके होतेहै उनके लक्षण कहता हू ॥

छिन्नके लक्षण ।

तिर्यक्छिन्नऋजुर्वापियोव्रणस्त्वायतोभवेत् ॥
गात्रस्यपातनंतद्धिच्छिन्नमित्यभिधीयते ॥ ३ ॥

अर्थ–जो व्रण तिरछा, छिद्रयुक्त सरल ( सीधा ), अथवा लवा होय, शरीरके अवयवके एकदेशको गिरानेवाला होय उसको छिन्न व्रण कहते है ॥

भिन्नके लक्षण ।

शक्तिकुंतेषुखड्गाग्रविषाणैराशयोहतः ॥
यत्किंचित्स्रवतेतद्धिभिन्नलक्षणमुच्यते ॥ ४ ॥

अर्थ–बर्च्छी, भाला, वाण, तरवारके अग्रभाग, विषाण ( दांत सींग ) इनसे आशय ( वात्वाशय और मलाशय ) को वेधकर थोडासा स्राव होय अर्थात् रुधिर मूत्रादि आशयोमेंसे

जो आशय भिन्न हुआ हो उससे उसका स्राव हो, जैसे वस्तिके भिन्न होनेपर मूत्र निकले। उसको भिन्न कहते है ॥

कोष्ठके लक्षण।

**स्थानान्यामाग्निपक्वानांमूत्रस्यरुधिरस्यच ॥**
**हृदुण्डुकःफुप्फुसश्चकोष्ठइत्यभिधीयते ॥ ५ ॥**

अर्थ—आमाशय, अग्न्याशय, पक्वाशय, मूत्राशय, रक्ताशय ( यकृत् प्लीह ), हृदय, मलाशय और फुप्फुस इन स्थानोकी कोष्ठसंज्ञा है ॥

इन भेदोंके लक्षण।

**तस्मिन्भिन्नेरक्तपूर्णेज्वरोदाहश्चजायते ॥**
**मूत्रमार्गगुदास्येभ्योरक्तंघ्राणाच्चगच्छति ॥ ६ ॥**
**मूर्च्छाश्वासतृषाध्मानमभक्तच्छन्दएवच ॥**
**विण्मूत्रवातसंगश्चस्वेदास्रावोऽक्षिरक्तता ॥ ७ ॥**
**लोहगंधित्वमास्यस्यगात्रदौर्गंध्यमेवच ॥**
**हृच्छूलंपार्श्वयोश्चापिविशेषंचात्रमेश्रृणु ॥ ८ ॥**

अर्थ—वह कोष्ट भिन्न होकर रुधिरसे भरजावे तब ज्वर दाह होय है, मूत्रमार्ग, गुदा, मुख, और नाक इनमेसे रुधिर वहै, मूर्च्छा, श्वास, प्यास, पेटका फूलना, अन्नमें अरुचि, मलमूत्र, अधोवायु इनका अवरोध, पसीना बहुत आवे, नेत्रोंमे लाली, मुखमे लोहेकीसी वास आवे, अंगोंमे दुर्गंध, हृदय और पसवाडोमें शूल ये लक्षण होते हैं इनसे जो विशेष लक्षण हैं उनको मुझसे सुन ॥

आमाशयस्थितरक्तके लक्षण।

**आमाशयस्थेरुधिरेरुधिरंछर्दयत्यपि ॥**
**आध्मानमंतिमात्रंचशूलंचभृशदारुणम् ॥ ९ ॥**

अर्थ—आमाशयमे रुधिरका सचय होनेसे रुधिरकी वमन, पेट बहुत फूले और अत्यत भयंकर शूल होय ॥

पक्वाशयस्थके लक्षण।

**पक्वाशयगतेचापिरुजागौरवमेवच ॥**
**अधःकायेविशेषेणशीतताचभवेदिह ॥ १० ॥**

अर्थ—पक्वाशयमें रुधिरका संचय होनेसे शूल, देहमे भारीपना, और कमरसे लेकर नीचेके भागमें शीतलता होय है ॥

विद्धव्रणके लक्षण।

सूक्ष्मास्यशल्याभिहतंयदंगंत्वाशयंविना ॥
उत्तुंडितंनिर्गतंवाताद्विद्धमितिनिर्दिशेत् ॥ ११ ॥

अर्थ–बारीक अग्रभागवाले सई आदि शल्यसे, आमादि आशय विना जो अंग हैं उन्से वेध होनेसे तुंडित कहिये उनमेसे वह शल्य न निकला होय, निर्गत कहिये शल्य निकल गया हो उसको विद्धव्रण कहते हैं ॥

क्षतके लक्षण।

नातिच्छिन्नंनातिभिन्नसुभयोर्लक्षणान्वितम् ॥
विषमंव्रणमंगेषुतत्क्षतंत्वभिनिर्दिशेत् ॥ १२ ॥

अर्थ--जिसमे अंग अतिच्छिन्न, तथा अतिभिन्न न भया हो, और दोनोंके लक्षण मिलते हो, तथा व्रण तिरछा बाँका होय, उसको क्षतव्रण कहते है ॥

पिच्चितके लक्षण।

प्रहारपीडनाभ्यांतुयदंगंपृथुतांगतम् ॥
सास्थितत्पिच्चितंविद्यान्मज्जारक्तपरिप्लुतम् ॥ १३ ॥

अर्थ–जो हाडसहित अंग, प्रहार कहिये मुद्गर आदिकी चोट अथवा किवाड आदि-के दबना इत्यादि योगसे पिच जाय, तथा मज्जा रुधिरकरके युक्त होय, घाव न होय उसको पिच्चितव्रण कहते हैं ॥

घृष्टके लक्षण।

घर्षणादभिघाताद्वायदंगंविगतत्वचम् ॥
उषास्रावान्वितंतद्धिघृष्टमित्यभिनिर्दिशेत् ॥ १४ ॥

अर्थ–कठिन वस्त्र आदिको घर्षण ( घिसने ) से, चोटके लगनेसे, जिस अंगके ऊपरकी त्वचा जाती रहै, तथा आगके समान गरम रुधिर चुचाय, उसको घृष्ट ऐसे कहते हैं ॥

सशल्यव्रणके लक्षण।

श्यावंसशोथंपिटिकान्वितंचमुहुर्मुहुःशोणितवाहिनंच ॥
मृदून्नतंबुद्बुदतुल्यमांसंव्रणंसशल्यंसरुजंवदंति ॥ १५ ॥

अर्थ–जो व्रण नीला, सूजनयुक्त, मरोडिनसे व्याप्त होय और वारवार उनमेसे रुधिर बहै और नरम होकर ऊपर बबूलेके समान उठा हुआ जिसका मास होय, उस व्रणको सशल्य है ऐसे जानना चाहिये ॥

---

१ "शल्यंनाम विविधतृणकाष्ठपाषाणपांशुलोहलोष्ठास्थिवालनखपूयास्रावान्तर्गर्भादयः ॥"

कोष्ठभेदलक्षण।

**त्वचोऽतीत्यशिरादीनिभित्त्वावापरिहृत्यवा ॥**
**कोष्ठेप्रतिष्ठितंशल्यंकुर्यादुक्तानुपद्रवान् ॥ १६ ॥**

**अर्थ**–सप्त त्वचामे व्याप्त होकर शिरा, मांस, नस, हड्डी इनकी सन्धियोको वेधकर, अथवा सिरा आदिको छोड जो शल्य कोष्टमे रहे है, उससे आगे कहेहुए लक्षण होते हैं ॥

असाध्यकोष्ठभेद।

**तत्रांतर्लोहितंपाण्डुशीतपादकराननम् ॥**
**शीतोच्छ्वासंरक्तनेत्रमानद्धंपरिवर्जयेत् ॥ १७ ॥**

**अर्थ**--जिसका रुधिर आतोमे सचित होय, अर्थात् वाहर नही वहे और जो पीला वर्ण, जिसके हाथ पैर शीतल होयँ, और जो शीतल श्वासको छोडे, जिसके लाल नेत्र होयँ, तथा आनाह कहिये ( पेट फूलना ) ऐसे रोगीको वैद्य त्याग देय ॥

मांस शिरा स्नायु अस्थि और संधि इन मर्मोमे
चोट लगनेके सामान्यलक्षण।

**भ्रमःप्रलापःपतनंप्रमोहोविचेष्टनंग्लानिरथोष्णताच ॥ स्रस्तांगतामूर्च्छनमूर्ध्ववातस्तीव्रारुजोवातकृताश्चतास्ताः ॥ १८ ॥**
**मांसोदकाभंरुधिरंचगच्छेत्सर्वेन्द्रियार्थोपरमस्तथैव ॥ दशार्द्धसंख्येष्वथविक्षतेषुसामान्यतोमर्मसुलिंगमुक्तम् ॥ १९ ॥**

**अर्थ**–भ्रम, अनर्थभापण, गिरना, इन्द्रिय और मन इनको मोह, हाथ पैरका फैलाना, ग्लानि, उष्णता, अगोंमे शिथिलता, मूर्च्छा, श्वासका चढना, वातजन्य तीव्र पीडा, मासका धोया हुआ पानी ऐसा रुधिर वहे, सर्व इन्द्रिय विकल होयँ, अर्थात् सब इन्द्रियोका व्यापार वद होजाय ये लक्षण मासआदि पाच मर्मविद्ध होनेसे होते है ॥

मर्मरहितशिराविद्धके लक्षण।

**सुरेन्द्रगोपप्रतिमंप्रभूतंरक्तंस्रवेत्तत्क्षणजश्चवायुः ॥**
**करोतिरोगान्विविधान्यथोक्ताञ्छिरासुविद्धास्वथवाक्षतासु ॥२०॥**

**अर्थ**–शिरा कहिये ( नाडी ) विधजाय, अथवा शिरामे घाव होजाय, उसमेसे इन्द्रगोप ( वीरवहूटी ) कीडाके समान लाल तथा पुष्कल रुधिर स्रवे, तथा रक्तक्षय होनेसे वायु कुपित होकर अनेक प्रकारके ( आक्षेपकादि ) रोग उत्पन्न करे हैं ॥

स्नायुविद्धके लक्षण।

कौब्ज्यंशरीरावयवावसादःक्रियास्वशक्तिस्तुमुलारुजश्च ॥
चिराद्व्रणोरोहतियस्यचापितंस्नायुविद्धंपुरुषंव्यवस्येत् ॥ २१ ॥

अर्थ–कुबड़ापना, शरीरके अवयवोका गिरना, काम करनेसे असमर्थपना, बहुत पीडा और जिसका व्रण बहुत दिनमे भरे, उसकी स्नायु विद्ध भई ऐसे जाने ॥

संधिविद्धक लक्षण।

शोथाभिवृद्धिस्तुमुलारुजश्चबलक्षयःपर्वसुभेदशोथौ ॥
क्षतेषुसंधिष्वचलाचलेषुस्यात्सर्वकर्मोपरमश्चलिंगम् ॥ २२ ॥

अर्थ–चल अथवा अचल संधिका वेध होनेसे सूजन बढे, पीडा बहुत होय, शक्तिका नाश होय, संधिमे भेदके समान पीडा होय, सूजन होय, कुछ कार्य करे परतु उसमे उपराम होय ॥

हड्डी विंधगईहो उसके लक्षण।

घोरारुजोयस्यनिशादिनेषुसर्वास्ववस्थासुचनैतिशांतिम् ॥
भिषग्विपश्चिद्विदितार्थसूत्रस्तमस्थिविद्धंपुरुषंव्यवस्येत् ॥ २३ ॥

अर्थ–जिस पुरुपके रातदिन घोर पीडा होय, जाग्रदादि तीनो अवस्थामे शाति नही होय उसके अस्थि ( हड्डी ) विंधी हैं ऐसे श्रेष्ठ वैद्य जाने ॥

मर्मरहितशिरादिकोंके विद्धलक्षण कहनेकरके शिरादिमर्म-
विद्धलक्षणोका हवाल देते हैं।

यथास्वमेतानिविभावयेत्तुलिंगानिमर्मस्वभिताडितेषु ॥

अर्थ–मर्मके ठिकाने चोटके लगनेसे ये पूर्वोक्त लक्षण, जानने चाहिये तुशब्दसे लक्षण और सामान्यलक्षण होते हैं ऐसे जानना ॥

मांसमर्मके लक्षण नहीं कहे उनको कहते हैं।

पांडुर्विवर्णःस्पर्शितंनवेत्तियोमांसमर्मस्वभिताडितःस्यात् ॥२४ ॥

अर्थ–जो पुरुप मासमर्मके ठिकाने विद्ध होता है, उसका पीला वर्ण देहका विवर्ण होय और स्पर्शका ज्ञान न होय ॥

सर्व व्रणके उपद्रव।

विसर्पःपक्षघातश्चशिरास्तम्भोपतानकः ॥ मोहोन्मादव्रणरु-
जाज्वरतृष्णाहनुग्रहः ॥ २५ ॥ कासश्छर्दिरतीसारोहिक्का
श्वासःसवेपथुः ॥ षोडशोपद्रवाःप्रोक्ताव्रणानांव्रणचिन्तकैः ॥२६॥

अर्थ–विसर्प, पक्षावात, शिरास्तंभ, अपतानक, मोह, उन्माद, ज्वर, व्रणकी पीडा, प्यास, हनुग्रह, खांसी, वमन, अतिसार, हिचकी, श्वास और कंप ये व्रणरोगके सोलह उपद्रव व्रणरोगके जाननेवालोंने कहे हैं ॥

इति माधवार्थदीपिकायां सद्योव्रणनिदानम् ।

# भग्ननिदानम् ।

भग्न दोप्रकारका है एक सव्रण और दूसरा व्रणरहित ।
इनमें व्रणको कहकर व्रणरहितको कहते हैं ।

**भग्नंसमासाद्द्विविधंहुताशकांडेचसंधौचाहितत्रसंधौ ॥**

अर्थ–अग्निवेश [१] कांडभग और संधिभंग मिलकर संक्षेपसे भग्नरोग दो प्रकारका है ॥

संधिभंगके लक्षण ।

**उत्पिष्टविश्लिष्टविवर्त्तितंचातिर्यक्चविक्षिप्तमधश्चषोढा ॥ १ ॥**

अर्थ–तहां संधिस्थानका भग्नरोग छः प्रकार है उनके नाम कहते हैं । उत्पिष्ट, विश्लिष्ट, विवर्तित, तिर्यक्, विक्षिप्त, और अधःक्षिप्त भग्ननाम टूटनेका है ॥

संधिभंगके सामान्यलक्षण ।

**प्रसारणाकुंचनवर्तनोग्रारुक्स्पर्शविद्वेष-**
**णमेतदुक्तम् । सामान्यतःसन्धिगतस्यलिंगं-**

अर्थ–फैलातेसमय, सकोरनेके समय, नीचे करनेसे जोर पीडा होय और स्पर्श सहा न जाय, ये संधिभग्नके सामान्य लक्षण हैं ॥

**उत्पिष्टसन्धेःश्वयथुःसमन्तात् ॥ विशेषतोरात्रिभवारुजाच-**

अर्थ–उत्पिष्टमे संधिके चारो ओर सूजन होय, और रात्रिमे पीडा बहुत होय, संधिके हाड दोनो आपसमे घिसे उसको उत्पिष्ट ऐसे कहते हैं ॥

**विश्लिष्टजेतौचरुजाचनित्यम् ॥ २ ॥**

अर्थ–विश्लिष्ट संधियोंमें सूजन और रात्रिमें पीडा ये होकर सर्व कालमे अत्यन्त पीडा होय और उत्पिष्टकी अपेक्षा इतने लक्षण विश्लिष्टमे विशेष होते हैं अर्थात् संधि शिथिल मात्र होय इससे हाडके हटनेसे बीचमें गलेटा होजाय ॥

---

१ " काण्डमस्थिकाण्डः, काण्डेन नलककपालवलयतरुणरुचकानां ग्रहणम् । "
२ "द्वयोरस्थ्नोः स्थानं सन्धिः । "

**विवर्तितेपार्श्वरुजश्चतीव्राः-**

अर्थ-विवर्तित संधिमें दोनो तरफके हाड सधिसे पलटजायँ तब अत्यत पीडा होय इस सधिमें हाड दोनो तरफ फिरा करे ॥

**तिर्यग्गतेतीव्ररुजोभवन्ति ॥**

अर्थ-हड्डीके तिरछे हटनेसे पीडा वहुत हो और एक हड्डी सधिस्थान छोडकर टेढी होजाय ॥

**क्षिप्तेऽतिशूलंविषमारुगस्थ्नोः-**

अर्थ-सधिहड्डी एक ऊपरको हटजाय तो अत्यन्त पीडा होय, और हाडोमे कमजादी पीडा होय, इस जगह एक हड्डीकी क्रियासे, अथवा दोनो हड्डियोकी क्रियाकरके दोनो हाड परस्पर समीपसे दूर होजायँ है ॥

**क्षिप्तेत्वधोरुग्विघटश्चसंधेः ॥ ३ ॥**

अर्थ-संधिकी हड्डी एक नीचेको हटजाय तो पीडा होय और सधिकी विरुद्ध चेष्टा होय इसमें सधिके हाड परस्पर दूर होयँ परंतु किंचित् नीचेको गमन करे ॥

अब कांडभग्नको कहते हैं ।

**कांडेत्वतःकर्कटकाश्वकर्णविचूर्णितंपिच्चितमस्थिछल्लिका ॥**
**कांडेषुभग्नंत्वपिपातितंचमज्जागतंचस्फुटितंचवक्रम् ॥ ४ ॥**
**छिन्नंद्विधाद्वादशधापिकांडे-**

अर्थ-कांडभग्न बारह प्रकारका है १ कर्कटक, २ अश्वकर्ण, ३ विचूर्णित, ४ पिच्चित, ५ अस्थिछल्लिका, ६ कांडभग्न, ७ अतिपातित, ८ मज्जागत, ९ स्फुटित, १० वक्र और दोप्रकारके छिन्न ।

१ कर्कटक-अर्थात् हाड दोनो ओरसे दबकर बीचमें ऊचासा होय ।

२ अश्वकर्ण-घोड़ाके कानके समान जो हाड होजाय ।

३ विचूर्णित-चुरकट होगया हो वह शब्दसे अथवा स्पर्शसे जाना जाय ।

४ पिच्चित-पिचा भया हाड ।

५ अस्थिछल्लिका-हाडका कोई भाग छिलकाके समान उखडकर रहा है सो ।

६ कांडभग्न-हड्डीका कांड टूटना ।

७ अतिपात-सब हाड टूटे सो ।

८ मज्जागत-हड्डीके अवयव मज्जामे प्रवेशकर मज्जाको बाहर निकाले ।

९ स्फुटित-जिस हड्डीके बहुत टुकडे होजायँ ।

१० वक्र–हड्डी तिरछी होजाय वह भी भग्नमें गिनी जाती है।

११–१२ छिन्न–२ वारीक वारीक बहुतसे टुकडा होजावें सो और दूसरा एक ओरसे टूटकर दूसरी तरफ निकलै है॥

## काण्डभग्नके सामान्यलक्षण।

**स्त्रस्तांगताशोथरुजातिवृद्धिः॥ संपीड्यमाने भवती-ह्शब्दःस्पर्शासहस्पंदनतोदशूलाः॥ ५॥ सर्वास्ववस्थासुनशर्मलाभोभग्नस्यकांडेखलुचिह्नमेतत्॥ ६॥**

अर्थ–अंगोमे शिथिलता, सूजन, घोर पीडा, जिस स्थानकी हड्डी टूटी होय उस जगह पीडाके साथ शब्द होय, हाथके लगानेसे सहा न जाय हड्डी फडके, सूई छेदनेकीसी पीडा होय, और शूल होय, कभी चैन न पडै कांड इस शब्दसे नलक, कपाल, वलय, तरुण, और रुचक, इन पांच प्रकारकी हड्डियोका संग्रह होय है, कांडभग्नके १२ वारह भेदोसे अधिक भेद होते हैं उनको कहते हैं॥

**भग्नंतुकांडेबहुधाप्रयातिसमासतोनामभिरेवतुल्यम्॥**

अर्थ–कांडोमे अनेक प्रकारके भंग होते हैं, सो जिसजिस ठिकाने जैसी आकृतिका होय, उसका उसी प्रकारका नाम कहना चाहिये।

## कष्टसाध्य।

**अल्पाशिनोनात्मवतोजन्तोर्वातात्मकस्यच॥**
**उपद्रवैर्वाजुष्टस्यभग्नंकृच्छ्रेणसिध्यति॥॥ ७॥**

अर्थ–थोडा खानेवाला, और जिसकी इन्द्रिय स्वाधीन न होय, वातप्रकृतिवालेकी, ज्वरादि उपद्रव संयुक्त ऐसे पुरुषकी हड्डी टूटनेसे बडे कष्टसे साध्य होतीहै।

## असाध्यलक्षण।

**भिन्नंकपालंकट्यांतसंधिमुक्तंतथाच्युतम्॥**
**जघनंप्रतिपिष्टंचवर्जयेत्तुविचक्षणः॥ ८॥**

अर्थ–कमरकी कपाल हड्डी टूटगई हो, अथवा सांधेके पासकी हड्डी हटगई हो अथवा स्थानसे छूटगई हो, और जघाकी हड्डीका चूर होगया हो ऐसे रोगीको वैद्य त्याग दे॥

## तथा असाध्य लक्षण।

**असंश्लिष्टकपालंचललाटेचूर्णितंचयत्॥**

---

१ सुश्रुते–जानुनितंबांसगण्डतालुशंखवक्षणशिरःसुकपालानिति।

**भग्नंस्तनान्तरेपृष्ठेशंखेमूर्ध्निचवर्जयेत् ॥ ९ ॥**

अर्थ–ललाटकी हड्डी टुकडे टुकडे हो, परस्पर दूर होजाय, जुडनेके कामक न रहे, अथवा स्तनके बीचकी अथवा पीठकी अथवा शंख ( कनपटी ) की हड्डी मस्तककी हड्डी टूट गईहो उसको वैद्य त्याग दे ॥

सावधानता न करनेसे असाध्यता दिखाती है।

**सम्यक्संधितमप्यस्थिदुर्निक्षेपानिबंधनात् ।**
**संक्षोभाद्वापियद्गच्छेद्विक्रियांतच्चवर्जयेत् ॥ १० ॥**

अर्थ–हड्डी भलेप्रकार जुड भी गई हो उसको अच्छी रीतिसे न राखे, अथवा अच्छी रीतिसे बांधे नही उसमे किसीका धक्का लगनेसे फिर जैसेका तैसा हो जाता है और यह साध्य नही होय इसको वैद्य त्याग दे ॥

अस्थिविशेषकरके भग्नविशेष कहते हैं।

**तरुणास्थीनिनम्यन्तेभिद्यंतेनलकानिच ॥**
**कपालानिविभज्यंतेस्फुटंतिरुचकानिच ॥ ११ ॥**

अर्थ–तरुण हड्डी नव जाती है या टेढी होजाती है नलका हड्डी चिर जाती है, कपालास्थि फूटकर टूक टूक होजाय, रुचकास्थि ( दन्तादिक ) हड्डी टुकडा होकर गिरपडे ॥

इति भग्ननिदानं समाप्तम् ।

---

# नाडीव्रणनिदानसंप्राप्ति ।

**यःशोथमाममतिपक्कमुपेक्षतेऽज्ञोयोवाव्रणंप्रचुरपूयमसाधुवृत्तः॥ अभ्यन्तरंप्रविशतिप्रविदार्यतस्यस्थानानिपूर्वविहितानिततः स्पूयः ॥ १ ॥ तस्यातिमात्रगमनाद्गतिरिष्यतेतुनाडीवयद्वहतितेनमतातुनाडी ॥**

अर्थ–जो मूर्ख मनुष्य पकेहुए फोडेको कच्चा समझकर उपेक्षा करे, किंवा बहुत राध पडे फोडेकी उपेक्षा करदे, तव वह वढीहुई राध पूर्वोक्त त्वङ्मांसादिक स्थानमे जाकर उनको भेद कर वह बहुत भीतरी पहुँचजाय, तव एक मार्ग कर उसमें वह राध नाडीके समान वहे, इसीसे इसको नाडीव्रण ( नासूर ) कहते हैं॥

संख्यारूपसंप्राप्ति ।

**दोषैस्त्रिभिर्भवतिसापृथगेकशश्चसंमूर्च्छि-**
**तैरपिचशल्यनिमित्ततोऽन्या ॥ २ ॥**

अर्थ–पृथक् पृथक् दोषोसे ३, सन्निपातसे १, और शल्यसे १, ऐसे नाडीव्रण पांच प्रकारका है ॥

वातनाडीव्रणके लक्षण ।

**तत्रानिलात्परुषसूक्ष्ममुखीसशूला**
**फेनानुविद्धमधिकंस्रवतिक्षपासु ॥**

अर्थ–वादीसे नाडीव्रणका मुख रूखा, तथा छोटा होय, और शूल होय उसमेसे फेनयुक्त स्राव होय रात्रिमे अधिक स्रवे ॥

पित्तके नाडीव्रणके लक्षण ।

**पित्तात्तुतृड्ज्वरकरीपरिदाहयुक्ता**
**पीतंस्रवत्यधिकमुष्णमहःसुचापि ॥ ३ ॥**

अर्थ–पित्तके नाडीव्रणमे प्यास, ज्वर और दाह होय उसमेसे पीले रंगका और वहुत गरम राध स्रवे, और दिनमे स्राव अधिक होय ॥

कफजनाडीव्रणके लक्षण ।

**ज्ञेयाकफाद्बहुघनार्जुनपिच्छिलास्रा**
**स्तब्धासकंडुररुजारजनीप्रवृद्धा ॥**

अर्थ–कफज नाडीव्रणमे सफेद, गाढी, चिकनी, राध निकलने, खुजली चले, रातमे स्राव वहुत होय ॥

सन्निपातजनाडीव्रणक लक्षण ।

**दाहज्वरश्वसनमूर्च्छनवक्त्रशोषायस्याभवन्तिविहितानिचलक्ष**
**णानि ॥ ४ ॥ तामादिशेत्पवनपित्तकफप्रकोपाद्धोरामसु-**
**क्षयकरीमिवकालरात्रिम् ॥**

अर्थ–जिस नाडीव्रणमे दाह, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, मुखका सूखना, और पूर्वोक्त लक्षण हेया उसको त्रिदोषकोपंजन्य नाडीव्रण जानना यह भयंकर, प्राणनाश करनेवाले कालरात्रिके समान जानना ॥

शल्यजनाडी।

**नष्टंकथंचिदनुमार्गमुदीरितेषुस्थानेषुशल्यमचिरेणगतिंकरोति ॥ ५॥ साफेनिलंमथितमुष्णमसृग्विमिश्रंस्रावंकरोति सहसासरुजंचनित्यम् ॥**

अर्थ—किसीप्रकारसे शल्य ( कटकादि ) उक्तस्थानमें पहुंचकर टूट जाय तो नाडीव्रणको उत्पन्न करे उस नाडीव्रणमेसे झाग मिला तथा रुधिरयुक्त मथेके समान गरम नित्य राध वहे तथा पीडा होय ॥

साध्यासाध्य लक्षण।

**नाडीत्रिदोषप्रभवानसिध्येच्छेषाश्चतस्रः खलुयत्नसाध्याः ॥ ६ ॥**

अर्थ—त्रिदोपजन्य नाडीव्रण साध्य नही होय बाकीके चार नाडीव्रण यत्न करनेसे साध्य होते है ॥

इति श्रीमाधवभावार्थदीपिकाया नाडीव्रणरोगानिदानम्।

---

## भगंदरनिदानम्।

**गुदस्यद्व्यंगुलेक्षेत्रेपार्श्वतःपिटिकार्तिकृत् ॥**
**भिन्नोभगन्दरोज्ञेयःसचपंचविधोमतः ॥ १ ॥**

अर्थ—गुदाके समीप दो अंगुल ऊंची पिछाड़ी एक पिडिका ( फुन्सी ) होय उसमे बहुत पीडा होय वह, पिडिका फूटजाय उसको भगंदररोग कहते हैं. **सुश्रुतने** इसकी निरुक्ति इस प्रकार करी है यथा-गुदभगवस्तिप्रदेशदारणात् भगंदर इति,भगशब्द इस जगे गुदावाचक है सो **भोजने** कहाभी है—"भगपरिसमताच गुदवस्तिस्तथैव च। भगवद्दारयेद्यस्मात्तस्माज्ज्ञेयो भगंदरः" इति। यह भगदररोग पांच प्रकारका है यह संख्या कहना केवल रक्तज द्वंद्वज भगंदर संभावना निवारणार्थ जानना, इसके पूर्वरूप ग्रथान्तरोसे लिखते हैं ॥

पूर्वरूप।

**कटीकपालनिस्तोददाहकंडूरुजादयः॥**
**भवन्तिपूर्वरूपाणिभविष्यतिभगंदरे ॥ २ ॥**

अर्थ–कमरमे कपालास्थिमे सूइसी चुभे, दाह होय, खुजली चले, पीडा होय ये लक्षण जब भगंदर होनहार होय है तब होते हैं, इस जगह भी कपालास्थि पूर्वोक्त जाननी अर्थात् जो नाडीव्रणमे कह आये हैं ॥

शतपोनकके लक्षण ।

**कषायरूक्षैरतिकोपितोऽनिलस्त्वपानदेशेपिडिकांकरोतियाम्॥**
**उपेक्षणात्पाकमुपैतिदारुणंरुजाचभिन्नारुणफेनवाहिनी ॥ ३ ॥**
**तत्रागमोमूत्रपूरीषरेतसांव्रणैरनेकैःशतपोनकंवदेत् ॥**

अर्थ–कसैले और रूखे पदार्थ खानेसे वायु अत्यत कुपित होकर गुदास्थानमे जो पिडिका (फुन्सी) प्रगट करे, उनकी उपेक्षा करनेसे वे फुन्सियाँ पके और फूट जायँ तब पीडा होय, तथा लालझागमिली राध वहे तथा उसमें अनेक छिद्र होजायँ, उन छिद्रोंमे होकर मूत्र मल और रेत (शुक्र) वहे, चालनीकेसे अनेक छिद्र होयँ इसी कारण इस रोगको शतपोनक ऐसे कहते हैं. शतपोनक नाम संस्कृतमे चालनीका है ॥

उष्ट्रशिरोधरके लक्षण ।

**प्रकोपणैःपित्तमतिप्रकोपितंकरोतिरक्तांपिडिकांगुदाश्रिताम् ॥**
**तदाशुपाकाहिमपूयवाहिनींभगंदरंतूष्ट्रशिरोधरंवदेत् ॥ ४ ॥**

अर्थ–पित्तकारक पदार्थ खानेसे कुपित भया जो पित्त सो गुदामे लाल रगकी पिडिका उत्पन्न करे वह शीघ्र पककर उनमेंसे गरम राध वहे ये पिडिका (फुन्सी) ऊँटकी नाडके समान होयँ इसीसे इसको उष्ट्रशिरोधर नाम कहते हैं ॥

परिस्रावी भगंदरके लक्षण ।

**कंडूयनोघनस्रावीकठिनोमंदवेदनः ॥**
**श्वेतावभासःकफजःपरिस्रावीभगंदरः ॥ ५ ॥**

अर्थ–कफसे प्रगट भया भगदर उसमे खुजली चले, तथा उसमेसे गाढी राध वहे, तथा वह पिडिका कठिन होयँ, उनमे पीडा थोडी होय, उनका वर्ण सफेद होय, उसको परिस्रावी भगदर कहते हैं ॥

शंबूकावर्तके लक्षण ।

**बहुवर्णरुजास्रावाःपिडिकागोस्तनोपमाः ॥**
**शंबूकावर्तवन्नाडीशंबूकावर्त्तकोमतः ॥ ६ ॥**

अर्थ–जिसमें गौके धनके समान अनेक पिडिका होयँ, उनका रंग पीला और स्राव अनेक प्रकारका होय और व्रण शंखके आँटेके समान गोल होय, इसको शंबूकावर्त कहते हैं ॥

उन्मार्गिभगंदरके लक्षण ।

क्षताद्गतिःपायुगताविवर्धतेह्युपेक्षणात्स्युःक्रिमयोविदार्यते ॥
प्रकुर्वतेमार्गमनेकधासुखैर्व्रणैस्तदुन्मार्गिभगंदरंवदेत् ॥ ७ ॥

अर्थ–गुदामें काँटे आदिके लगनेसे क्षत ( घाव ) होजाय, उस घावकी उपेक्षा करनेसे उसमें कृमि पडजायँ, वो कृमि उस क्षतको विदारण करे ऐसे वह घाव गुदापर्यंत बढकर पहुँचे तथा कृमि उसमें अनेक मुख वाले ( व्रण ) घाव करलेवें, इसको उन्मार्गिभगदर कहते हैं ॥

साध्यासाध्य लक्षण ।

घोराःसाधयितुंदुःखाःसर्वएवभगंदराः ॥
तेष्वसाध्यस्त्रिदोषोत्थःक्षतजश्चविशेषतः ॥ ८ ॥

अर्थ–सब भगंदर दुःसाध्य हैं तिनमे भी त्रिदोषका भगंदर असाध्य है और क्षतज विशेषकरके असाध्य है ॥

असाध्यके लक्षण ।

वातमूत्रपुरीषाणिक्रिमयःशुक्रमेवच ॥
भगंदरात्प्रस्रवन्तिनाशयन्तितमातुरम् ॥ ९ ॥

अर्थ–जिस भगंदरमेसे अधोवायु, मूत्र, विष्ठा, कृमि और वीर्य वहे उस रोगीका नाश होय॥

इति भगदरनिदानं समाप्तम् ।

---

# उपदंशनिदानम् ।

कारण ।

हस्ताभिघातान्नखदन्तघातादधावनाद्वत्यतिसेवनाद्वा ॥
योनिप्रदोषाच्चभवंतिशिश्नेपंचोपदंशाविविधोपचारैः ॥ १ ॥

अर्थ–हाथकी चोट लगनेसे, नख दातके लगनेसे, अच्छी रीतिसे न धोनेसे, अत्यन्त स्त्रीसग के करनेसे, अथवा योनिके दोपसे अर्थात् दीर्घ कड़, वाल, जिसके ऊपर होयँ अथवा खारी गरम जलके धोनेसे, ब्रह्मचर्यवाली स्त्रीसे गमन करनेसे, इत्यादिक कारणोंसे, लिंगमे उपदंश ( गर्मीका रोग ) होय है वह पाच प्रकारका है ॥

### वातोपदंशके लक्षण।

**सतोदभेदस्फुरणैःसकृष्णैःस्फोटैर्व्यवस्येत्पवनोपदंशम् ॥**

अर्थ--लिंगेन्द्रियके ऊपर काले फोडा उठे उन्मे चोटनेकीसी पीडा होय, तोडनेकीसी पीडा होय और स्फुरण ये लक्षण वातोपदंशके जानने ॥

### पित्तोपदंश व रक्तोपदंशके लक्षण।

**पीतैर्बहुक्लेदयुतैःसदाहैःपित्तेनरक्तात्पिशितावभासैः ॥ २ ॥**

अर्थ–पित्तके उपदशकरके पीले रंगके फोडे होते हैं उनमेसे पानी बहुत वहै, दाह होय, रुधिरके उपदंशसे मांसके समान लाल रंगके फोडा होयँ ॥

### कफोपदंशके लक्षण।

**सकंडुरैःशोथयुतैर्महद्भिःशुक्लैर्घनस्रावयुतैःकफेन ॥**

अर्थ--कफके उपदशकरके सफेद मोटे फोडा होयँ उनमे खुजली चले, सूजन होय और गाढी राध बहे ॥

### सन्निपातोपदंशके लक्षण।

**नानाविधस्रावरुजोपपन्नमसाध्यमाहुस्त्रिमलोपदंशम् ॥ ३ ॥**

अर्थ–जिस उपदंशमे अनेक प्रकारका स्राव होय, पीडा होय यह त्रिदोपज उपदश असाध्य है ॥

### असाध्य लक्षण।

**विशीर्णमांसंकृमिभिःप्रजग्धंमुष्कावशेषंपरिवर्जयेत्तु ॥**

अर्थ–जिस उपदेश करके लिंगका मास गल गया हो और कृमि लिंगको खाय जावे, केवल अडकोश मात्र रहजाय, उसको वैद्य त्याग दे ॥

### असाध्य लक्षण।

**संजातमात्रेणकरोतिमूढःक्रियानरोयोविषयेप्रसक्तः ॥**
**कालेनशोथक्रिमिदाहपाकैर्विशीर्णशिश्नोम्रियतेसतेन॥ ४ ॥**

अर्थ-उपदशके होतेही जो मूर्ख मनुष्य विषयमे आसक्त होकर इसका उपचार नही करे, उसका लिंग थोडे दिनमे सूजनयुक्त हो और कीड़े पड़े और उसमे दाह और पाक भी होय, पीछे वह गलजाय ऐसा रोगी मरजाय ॥

### लिंगवर्त्तिके लक्षण।

**अंकुरैरिवसंघातैरुपर्युपरिसंस्थितैः ॥ क्रमेणजायतेवर्त्तिस्ता-म्रचूडशिखोपमा ॥ ५ ॥ कोशस्याभ्यन्तरेसंधौसर्वसंधिगता**

पित्ता ॥ लिंगवर्तिरितिख्यातालिंगार्शइतिचापरे ॥ ६ ॥ कुलित्थाकृतयःकेचित्केचित्पद्मदलोपमाः ॥ मेढ्रसंधौनृणांकेचित्केचित्सर्वाश्रयाःस्मृताः ॥ ७ ॥ रुजादाहार्त्तिबहुलास्तृष्णा-तोदसमन्विताः ॥ स्त्रीणांपुंसांचजायंतेह्युपदंशाःसुदारुणाः॥८॥

अर्थ—मुरगाकी चोटीके समान लिंगके ऊपर मासके अंकुर एकके ऊपर एक प्रगट होयँ कोपर्की भीतरकी मणिमे अथवा सर्व संधियोमे, तो इस रोगको लिंगवर्त्ति ऐसे कहते हैं और कोई लिंगार्श कहते हैं, यह त्रिदोषजन्य है इसमे मासके अंकुर कुल्थीके समान और कोई पद्मदलके समान किसीके अंडकोशकी संधिमे किसीके सर्व आशयमे होते हैं ओर पीडा, दाह, बहुत होय, प्यास नोचनेकीसी पीडा होय, स्त्री पुरुषोके यह उपदंश घोरपीडाकारक होते है इसमे "कुलित्थाकृतय" यहांसे लेकर "स्त्रीणांपुंसांचजायन्ते" यहातक पाठ क्षेपक है माधवका नहीं और स्त्रियोंके भी गरमीका रोग होय है, यह मत सुश्रुतका है परन्तु यह आर्ष पाठ नही है ॥

इत्युपदंशनिदानं समाप्तम्।

---

# फिरंगरोगनिदानम्।



उपदंशरोगकाही भेद फिरंगरोगहै उसको ग्रन्थान्तरसे लिखते हैं।

फिरंगशब्दकी निरुक्ति।

फिरङ्गसंज्ञकेदेशेबाहुल्येनैषयद्भवेत् ॥
तस्मात्फिरंगइत्युक्तोव्याधिर्व्याधिविशारदैः ॥ १ ॥

अर्थ—फिरंगियोके देशमे यह रोग बहुधाकरके होता है. इसीसे वैद्य इसको फिरंग रोग कहते है।

विप्रकृष्टनिदानम्।

गंधरोगः फिरंगोयंजायतेदेहिनांध्रुवम् ॥
फिरंगिणोङ्गसंसर्गात्फिरंगिण्याःप्रसंगतः ॥
भवेत्तंलक्षयेत्तेषांलक्षणैर्भिषजांवरः ॥ २ ॥

अर्थ—गंधरोग यह फिरंगरोग है सो मनुष्योंके अंग्रेजोके संसर्गसे, अथवा फिरंगिणी (मेम) के प्रसंग करनेसे होता है, इसको इसके आगे जो लक्षण कहेंगे उनसे जाने ॥

रूपमाह।

फिरंगस्त्रिविधोज्ञेयोबाह्यआभ्यन्तरस्तथा ॥
वहिरन्तर्भवश्चापितेषांलिंगानिचब्रुवे ॥ ३ ॥

अर्थ—फिरंग रोग तीन प्रकारका १ वाहर होय २ भीतर होय है, और तीसरा वाहर भीतर दोनों स्थानमें होय है उनके लक्षण कहता हूं ॥

तत्रबाह्यःफिरंगःस्याद्विस्फोटसदृशाल्परुक् ॥
स्फुटितोव्रणवद्वैद्यैःसुखसाध्योपिसस्मृतः ॥ ४ ॥

अर्थ—तहा वाहरका फिरंग रोग फोडाके समान थोडी पीडा कर्त्ता होय है और फोड़के समान ही फूटे है यह सुखसाध्य है ॥

संधिष्वाभ्यन्तरःसस्यादुभयोर्लक्षणैर्युतः ॥
कष्टदोऽतिचिरस्थायीकष्टसाध्यतमश्चसः ॥ ५ ॥

अर्थ—ओर जो फिरंग सन्धियोके भीतर होय, अथवा दोनो वाहर और भीतरकी फिरगके लक्षण मिलते होयँ, वह अतिकष्टदेनेवाली वहुत कालतक रहनेवाली कष्टसाध्य है ॥

फिरंगरोगके उपद्रव।

कार्श्यंवलक्षयोनासाभंगोवह्नेश्चमंदता ॥
अस्थिशोषोऽस्थिवक्रत्वंफिरंगोपद्रवाअमी ॥ ६ ॥

अर्थ—देह कृश होजाय, वलनाश होजाय, नाक वैठ जाय, अग्नि मंद होजाय, हड्डी सूखें तथा टेढी होजायँ, ये फिरंगके उपद्रव है ॥

साध्यासाध्य कष्टसाध्य।

वहिर्भवोभवेत्साध्योनूतनोनिरुपद्रवः ॥
आभ्यन्तरस्तुकष्टेनसाध्यःस्यादयमामयः ॥ ७ ॥
वहिरंतर्भवोजीर्णःक्षीणस्योपद्रवैर्युतः ॥
वोध्योव्याधिरसाध्योयमित्यूचुर्मुनयःपुरा ॥ ८ ॥

अर्थ-जो फिरंग वाहर होय, नया, और उपद्रवरहित होय, वह साध्य है और भीतर होय वह कष्टसाध्य है और जो वाहर भीतर दोनो ठिकानेपर होय, तथा पुराना पडगया और उपद्रवयुक्त होय, वह फिरंग रोग असाध्य है ॥

इति फिरगरोगनिदान समाप्तम् ।

# शूकदोपनिदानम् ।

अक्रमाच्छेफसोवृद्धिंयोऽभिवाञ्छतिमूढधीः ॥
व्याधयस्तस्यजायन्तेदशचाष्टौचशूकजाः ॥१॥

अर्थ-जो मदवुद्धिवाला पुरुष शास्त्रोक्तक्रमके विना लिगको मोटा करा चाहे, वह विषक्रमिका लिंगके ऊपर लेपादिक करे अथवा जलयोग वात्स्यायन ऋषिके कहे उनका साधन करे उसके १८ प्रकारके शूकजरोग होते हैं ॥

सर्षपिकाके लक्षण ।

गौरसर्षपसंस्थानाशूकदुर्भुग्नहेतुका ॥
पिडिकाश्लेष्मवाताभ्यांज्ञेयासर्षपिकाचसा ॥ २ ॥

अर्थ-दुष्टजलजंतुका दुष्टरीतिसे लेप करनेसे, कफवात कुपित होकर सफेद सरसोंके समान जो पिडिका ( फुन्सी ) होयँ उनको सर्षपिका कहते है ॥

अष्ठीलाके लक्षण ।

कठिनाविषमैर्भुग्नैर्वायुनाष्ठीलिकाभवेत् ॥

अर्थ-अप्रसक्त शूकोंके लेपसे वायु कुपित होकर करडी निहाईके समान पिडिका होय और विषम कहिये कोई छोटी और कोई वडी और भुग्न कहिये टेढे ऐसे शूक कहिये मांसांकुरोसे व्याप्त होय उसको अष्ठीला कहैं हैं ॥

ग्रंथितके लक्षण ।

शूकैर्यत्पूरितंशश्वद्ग्रथितंनामतत्कफात् ॥ ३ ॥

अर्थ--निरतर शूकलेप करनेसे लिगेन्द्रियके ऊपर गाठ पैदा होय, उसको ग्रंथित कहते हैं ॥

कुंभिकाके लक्षण ।

कुंभिकारक्तपित्तोत्थाजाम्बवास्थिनिभाऽशुभा ॥

अर्थ--रक्तपित्तसे जामुनकी गुठलीके समान काले रगकी पिडिका होय, उसको कुंभिका ऐसे कहते हैं ॥

अलजीके लक्षण ।

**तुल्यजांत्वलजींविद्याद्यथाप्रोक्तंविचक्षणैः ॥ ४ ॥**

अर्थ--यह पिटिका प्रमेह पिटिकामे जो अलजी नाम पिडिका कह आये है उनके समान लाल काले फोडोसे व्याप्त होय, तथा उसके लक्षण पूर्वोक्त पिडिकाकेसे होयँ हैं ॥

मृदितके लक्षण ।

**मृदितंपीडितंयत्तुसंरब्धंवातकोपतः ॥**

अर्थ--शूकपीडा होनेके अनतर लिगको हाथोंसे मीडनेसे, अथवा दाबनेसे वायुके कोपसे लिग सूज जाय ॥

संमूढपिडिकाके लक्षण ।

**पाणिभ्यांभृशसंमूढेसंमूढपिडिकाभवेत् ॥ ५ ॥**

अर्थ--लेप करनेके अनतर जब लिगमे खुजली चलै तब उसको दोनो हाथोसे खूब खुजावै, तब एक मूढ ( विनामुखकी ) पिडिका होय उसको समूढपिडिका कहते है ॥

अवमंथके लक्षण ।

**दीर्घावह्व्यश्चपिडिकादीर्यन्तेमध्यतस्तुयाः ॥**
**सोऽवमंथःकफासृग्भ्यांवेदनारोमहर्षकृत् ॥ ६ ॥**

अर्थ--कफरक्तसे लंबी और अनेक तथा बीच बीचमे फूटी हुई ऐसी जो पिडिका लिगमें होय उसके होनेसे रोमाच और पीडा होय, इस रोगको अवमथ ऐसे कहते हैं ॥

पुष्करिकाके लक्षण ।

**पित्तशोणितसंभूतापिडिकापिडिकाचिता ॥**
**पद्मकर्णिकसंस्थानाज्ञेयापुष्करिकाचसा ॥ ७ ॥**

अर्थ--पित्तरक्तसे उत्पन्न हुई पिटिका उसके चारोतरफ अनेक छोटी २ फुन्सियां होयँ और वह कमलके भीतरकी केसरके समान सब फुन्सी होयँ उसको पुष्करिका ऐसे कहते हैं ॥

स्पर्शहानिके लक्षण ।

**स्पर्शहानिंतुजनयेच्छोणितंशूकदूषितम् ॥**

अर्थ-शूकका लेप करनेसे रुधिर दूषित होकर त्वचाका स्पर्श ज्ञानको नष्ट करे है ॥

उत्तमाके लक्षण ।

**मुद्गमाषोद्गमारक्तारक्तपित्तोद्भवाश्रयाः ८ ॥**
**व्याधिरेषोत्तमानामशूकाजीर्णनिमित्तजः ॥**

अर्थ-शूकका बारंवार लेप करनेसे रक्तपित्त कुपित होकर मूग उदरके समान लाल फुन्सी लिंगेन्द्रियमे होय उसको उत्तमा कहते हैं ये अजीर्णके कारण होती है ॥

शतपोनकके लक्षण ।

**छिद्रैरणुमुखैर्लिंगंचितंयस्यसमंततः ॥ ९ ॥**
**वातशोणितजोव्याधिर्विज्ञेयःशतपोनकः ॥**

अर्थ--जिस पुरुषके लिंगमे अनेक बारीक छिद्र होजायँ, यह व्याधि वातशोणितसे प्रगट इसको शतपोनक कहते हैं ॥

त्वक्पाकके लक्षण ।

**वातपित्तकृतोयस्तुत्वक्पाकोज्वरदाहवान् ॥ १० ॥**

अर्थ-वातपित्तसे लिंगकी त्वचा पक जाय, और उसमे ज्वर दाह होय है ॥

शोणितार्बुदके लक्षण ।

**कृष्णैःस्फोटैःसरक्ताभिःपिडिकाभिर्निपीडितम् ॥**
**यस्यवास्तुरुजाचोग्राज्ञेयंतच्छोणितार्बुदम् ॥ ११ ॥**

अर्थ-जिस पुरुषकी लिंगेन्द्रियके ऊपर काले लाल फफोले और पिडिका ( फुन्सिया ) से पीडित हो तथा व्रणके स्थानमे पीडा होय, उसको शोणितार्बुद कहते है ॥

मांसार्बुदके लक्षण ।

**मांसदोषेणजानीयादर्बुदंमांससंभवम् ॥**

अर्थ-मास दुष्ट होनेसे मांसार्बुद प्रगट होता है ॥

मांसपाकके लक्षण ।

**शीर्यन्तेयस्यमांसानियस्यसर्वाश्चवेदनाः ॥ १२ ॥**
**विद्यात्तंमांसपाकंतुसर्वदोषकृतंभिषक् ॥**

अर्थ-जिसकी इन्द्रियका मास गलजाय, और अनेक प्रकारकी पीडा होय, यह व्याधि त्रिदोषज है इस व्याधिको मांसपाक कहते हैं ॥

विद्रधिके लक्षण ।

विद्रधिंसन्निपातेनयथोक्तमभिनिर्दिशेत् ॥ १३ ॥

अर्थ–विद्रधिनिदानमे जो सन्निपातविधिके लक्षण कहे हे वो ही यहा विद्रधिशूकके लक्षण जानने ॥

तिलकालकके लक्षण ।

कृष्णानिचित्राण्यथवाशूकानिसविषाणितु ॥
पातितानिपचंत्याशुमेढ्रंनिरवशेषतः ॥ १४ ॥
कालानिभूत्वामांसानिशीर्यंतेयस्यदेहिनः ॥
सन्निपातसमुत्थांस्तुतान्विद्यात्तिलकालकान् ॥ १५ ॥

अर्थ–काले अथवा चित्रविचित्र रगकेसे विषशूकोके लेप करनेसे तत्काल सर्व लिंग पकजाय, तथा सब मास तिलके सदृश काला होकर गलजाय, इस त्रिदोषोत्पन्न व्याधिको तिलकालक ऐसे कहते है ॥

असाध्यशूकदोषके लक्षण ।

तत्रमांसार्बुदंयच्चमांसपाकश्चयःस्मृतः ॥
विद्रधिश्चनासिध्यंतियेचस्युस्तिलकालकाः ॥ १६ ॥

अर्थ-तिस शूकदोषमे मासार्बुद, मासपाक, विद्रधि और तिलकालक ये चार असाध्य हैं ॥

इति श्रीमाधवभावार्थदीपिकायां माथुरीभाषाटीकायां शूकदोषनिदानम् ।

---

# कुष्ठनिदानम् ।

विरोधीन्यन्नपानानिद्रवस्निग्धगुरूणिच ॥ भजतामागतांच्छर्दिंवेगांश्चान्यान्प्रतिघ्नताम् ॥ १ ॥ व्यायाममतिसंतापमतिभुक्त्वानिषेविणाम् ॥ शीतोष्णलंघनाहारान्क्रमंमुक्त्वानिषेविणाम् ॥ २ ॥ घर्मश्रमभयार्त्तानांद्रुतंशीतांबुसेविनाम् ॥ अजीर्णाध्यशनानांचपंचकर्मापचारिणाम् ॥ ३ ॥ नवान्नदधिमत्स्यातिलवणाम्लनिषेविणाम् ॥ माषमूलकपिष्टान्नतिलक्षीरगुडाशिनाम् ॥ ४ ॥ व्यवायंचाप्यजीर्णेऽन्नेनिद्रांच

भजतांदिवा ॥ विप्रान्गुरून्धर्षयतांपापंकर्मचकुर्वताम् ॥ ५ ॥ वातादयस्त्रयोदुष्टास्त्वग्रक्तंमांसमंबुच ॥ दूषयंतिसकुष्ठानांसप्तकोद्रव्यसंग्रहः ॥ ६ ॥ अतःकुष्ठानिजायंतेसप्तचैकादशैवच ॥

अर्थ–विरोधी कहिये क्षीरमत्स्यादि, पतले, स्नेहयुक्त, भारी ऐसे अन्नपानके सेवन करनेसे; रद्दके वेगके रोकनेसे, और अन्य कहिये मलमूत्रादिवेगोके रोकनेसे, भोजनकरके अत्यत व्यायाम (दंडकसरत) अथवा अतिसंताप (सूर्यका ताप) सहनेसे, शीत गरमी, लंघन और आहार इनके सेवन उत्क्रम छोडकर सेवन करनेसे धूप, श्रम और भय इनसे पीडित होय, और उसी समय शीतल जल पीवे कच्चा अन्न भक्षण करनेसे तथा भोजनके ऊपर भोजन करनेसे, वमन, विरेचन निरूहण, अनुवासन, नस्यकर्म इन पंचकर्मके करते समय अपथ्य करनेसे, नया अन्न, दही, मछली, अत्यन्त खारीखट्टा, पदार्थके सेवन करनेसे, उडद, मूरी, पिष्टीकी बनीवस्तु, तिल, दूध, गुड इनके खानेसे अन्नके पचेविना स्त्रीसंग करनेसे, तथा दिनमें सोनेसे, ब्राह्मण, गुरु इनका तिरस्कार करनेसे, पापकर्मके आचरण करनेसे ऐसे पुरुषोके वातादिक तीनो दोष, त्वचा, रुधिर, मास, और जल इनको दुष्ट कर कुष्ठरोग (कोढ) उत्पन्न करे, कुष्ट होनेके वातादि तीनों दोष और त्वचादि दूष्य, ये सात पदार्थ कारणभूत है इनसे ही अठारह प्रकारके कुष्ट होते है तिनमे सात महाकुष्ट और ग्यारह क्षुद्र कुष्ट है ॥

कुष्ठोंको त्रिदोषजत्व भी होनेसे दोषाधिक्यसे वे सातप्रकारके हैं सो कहते हैं।

कुष्ठानिसप्तधादोषैःपृथग्द्वंद्वैः समागतैः ॥ ७ ॥
सर्वेष्वपित्रिदोषेषुव्यपदेशोऽधिकोमतः ॥

अर्थ–पृथक् पृथक् दोषोकरके ३, द्वंद्वज ३, और सन्निपातसे १ सब मिलकर सात कुष्ट भ सब कुष्ट त्रिदोष होनेपर भी जो दोष अधिक होय उसीसे व्यवहार करना चाहिये अर्थात् जिस दोष के लक्षण मिले उसको उसी दोषका कुष्ट जानना. जैसे "वातेन कुष्ठ कापाल" अर्थात् वाताधिक्य होनेसे कापाल कुष्ट होता है ॥

कुष्ठके पूर्वरूप।

अतिश्लक्ष्णखरस्पर्शस्वेदास्वेदविवर्णता ॥ ८ ॥ दाहःकंडूस्त्वचिस्वापस्तोदःकोष्ठोन्नतिःक्रमः ॥ व्रणानामधिकंशूलंशीघ्रोत्प-

त्तिश्चिरास्थितिः ॥ ९ ॥ रूढानामपिरूक्षत्वंनिमित्तेऽल्पेपिकोपनम् ॥ रोमहर्षोऽसृजःकार्ष्ण्यंकुष्टलक्षणमग्रजम् ॥ १० ॥

अर्थ–जिस ठिकाने कुष्ट होनहार होय उस जगह हाथोसे अत्यन्त चिकना मालूम होय अथवा खरदरा मालूम होय, उस ठिकाने पसीना आवे अथवा नहीं आवे, तथा उस ठिकानेका वर्ण पलट जाय, दाह होय, खुजली चले, त्वचाको स्पर्श मालूम न होय, नोचनेकीसी पीडा होय, विषैलीमाखीके फाटनेके सदृश चकत्ते उठे, परिश्रम करेविना देहमे श्रम होय, व्रणमे पीडा अधिक होय, उन फोडोंकी उत्पत्ति शीघ्र होकर वहुत दिवसपर्यंत रहै, जव फोडा भरनेको होयँ, तव रूखे रहे उनका थोडे निमित्त होनेसे कोप होय, रोमाच होय और रुधिर काला पडजाय, ये कुष्ट होनेके पूर्वरूप होते हैं ॥

सप्तमहाकुष्टोंके लक्षण ।

कृष्णारुणकपालाभंयद्रूक्षंपरुषंतनु ॥
कापालंतोदवहुलंतत्कुष्टंविषमंस्मृतम् ॥ ११ ॥

अर्थ–कापालकुष्ट जो काले, तथा लाल, खोपडीके सदृश, रूखे खरखरे पतले, ऐसे त्वचावाले तथा नोचनेकीसी अधिक पीडा युक्त होयँ, वे दुश्चिकित्स्य हैं अर्थात् वे चिकित्साकरनेमे कठिन हैं । इसको कापालकुष्ट कहतेहैं ॥

औदुंवरकुष्टके लक्षण ।

रुग्दाहरागकंडूभिःपरीतंलोमपिंजरम् ॥
उदुंवरफलाभासंकुष्टमौदुंबरंवदेत् ॥ १२ ॥

अर्थ–औदुंवरकुष्ट–शूल, दाह, लाल और खुजली इनसे व्याप्त होय, इसमे वाल कपिल वर्णके होयँ, तथा ये गूलरफलके समान होते हैं ॥

मंडलकुष्टके लक्षण ।

श्वेतंरक्तंस्थिरंस्त्यानंस्निग्धमुत्सन्नमंडलम् ॥
कृच्छ्रमन्योन्यसंयुक्तंकुष्टंमंडलमुच्यते ॥ १३ ॥

अर्थ–मंडलकुष्ट सफेद, लाल, कठिन, गीला, अथवा जलयुक्त चिकना जिसका आकार मंडलके सदृश उपरको उठा होय तथा एक दूसरेसे मिला होय, ऐसा यह मंडलकुष्ट कष्टसाध्य हैं ॥

ऋक्षजिह्वकुष्टके लक्षण ।

कर्कशंरक्तपर्यंतमन्तःश्यावंसवेदनम् ॥
यदृक्षजिह्वासंस्थानमृक्षजिह्वंतदुच्यते ॥ १४ ॥

अर्थ-ऋक्षजिह्वकुष्ट-कठोर, अतविषे लाल होय, वीचमे काला होय पीडा करे तथा रीछकी जीभके समान होय है ॥

पुंडरीककुष्ठके लक्षण।

**सश्वेतंरक्तपर्यंतंपुंडरीकदलोपमम् ॥**
**सोत्सेधंचसरागंचपुंडरीकंप्रचक्षते ॥ १५ ॥**

अर्थ-पुंडरीककुष्ट पुंडरीक ( लालकमल ) पत्रके समान सफेद होय, और उसके अतभाग लाल होयँ, यत्किंचित ऊचा निकल आवे, और मध्यमे थोड़ा लाल होय है ॥

सिध्मकुष्ठके लक्षण।

**श्वेतंताम्रंचतनुयद्रजोघृष्टंविमुंचति ॥**
**प्रायेणोरसितत्सिध्ममलाबुकुसुमोपमम् ॥ १६ ॥**

अर्थ-सिध्मकुष्ठ सफेद, लाल, पतला, खुजानेसे भूसीसी उडे यह विशेपकरके छातीमे होती है ( छातीमे कफ प्रधान होनेसे ) प्रायः इसके कहनेसे छातीके अतिरिक्त और स्थानोमे भी होयहै और घीयाके फूलके आकार होय है ॥

काकणकुष्ठके लक्षण।

**यत्काकणंतिकावर्णसपाकंतीव्रवेदनम् ॥**
**त्रिदोषलिंगंतत्कुष्ठंकाकणंनैवसिध्यति ॥ १७ ॥**

अर्थ-काकणकुष्ट-चिरमिठीके समा न लाल अर्थात् बीचमे काला होय और ओरपास लाल होय, अथवा बीचमे लाल होय, और ओरपास काला होय किंचित् पका, तीव्र पीडायुक्त, जिसमे तीनो दोपोके लक्षण मिलते हो यह कुष्ट अच्छा नही होय ॥

ग्यारहक्षुद्रकुष्ठोंके लक्षण।

**अस्वेदनंमहावास्तुयन्मत्स्यशकलोपमम् ॥**
**तदेककुष्ठंचर्माख्यंवहलंहस्तिचर्मवत् ॥ १८ ॥**

अर्थ-चर्मकुष्ट-पसीनारहित वहुत जगह व्यापनेवाला, मछलीकी त्वचासमान और जिसका चर्म हाथीके चर्मसमान मोटा और कठोर होय, उस्को चर्मकुष्ट कहते हैं ॥

किटिभकुष्ठके लक्षण।

**श्यावंकिणखरस्पर्शपरुषंकिटिभंस्मृतम् ॥**

अर्थ-किटिभकुष्ट-नीलवर्ण, व्रणकीचटके समान कठोर स्पर्श मालूम होय और परुप कहिये रूक्ष होय ॥

वैपादिककुष्ठके लक्षण।

**वैपादिकंपाणिपादस्फोटनंतीव्रवेदनम् ॥ १९ ॥**

**अर्थ**—वैपादिक--जिसमे हाथ और पैर फटजाय. और पीडा वहुत होय, इस विपादिकाको बिवाई नहीं जानना, क्योंकि बिवाई केवल पैरमेही होती हे, और बिवाईको शास्त्रमे पाददारी कहते हैं, और विपादिकामे हाथ पैरोंमे फुन्सी श्यामरंगकी होती हैं और वे फुन्सी चुचाती हैं तथा खुजाती है, इसीसे पाददारी भिन्न और विपादिका भिन्न हैं॥

अलसकुष्ठके लक्षण।

**कंडूमद्भिःसरागैश्चगंडैरलसकंचितम् ॥**

**अर्थ**—खुजलीयुक्त और लाल फफोलोंसे व्याप्त जो कुष्ट हो उसको अलसक कुष्ट कहते हैं॥

दद्रुमंडलकुष्ठके लक्षण।

**सकंडूरागपिटिकंदद्रुमंडलमुद्गतम् ॥ २० ॥**

**अर्थ**—दद्रुमंडलकुष्ट-इसमे खुजली होय, लाल होय, और फोडा होय और ये ऊंचे उठ आवे, मंडलके आकार गोल उत्पन्न होय, इसीसे इसको दद्रुमंडल कहते हैं॥

चर्मदलकुष्ठके लक्षण।

**रक्तंसशूलंकंडूसत्स्फोटंयद्दलयत्यपि ॥**
**तच्चर्मदलमाख्यातमस्पर्शसहमुच्यते ॥ २१ ॥**

**अर्थ**—चर्मदलकुष्ठ—यह लाल हो, शूलयुक्त, खुजलीयुक्त, फफोलेसे व्याप्त होकर फूटजाय इसमे हाथ लगानेसे सहा न जाय, इसमे त्वचा फटजाय॥

पामाकुष्ठके लक्षण।

**सूक्ष्माबह्व्यः पीडिकाःस्रावत्यःपामेत्युक्ताःकंडुमत्यःसदाहाः ॥**

**अर्थ**—पामाकुष्ट--पिडिका छोटी और बहुत होय उनमेसे स्राव होय तथा खुजली चले और दाह होय इस कुष्टको पामा (खाज) कहते हैं॥

कच्छुकुष्ठके लक्षण।

**सैवस्फोटैस्तीव्रदाहैरुपेताज्ञेयापाण्योःकच्छुरुग्रास्फिचोश्च ॥ २२ ॥**

**अर्थ**--कच्छुकुष्ठ—वही पामा मोटे फोडोंकरके तथा तीव्रदाहयुक्त होय, और हाथोमे होय, उसको कच्छू कहते हैं। उग्रा यह चूतडोंमें होती है॥

विस्फोटककुष्ठके लक्षण।

**स्फोटाःश्यावारुणाभासाविस्फोटाःस्युस्तनुत्वचः॥**

अर्थ–विस्फोटक–फोडा काले वा लाल रंगके होयँ और जिनकी त्वचा पतली होय, उनको विस्फोटक कहते हैं॥

शतारुकुष्ठके लक्षण।

**रक्तंश्यावंसदाहार्तिशतारुस्याद्बहुव्रणम्॥ २३॥**

अर्थ–शतारु–लाल होय, श्याम होय, जलन होय, शूल हो, तथा जिसमे अनेक फोडा होयँ, उसको शतारुकुष्ट कहते हैं।

विचर्चिकाके लक्षण।

**सकंडूःपिडिकाश्यावाबहुस्रावाविचर्चिका॥**

अर्थ–विचर्चिका–खुजली युक्त, काले रंगकी जो फुन्सी (माताके समान) होय तथा उनमेंसे स्राव बहुत होय, उसको विचर्चिका कहते हैं।

चर्मकुष्ठसे लेकर विचर्चिकाकुष्ठ पर्यन्त १२ कुष्ट होते हैं और पीछे क्षुद्र कुष्ठ ११ कहे हैं ऐसी कोई शंका करे उसके निमित्त कहते हैं विचर्चिका पैरोमे होकर फूटकर अर्थात् विपादिका होय है ऐसे कहनेसे सख्या नहीं वढे इस विषयमे भोजका यह मत है॥

वातजादिकुष्ठोंके लक्षण।

**खरंश्यावारुणंरूक्षंवातात्कुष्ठंसवेदनम्॥ २४॥**
**पित्तात्प्रकुपितंदाहरागस्रावान्वितंस्मृतम्॥**
**कफात्क्लेदिघनंस्निग्धंसकंडूशैत्यगौरवम्॥ २५॥**
**द्विलिंगंद्वंद्वजंकुष्ठंत्रिलिंगंसान्निपातिकम्॥**

अर्थ–वायुके योगसे कुष्ट खरदरा, कालेरंगका, अथवा लालवर्ण, रूखा, और पीडायुक्त, ऐसा होय है।

पित्तके योगसे कुपित कुष्टमे दाह, लाली, और स्रावयुक्त होय है।

कफके योगसे क्लेदयुक्त, सघन, चिकना, खुजली युक्त और भारी ऐसा होय है।

द्वंद्वज कुष्ठमे दो दोषोके लक्षण होते है।

सान्निपातिक कुष्ठमे तीन दोषोके लक्षण होते हैं॥

---

१ "दोषाः प्रदूष्य त्वङ् मांस पाणिपादसमाश्रिताः। पिडिकां जनयंत्याशुदाहकण्डूसमन्विताम्॥ शल्यतेत्वक् खरारूक्षापाण्योर्ज्ञेयाविचर्चिका। पादेविपादिका ज्ञेयास्थानान्यत्वाद्विचर्चिका॥"

रसादिसप्तधातुगतकुष्ठोंके क्रमसे लक्षण।

**त्वक्स्थेवैवर्ण्यमंगेषुकुष्टेरौक्ष्यंचजायते ॥ २६ ॥**

**त्वक्स्वापोरोमहर्षश्चस्वेदस्यातिप्रवर्तनम् ॥**

अर्थ–रसधातुगत कुष्ट होनेसे अंगका वर्ण पलट जाय है, अंग रूखा होय, त्वचा शून्य होय, रोमांच हो, और पसीना वहुत आवे ॥

रक्तगतकुष्ठके लक्षण।

**कंडूर्विपूयकश्चैवकुष्टेशोणितसंश्रये ॥ २७ ॥**

अर्थ–रक्तगत कुष्ट मे खुजली और राध वहुत होय ॥

मांसगतकुष्ठके लक्षण।

**वाहुल्यंवक्रशोषश्चकार्कश्यंपिडिकोद्गमः ॥**

**तोदःस्फोटःस्थिरत्वंचकुष्टेमांससमाश्रिते ॥ २८ ॥**

अर्थ–मांसगतकुष्ट होनेसे मुख वहुत सूखे, अंगमे कर्कशपना होय, देहमें फुन्सी पैदा होयँ, सुई नोचनेकीसी पीडा होयँ फोडा होय वे वहुत दिन रहें ॥

मेदोगतकुष्ठके लक्षण।

**कौण्यंगतिक्षयोऽङ्गानांसंभेदःक्षतसर्पणम् ॥**

**मेदःस्थानगतेलिंगंप्रागुक्तानितथैवच ॥ २९ ॥**

अर्थ–कौण्य कहिये हाथ गिरपडे चलनेकी शक्ति मारी जाय, हडफूटन होय, घाव फैलजाय, और पूर्वोक्त लक्षण ( रस रक्त मासगत कुष्टके लक्षण ) होयँ ॥

अस्थिमज्जागतकुष्ठके लक्षण।

**नासाभंगोऽक्षिरागश्चक्षतेषुकृमिसंभवः ॥**

**स्वरोपघातश्चभवेदस्थिमज्जासमाश्रिते ॥ ३० ॥**

अर्थ–अस्थि ( हड्डी ) और मज्जागतकुष्ट होनेसे नाक गिरपडे, नेत्र लाल होयँ, घावमे कीडे पड जायँ, स्वर वैठजाय ये लक्षण होयँ ॥

शुक्रार्त्तवगतकुष्ठके लक्षण।

**दंपत्योःकुष्ठबाहुल्याद्दुष्टशोणितशुक्रयोः ॥**

**यदपत्यंतयोर्जातंज्ञेयंतदपिकुष्टितम् ॥ ३१ ॥**

अर्थ–जिन स्त्रीपुरुषोंके रुधिर शुक्र कुष्टाधिक्यसे दुष्ट होयँ, उस दुष्टहुए वीर्य और रजसे

---

१ "त्वक्शब्देनात्र रसोऽभिधीयते धातुप्रस्तावात्, त्वक्शब्देन रसस्याभिधानं तात्स्थ्यात् ।

प्रगट भई जो संतान सोभी कोढी होती है, इस जगह दुष्ट हुए शुक्र और आर्तव सर्वथा बीजत्व नष्ट न होनेसे संतानके करनेवाले होते है और जीवसंक्रमण कालमें कदाचित् बीज दुष्ट होय तो विषके कीडाके न्याय करके संतान प्रगट होती है अर्थात् जैसे विष प्राणियोंके प्राणका नाशक है परन्तु उसमें भी विषका कीडा प्रगट होता है और वोह उससे नही मरता है यह वाग्भट्टका मत है ॥

## साध्यादिभेद।

**साध्यंत्वग्रक्तमांसस्थंवातश्लेष्माधिकंचयत् ॥**
**मेदसिद्वंद्वजंयाप्यंवर्ज्यंमज्जास्थिसंश्रितम् ॥ ३२ ॥**
**कृमिहृल्लासमन्दाग्निसंयुक्तंयत्त्रिदोषजम् ॥**
**प्रभिन्नंप्रसृतांगंचरक्तनेत्रंहतस्वरम् ॥ ३३ ॥**
**पंचकर्मगुणातीतंकुष्ठंहंतीहकुष्ठितम् ॥**

अर्थ—रस रुधिर मांस इन धातुओंके पर्यंत गये जे कुष्ठ वे साध्य होते हैं, तथा जिस कुष्ठमें वायु और कफ प्रधान होय वहभी साध्य है और मेदोधातुगत कुष्ठ तथा द्वंद्वजकुष्ठ याप्य जानना मज्जा अस्थि इन दोनों धातुमे कुष्ठ पहुँचगया हो, तथा जो शुक्रगत हो वह कुष्ठ असाध्य है तथा जिस कुष्टमें कृमि, वमन, मन्दाग्नि इनकरके युक्त होय तथा त्रिदोषज होय, वह असाध्य है जो कुष्ठ फूटकर वहने लगे तथा जिस कुष्ठसे रोगीके नेत्र लाल होयँ, अथवा स्वर बैठ गया होय और वमनविरेचनादि पंचकर्मके गुण जिस पुरुषके होयँ नहीं ऐसा रोगी मरजाय ॥

## कुष्ठमें प्रधानदोषके लक्षण।

**वातेनकुष्ठंकापालंपित्तेनौदुंबरंकफात् ॥ ३४ ॥**
**मंडलाख्यंविचर्चीचऋष्याख्यंवातपित्तजम् ॥**
**चर्मैककुष्ठकिटिमंसिध्मालसविपादिकाः ॥ ३५ ॥**
**वातश्लेष्मोद्भवाःश्लेष्मपित्ताद्दद्रुशतारुषी ॥**
**पुंडरीकंसविस्फोटंपामाचर्मदलंतथा ॥ ३६ ॥**
**सर्वैःस्यात्काकणंपूर्वंत्रिकंदद्रूःसकाकणा ॥**
**पुंडरीकर्क्षजिह्वेचमहाकुष्ठानिसप्ततु ॥ ३७ ॥**

अर्थ—वादीसे कापालकुष्ठ, पित्तसे औदुंबर, कफसे मंडल और विचर्चिका, वातपित्तसे ऋक्षजिह; वात कफसे चर्मकुष्ठ, किटिम, सिध्म अलस और विपादिका, कफपित्तसे, दद्रु, शतारु, पुंडरीक,

विस्फोटक, पामा, चर्मदल, त्रिदोषसे काकणकुष्ट होय है, पहिले तीन (कपाल, उदुंबर और मंडल) दद्रु, काकण, पुंडरीक और ऋक्षजिह्व ये सात महाकुष्ट जानने ॥

## किलासनिदान।

**कुष्ठैकसंभवंश्वित्रंकिलासंवारुणंभवेत् ॥**
**निर्दिष्टमपरिस्रावित्रिधातूद्भवसंश्रयम् ॥ ३८॥**

अर्थ—कुष्ट होनेके जो कारण (विरुद्धभोजन पापकर्मादि) कहे हैं उन्हीं कारणोंसे श्वित्र ( सपेद कोढ ) और किलास ( लाल कोढ ) ये होते हैं इनमें स्राव नहीं होय, तथा ये तीन धातुओंका आश्रय करके रहते हैं अर्थात् तीन दोष और रुधिर मास तथा मेद इनका आश्रय करके रहे हैं ॥

## वातादिभेदसे उनकेलक्षण।

**वाताद्रूक्षारुणंपित्तात्ताम्रंकमलपत्रवत् ॥ सदाहंरोमविध्वंसि कफाच्छ्वेतंघनंगुरु ॥ ३९ ॥ सकंडूरंक्रमाद्रक्तमांसमेदस्सु चादिशेत् ॥ वर्णैर्नैवेदगुभयंकृच्छ्रंतच्चोत्तरोत्तरम् ॥ ४० ॥**

अर्थ—वादीसे रूक्ष और लाल होय, पित्तसे ताम्बेके वर्ण समान तथा कमलपत्रके समान लाल और आकृति होय और उसमें दाह होय, उसके ऊपरके बाल गिरपडे कफके योगसे वह कोढ सफेद, गाढा, और भारी उसमें खुजली चले, रुधिर मास और मेद में क्रमसे लाल ताम्रश्वेतवर्णसे किलास जानना अर्थात् दोष रक्ताश्रित होनेसे लाल, मांसाश्रित होनेसे तामेके रग और मेदाश्रित होनेसे सफेद किलास होय है और वर्णसेही दोषसे उत्पन्न तथा व्रणसे उत्पन्न हुआ किलासश्वित्र उत्तरोत्तर ( रसगतसे मासगत और मासगतसे मेदोगत ) कृच्छ्रसाध्य है ॥

## श्वित्रके साध्यासाध्य लक्षण।

**अशुक्लरोमावहुलमसंश्लिष्टमथोनवम् ॥**
**अनग्निदग्धजंसाध्यंश्वित्रंवर्ज्यमतोऽन्यथा ॥ ४१ ॥**

अर्थ—जिस श्वित्र कोढके ऊपरके बाल काले हों, तथा जो पतले होकर आपसमे मिलें नही, तथा नवीन चित्र हो, अग्निदग्ध न हो वह श्वित्रकोढ साध्य जानना, यासे विपरीत असाध्य जानना ॥

---

१ "कुष्ठेन सह एकं समानं विरुद्धाशनपापकर्मादि सम्भवोनिदानं यस्य तत् कुष्ठैकसम्भवम्।

२ "त्रिधातूद्भवसंश्रयमिति,–त्रिधातवस्त्रयोदोपास्तथा रक्तमांसमेदांसि उद्भवाय संभवोऽधिष्ठानं यस्यतत्तथा।

किलासके असाध्य लक्षण।

गुह्यपाणितलौष्टेषुजातमप्यचिरंतनम् ॥
वर्जनीयंविशेषेणकिलासंसिद्धिमिच्छता ॥ ४२ ॥

अर्थ–गुदस्थानमें, हाथोमें, पैरोंके तलुओंमे, होठोंमे, प्रगट भया किलास कुष्ट, थोडे दिनका होय तौभी यश मिलनेकी इच्छावाला वैद्य छोड दे ॥

सांसर्गिक रोग।

प्रसंगाद्गात्रसंस्पर्शान्निःश्वासात्सहभोजनात्॥ सहशय्यासनाच्चापिवस्त्रमाल्यानुलेपनात् ॥ ४३ ॥ कुष्ठंज्वरश्चशोषश्चनेत्राभिष्यन्दएवच ॥ औपसर्गिकरोगाश्चसंक्रामन्तिनरान्नरम् ॥ ४४ ॥

अर्थ–मैथुनादि प्रसंगसे, अथवा शरीरके स्पर्शसे श्वासके लगनेसे, साथ बैठकर एक पात्रमे भोजन करनेसे, एक साथ एक शय्या ( पलंग ) पर सोनेसे, तथा एक साथ मिलकर बैठनेसे, पास रहनेसे, धारण करे वस्त्रको धारण करनेसे, सूघे पुष्पको सूंघनेसे अथवा पहरीहुई मालाको धारण करनेसे, लगाये हुए चदनमेसे लगानेसे कोढ, ज्वर, धातुशोष, ( क्षयी रोग ) नेत्ररोग, ( आख दूखना ) और औपसर्गिक रोग कहिये शीतलादिक और भूतोपसर्गादिक, ये साक्रामिक रोग, एक पुरुषसे उडकर दूसरे मनुष्यके होजाते हैं इसीसे पूर्वोक्त रोगियोका प्रसंगादिक न करै ॥

यथा।

म्रियतेयदिकुष्ठेनपुनर्जातस्यतद्भवेत् ॥
नातोनिंद्यतरोरोगोयथाकुष्ठंप्रकीर्त्तितम् ॥ ४५ ॥

अर्थ–कुष्टरोगी मरे तौ फिर उसके दूसरे जन्ममे यह कुष्टरोग होय है इसीसे इस कुष्टरोगके समान और दूसरा निंद्य रोग नहीं है कुष्ठरोगकी निरुक्ति " कुत्सित तिष्ठतीति " "कुष्ट भेषजरोगयोः " इति हैमः ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवभावार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकाया कुष्ठरोगनिदान समाप्तिमगमत्।

---

# शीतपित्तनिदानसंप्राप्तिः।

शीतमारुतसंस्पर्शात्प्रदुष्टौकफमारुतौ ॥
पित्तेनसहसंभूयबहिरंतर्विसर्पतः ॥ १ ॥

अर्थ—शीतलपवनके लगनेसे कफ वायु दुष्ट होकर पित्तसे मिल भीतर ( रक्तादिकोंमें ) और बाहर त्वचामें विचरते हैं ।

पूर्वरूप ।

पिपासारुचिहृल्लासमोहसादांगगौरवम् ॥
रक्तलोचनतातेषांपूर्वरूपस्यलक्षणम् ॥ २ ॥

अर्थ—प्यास, अरुचि, मुखमेंसे पानी गिरना, अगटूटना और भारी होना नेत्रमें लाली, ये पूर्वरूप शीतपित्तके जानने ॥

उदर्दके लक्षण ।

वरटीदष्टसंस्थानःशोथःसंजायतेबहिः ॥
सकंडूस्तोदबहुलश्छर्दिज्वरविदाहवान् ॥ ३ ॥
उदर्दमितितंविद्याच्छीतपित्तमथापरे ॥

अर्थ—वरटी ( ततैया ) के काटनेके समान त्वचाके ऊपर चकत्ता होजाय उसमें खुजली चले, और सूई चुभानेकीसी पीडा होय, इसके सयोगसे वमन, संताप, और दाह होय, इस रोगको उदर्द कहते हैं कोई इसको शीतपित्त कहते हैं इसको लौकिकमें पित्ती कहते हैं इसमें खुजली होय है, सो कफसे जानना चोटनी वादीसे होय है और ओकारी सताप और दाह ये पित्तसे होते हैं ऐसे जानना ॥

वाताधिकंशीतपित्तमुदर्दस्तुकफाधिकः ॥ ४ ॥

अर्थ—शीतपित्तमे वात प्रधान, तथा उदर्द कफप्रधान जानना ॥

उदर्दका दूसरा धर्म ।

सोत्संगैश्चसरागैश्चकंडूमद्भिश्चमंडलैः ॥
शैशिरःकफजोव्याधिरुदर्दःपरिकीर्त्तितः ॥ ५ ॥

अर्थ—सरदीसे कफका कोप होकर अंगके ऊपर लाल लाल चकत्ता उठें उनमें खुजली बहुत चले, और वे मंडलके साकार गोल हों, बीचमें कुछ नीचे और पास ऊंचे होयँ इन रोगको उदर्द कहते हैं ॥

कोठके लक्षण ।

असम्यग्वमनोदीर्णपित्तश्लेष्मान्ननिग्रहैः ॥
मंडलानिसकंडूनिरागवंतिबहूनिच ॥
उत्कोठःसानुबंधश्चकोठइत्यभिधीयते ॥ ६ ॥

अर्थ—वमनकारक औषध सेवन करनेसे, अच्छी रीतिसे वमन होनेसे, पित्त और कफ कुपित होनेसे अथवा स्वतः वमनके वेग आये भयेको रोकनेसे देहके ऊपर लाल और बहुत चकत्ता उठे उनमें खुजली चले, इस रोगको उत्कोठ कहते है और जो क्षण भरमे उत्पन्न होकर नाश होजाय उसको कोठ कहते हैं ॥

इति माधवटीकाया शीतपित्तोदर्दकोठनिदानं समाप्तम्।

---

# अम्लपित्तनिदानम्।

निदानपूर्वक अम्लपित्तका स्वरूप।

विरुद्धदुष्टाम्लविदाहिपित्तप्रकोपिपानान्नभुजोविदग्धम् ॥
पित्तंस्वहेतूपचितंपुरायत्तदम्लपित्तं प्रवदंति संतः ॥ १ ॥

अर्थ—विरुद्ध (क्षीरमत्स्यादि) और दुष्टान्न, खट्टा, दाहकारक, पित्त बढानेवाला ऐसा अन्नपानके सेवन करनेसे वर्षादिक ऋतुमें जलौषधिगत विदाहादि स्वकारणसे संचित भया पित्त दुष्ट होय उसको अम्लपित्त कहते हैं ॥

अम्लपित्तके लक्षण।

अविपाकक्लमोत्क्लेदतिक्ताम्लोद्गारगौरवैः ॥
हृत्कंठदाहरुचिभिश्चाम्लपित्तंवदेद्भिषक् ॥ २ ॥

अर्थ—अन्नका न पचना, विना परिश्रम करे परिश्रमसा मालूम हो, वमन, कडुवी तथा खट्टी डकार आवे देह भारी रहे हृदय और कंठमे दाह होय अरुचि होय, ये लक्षण होनेसे अम्लपित्त वैद्य जाने ॥

अम्लपित्त दो प्रकारका, एक ऊर्ध्वगत तथा दूसरा अधोगत, उसमें प्रथम अधोगतके लक्षण।

तृड्दाहमूर्च्छाभ्रममोहकारिप्रयात्यधोवाविविधप्रकारम् ॥
हृल्लासकोठानलसादकर्णस्वेदांगपीतत्वकरंकदाचित् ॥ ३ ॥

अर्थ—अम्लपित्त अधोगत होनेसे प्यास, दाह, मोह, (इन्द्रियमनोमोह) मूर्च्छा, भ्रम, मोह, सूखी रद, मंदाग्नि, कोठ कानमें पसीना, देहमे पीलापन ये लक्षण होकर गुदाके द्वारा काले लाल दुर्गंधियुक्त अनेक वर्णके पित्त गिरें ॥

ऊर्ध्वगतअम्लपित्तके लक्षण ।

**वान्तंहरित्पीतकनीलकृष्णमारक्तरक्ताभमतीवचाम्लम् ॥**
**मांसोदकाभंत्वतिपिच्छिलाच्छश्लेष्मानुयातंविविधंरसेन॥ ४ ॥**
**भुक्तेविदग्धेत्वथवाप्यभुक्तेकरोतितिक्ताम्लवमिंकदाचित् ॥**
**उद्गारमेवंविधमेवकंठेहृत्कुक्षिदाहं शिरसो रुजंच ॥ ५ ॥**

अर्थ–ऊर्ध्वगत पित्तसे हरे, पीले, नीले, काले, थोडे लाल, अथवा रक्तके सदृश, अत्यंत खट्टा, मास धोये हुए जलके समान अत्यत रेसेदार स्वच्छ, कफमिश्रित, खारी, कसेला, आदि सयुक्त ऐसे पित्त गिरे कभी कभी भोजन कर अन्न विदग्धावस्थाको प्राप्त होकर अथवा भोजन करनेके पहिले कडुई खट्टी ऐसी वमन होय, तथा ऐसीही डकारे आवे, कंठ कूख, और हृदय इनमे दाह होय, माथा दूखे ॥

कफपित्तजन्यअम्लपित्तके लक्षण ।

**करचरणदाहमौष्ण्यंमहतीमरुचिंज्वरंचकफपित्तम् ॥**
**जनयतिकण्डूमण्डलपिडिकाशतनिचितगात्ररोगचयम्॥ ६ ॥**

अर्थ–हाथपैरोमे दाह, अंगोमे गरमी, अन्नमे अरुचि, ज्वर कडू, ( खुजली ) रुधिरके बिगडनेसे देहमे मडल हो सैकडो पिटिका और अविपाकादि अनेक उपद्रव ये लक्षण कफपित्तसे होते हैं ॥

साध्यासाध्यविचार ।

**रोगोऽयमम्लपित्ताख्योयत्नात्संसाध्यतेनवः ॥**
**चिरोत्थितोभवेद्याप्यःकृच्छ्रसाध्यःसकस्यचित् ॥ ७ ॥**

अर्थ–यह अम्लपित्तरोग नया होय तो यत्न करनेसे साध्य होय और बहुत दिनका होय तो याप्य जानना, और जो अपथ्य सेवन करनेवाला पुरुष है उसके यह अम्लपित्तरोग कृच्छ्रसाध्य होय है

**अम्लपित्तमे केवल वायुका और वातकफका संसर्ग होय है सो कहते हैं ।**

**सानिलंसानिलकफंसकफंतच्चलक्षयेत् ॥**
**दोषलिंगेनमतिमान्भिषङ्मोहकरंहितम् ॥ ८ ॥**

अर्थ–वातयुक्त, अम्लपित्त, वातकफयुक्त, अम्लपित्त, और कफयुक्त अम्लपित्त ऐसे तीन प्रकारके अम्लपित्त बुद्धिमान् वैद्य दोषोके लक्षणोसे जाने, कारण इसका यह है कि ऊर्ध्वगत अम्लपित्तमे छर्दि ( रद्द ) रोगका भास होय है और अधोगत अम्लपित्तमे, अतिसारकीसी चेष्टा

मालूम होय है, इसीसे वैद्यको मोह होय है इसीसे वैद्यको इस रोगकी सूक्ष्म रीतिसे परीक्षा करनी चाहिये ॥

वातयुक्त अम्लपित्तके लक्षण।

**कंपप्रलापमूर्च्छाचिमिचिमिगात्रावसादशूलानि ॥**
**तमसोदर्शनविभ्रमविमोहहर्षाश्चवातयुते ॥ ९ ॥**

अर्थ–वातयुक्त अम्लपित्तमे कंप, प्रलाप, मूर्च्छा, चिमचिमा (चींटी काटनेसे प्रगट खुजलीके समान) देह टूटना, पेट दूखना, नेत्रोंके आगे अंधकार दीखै, भ्रांति होना, इन्द्रियमनको मोह. रोमाच हो, ये लक्षण होते हैं ॥

कफयुक्त अम्लपित्तके लक्षण।

**कफनिष्ठीवनगौरवजडताऽरुचिशीतसादवमिलेपाः ॥**
**दहनबलसादकंडूर्निद्राचिह्नंकफानुगते ॥ १० ॥**

अर्थ--कफयुक्त अम्लपित्तमे कफके ढेला गिरे, शरीरका अत्यंत भारीपन इन्द्रियोमे जडपना, अरुचि, शीत लगे, अंग टूटना, वमन, मुख कफसे लिहसा रहे. मंदाग्नि, बलनाश, खुजली और निद्रा ये लक्षण होते है ॥

वातकफयुक्त अम्लपित्तके लक्षण।

**उभयमिदमेवचिह्नंमारुतकफसंभवेभवत्यम्ले ॥**

अर्थ–वातकफयुक्त अम्लपित्तमे ऊपर कहे हुए दोनोके लक्षण होते है ॥

कफपित्तके लक्षण।

**भ्रमोमूर्च्छाऽरुचिश्छर्दिरालस्यंचशिरोरुजः ॥**
**प्रसेकोमुखमाधुर्यंश्लेष्मपित्तस्यलक्षणम् ॥ ११ ॥**

अर्थ–भ्रम, मूर्च्छा, अरुचि, वमन, आलस्य, मस्तकपीडा, मुखसे पानी बहना, मुखमे मिठास, ये कफपित्तयुक्त अम्लपित्तके लक्षण हैं ॥

इति भाषाटीकायामम्लपित्तनिदानं समाप्तम्।

---

# अथ विसर्पनिदानम्।

इसकी निदानपूर्वक संख्या, रूप, संप्राप्ति और निरुक्ति।

**लवणाम्लकटूष्णादिसंसेवादोषकोपतः ॥**
**विसर्पःसप्तधाज्ञेयःसर्वतःपरिसर्पणात् ॥ १ ॥**

अर्थ—खारी, खट्टा, चरपरा, गरम आदि पदार्थ सेवन करनेसे वातादि दोषोंका कोप होकर सात प्रकारका विसर्प रोग होय है, वह सर्वत्र फैलजाय, इसीसे इसको विसर्प कहते हैं सो चरकमें लिखा भी है ॥

**पृथक् त्रयस्त्रिभिश्चैकोविसर्पाद्वंद्वजास्त्रयः । वातिकःपैत्तिकश्चैवकफजःसान्निपातिकः ॥ २ ॥ चत्वारएतेवीसर्पावक्ष्यन्ते द्वंद्वजास्त्रयः । आग्नेयोवातपित्ताभ्यांग्रन्थ्याख्यः कफवातजः ॥ ३ ॥ यस्तुकर्दमकोघोरःसपित्तकफसंभवः ॥**

अर्थ—वातिक, १ पैत्तिक १ श्लैष्मिक १ सान्निपातिक १ तीन द्वंद्वज ३ इस तरह सात प्रकारका विसर्प रोग है २ वातिक, पैत्तिक, श्लेष्मिक, सन्निपातिक ये चार प्रकारके विसर्प हैं, और तीन जो द्वंद्वज उनको अब कहेंगे, वातपित्तसे आग्नेय, कफवातसे ग्रन्थ्याख्य, कफपित्तसे घोर कर्दमक नामवाला विसर्प होताहै ॥

सर्व प्रकारके विसर्प रक्तादिक चार दूष्य और वातादि तीन
दोष इनसे होते हैं सो कहते हैं ।

**रक्तंलसीकात्वङ्मांसंदूष्यंदोषास्त्रयोमलाः ॥**
**विसर्पाणांसमुत्पत्तौविज्ञेयाःसप्तधातवः ॥ ४ ॥**

अर्थ—रुधिर, मांसका जल, त्वचा, मास ये दूष्य हैं और वातादि तीन दोष ये सात धातु विसर्पके उत्पन्न होनेके कारण हैं ॥

वातविसर्पके लक्षण ।

**तत्रवातात्परीसर्पोवातज्वरसमाकृतिः ॥**
**शोफस्फुरणनिस्तोदभेदपासार्तिहर्षवान् ॥ ५ ॥**

अर्थ—वादीसे विसर्प जो होय उसके लक्षण वातज्वरके समान होते हैं, तथा उसमे सूजन, फरकना, नोचनेकीसी पीडा, तोडनेकीसी पीडा, दर्द और रोमाच खडे हों, तथा वह विसर्प लंबा होय है ॥

पित्तविसर्पके लक्षण ।

**पित्ताद्द्रुतगतिःपित्तज्वरलिंगोऽतिलोहितः ॥**

अर्थ—पित्तके विसर्पकी गति शीघ्र होय अर्थात् वह जल्दी फैल जाय तथा पित्तज्वरके लक्षण इसमे मिलते हो तथा अत्यत लाल होय ॥

---

१ विविधं सर्पति यतो विसर्पस्तेन स स्मृतः । परिसर्पोथ वा नाम्ना सर्वतः परिसर्पणात् ॥ " इति ।

कफविसर्पके लक्षण ।

कफात्कंडूयुतःस्निग्धःकफज्वरसमानरुक् ॥ ६ ॥

अर्थ—कफकी विसर्पमें खुजली बहुत होय, तथा चिकनी होय, और उसमें कफज्वरकीसी पीडा होय ॥

सन्निपातविसर्पके लक्षण ।

सन्निपातसमुत्थश्चसर्वरूपसमन्वितः ॥

अर्थ—सन्निपातजन्य विसर्पमें जो वातादिकोंके लक्षण कहे हैं सो सब होयँ ॥

अग्निविसर्पके लक्षण ।

वातपित्ताज्ज्वरच्छर्दिमूर्च्छातीसारतृड्भ्रमैः ॥ ७ ॥ अस्थिभेदाग्निसदनतमकारोचकैर्युतः ॥ करोतिसर्वमंगंचदीप्तांगारावकीर्णवत् ॥ ८ ॥ यंयंदेशंविसर्पश्चविसर्पतिभवेच्चसः ॥ शातांगारासितोनीलोरक्तोवाशूपचीयते ॥ ९ ॥ अग्निदग्धइवस्फोटैःशीघ्रगत्वाद्रुतंचसः ॥ मर्मानुसारीवीसर्पःस्याद्वातोऽतिबलस्ततः ॥ १० ॥ व्यथेतांगंहरेत्संज्ञांनिद्रांचश्वासमीरयेत् ॥ हिक्कांचसततोवस्थामीदृशींलभतेनरः॥ ११ ॥ क्वचिच्छर्मारतिग्रस्तोभूमिशय्यासनादिषु ॥ चेष्टमानस्ततःक्लिष्टोमनोदेहश्रमोद्भवाम् ॥ १२ ॥ दुर्बोधामश्नुतेनिद्रांसोऽग्निवीसर्पउच्यते ॥

अर्थ—वातपित्तसे प्रगट विसर्प, ज्वर, वमन, मूर्च्छा, अतिसार, प्यास, भौर, हडफूटन, मंदाग्नि, अंधकारदर्शन, अन्नद्वेष इन लक्षणकरके संयुक्त होय, इसके संयोगसे सर्व शरीर अगारोंसे भरासा माल्म होय, जिस जिस ठिकाने वह विसर्प फैले उसी उसी ठिकानेपर अग्निरहित अंगारके समान काला, नीला, लाल, होकर शीघ्र सूजे, आगसे फूकेके समान ऊपर फफोला होय, और उस विसर्पकी शीघ्र गति होनेसे जल्दी हृदयमें जायकर मर्मानुसारी विसर्प होय, और उससे वायु अत्यन्त बलवान् होय, अंगोको व्यथा करे, सज्ञा और निद्रा इनका नाश होय, श्वास बढावै, हिचकी उत्पन्न करे, ऐसी मनुष्यकी अवस्था होय, अवस्था होनेके कारण धरती, सेज, आसन इत्यादिकोंमें सुख होय नहीं, हलने चलनेसे क्लेश होय, मन तथा देहको क्लेश होनेसे उत्पन्न भई ऐसी दुर्बोध निद्रा (मरणरूपी निद्रा) को प्राप्त होय. इस रोगको ( अग्निविसर्प ) ऐसे कहते हैं ॥

### ग्रंथिविसर्पके लक्षण ।

कफेनरुद्धःपवनोभित्त्वातंबहुधाकफम् ॥ १३ ॥
रक्तंवावृद्धरक्तस्यत्वक्शिरास्नायुमांसगम् ॥
दूषयित्वाचदीर्घाणुवृत्तस्थूलखरात्मनाम् ॥ १४ ॥
ग्रंथीनांकुरुतेमालांरक्तानांतीव्ररुग्ज्वराम् ॥
श्वासकासातिसारास्यशोषहिक्कावमिभ्रमैः ॥ १५ ॥
मोहवैवर्ण्यमूर्च्छांगभंगाग्निसदनैर्युतम् ॥
इत्ययंग्रंथिवीसर्पःकफमारुतकोपजः ॥ १६ ॥

अर्थ–स्वहेतुसे कुपित भयो कफ सो रुकी हुई पवन उस कफको भेदकर अथवा बढेहुए रुधिरको भेदकर त्वचा, नस नाडी और मांस इनमे प्राप्त हो, और इनको दुष्टकर लंबी, छोटी, गोल, मोटी, खरदरी, लाल; गाठोकी माला प्रगट करे इन गाठोमे पीडा अधिक होय, ज्वर होय, श्वास, खांसी, अतिसार, मुखमे पपडी परे, हिचकी, वमन, भ्रमता, मोह वर्णका पलटना, मूर्च्छा, अगोका टूटना, मदाग्नि ये लक्षण होते है. इस रोगको ग्रन्थिविसर्प कहते हैं यह कफवायुके कोपसे उत्पन्न होता है इसको सुश्रुतमे अपची कहते है ॥

### कर्दमविसर्पके लक्षण ।

कफपित्താज्ज्वरःस्तंभोनिद्रातंद्राशिरोरुजा ॥
अंगावसादविक्षेपप्रलापारोचकभ्रमाः ॥ १७ ॥
मूर्च्छाग्निहानिर्भेदोऽस्थ्नांपिपासेन्द्रियगौरवम् ॥
आमोपवेशनंलेपःस्त्रोतसांसविसर्पति ॥ १८ ॥
प्रायेणामाशयंगृह्णन्नैकदेशंनचातिरुक् ॥
पिडिकैरिवकीर्णोतिपीतलोहितपांडुरैः ॥ १९ ॥
स्निग्धोऽसितोमेचकाभोमलिनःशोफवान्गुरुः ॥
गंभीरपाकःप्राज्योष्मास्पष्टःक्लिन्नोऽवदीर्यते ॥ २० ॥
पंकवच्छीर्णमांसश्चस्पष्टस्नायुशिरागणः ॥
शवगंधीचवीसर्पंकर्दमाख्यमुशंतितम् ॥ २१ ॥

अर्थ–कफपित्तसे ज्वर, अंगोका जकड़ना, निद्रा, तंद्रा, मस्तकशूल, अंगग्लानि, हाथ पैरोका पटकना, बकवाद, अरुचि, भ्रम, मूर्छा, मन्दाग्नि, हडफूटन, प्यास इन्द्रियोका जकड़ना, आमका गिरना, मुखादि स्रोतो ( छिद्रो ) मे कफका लेप इत्यादि लक्षण होते हैं, तथा वह विसर्प आमाशयमें उत्पन्न हो पीछे सर्वत्र फैले, उसमे पीडा थोडी होय, उसमे सर्वत्र पीली तामेके रगकी, सफेद रगकी पिडिका, होयँ तथा वह विसर्प चिकनी, स्याहीके समान काली, मलिन, सूजनयुक्त, भारी, गंभीरपाक कहिये भीतरसे पकी हो उनमें घोर दाह हो और वह दबानेसे तत्क्षण गीली होजाय, तथा वह फटजाय, तथा कीचके समान होकर उसका मास गल जाय, उसमे शिरा नाडी ( नस) ये दीखने लगे, उसमे मुर्दाकीसी वांस आवे, इस विसर्पको कर्दमविसर्प कहते हैं ॥

क्षतजाविसर्पके लक्षण ।

वाह्यहेतोःक्षतात्क्रुद्धःसरक्तंपित्तमीरयन् ॥
विसर्पंमारुतःकुर्यात्कुलित्थसदृशैश्चितम् ॥ २२ ॥
स्फोटैःशोथज्वररुजादाहाढ्यंश्यावशोणितम् ॥ २३ ॥

अर्थ–बाह्यकारण करके क्षत ( घाव ) होकर उसमे वायु कुपित होकर वह रुधिर सहित पित्तको व्रणमें प्राप्तकर, विसर्परोग उत्पन्न करे, उसमे कुल्थीके समान श्यामवर्णके फोडा होते है सूजन हो, ज्वर होय और दाह होय, उसका रुधिर काला निकले, इस विसर्पको पित्तविसर्पके अन्तर्गत जाननेसे संख्यामे विरुद्ध नहीं पडे अन्यथा सख्या बढजाती है यह भोजका मत है ॥

उपद्रव ।

ज्वरातिसारवमथुस्तृण्मांसदरणंक्लमः ॥
अरोचकाविपाकौच विसर्पाणामुपद्रवाः ॥ २४ ॥

अर्थ–ज्वर, अतिसार,वमन, प्यास, मासका गलना, अनायास, श्रम, अरुचि, अन्न न पचना, ये विसर्प रोगके उपद्रव हैं ॥

साध्यासाध्य लक्षण ।

सिध्यन्तिवातकफपित्तकृताविसर्पाःसर्वात्मकःक्षतकृत-
श्चनसिद्धिमेति ॥ पित्तात्मकोऽञ्जनवपुश्चभवेदसाध्यःकृ-
च्छ्राश्चमर्मसुभवंतिहिसर्वएव ॥ २५ ॥

अर्थ–वात पित्त कफ इनसे प्रगट जो विसर्प सो साध्य होय है सन्निपातज और क्षतज विसर्प साध्य नहीं होय पित्तसे प्रगट भई विसर्प जिसका काजलके समान अंग होय वह असाध्य और जो विसर्प मर्म ठिकानेपर होय, वे सब कष्टसाध्य होते है ॥

इति श्रीमाथुरीभाषाटीकायां विसर्पनिदानम् ।

# विस्फोटनिदानम् ।

लक्षण ।

कट्वम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्षक्षारैरजीर्णाध्यशनातपैश्च ॥ तथर्तुदोषेणविपर्ययेणकुप्यंतिदोषाःपवनादयस्तु ॥ १ ॥ त्वचमाश्रित्यतेरक्तमांसास्थीनिप्रदूष्यच ॥ घोरान्कुर्वन्तिविस्फोटान्सर्वाञ्ज्वरपुरःसरान् ॥ २ ॥

अर्थ–कडुआ, खट्टा, तीखा, (मरिचादि) गरम, दाहकारक, रूखा, खारा, अजीर्ण, भोजनके ऊपर भोजन, और धूप ऋतुदोष कहिये शीतोष्णका अतियोग, अथवा ऋतुविपर्यय (ऋतुका पलटना) इन कारणोंसे, वातादिदोप कुपित हो त्वचाका आश्रय कर रुधिर मांस और हड्डी इनको दूषित कर भयंकर विस्फोटक (फोडा) उत्पन्न करें उनके प्रगट होनेके पूर्व घोर ज्वर होय है ॥

विस्फोटस्वरूप ।

अग्निदग्धनिभाःस्फोटाःसज्वरारक्तपित्तजाः ॥ क्वचित्सर्वत्रवादेहेविस्फोटाइतितेस्मृताः ॥ ३ ॥

अर्थ–रक्तपित्तसे प्रगट हुए ऐसे अग्निकरके जरेके समान फोडा अंगमें किसी एक ठिकाने अथवा सब देहमें होते हैं उनके होनेसे ज्वर होय, उनको विस्फोटक ऐसे कहते हैं इस रोगमे भी वातका अनुबंध होता है सो भोजने कहा है ॥

वातविस्फोटके लक्षण ।

शिरोरुक्छूलभूयिष्ठंज्वरतृट्पर्वभेदनम् ॥ सुकृष्णवर्णताचेतिवातविस्फोटलक्षणम् ॥ ४ ॥

---

१ यदाह भोजः–"यदा रक्तं च पित्तं च वातेनानुगतं त्वचि । अग्निदग्धनिभान्स्फोटान्कुरुतः सर्वदेहगान् ॥ सज्वरान्सपरीदाहांन्विद्याद्विस्फोटकांस्तु तान् ॥" इति ॥

अर्थ-मस्तकमें पीडा, शूल, देहमें पीडा, ज्वर, प्यास, संधियोंमें पीडा, फोडोंका वर्ण काला होय, ये वातविस्फोटके लक्षण हैं ॥

पित्तविस्फोटके लक्षण ।

**ज्वरदाहरुजास्रावपाकतृष्णाभिरन्वितम् ॥**
**पीतलोहितवर्णंचपित्तविस्फोटलक्षणम् ॥ ५ ॥**

अर्थ-ज्वर, दाह, पीडा, स्राव, फोडोंका पकना, प्यास, देह पीली हो, अथवा लाल होय, ये पित्तविस्फोटके लक्षण हैं ॥

कफविस्फोटके लक्षण ।

**छर्द्यरोचकजाड्यानिकंडूकाठिन्यपांडुताः॥**
**अवेदनाश्चिरात्पाकीसविस्फोटःकफात्मकः ॥ ६ ॥**

अर्थ-वमन, अरुचि, जडता, तथा फोड़ा खुजलीयुक्त हो, कठिन, पीले और उनमे पीडा होय नहीं और वे वहुत कालमें पके, यह विस्फोट कफका जानना ॥

कफपित्तात्मक विस्फोट ।

**कंडूर्दाहोज्वरश्छर्दिरेतैस्तुकफपैत्तिकः ॥**

अर्थ-खुजली, दाह, ज्वर और वमन इन लक्षणोंसे कफपित्तजन्य विस्फोट जानना ॥

वातपित्तात्मकके लक्षण ।

**वातपित्तकृतोयस्तुकुरुतेतीव्रवेदनाम् ॥ ७ ॥**

अर्थ-वातपित्तके विस्फोटमें तीव्र पीडा होती है ॥

कफवातात्मकके लक्षण ।

**कंडूस्तैमित्यगुरुभिर्जानीयात्कफवातिकम् ॥**

अर्थ-खुजली, गीलापना, भारीपना इन लक्षणोंसे कफवातका विस्फोट जानना ॥

सन्निपातविस्फोटके लक्षण ।

**मध्येनिम्नोन्नतोंऽतेचकठिनोऽल्पप्रपाकवान् ॥ ८ ॥**
**दाहरागतृषामोहच्छर्दिमूर्च्छारुजोज्वरः ॥**
**प्रलापोवेपथुस्तंद्रासोऽसाध्यश्चत्रिदोषजः ॥ ९ ॥**

अर्थ-जो फोडा वीचमें नीचा होय और ओरपाससे ऊंचा होय कठिन कुछ पका होय है, तथा जिसके योगसे दाह, अंगमें लाली, प्यास, मोह, वमन, मूर्छा, पीडा, ज्वर, प्रलाप, कंप, तन्द्रा, ये लक्षण होते है वह सन्निपातका विस्फोट असाध्य है ॥

रक्तजविस्फोटके लक्षण ।

रक्तारक्तसमुत्थानागुंजाफलनिभास्तथा ॥ वेदितव्यास्तुरक्ते-
नपैत्तिकेनचहेतुना ॥ नतेसिद्धिंसमायांतिसिद्धैर्योगशतैरपि॥१०॥

अर्थ–रुधिरसे प्रकट भया विस्फोट तामेके रंगका गुजा (चिरमिठी)के समान लाल, वह रुधिरके दुष्ट होनेसे अथवा पित्तके दुष्ट होनेसे होंय है, इसमे सैकडो अनुभवकारी औषधके करनेसेभी साध्य नहीं होय ॥

साध्यासाध्यविचार ।

एकदोषोत्थितःसाध्यःकृच्छ्रसाध्योद्विदोषतः ॥
सर्वरूपान्वितोघोरस्त्वसाध्योभूर्युपद्रवः ॥ ११ ॥

अर्थ–एक दोषसे प्रगट भया जो विस्फोट वह साध्य है, द्विदोषका कष्टसाध्य है, और सर्व लक्षण युक्त होय सो भयंकर तथा जिसमे उपद्रव बहुत होयँ वह विस्फोट असाध्य है ॥

उपद्रव ।

हिक्काश्वासोऽरुचिस्तृष्णाअंगसादोहृदिव्यथा ॥
विसर्पज्वरहृल्लासाविस्फोटानामुपद्रवाः ॥ १२ ॥

अर्थ–हिचकी, श्वास, अरुचि, प्यास, अंगग्लानि, हृदयमे पीडा, विसर्परोग, ज्वर, वमन ये विस्फोटके उपद्रव जानने ॥

इति विस्फोटनिदान समाप्तम् ।

# मसूरिकानिदानम् ।

कारण और संप्राप्ति ।

कट्वम्ललवणक्षारविरुद्धाध्यशनाशनैः ॥ दुष्टनिष्पावशाकाद्यैःप्र
दुष्टपवनोदकैः ॥ १ ॥ क्रूरग्रहेक्षणाच्चापिदेहदोषाःसमुद्धताः ॥
जनयंतिशरीरेऽस्मिन्दुष्टरक्तेनसंगताः ॥ २ ॥
मसूराकृतिसंस्थानाःपिडिकाःस्युर्मसूरिकाः ॥

अर्थ--कडुआ, खट्टा, नोनका, खारी, विरुद्ध भोजन, अध्यशन ( भोजनके ऊपर भोजन ) दुष्ट-अन्न, निष्पाव ( शिवीबीज उडद मूँग ) आदि शाक, विषैले फूल आदिसे मिला पवन तथा जल, शनैश्चरादि खोटे ग्रहोका देखना, इन सब कारणोंकरके शरीरमे वातादिदोष कुपित होकर दुष्ट रुधिरमें मिलकर मसूरके समान देहमे अनेक मरोरी उत्पन्न करे, उनको मसूरिका ( माता ) ऐसे कहते हैं । "दुष्टरक्तेन सगताः" इस पदके धरनेसे रुधिरका कटु अम्लादि हेतु करके विशेषकोप दिखाया, इसीसे ग्रन्थान्तरोमे लिखा भी है ॥

मसूरिकाके पूर्वरूप ।

**तासांपूर्वंज्वरःकंडूर्गात्रभंगोऽरुचिर्भ्रमः ॥ ३ ॥**
**त्वचिशोफःसवैवर्ण्योनेत्ररागस्तथैवच ॥**

अर्थ–तिस माता शीतलाके पूर्व ज्वर होय है, खुजली चले, देहमें फूटनी होय, अन्नमे अरुचि, भ्रम होय, अंगके ऊपरकी त्वचामे सूजन होय, तथा वर्ण पलटजाय, नेत्र लाल होयँ, ये शीतलाके पूर्वरूप होते हैं ॥

वातकी मसूरिकाके लक्षण ।

**स्फोटाःकृष्णारुणारूक्षास्तीव्रवेदनयान्विताः ॥ ४ ॥**
**कठिनाश्चिरपाकाश्चभवंत्यनिलसंभवाः ॥**
**संध्यस्थिपर्वणांभेदःकासःकंपोऽरतिःक्लमः ॥ ५ ॥**
**शोषस्ताल्वोष्ठजिह्वानांतृष्णाचारुचिसंयुता ॥**

अर्थ–वातमसूरिकाके फोडे काले, लाल और रूक्ष होते हैं, उनमे तीव्र पीडा होय, कठिन होयँ, शीघ्र पके नहीं, इसके योगसे संधि हाड और पर्वोंमे फोडनेकीसी पीडा होय, खांसी, कंप, चित्त स्थिर न हो, विना परिश्रमके श्रम होय, तालुआ, होठ और जीभ, ये सूखने लगे, प्यास, अरुचि ये लक्षण होते हैं ॥

पित्तकी मसूरिकाके लक्षण ।

**रक्ताःपीताःसिताःस्फोटाःसदाहास्तीव्रवेदनाः ॥ ६ ॥**
**भवंत्यचिरपाकाश्चपित्तकोपसमुद्भवाः ॥**
**विड्भेदश्चांगमर्दश्चदाहस्तृष्णाऽरुचिस्तथा ॥ ७ ॥**
**मुखपाकोऽक्षिपाकश्चज्वरस्तीक्ष्णःसुदारुणः ॥**

---

१ "पित्तं शोणितसंसृष्टं यदा दूषयति त्वचम् । तदा करोति पिडिकाः सर्वगात्रेषु देहिनाम् ॥ मसूरामुद्गमात्राणा तुल्याः कालोपमा इति । मसूरिकास्तु ता ज्ञेयाः पित्तरक्ताधिका बुधैः ॥" इति ।

अर्थ–पित्तकी मसूरिकाका मुख लाल, पीला, सफेद होय हे उसमे दाह तथा पीडा बहुत होय और यह शीतला शीघ्र पके, इसके योगसे मल पतला होय, अंग टूटे, दाह, प्यास, अरुचि, मुखपाक और नेत्रपाक होय, ज्वर तीव्र हो ये लक्षण होयँ ॥

रक्तजमसूरिकाके लक्षण ।

**रक्तजायांभवंत्येतेविकाराःपित्तलक्षणाः ॥ ८ ॥**

अर्थ–रक्तजमसूरिकामे पित्तज मसूरिकाके लक्षण होते हैं ॥

कफजमसूरिकाके लक्षण ।

**कफप्रसेकःस्तैमित्यंशिरोरुग्गात्रगौरवम् ॥**
**हृल्लासःसारुचिर्निद्रातंद्रालस्यसमन्विता॥ ९ ॥**
**श्वेताःस्निग्धाभृशंस्थूलाःकंडुरामंदवेदनाः ॥**
**मसूरिकाःकफोत्थाश्चचिरपाकाःप्रकीर्त्तिताः ॥ १० ॥**

अर्थ–कफकी मसूरिकामे मुखके द्वारा कफका स्राव होय, अगमें आर्द्रता, तथा भारीपना, मस्तकमें शूल, वमन आनेकीसी इच्छा होय, अरुचि, निद्रा, तन्द्रा, आलस्य ये होयँ, और फोडा सफेद चिकने अत्यत मोटे होयँ इनमें खुजली बहुत चले, पीडा मद होय, और वे बहुत दिनमे पकें॥

त्रिदोषजमसूरिकाके लक्षण ।

**नीलाश्चिपिटविस्तीर्णामध्येनिम्नामहारुजः ॥**
**चिरपाकाःपूतिस्रावाःप्रभूताःसर्वदोषजाः ॥ ११ ॥**

अर्थ–त्रिदोपज मसूरिकाके फोडे नीले, चिपटे, लबे, बीचमे नीचे ऐमे, होयँ,उनमें पीडा अत्यंत होय तथा वे बहुत दिनमे पके, और उनमेसे दुर्गंधयुक्त स्राव होय वे फोडे सर्व दोषके बहुत होयँ है ॥

चर्मपिडिका ।

**कंठरोधोऽरुचिस्तंद्राप्रलापारतिसंयुताः ॥**
**दुश्चिकित्स्याःसमुद्दिष्टाःपिडिकाश्चर्मसंज्ञिताः ॥ १२ ॥**

अर्थ–जिस फोडाके होनेसे कठ रुकजाय, अरुचि, तन्द्रा, प्रलाप, चैन न पडना ये लक्षण होते हैं जिनकी औषधि नहीं होसकै ऐसी चर्मसज्ञक पिडिका जाननी ॥

रोमांतिका ।

**रोमकूपोन्नतिसमारागिण्यःकफपित्तजाः ॥**
**कासारोचकसंयुक्तारोमांत्योज्वरपूर्विकाः ॥ १३ ॥**

अर्थ—कफपित्तसे केशोंके ( बालोंके ) छिद्रके समान बारीक, और लाल, ऐसी मसूरिका होयँ इनके होनेसे खांसी, अरुचि होय तथा इनके होनेसे पहिले ज्वर होय, इनको रोमातिका ( कसूमीमाता ) ऐसे कहते हैं ॥

रसादि सप्तधातु।

रसगतमसूरिकाओंके लक्षण।

**तोयबुद्बुदसंकाशास्त्वग्गताश्चमसूरिकाः ॥**
**स्वल्पदोषाःप्रजायंतेभिन्नास्तोयंस्रवंतिच ॥ १४ ॥**

अर्थ—रसगत मसूरिका पानीके बमूलेके सदृश हो, इनके फूटनेसे पानी बहे, यह त्वग्गत मसूरिका है कारण इसका यह है कि दोष स्वल्प हैं ॥

रक्तगतमसूरिकाके लक्षण।

**रक्तस्थालोहिताकाराःशीघ्रपाकास्तनुत्वचः ॥**
**साध्यानात्यर्थदुष्टास्तुभिन्नारक्तंस्रवंतिच ॥ १५ ॥**

अर्थ—रुधिरगत मसूरिका तामेके रंगकी, जलदी पकनेवाली होती है, उनके ऊपरली त्वचा पतली होय है, यह अत्यत दुष्ट होनेसे साध्य नही होय और इसके फूटनेसे इनमेसे रुधिर निकले ॥

मांसगतके लक्षण।

**मांसस्थाःकठिनाःस्निग्धाश्चिरपाकास्तनुत्वचः ॥**
**गात्रशूलोऽरतिःकंडूमूर्च्छादाहतृषान्विताः ॥ १६ ॥**

अर्थ—मांसस्थ मसूरिका कठिन, चिकनी होयँ हैं ये बहुत दिनमे पके तथा इसकी त्वचा पतली होय, अगोमे शूल होय, चैन पडे नहीं, खुजली चले, मूर्च्छा, दाह और प्यास ये लक्षण होते है ॥

मेदोगतके लक्षण।

**मेदोजामंडलाकारामृदवःकिंचिदुन्नताः ॥**
**घोरज्वरपरीताश्चस्थूलाःक्ष्णाःसवेदनाः ॥**
**संमोहारतिसंतापाःकश्चिदाभ्योविनिस्तरेत् ॥ १७ ॥**

अर्थ—मेदोगतमसूरिका मंडलके आकार अर्थात् गोल, नरम, कुछ ऊंची, मोटी तथा काली होती हैं, इनके होनेसे भयंकर ज्वर, पीडा, इन्द्रिय मनको मोह, चित्तका अस्थिर होना, सताप,

ये लक्षण होते है इस मसूरिकासे कोई मनुष्य वचता होगा इससे यह दिखाया कि, यह अत्यंत कृच्छ्रसाध्य है ॥

अस्थिमज्जागतके लक्षण।

क्षुद्रागात्रसमारूढाश्चिपिटाःकिंचिदुन्नताः ॥ मज्जोत्थाभृश-संमोहवेदनारतिसंयुताः ॥ १८॥ छिंदंतिमर्मधामानिप्राणाना-शुहरंतिताः ॥ भ्रमरेणेवविद्धानिभवंत्यस्थीनिसर्वतः ॥ १९ ॥

अर्थ—अस्थिमज्जागतमसूरिका बहुत छोटी, देहके समान रूक्ष, चिपटी, कुछ ऊची होय है, अत्यन्त चित्तविभ्रम, पीडा, अस्वस्थता ये होते है वह मर्मस्थानोके भेदकरके शीघ्र प्राणहरण करे इनके होनेसे सर्व हड्डियेंमे भौराके काटनेके समान पीडा होय है ॥

शुक्रगतके लक्षण।

पक्काभाःपिडिकाःस्निग्धाःश्लक्ष्णाश्चात्यर्थवेदनाः ॥
स्तैमित्यारतिसंमोहदाहोन्मादसमन्विताः ॥ २० ॥
शुक्रजायांमसूर्यांतुलक्षणानिभवंतिच ॥
निर्दिष्टंकेवलंचिह्नंदृश्यतेनतुजीवितम् ॥ २१ ॥

अर्थ—शुक्रधातुगत मसूरिका पकेके समान चिकनी, अलग अलग होय है इनमे अत्यत पीडा होय, इनके होनेसे गीलापना पीडा, मोह, दाह, उन्माद ये लक्षण होते है, रोगी वचे ऐसे इसमे कोई लक्षण नही दीखे इसीसे इसको असाध्य जानना ॥

सप्तधातुगतमसूरिकाके दोपके संबंधसे लक्षण कहते हैं।

दोषमिश्रास्तुसप्तैताद्रष्टव्यादोपलक्षणैः ॥

अर्थ—ये सप्तधातुगत मसूरिका वातादिकोके लक्षणोकरके तीन दोपोकरके मिश्रित प्रगट भई जाननी ॥

धातुगत और दोपज मसूरिकामे कोनकौन साध्य हैं सो कहते है ॥

त्वग्गतारक्तजाश्चैवपित्तजाःश्लेष्मजास्तथा ॥ २२ ॥
पित्तश्लेष्मकृताश्चैवसुखसाध्यामसूरिकाः ॥
एताविनापिक्रियया प्रशाम्यंतिशरीरिणाम् ॥ २३ ॥

अर्थ—त्वगत, रक्तगत, पित्तज, कफज, पित्तकफज ये मसूरिका सुखसाध्य है ये औषधके विनाभी शांत होती है।

कष्टसाध्य ।

वातजावातपित्तोत्थावातश्लेष्मकृताश्चयाः ॥
कृच्छ्रसाध्यास्ततास्तास्तुयत्नादेताउपाचरेत् ॥ २४ ॥

अर्थ-वातज, वातपित्तज, वातकफज, मसूरिका कष्टसाध्य है इनकी यत्नपूर्वक चिकित्सा करे॥

असाध्यमसूरिकाके लक्षण ।

असाध्याःसन्निपातोत्थास्तासांवक्ष्यामिलक्षणम् ॥
प्रवालसदृशाःकाश्चित्काश्चिज्जंबूफलोपमाः ॥ २५ ॥
लोहजालसमाःकाश्चिदतसीफलसन्निभाः ॥
आसांबहुविधावर्णाजायन्तेदोषभेदतः ॥ २६ ॥

अर्थ-सन्निपातज मसूरिका असाध्य है उनके लक्षण कहताहू,-कोई मूगाके समान लाल होय, कोई जामुनके समान, और कोई लोहजालके समान, तथा अलसीके बीजके समान होती हैं दोषोंके भेदकरके इनके अनेक प्रकारके रंग होते है ॥

सर्वमसूरिकाके अवस्थाविशेषकरके लक्षण ।

कासोहिक्काथमोहश्चज्वरस्तीव्रःसुदारुणः ॥
प्रलापारतिमूर्च्छाश्चतृष्णादाहोऽतिघूर्णता ॥ २७ ॥
मुखेनप्रस्रवेद्रक्तंतथाघ्राणेनचक्षुषा ॥
कंठेघुर्घुरकंकृत्वाश्वसित्यत्यर्थदारुणम् ॥ २८ ॥
मसूरिकाभिभूतोयोभृशंघ्राणेननिःश्वसेत् ॥
सभृशंत्यजतिप्राणांस्तृष्णार्तोवायुदूषितः ॥ २९ ॥

अर्थ-खाँसी, हिचकी, मोह, तीव्रज्वर, प्रलाप, असतोष, मूर्च्छा, प्यास, दाह, नेत्र टेढे तिरछे बॉके फटेसे ये लक्षण होते हैं, मुख, नाक और नेत्र इनके मार्ग होकर रुधिर गिरे, कठमे घुरघुर शब्द होय, और भयकर श्वास ले, जो मसूरिकापीडित रोगी केवल नाकके द्वारा श्वास लेय, वह पुरुष वायु और तृषा इनसे पीडित होतसते तत्काल प्राणत्याग करे ॥

मसूरिकाके उपद्रव ।

मसूरिकांतेशोथःस्यात्कूर्परेसमणिबंधके ॥
तथांसफलकेवापिदुश्चिकित्स्यःसुदारुणः ॥ ३० ॥

अर्थ–मसूरिका ( शीतला ) के अंतमे कूर्पर ( कोहनी ) पहुंचा, तथा कंधा, इनमे सूजन होय [ इसको व्यवहारमे गुरु ऐसे कहते हैं ] यह चिकित्सा करनेमे कठिन है ॥

इति श्रीमाथुरीभाषाटीकायां मसूरिकानिदान समाप्तम् ।

---

# क्षुद्ररोगनिदानम् ।

### अजगल्लिका ।

**स्निग्धासवर्णाग्रथितानीरुजामुद्गसन्निभा ॥**
**कफवातोत्थिताज्ञेयाबालानामजगल्लिका ॥ १ ॥**

अर्थ–बालकके कफवातसे चिकनी, त्वचाके वर्णके समान वर्ण होय, गांठसी बधी, रुजा ( पीडा ) रहित, तथा मूंगके सदृश जो पिडिका होयँ उसको अजगल्लिका कहते ह ॥

### यवप्रख्याके लक्षण ।

**यवाकारासुकठिनाग्रथितामांससंश्रिता ॥**
**पिडिकाश्लेष्मवाताभ्यांयवप्रख्येतिचोच्यते ॥ २ ॥**

अर्थ–कफवातसे प्रगट जौके समान कठिन, गॅठके सदृश मांसमिश्रित, जो पिडिका होय उसको यवप्रख्या कहते हैं ॥

### अंधालजी ।

**घनामवक्त्रांपिडिकामुन्नतांपरिमंडलाम् ॥**
**अन्त्रालजीमल्पपूयांतांविद्यात्कफवातजाम् ॥ ३ ॥**

अर्थ–कफवातसे प्रगट, कठिन, जिसमे मुख न हो, तथा ऊची ऐसी पिडिका होय तथा जिसके चारों ओर मंडलाकार हो, और जिसमें राध थोडी होय, उसको अन्त्रालजी ऐसे कहते हैं॥

### विवृतापिडिकाके लक्षण ।

**विवृतास्यांमहादाहांपक्वोदुंबरसन्निभाम् ॥**
**परिमंडलांपित्तकृतांविवृतांनामतांविदुः ॥ ४ ॥**

अर्थ–पित्तके योगसे फटे मुखकी, अत्यन्त दाहयुक्त, पके गूलरके समान, चारो ओर वल पटी हुई. जो पिडिका होय उसको विवृता ऐसे कहते हैं ॥

---

१ अन्त्रालजी गात्रगता भोजनादवगन्तव्या यदुक्तं–"श्लेष्मानिलौ श्रितौ स्नायु पिडिकां पित्तमंडलाम् । कुर्वो जनयतो वक्रामल्पपूयानरुन्दराम् ॥ आमोदुम्बरसंकाशां विद्यादन्त्रालजी तु ताम् "।

कच्छपिकाके लक्षण।

ग्रथिताःपंचवाषड्वादारुणाःकच्छपोन्नताः ॥
कफानिलाभ्यांपिडिकाज्ञेयाकच्छपिकाबुधैः ॥ ५ ॥

अर्थ--कफ वायुसे प्रगट गाँठ वधी, पाँच अथवा छः, कठिन कछुआके पीठके समान ऊंची जो पिडिका होयँ उनको कच्छपिका ऐसे कहते हैं ॥

वल्मीकपिडिकाके लक्षण।

ग्रीवांसकक्षाकरपाददेशेसंधौगलेवात्रिभिरेवदोषैः ॥
ग्रंथिःसवल्मीकवदक्रियाणांजातःक्रमेणैवगतःप्रवृद्धिम् ॥ ६ ॥
मुखैरनेकैःस्रुतितोदवद्भिर्विसर्पवत्सर्पतिचोन्नताग्रैः ॥
वल्मीकमाहुर्भिषजोविकारंनिष्प्रत्यनीकंचिरजंविशेषात् ॥ ७ ॥

अर्थ--नाड, कंधा, कूख, हाथ, पैर,संधि, गला इन ठिकाने तीनो दोषोसे सर्पकी वांबीके समान गाँठ होयँ, उसका उपाय न करे तब वह धीरेधीरे बढे, उसमे अनेक मुख होजायँ, उनमे से स्राव होय, नोचनेकीसी पीडा होय, तथा वह मुखके ऊपर कुछ ऊंची होकर विसर्पके समान फैल जाय, इस रोगको वैद्य वल्मीक ऐसे कहते हैं इसके ऊपर औषध उपचार नहीं चले और पुराने होनेसे विशेष असाध्य जाननी ॥

इन्द्रवृद्धाके लक्षण।

पद्मकर्णिकवन्मध्येपिडिकाभिःसमाचिताम् ॥
इन्द्रवृद्धांतुतांविद्याद्वातपित्तोत्थितांभिषक् ॥ ८ ॥

अर्थ--कमलकर्णिकाके समान वीचमे एक पिडिका होय, उसके चारो ओर छोटी छोटी फुन्सी होयँ, उसको इन्द्रवृद्धा ऐसे कहते हैं, यह वातपित्तसे उत्पन्न होयहै।

गर्दभिकाके लक्षण।

मंडलंवृत्तमुत्सन्नंसरक्तंपिडिकाचितम् ॥
रुजाकरींगर्दभिकांतांविद्याद्वातपित्तजाम् ॥ ९ ॥

अर्थ--वातपित्तसे प्रगट एक गोल ऊंची तथा लाल और फोडोसे व्याप्त ऐसा मंडल होय, वो बहुत दूखे उसको गर्दभिका कहतेहै ॥

पाषाणगर्दभके लक्षण।

वातश्लेष्मसमुद्भूतःश्वयथुर्हनुसंधिजः ॥
स्थिरोमंदरुजःस्निग्धोज्ञेयःपाषाणगर्दभः ॥ १० ॥

अर्थ--वातकफसे ठोडीकी संधिमे कठिन, मंद पीडाकरनेवाली, चिकनी, ऐसी सूजन होय, उसको पाषाणगर्दभ कहते है ॥

पनसिका ।

**कर्णस्याभ्यंतरेजातांपिडिकामुग्रवेदनाम् ॥**
**स्थिरांपनसिकांतांतुविद्याद्वातकफोत्थिताम् ॥ ११ ॥**

अर्थ--कानके भीतर वात पित्त कफसे जो फुन्सी उग्रवेदनासहित प्रगट होय और वह स्थिर होय, उसको पनसिका[1] कहते है ॥

जालगर्दभके लक्षण ।

**विसर्पवत्सर्पतियःशोथस्तनुरपाकवान् ॥**
**दाहज्वरकरःपित्तात्सज्ञेयोजालगर्दभः ॥ १२ ॥**

अर्थ--पित्तसे विसर्पके समान इधर उधरको फैलनेवाली, पतली, तथा कुछ पकनेवाली, ऐसी सूजन होय उसमे दाह होय, और ज्वर होय, इसको जालगर्दभ कहते है. कोई आचार्य कहते हैं कि इसमे पकता नही होय, यथा[2] ॥

इरिवेल्लिकाके लक्षण ।

**पिडिकामुत्तमांगस्थांवृत्तामुग्ररुजाज्वराम् ॥**
**सर्वात्मिकांसर्वलिंगांजानीयादिरिवेल्लिकाम् ॥ १३ ॥**

अर्थ--त्रिदोपसे प्रगट मस्तकमे गोल, अत्यंत पीडा और ज्वर करनेवाली त्रिदोपके लक्षणसंयुक्त ऐसी पिडिका होय उसको इरिवेल्लिका कहते है ॥

कक्षा ( कखलाई ) के लक्षण ।

**वाहुकक्षांसपार्श्वेषुकृष्णस्फोटांसवेदनाम् ॥**
**पित्तकोपसमुद्भूतांकक्षामित्यभिनिर्दिशेत् ॥ १४ ॥**

अर्थ--बाहु ( भुजा ) की जड कधा और पसवाडे इन ठिकाने पित्त कुपित होकर काले फोडोसे व्याप्त तथा वेदनायुक्त जो पिडिका होय उसको कक्षा वा कखलाई कहते हैं ॥

---

१ कफवातौ प्रकुपितौ मांसमाश्रित्य कर्णयोः । समन्ततः परिस्तब्धा कुरुत. पिडिका स्थिराम् ॥ विषमां दाहसंयुक्तांविद्यात्पनसिका तु ताम् ॥

२ पित्तोत्कटास्त्रयो दोषा जनयंति त्वगाश्रिताः । श्याव रक्त तनुं शोथमपाक बहुवेदनम् ॥ विसर्पिण सदाहं च तृष्णाज्वरसमन्वितम्। विसर्पनाहुस्तं व्याधिमपरे जालगर्दभम् ॥

गंधनाम्नीके लक्षण ।

एकामेतादृशींदृष्ट्वापिडिकांस्फोटसन्निभाम् ॥
त्वग्गतांपित्तकोपेनगंधमालां प्रचक्षते ॥ १५ ॥

अर्थ--पित्तके कोपसे जो कक्षामे कही हुई जो काले फोडेके समान एक पिडिका त्वचाके भीतर होय उसको गधमाला कहते है ॥

अग्निरोहिणी ( काली फुन्सी ) ।

कक्षाभागेषुयेस्फोटाजायंतेमांसदारुणाः ॥ अंतर्दाहज्वरकरा दीप्तपावकसन्निभाः ॥ १६ ॥ सप्ताहाद्वादशाहाद्वापक्षाद्वाहंति मानवम् ॥ तामग्निरोहिणींविद्यादसाध्यांसान्निपातिकीम् ॥ १७ ॥

अर्थ—काखके आसपास मासके विदारणकरनेवाले जो फोडा होते है तिसकरके अतर्दाह होय, तथा ज्वर होय, व फोडे प्रदीप्त अग्निके समान लाल होवॅ, इन फोडोमे वायु अधिक होनेसे सात दिन, पित्ताधिक्यसे वारह दिन, ओर कफाधिक्यसे ९ दिनमे रोगी मरे. यह अग्निरोहिणी नामक त्रिदोषज पिडिका असाध्य हे यह कठिन है ॥

चिप्पके लक्षण ।

नखमांसमधिष्ठायवातःपित्तंचदेहिनाम् ॥
कुर्वीतेदाहपाकौचतंव्याधिंचिप्पमादिशेत् ॥ १८ ॥
तदेवाल्पतरैर्दोषैःकुनखंपुरुषंवदेत् ॥

अर्थ—वायु और पित्त नखोके मासमे स्थित होकर दाह, और पाकको करे, इस रोगको चिप्प्य ऐसे कहते हैं यह अल्प दोषोसे होय तो इसको कुनख कहते है ॥

अनुशयके लक्षण ।

गंभीरामल्पसंरंभांसवर्णामुपरिस्थिताम् ॥
पादस्यानुशयींतांतुविद्यादंतःप्रपाकिनीम् ॥ १९ ॥

अर्थ—पैरोमे त्वचाके समान वर्ण यत्किंचित् सूजनयुक्त, भीतरसे पकी जो पिडिका होय, उसको अनुशयी कहते है ॥

विदारिकाके लक्षण ।

विदारीकंदवद्वृत्ताकक्षावंक्षणसंधिषु ॥
विदारिकाभवेद्रक्तासर्वजासर्वलक्षणा ॥ २० ॥

अर्थ—विदारीकंदके समान गोल, कांखमे अथवा वंक्षणस्थानमें जो गाठ तामेके रंगकीसी होय, उसको विदारिका ऐसे कहते हैं. यह सन्निपातसे होयहै इसमें तीनो दोषोंके लक्षण होतेहै ॥

## शर्करा।

**प्राप्यमांसशिरास्नायूञ्श्लेष्मामेदस्तथानिलः॥ ग्रंथिंकरोत्यसौ भिन्नोमधुसर्पिर्वसानिभम् ॥ २१ ॥ स्रवत्यास्रावमनिलस्तत्र वृद्धिंगतःपुनः॥मांसंविशोष्यग्रथितांशर्करांजनयेत्ततः ॥ २२॥**

अर्थ—कफ मेद और वायु ये मांस शिरा और स्नायु इनमें प्राप्त हो गाठ बाधते हैं, जब वह फूटे तव उसमेसे शहद, घृत, चर्बी इनके समान स्राव हो तिसकरके वायु पुन. बढकर मासको सुखाय उसकी बारीक खिचीसी गाठ करे, उसको शर्करा कहते हैं ॥

## शर्करार्बुदके लक्षण।

**दुर्गंधिक्लिन्नमत्यर्थंनानावर्णंततःशिराः ॥**
**सृजंतिरक्तंसहसातद्विद्याच्छर्करार्बुदम् ॥ २३ ॥**

अर्थ—शर्करा होनेके अनन्तर नाडियोंसे दुर्गंध क्लेदयुक्त अनेक प्रकारके घृत, मेद, और वसा, इनके वर्ण का रुधिर स्रवै. उसको शर्करार्बुद कहते हैं परतु भोजने शर्करार्बुदको शर्करा रोगके अंतर्गत कहा है ॥

## पाददारीके लक्षण।

**परिक्रमणशीलस्यवायुरत्यर्थरूक्षयोः ॥**
**पादयोःकुरुतेदारींपाददारींतमादिशेत् ॥ २४ ॥**

अर्थ—जिस पुरुषको बहुत चलना पडे है उसके पैर वायुके योगसे अत्यत रूक्ष होकर विदीर्ण हो ( फाटे ) उसको पाददारी कहते हैं अर्थात् बिवाई कहते है विपादिका कुष्ठ फटे नहीं है, फूट निकले है, यह इनमें भेद जानना ॥

## कदर ( ठेक ) के लक्षण।

**शर्करोन्मथितेपादेक्षतेवाकंटकादिभिः ॥**
**ग्रंथिःकोलवदुत्सन्नोजायतेकदरंतुतत् ॥ २५ ॥**

अर्थ—पैरोंमे ककर छिदनेसे अथवा काटे लगनेसे बेरके समान ऊची गाठ प्रगट होय, उसको कदर अर्थात् ठेक कहते है अथवा "ग्रंथिः कोलवदुत्सन्नो" इस जगह 'ग्रंथि. कीलवदुत्सन्नो'

---

१ "तमेव भिन्नदुर्गंधं घृतमेदोनिभं शिराः। स्रवति स्रावमनिशं तदा स्याच्छर्करार्बुदम् ॥ १ ॥"

ऐसा भी पाठ है अर्थात् कीलके समान जो गांठ होय, उसको कदर कहते हैं यह कदररोग हाथों मेंभी होय है सो भोजने लिखा भी है ॥

अलस ( खारुआ ) के लक्षण।

**क्लिन्नांगुल्यंतरौपादौकंडूदाहरुजान्वितौ ॥**
**दुष्टकर्दमसंस्पर्शादलसंतंविभावयेत् ॥ २६ ॥**

अर्थ–दुष्ट कीचमे डोलनेसे, ( वर्षाआदिका पानी और सडी कीचमे डोलनेसे ) पैरोकी उगली गीली रहनेसे, उंगलियोंके बीचमें सफेद सफेद चकत्ते होजायँ उनमें खुजली, दाह, और गीलापन होय, तथा पीडा होय उसको अलस अर्थात् खारुआ कहते हैं यह कफरक्तके दोषसे होता है ॥

इंद्रलुप्त ( चाई ) के लक्षण।

**रोमकूपानुगंपित्तंवातेनसहमूर्छितम् ॥ प्रच्यावयतिरोमाणि ततःश्लेष्मासशोणितः ॥ २७ ॥ रुणद्धिरोमकूपांस्तुततोऽन्ये- पामसंभवः ॥ तदिंद्रलुप्तंखालित्यंरुह्येतिचविभावयेत् ॥ २८ ॥**

अर्थ–पित्त वादीके साथ कुपित होकर रोमकूपोमे अर्थात वालोंके छिद्रोमे प्राप्त हो तब मस्तक अथवा अन्य स्थानके वाल झडने लगे, पीछे कफ और रुधिर रोमकूप कहिये बालोंके प्रगट होनेके स्थानको रोकदे उससे फिर वाल नहीं ऊगे, इस रोगको इन्द्रलुप्त खालित्य चाचा ( चाई ) कहते है, यह रोग स्त्रियोके नहीं होय, कारण इसका यह है कि उनका रुधिर महीनेके महीने शुद्ध होता रहे है और निकलता रहे है इसीसे वह रोमकूपोको नहीं रोके है, सो विदेहाचार्यनेभी लिखा है और इसी रोगको खालित्य और रुह्या कहते है सो **भोजने** लिखा है परतु **कार्तिका- चार्य** कहते हैं कि इन्द्रलुप्त रोग कुछ, डाढीमे होय है और खालित्यरोग शिरमे होय है और रुह्या- रोग पीडासहित होय है ॥

दारुणकके लक्षण।

**दारुणाकंडुरारूक्षाकेशभूमिःप्रपच्यते ॥**
**कफमारुतकोपेनाविद्याद्दारुणकंतुतम् ॥ २९ ॥**

अर्थ–कफवायुके कोपसे केशोकी जमीन अतिकठिन होकर खुजावे, खरदरी होय; तथा

---

१ "हस्तयोः पादयोश्चापि गम्भीरानुगतं स्थिरम्। मासकीलं जनयतः कुपितौ कफमारुतौ ॥ १ ॥ सशल्यामिव त देशं मन्यते तेन पीडितम्। शर्कराकदर केचिन्मन्यन्ते वातकण्टकम्" ॥ २ ॥

२ अत्यंतसुकुमाराट्यो रजोदुष्टं स्रवंति च। अव्यायामरता यस्मात्तस्मान्न स्खलति स्त्रियाः॥१॥ इति।

३ "इन्द्रलुप्तं श्मश्रुणिभवति खालित्य शिरस्येव रुह्याच सर्वदेहे"।

वारीक फुंसी होकर पके, उनको दारुणक ऐसे कहते है. कफवातके कोपसे यह रोग होय है इसका कारण यह है कि विना पित्तके पाक नहीं होय, सो विदेहने कहा भी है ॥

अरूंपिकाके लक्षण ।

अरूंपिबहुवक्त्राणिबहुक्लेदीनिमूर्धनि ॥
कफासृक्कृमिकोपेननृणांविद्यादरूंपिकाम् ॥ ३० ॥

अर्थ–रुधिर कफ और कृमि इनके कोपसे माथेमें बहुत फुंसी होजावें. उनमेंसे चेप विशेष निकले और क्लेदयुक्त होयँ इन फुंसियोंको अथवा व्रणोंको अरूंपिका कहते हैं ॥

पलित ( सफेदवाल ) के लक्षण ।

क्रोधशोकश्रमकृतःशरीरोष्माशिरोगतः ॥
पित्तंचकेशान्पचतिपलितंतेनजायते ॥ ३१ ॥

अर्थ–क्रोध, शोक और श्रमके करनेसे उत्पन्न भई जो शरीरमे ऊष्मा ( गरमी ) और पित्त सो मस्तकमे जायकर वालोंको पकाय दे, अर्थात् सफेद करदे उस करके यह पलितरोग होय है. पलित रोगपर मधुकोशटीकाकारने तथा भावप्रकाशने शास्त्रार्थ लिखाहै ॥

मुखदूपिकाके लक्षण ।

शाल्मलीकंटकप्रख्याःकफमारुतकोपजाः ॥
जायंतेपिडिकायूनांविज्ञेयामुखदूपिकाः ॥ ३२ ॥

अर्थ–कफवायुके कोपसे सेमरके कांटेके समान तरुण ( जवान ) पुरुषके मुखके ऊपर जो फुंसी होय उनको मुखदूपिका अर्थात् मुहासे कहते हैं इनके होनेसे मुख बुरा होजाता है ॥

पद्मिनीकंटकके लक्षण ।

कंटकैराचितंवृत्तंमंडलंपाण्डुकण्डुरम् ॥
पद्मिनीकंटकप्रख्यैस्तदाख्यंकफवातजम् ॥ ३३ ॥

अर्थ–कमलके कांटेके समान कांटे चारोओर युक्त हो, गोल पीले रंगका, खुजली जिसमें चलती होय, ऐसा एक मंडल होय, उसको पद्मिनीकंटक ऐसे कहते है यह कफवायुसे होय है ॥

जतुमणि ( लहसन ) के लक्षण ।

सममुत्सन्नमरुजंमंडलंकफरक्तजम् ॥
सहजंलक्ष्मचैकेषांलक्ष्योजतुमणिःस्मृतः ॥ ३४ ॥

---

१ वदनं पाटलाभासं सरुजस्कं स्थिरत्वचि। परुषं जायते जंतोस्तस्य रूपं विशेषतः॥१॥ तोदैः समन्वितं वातात्तन्द्रागौरवं कफात्। सपिपासं सदाहार्तिरागं पित्तात्मजं तथा ॥ २ ॥

अर्थ—कफरक्तसे जन्मसेही चिकना तथा कुछ ऊचा, जिसमे पीडा होय नही, ऐसा गोल मंड-लके समान देहमे चिह्न होय, उसको लक्ष्म कोई लक्ष्य तथा कोई जतुमणि ऐसे कहते हैं यह स्त्री पुरुषोंके अंगभेदकरके शुभाशुभ फलदायक है इसको लोकमे (लहसन) कहते है

माष (मस्सा) के लक्षण।

**अवेदनंस्थिरंचैवयस्मिन्गात्रेप्रदृश्यते ॥**
**माषवत्कृष्णमुत्सन्नमनिलान्माषकंतुतत् ॥ ३५ ॥**

अर्थ—वादीसे शरीरके ऊपर उडदके समान काला, पीडारहित, स्थिर, कठिन, कुछ ऊचीं गाठसी प्रगट होय, उसको माष (मस्सा) ऐसे कहते है इस श्लोकमे जो चकार है उससे कफ-मेदसे भी मस्से होते है यह दिखाया सो भोजने कहाभी है ॥

तिलकालक (तिल) के लक्षण।

**कृष्णानितिलमात्राणिनीरुजानिसमानिच ॥**
**वातपित्तकफोत्सेकात्तान्विद्यात्तिलकालकान् ॥ ३६ ॥**

अर्थ—वात पित्त कफके कोपसे काले तिलके समान पीडारहित त्वचासे मिले ऐसे अगमे दाग होयँ उनको तिलकालक (तिल) कहते है 'वातपित्तकफोत्सेकात्' इस पाठमे वात पित्त हेतुकरके कफका शोष होय है उसीसे तिल होते है परन्तु चरकके मतसे पित्त रुधिरके शोष होनेसे तिल होते है। "यस्य पित्त प्रकुपित शोणित प्राप्य शुष्यति। तिलको विप्लवा व्यगा नीलिका चान्य जायते" ॥ इस वचनसे वातभी रुधिरको शोषण करे है अन्य ग्रथमे वात पित्त कफ ये तीनो रुधिरको शोषण करे है ॥ यथा—मारुतःपित्तमादायकफरक्तसमाश्रितः ॥ चिनोतितिलमात्राणि त्वचितेतिलकालकाः ॥ इति।

न्यच्छके लक्षण।

**महद्वायदिवाऽप्यल्पंश्यावंवायदिवासितम् ॥**
**नीरुजंमण्डलंगात्रेन्यच्छमित्यभिधीयते ॥ ३७ ॥**

अर्थ—मुखके विना अन्य स्थानमे शरीरके ऊपर बडा, अथवा छोटा, काला अथवा सफेद, और पीडारहित दाग होय, उसको न्यच्छ कहते है यहभी व्यगका भेद है ॥

व्यंग (झांई) के लक्षण।

**क्रोधायासप्रकुपितोवायुःपित्तेनसंयुतः ॥**
**मुखमागत्यसहसामण्डलंविसृजत्यतः ॥ ३८ ॥**
**नीरुजंतनुकंश्यावंमुखेव्यंगंतमादिशेत् ॥ ३९ ॥**

---

१ वातेरिते त्वचि यदा दूष्येते कफमेदसी। श्लक्ष्ण मृदुसवर्ण च कुरुते मपक वदेत्।

अर्थ-क्रोध और श्रम इनसे कुपित भया वायु पित्तसयुक्त होकर मुखमे प्राप्त होकर एक मडल उत्पन्न करे, वह दूखे नही वह पतला तथा श्यामवर्ण होय, उसको व्यंग ऐसे कहते है ॥

नीलिकाके लक्षण।

कृष्णमेवंगुणंगात्रेमुखेवानीलिकांविदुः ॥ ४० ॥

अर्थ-पूर्वोक्त व्यंगके लक्षणसदृश जो काला मंडल अगमे होय अथवा मुखपर होय उसको नीलिका कहते है ( भोजने ) इस जगह नीलिकागात्र ऐसा कहा है अर्थात् सर्व देह नीली होय है ॥

परिवर्तिकाके लक्षण।

मर्दनात्पीडनाद्वापितथैवाप्यभिघाततः ॥ मेढ्रचर्मयदावायुर्भजतेसर्वतश्चरन् ॥ ४१ ॥ तदावातोपसृष्टत्वात्तच्चर्मपरिवर्त्तते ॥ मणेरधस्तात्कोशस्तुग्रंथिरूपेणलंबते ॥ ४२ ॥ सवेदनंसदाहंचपाकंचव्रजतिक्वचित् ॥ परिवर्तिकेतितांविद्यात्सरुजांवातसंभवाम् ॥ ४३ ॥ सकंडूःकठिनावापिसैवश्लेष्मसमुत्थिता ॥

अर्थ-लिगको मर्दन करनेसे, अथवा रगडनेसे उसी प्रकार लिगमे किसी प्रकारकी चोट लगनेसे, व्यानवायु कुपित होकर उसके चर्ममे प्रवेशकर सर्वत्र विचरे, उस समय वातसंस्पर्श हेतु करके लिगकी चर्म पृथक् होजाय, और शिश्नका कोश सूजकर मणिके नीचे गॉठके समान होकर लटके, उसमे पीडा होय, दाह होय, और कभी कभी वह पकजाय, इस पीडाको परिवर्तिका कहते हैं यह वातसे होय है और जो कफसे होय तौ उसमें खुजली तथा काठिनता होय ॥

अवपाटिकाके लक्षण।

अल्पीयःखांयदाहर्षाद्बलाद्गच्छेत्स्त्रियंनरः ॥ ४४ ॥
हस्ताभिघातादथवाचर्मण्युद्वर्तितेबलात् ॥
मर्दनात्पीडनाद्वापिशुक्रवेगविघाततः ॥ ४५ ॥
यस्यावपाट्यतेचर्मतांविद्यादवपाटिकाम् ॥

अर्थ-जिसकी योनिका छिद्र बारीक होय, ऐसी स्त्रीसे बलपूर्वक मैथुन करनेसें अथवा हाथके अभिघातसे ( चोटसे ) बलसे लिगके चामको उलटनेसे, अथवा मीडनेसे अथवा जोरपूर्वक दाबनेसे, अथवा शुक्रके वेगको धारण करनेसे, उस पुरुषके लिगकी चाम फटजाय, इस

१ मारुतःक्रोधहर्षाभ्यामूर्ध्वगो मुखमाश्रितः ॥ पित्तेन सहसंयुक्तः करोति वदनं त्वचि ॥ १ ॥ नीरुजं तनुकं श्यावं व्यंग तमिति निर्दिशेत् ॥ कृष्णमेव त्वचं गात्रे नीलिका तां विनिर्दिशेत् ॥ इति।

पीडाको अवपाटिका कहते हैं इस अवपाटिका रोगमें तीनो दोषोके लक्षण पृथक्पृथक् होते है यह मत भोजका है॥

निरुद्धप्रकाशके लक्षण।

वातोपसृष्टेमेढ्रेतुचर्मसंश्रयतेमणिम् ॥ ४६ ॥ मणिश्चर्मोपनद्धस्तुमूत्रस्रोतोरुणद्धिच ॥ निरुद्धप्रकशेतस्मिन्मंदधारमवेदनम् ॥ ४७ ॥ मूत्रंप्रवर्ततेजंतोर्मणिर्विव्रीयतेनच ॥ निरुद्धप्रकशंविद्यात्सरुजंवातसंभवम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—वायुके योगसे लिंग पीडित होनेसे चामडी सूजकर मणिभागमे प्राप्त होय, वह मणि चर्मके सकोच होनेसे मूत्रके मार्गको रोके तब मूत्रका रोध होय, तब उस पुरुषका मूत्र ठहरकरठहर निकले, परन्तु पीडा नहीं होय, और मणि बाहर नही निकले, इस रोगयुक्त वातजन्य पीडाको निरुद्धप्रकश कहते हैं चर्मके संकोच होनेको निरुद्ध कहते है और मूत्रकी धार मन्द निकलनेको प्रकश कहते हैं "अवेदनम्" यह जो मूलमे पाठ है इस जगह कोई "सवेदनम्" ऐसा कहते है। भोज मतसे कहते है सो भोजसंहितामें लिखा भी है॥

सन्निरुद्धगुदके लक्षण।

वेगसंधारणाद्वायुर्विहतोगुदसंस्थितः ॥ निरुणद्धिमहास्रोतःसूक्ष्मद्वारंकरोतिच ॥ ४९ ॥ मार्गस्यसौक्ष्म्यात्कृच्छ्रेणपुरीषंतस्यगच्छति ॥ सन्निरुद्धगुदंव्याधिमेनंविद्यात्सुदारुणम् ॥ ५० ॥

अर्थ--मलमूत्रादिकोके वेग रोकनेसे गुदाश्रित अपानवायु कुपित होकर, महाश्रोत्र ( गुदा ) का अवरोध करे और वह द्वारको छोटा करे, पीछे मार्ग छोटा होनेसे उस पुरुषका मल बडे कष्टसे बाहर निकले, इस भयकर रोगको सन्निरुद्धगुद कहते हैं इस रोगमें भी निरुद्धप्रकाशके समान चर्मका सकोच होनेसे सनिरुद्धगुद होय है, अर्थात् अपानवायुके रुकनेसे पुरीष ( मल ) का आनिर्गम होय है॥

अहिपूतनके लक्षण।

शकृन्मूत्रसमायुक्तेऽधौतेऽपानेशिशोर्भवेत् ॥ स्विन्नेवास्नाप्यमा

१ मर्दनादभिघाताद्वा कन्यायोनिप्रपीडनात्। लक्ष्यते यदि मेढ्रस्य चर्मदन्तैरिव क्षतम्॥१॥अवपाटिकेति ता विद्यात्पृथग्दोषैःसमन्विताम्। वातात्सा परुषा रूक्षा शूलनिस्तोदकारिणी॥ पित्तात्सदाहा रक्ताद्वा दाहतृष्णा समन्विता। श्लेष्मिकी कठिना स्निग्धा कण्डूमत्यल्पवेदना ॥ १ ॥

२ मेढ्रान्ते चर्मणि यदा मारुतः कुपितो भृशम्। द्वार निरुणद्धि शनैः प्रकाशं च मुहुर्भवेत् ॥ १ ॥ मूत्र मूत्रयते कृच्छ्रात्प्रकाशं तु यदा भवेत्। वातोपसृष्टमेढ्रं च मणिर्न च विदीर्यते। निरुद्ध च प्रकाशं च व्याधि विद्यात्सुदारुणम्॥

नेवाकंडूरक्तकफोद्भवा ॥ ५१ ॥ ततः कंडूयनात्क्षिप्रंस्फोटाः स्रावश्चजायते ॥ एकीभूतंव्रणैर्घोरंतंविद्यादहिपूतनम् ॥ ५२ ॥

अर्थ–बालकके मलमूत्र करनेके अनतर गुदाके न धोनेसे, अथवा पसीना आनेसे तथा धोनेके अनन्तर रुधिर कफसे खुजली उत्पन्न होय, तदनन्तर खुजानेसे शीघ्र फोडा उत्पन्न होय और उनसे स्राव होय, पीछे ये सब मिलकर इस भयकर व्याधिको प्रगट करे। इसे अहिपूतन कहते हैं यह रोग बहुधा बाललोम (छोटे छोटे रोम) मे होय है। भोज[1] कहता है कि, यह रोग दुष्टस्तन्यपान अर्थात् माताके दुष्ट दूधके पीनेसे बालकके होय है ॥

वृषणकच्छूके लक्षण।

स्नानोत्सादनहीनस्यमलोवृषणसंस्थितः ॥ यदाप्रक्लिद्यतेस्वेदात्कंडूःसंजायतेतदा ॥ ५३ ॥ कंडूयनात्ततःक्षिप्रंस्फोटाः स्रावश्चजायते ॥ प्राहुर्वृषणकच्छूंतांश्लेष्मरक्तप्रकोपजाम् ॥ ५४ ॥

अर्थ–जो मनुष्य स्नान करतेसमय लगे हुए मलको नही धोवे, उस पुरुषका मल अडकोशोमे संचित होय, पीछे वह पसीना आनेसे गीला होय, तब अडकोशोमे घोर पीडा होय, और खुजानेसे तत्काल फोडा होय, पीछे वह फोडा स्रवकर आपसमे मिलजाते है, कफरक्तसे होनेवाली इस व्याधिको वृषणकच्छू कहते है ॥

गुदभ्रंशके लक्षण।

प्रवाहणातिसाराभ्यांनिर्गच्छतिगुदंबहिः ॥
रूक्षदुर्बलदेहस्यगुदभ्रंशंतमादिशेत् ॥ ५५ ॥

अर्थ–जिस पुरुषकी देह रूक्ष और अशक्त होय, उस पुरुषके प्रवाहण (कुन्थन) तथा अतीसार हेतुकरके गुदा बाहर निकल आवे, अर्थात् काच बाहर निकल आवे उस रोगको गुदभ्रंश रोग कहते है, इस रोगमे धातुक्षय होनेसे वात कुपित होय है ॥

सूकरदंष्ट्रके लक्षण।

सदाहोरक्तपर्यंतस्त्वक्पाकीतीव्रवेदनः ॥
कंडूमाञ्ज्वरकारीचसस्याच्छूकरदंष्ट्रकः ॥ ५६ ॥

अर्थ–दाहयुक्त चारो ओर लाल होय, जिसकी त्वचा पकनेवाली होय, तीव्र पीडा युक्त, खुजली संयुक्त तथा ज्वर करनेवाली, ऐसी सूजन अथवा व्रण होय उसको सूकरदंष्ट्र अर्थात् वराहडाढ कहते है ॥

इति श्रीदत्तराममाथुरनिर्मितमाधवभावार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकायां क्षुद्ररोगनिदानम्।

---

१ दुष्टस्तन्यस्य पानेन मलस्याक्षालनेन च। कण्डूदाहरुजावद्भिः पिडिकैश्च समाचिता ॥ अहिपूतना अंभवति दगादोष च दारुणा ॥ इति।

# मुखरोगनिदानम्।



संख्या।

दंतेष्वष्टावोष्टयोश्चमूलेषुदशपंचच ॥ नवतालुनिजिह्वायांपंच

सप्तदशामयाः ॥ १ ॥ कंठेत्रयःसर्वसराएकषष्टिचतुःपरे ॥

अर्थ–दंतरोग ८, होठके रोग ८, दंतमूलके रोग १५, तालुएके रोग ९, जिह्वाके ५, कंठके रोग १७, और सर्वसर ३, ऐसे सब मिलकर पैसठ ६५, मुखरोग हैं. ये श्लोक माधवके नहीं हैं भोजसंहिताके है ॥

तिनमें ८ होठके रोगोंकी संप्राप्ति।

अनूपपिशितक्षीरदधिमाषादिसेवनात् ॥

मुखमध्येगदान्कुर्युःक्रुद्धादोषाःकफोत्तराः ॥ २ ॥

अर्थ–जलसंचारी प्राणियोंके मांस, दूध, दही, उरद आदि पदार्थोंके सेवन करनेसे कुपित भये कफादिक दोष मुखमें रोग उत्पन्न करते हैं ॥

वातिकओष्ठरोगके लक्षण।

कर्कशौपरुषौस्तब्धौकृष्णौतीव्ररुजान्वितौ ॥

दाल्येतेपरिपाट्येतेओष्ठौमारुतकोपतः ॥ ३ ॥

अर्थ–वादीके कोपसे होठ कर्कश, खरदरे, कठोर, काले होते है उनमें तीव्र पीडा होय, व दो टुकडोंके समान होजाय तथा होठकी त्वचा किंचित् फटजाय ॥

पैत्तिकके लक्षण।

चीयेतेपिडिकाभिस्तुसरुजाभिःसमंततः ॥

सदाहपाकपिडिकौपीताभासौचपित्ततः ॥ ४ ॥

अर्थ–पित्तसे होठ चारों ओर फुन्सियोंसे प्राप्त हो, उनमें पीडा होय, तथा पकजावे और पीलेसे दीखे। इसमें जो दाह और पाक कहे है सो विशेषताके सूचक है ॥

श्लैष्मिकके लक्षण।

सवर्णाभिस्तुचीयेतेपिडिकाभिरवेदनौ ॥

भवतस्तुकफादोष्ठौपिच्छिलौशीतलौगुरू ॥ ५ ॥

अर्थ–कफसे होठ त्वचाके समान वर्णवाली फुन्सियोंसे व्याप्त हो कुछ दूखे, तथा मलाईके समान चिकने और शीतल तथा भारी हो ॥

सान्निपातिकके लक्षण ।

**सकृत्कृष्णौसकृत्पीतौसकृच्छ्वेतौतथैवच ॥**
**सन्निपातेनविज्ञेयावनेकपिडिकान्वितौ ॥ ६ ॥**

अर्थ—सन्निपातसे होठ, कभी काले, कभी पीले, उसी प्रकार कभी सफेद, तथा अनेक प्रकारकी फुन्सियोसे व्याप्त होयँ ॥

रक्तजके लक्षण ।

**खर्जूरफलवर्णाभिःपिडिकाभिर्निपीडितौ ॥**
**रक्तोपसृष्टौरुधिरंस्रवतःशोणितप्रभौ ॥ ७ ॥**

अर्थ—रुधिरसे होठ खजूरफलके वर्णके समान फुन्सियोसे पीडित होयँ, रक्तसे दोनों होठ दूषितहो उनमेंसे रुधिर गिरे, तथा वे होठ रुधिरके समान लाल होयँ ॥

मांसजके लक्षण ।

**मांसदुष्टौगुरूस्थूलौमांसपिंडवदुद्गतौ ॥**
**जन्तवश्चात्रमूर्च्छंतिनरस्योभयतोमुखात् ॥ ८ ॥**

अर्थ—मास दुष्ट होनेसे होठ भारी मोट होते है, मासपिडके समान ऊंचे उठेहुए होयँ, इस रोगवाले मनुष्यके मुखको छोडकर दोनो होठोके प्रातभागमे कीडे पडजावे ॥

मेदोजके लक्षण ।

**सर्पिर्मंडप्रतीकाशौमेदसाकंडुरौगुरू ॥**
**स्वच्छंस्फटिकसंकाशमास्रावंस्रवतोभृशम् ॥ ९ ॥**
**तयोर्व्रणोनसंरोहेन्मृदुत्वंचनगच्छति ॥**

अर्थ—मेदसे होठ, घृतके ऊपरके स्वच्छभागके सदृश खुजलीसयुक्त तथा भारी होयँ तथा उन मसे स्फटिकके समान निर्मल स्राव वहुत होय इनमे भया व्रण भरे नही है तथा उसमे मृदुता नही होती है ।

अभिघातजके लक्षण ।

**ओष्ठौपर्यवदीर्येतेपीड्येतेचाभिघाततः ॥**
**ग्रथितौचतदास्यातांकंडूक्लेदसमन्वितौ ॥ १० ॥**

अर्थ—अभिघातसे ( चोट लगनेसे ) होठ सर्वत्र चिरजायँ, पीडा होय, उसमे गाठ होजाय तथा उसमे खुजली चलतेसमय पीव बहै, कोई कहते हैं कि अभिघातके ओष्ठरोगमे केवल ऊपरका होठ फटता है, इस रोगमे भी कफ पित्त सहायक जानने, सो भोजने कहा भी है ॥

---

१ क्षतावभिहतौ चापि रक्तावोष्ठौ सवेदनौ ॥ भवतः सपरिस्रावौ कफरक्तप्रदूषिताविति । वातजः केवलः स्वकारणकुपितः अत्र तु वायुः अभिघाताल्लभ्यते ।

दंतमूलगत १५ रोग।

शीतादके लक्षण।

**शोणितंदन्तवेष्टेभ्योयस्याकस्मात्प्रवर्त्तते॥ दुर्गन्धीनिसकृष्णानिप्रक्लेदीनिमृदूनिच ॥ ११ ॥ दंतमांसानिशीर्यन्तेपचंतिच परस्परम् ॥ शीतादोनामसव्याधिःकफशोणितसंभवः॥ १२ ॥**

अर्थ-जिसके मसूढोमेंसे अकस्मात् रुधिर बहे और दांतोका मांस दुर्गंधयुक्त काला पीवसहित तथा नरम होकर गिरे, और एक दातका मसूढा पकनेसे वह दूसरे मसूढेको पकावे, यह कफ रुधिरसे प्रगट व्याधिको शीतादनाम कहते हैं ॥

दन्तपुप्पुटके लक्षण।

**दंतयोस्त्रिषुवायस्यश्वयथुर्जायतेमहान् ॥**
**दंतपुप्पुटकोनामसव्याधिःकफरक्तजः ॥ १३ ॥**

अर्थ-जिसके दो अथवा तीन दातोकी जडमे महान सूजन होय, उसको दंतपुप्पुट नाम कहते हैं यह व्याधि कफरक्तसे होती है, परन्तु आगे जो शौपिर रोग कहेंगे उससे यह भिन्न है क्योकि इसमें पीडा और लारका टपकना इसमे नही होता है ॥

दंतवेष्टके लक्षण।

**स्रवन्तिपूयंरुधिरंचलादंताभवन्तिच ॥**
**दंतवेष्टःसविज्ञेयोदुष्टशोणितसंभवः ॥ १४ ॥**

अर्थ-रुधिर दुष्ट होनेसे दातोमेसे रुधिर तथा राध बहे, तथा दांत हलने लगे उसको दन्तवेष्टरोग कहते है ॥

शौषिरके लक्षण।

**श्वयथुर्दन्तमूलेषुरुजावान्कफरक्तजः ॥**
**लालास्रावीसविज्ञेयःशौषिरोनामनामतः ॥ १५ ॥**

अर्थ-कफ रुधिरसे दांतोकी जडमे सूजन होय, उसमे पीडा होय और स्राव होय, उसको शौषिर रोग कहते है पूर्वोक्त दतपुप्पुटमे पीडा और स्राव नहीं होय है इसीसे यह पृथक् है ॥

महाशौषिरके लक्षण।

**दन्ताश्चलन्तिवेष्टेभ्यस्तालुचाप्यवदीर्यते ॥**
**यस्मिन्ससर्वतोव्याधिर्महाशौषिरसंज्ञकः ॥ १६ ॥**

अर्थ–इस त्रिदोष व्याधिकरके मसूडेके समीपसे दात हाले, और तालुएमे छिद्र पडजाय, चकारसे दात और होठ भी फटजायँ उसको महाशौपिररोग कहतेहैं यह रोग मनुष्यको सात दिनमें मारडाले है सो भोजने कहाभी है, परन्तु गदाधर कहते हैं कि, शौपिरमें जो भोजने लक्षण कहे है सो होय तो उसीको महाशोषिर कहते हैं ॥

परिदरके लक्षण ।

**दंतमांसानिशीर्यन्तेयस्मिन्ष्ठीव्यतिचाप्यसृक् ॥**
**पित्तासृक्कफजोव्याधिर्ज्ञेयःपरिदरोहिसः ॥ १७ ॥**

अर्थ–इस रोगकरके दांतोका मास विखर जाय, और थूकनेसे रुधिर गिरे, इस व्याधिको परिदर कहते हैं यह रोग पित्तरुधिरकफसे होय है ॥

उपकुशके लक्षण ।

**वेष्टेषुदाहःपाकश्चताभ्यादन्ताश्चलंतिच ॥ अवाक्कृताःप्रस्रवं-तिशोणितंमन्दवेदनाः ॥ १८ ॥ आध्मायन्तेस्रुतेरक्तेमुखेपू-तिश्चजायते ॥ यस्मिन्नुपकुशोनामपित्तरक्तकृतोगदः ॥ १९ ॥**

अर्थ–जिसके मसूढोमे दाह होकर पाक और दात हलने लगे, मसूढोके घिसनेसे रुधिर मद पीडाके साथ निकले, रुधिर निकलनेके पिछाडी फेर मसूढे फूल आवें, और मुखमे वास आवे इस पित्तरक्तकृत विकारको उपकुश कहते हैं ॥

वैदर्भके लक्षण ।

**घृष्टेषुदन्तमूलेषुसंरम्भोजायतेमहान् ॥**
**स्रवंतिचपलादन्ताःसवैदर्भोऽभिघातजः ॥ २० ॥**

अर्थ–मसूढे रगडनेसे सूजन बहुत होय और दात हलने लगे,उसको वैदर्भरोग कहते हैं यह रोग चोटके लगनेसे होय है ॥

खल्लीवर्धनके लक्षण ।

**मारुतेनाधिकोदन्तोजायतेतीव्रवेदनः ॥**
**खल्लीवर्द्धनसंज्ञोवैजातेरुक्चप्रशाम्यति ॥ २१ ॥**

अर्थ–वादीके योगसे दातके ऊपर दूसरा दात ऊगे, उस समय पीडा होय, जब वह दात ऊग आवे तब पीडा शांत होय उसको खल्लीवर्धन कहते हैं ॥

---

१ महाहा दन्तमूलेषु शोथः पित्तं कफानिलात् । जातः कफ क्षपयात क्षीण तस्मिन्स्रशोणितम् ॥ विवृद्ध मनिल दन्तास्तात्वोष्टमपि दारयेत् । महाशौषिरमित्येतत्सप्तरात्रान्निहंत्यसून् ॥

करालके लक्षण।

शनैःशनैःप्रकुरुतेवायुर्दन्तसमाश्रितः

करालान्विकटान्दंतान्करालोनचसिध्यति ॥ २२ ॥

अर्थ–बादी धीरेधीरे मसूढेका आश्रय लेकर दातोको टेढे तिरछे करे, उसको कराल रोग कहते है यह रोग साध्य नही होय ॥

अधिमांसकके लक्षण।

हानव्येपश्चिमेदंतेमहाञ्छोथोमहारुजः ॥

लालास्रावीकफकृतोविज्ञेयोह्यधिमांसकः ॥ २३ ॥

अर्थ–जिसके पीछेकी दाढके नीचे अर्थात् मसूढेमे वहुत सूजन होय और घोर पीडा होय, तथा, लार वहुत वहे, उसको अधिमासक कहते हैं यह कफके कोपसे होय है ॥

नाडीव्रणके लक्षण।

दन्तमूलगतानाड्यःपंचज्ञेयायथेरिताः ॥ २४ ॥

अर्थ–नाडीव्रणनिदानमें वात, पित्त, कफ, सन्निपात और आगतुज, ऐसे पाच प्रकारके जो नाडीव्रण कहे है वे दतमूल (मसूढोमें) होते हैं. पहिले ११ और ५ नाडीव्रण ऐसे मिलकर १६ दंतमूल ( मसूढेके ) रोग होते हैं परन्तु करालरोग सुश्रुतके मतसे अधिक है तथापि संग्रहकारने अपने ग्रथमें लिखा है इसीसे हमने भी यहा लिखदिया है, ये पाच नाडीव्रण आचार्यसिद्धान्तके मतसे सख्यापूरणार्थ माधवाचार्यने लिखे हैं ॥

दंतगत ८ रोग।

दालनके लक्षण।

दीर्यमाणेष्विवरुजायस्यदन्तेषुजायते ॥

दालनोनामसव्याधिःसदागतिनिमित्तजः ॥ २५ ॥

अर्थ–जिनके दातोंमे फोडनेकीसी पीडा होय, उसको दालनरोग कहतेहै यह रोग बादीसे होय है ॥

कृमिदंतकके लक्षण।

कृष्णश्छिद्रश्चलस्रावीससंरम्भोमहारुजः ॥

अनिमित्तरुजोवातात्सज्ञेयःकृमिदन्तकः ॥ २६ ॥

अर्थ–जिनके योगसे दातोमे काले छिद्र पडजायँ, तथा हलने लगें उनमेसे स्राव होय, शोथयुक्त पीडा करनेवाला और कारणविना दूखनेवाला ऐसा होय, उसको कृमिदंतरोग कहतेहै यहा

दांतोमे काले छिद्र पडनेका यह कारण हे कि, दुष्ट रुधिरसे कृमि ( कीडा ) पैदा होकर दांतोमे छिद्र करते हैं ॥

भंजनकके लक्षण।

वक्त्रंवक्रंभवेद्यस्यदन्तभंगश्चजायते ॥
कफवातकृतोव्याधिःसभंजनकसंज्ञितः ॥ २७ ॥

अर्थ–जिस व्याधिकरके मुख टेढा होकर दांत फूटने लगे वह भंजनक व्याधि कफवातकरके होय हैं दांत भगकारी दोपके प्रभावसे मुख भी टेढा होय है ॥

दंतहर्षके लक्षण।

शीतरूक्षप्रवाताम्लस्पर्शानामसहाद्विजाः ॥
पित्तमारुतकोपेनदन्तहर्षःसनामतः ॥ २८ ॥

अर्थ–दात शीतल, रूक्ष, खटाई, इत्यादि पदार्थ ओर पवन इनके लगनेको जो नहीं सहि सके, उसको दतहर्ष कहतेहै यह रोग पित्तवायुके कोपसे होय है. इस रोगको वातज होनेपर भी उष्ण ( गरमी ) को नहीं सहि सके. यह व्याधिका स्वभाव है इस जगह दूसरा जो पाठ है वह नीचे लिखा है ॥

दंतशर्कराके लक्षण।

मलोदन्तगतोयस्तुपित्तमारुतशोषितः ॥
शर्करेवखरस्पर्शासाज्ञेयादन्तशर्करा ॥ २९ ॥

अर्थ–दातोका मल पित्तवायुके प्रभावसे सूखकर रेतके समान खरदरा स्पर्श मालूम होय, उस रोगको दतशर्करा ऐसे कहतेहै. इस श्लोकमे "सा दताना गुणहरा" ऐसा भी पाठ है इसका यह अर्थ हुआ कि, दांतोके गुण शुक्ल और दृढादि उनको दूर करे ॥

कपालिकाके लक्षण।

कपालेष्विवदीर्णेषुदन्तानांसैवशर्करा ॥
कपालिकेतिसाज्ञेयासदादंतविनाशिनी ॥ ३० ॥

अर्थ–कपाल कहिये मिट्टीके घडा आदिके जेसे टूक होयँ है ऐसे दांत मलकरके सहित होजायँ तो उसे पूर्वोक्त दंतशर्कराको कपालिका ऐसे कहते है, यह रोग दातोका सदा नाश कर्त्ता है ॥

---

१ शीतमुष्णं च दशनाः सहते स्पर्शनं न च। यस्य दंत च हर्षं तु विद्यात्पित्तसमीरणात्।

श्यावदंतके लक्षण ।

योऽसृङ्मिश्रेणपित्तेनदग्धोदंतस्त्वशेषतः ॥
श्यावतांनीलतांवापिगतःसश्यावदंतकः ॥ ३१ ॥

अर्थ—जो दांत रुधिरसे मिले, पित्तसे जलेके समान सब काले होजायँ उनको श्यावदंत कहते है ॥

हनुमोक्षके लक्षण ।

वातेनतैस्तैर्भावैस्तुहनुसंधिर्विसंहतः ॥
हनुमोक्षइतिज्ञेयोव्याधिरर्दितलक्षणः ॥ ३२ ॥

अर्थ—वादीके योगसे तिस तिस अभिघातादिक करके हनुसंधी ( ठोडी ) में चोट लगनेसे दांत चलायमान होजाये, उसको हनुमोक्ष कहते हैं, इसके लक्षण अर्दितरोग जो वातव्याधिमे कहिंआये है उस प्रकारके होयँ, सुश्रुतने इस रोगको दांतोंके समीप होनेसे दंतरोग कहा है, परंतु संग्रहकारने मुख्य दंतरोग न होनेसे नहीं लिखा । इसको संग्रहकारने भोजके कहे अनुसार वातव्याधिमे लिखा है इसीसे हनुमोक्षरोगको पाठ किसी पुस्तकमें लिखाहै और किसीमे नहीं लिखा ॥

जिह्वागत ५ रोग ।

जिह्वाऽनिलेनस्फुटिताप्रसुप्ताभवेच्चशाकच्छदनप्रकाशा ॥

अर्थ—वादीसे जीभ फटीसी, प्रसुप्त ( रसका ज्ञान जातारहे ) और शाकवान वृक्षके पत्र समान कांटेयुक्त खरदरी हो ॥

पित्तजके लक्षण ।

पित्तेनपीतापरिदह्यतेचदीर्घैःसरक्तैरपिकंटकैश्च ॥ ३३ ॥

अर्थ—पित्तसे जीभ पीली हो, उसमे दाह हो, उसमे लंबे लंबे तामेके समान कांटे होयँ, इस रोगको लौकिकमें जाली कहते है अथवा जोंडी कहते है ॥

कफजके लक्षण ।

कफेनगुर्वीबहलाचिताचमांसोच्छ्रयैःशाल्मलिकंटकाभैः ॥ ३४ ॥

अर्थ—कफसे जीभ मोटी भारी होय है और उसमे सेमरकेसे कांटेके समान मांसके अंकुर होयँ ॥

अलासके लक्षण ।

जिह्वातलेयःश्वयथुःप्रगाढःसोऽलाससंज्ञःकफरक्तमूर्तिः ॥
जिह्वांसतुस्तंभयतिप्रवृद्धोमूलेचजिह्वाभृशमेतिपाकम् ॥ ३५ ॥

अर्थ—जीभके नीचे कफ रुधिरसे प्रगट ऐसी भयंकर सूजन होय उसको अलास कहते हैं उसके बढनेसे स्तंभ होय, तथा जीभके मूलमे अत्यन्त पाक होताहै यह रोग असाध्य है ॥

## उपजिह्वाके लक्षण।

**जिह्वाग्ररूपः श्वयथुर्हि जिह्वामुन्नम्य जातः कफरक्तमूर्त्तिः ॥**
**लालाकरः कण्डुयुतः सचोषः सातूपजिह्वाकथिताभिषग्भिः ॥ ३६ ॥**

अर्थ-कफरुधिरसे जिह्वाग्रके समान ( जैसा जीभका आगेका भाग होय है ) ऐसी सूजन जीभको नीची दवायकर उत्पन्न होय, उसके योगसे लार बहुत वहै और उसमे खुजली चले, तथा दाह होय, (दाह इसमे रक्तमें स्थान पित्तका है उससे होय है,) इस रोगको वैद्य उपजिह्वा ऐसे कहतेहैं॥

## तालुगत ९ रोग।

### कंठशुंडिके लक्षण।

**श्लेष्मासृग्भ्यां तालुमूलात्प्रवृद्धो दीर्घः शोथो ध्मातबस्तिप्रकाशः ॥**
**तृष्णाकासश्वासकृत्तं वदन्ति व्याधिं वैद्याः कंठशुंडीति नाम्ना ॥ ३७ ॥**

अर्थ-कफरुधिरसे तालुके मूलमे फूलिबस्तिके समान भारी सूजन होय, इसके प्रभावसे प्यास, खाँसी, श्वास ये होते है इस रोगको वैद्य कठशुडी कहते है ॥

### तुंडकेरीके लक्षण।

**शोथः शूलस्तोददाहप्रपाकी प्रागुक्ताभ्यां तुंडिकेरी मतातु ॥**

अर्थ-कफरक्तसे तालुएमे वनकपासके फलके समान सूजन होय और उसमें पीडा सुईके छदनेकासा दुःख और दाह होकर पके उसको तुडिकेरी कहते है ॥

### अध्रुषके लक्षण।

**शोथः स्तब्धो लोहितस्तालुदेशे रक्तोज्ञेयः सोऽध्रुषो रुग्ज्वरश्च ॥ ३८ ॥**

अर्थ-रुधिरसे तालुएमे लाल स्तब्ध ( लठर ) ऐसी सूजन होय, उसमे पीडा और ज्वर होय-उसको अध्रुष ऐसे कहते है ॥

### कच्छपके लक्षण।

**कूर्मोत्सन्नोऽवेदनोऽशीघ्रजन्मा रोगो ज्ञेयः कच्छपः श्लेष्मणावा ॥**

अर्थ--कफसे तालुएमें कछुआकी पीठके समान ऊची सूजन होय, उसमें पीडा थोडी होय, देरसे प्रकट होनेवाला, वह शीघ्र वढे नही, उसको कच्छपरोग कहते है ॥

### अर्बुदके लक्षण।

**पद्माकारं तालुमध्ये तु शोथं विद्याद्रक्तादर्बुदं प्रोक्तलिंगम् ॥ ३९ ॥**

अर्थ-रुधिरसे तालुएमें कमलकी कर्णिकाके समान सूजन होय, इसके लक्षण अर्बुदनिदानमे जो रक्तार्बुदके कहे हैं उसके प्रमाण जानने ॥

मांससंघातके लक्षण।

**दुष्टंमांसंनीरुजंतालुमध्येकफाच्छूनंमांससंघातमाहुः ॥**

अर्थ—कफकरके तालुएमें दुष्ट मांस होकरके जो सूजन होय, और वह दूखे नहीं उसको मांस, संघात कहते हैं ॥

तालुपुप्पुटके लक्षण।

**नीरुक्स्थायीकोलमात्रःकफात्स्यान्मेदोयुक्तःपुप्पुटस्तालुदेशे ॥ ४०॥**

अर्थ—मेदयुक्त कफकरके तालुएमें पीडारहित और स्थिर तथा बेरके समान सूजन होय, उसको तालुपुप्पुट ऐसे कहते है ॥

तालुशोषके लक्षण।

**शोषोऽत्यर्थंदीर्यतेचापितालुश्वासश्चोग्रस्तालुशोषोऽनिलाच्च ॥**

अर्थ—वादीसे तालु अत्यंत सूखकर फटजाय, तथा भयकर श्वास होय, उसको तालुशोष कहते हैं॥

तालुपाकके लक्षण।

**पित्तंकुर्यात्पाकमत्यर्थघोरंतालुन्येवंतालुपाकंवदंति ॥ ४१ ॥**

अर्थ—पित्त कुपित होकर तालुएमे अत्यत भयकर पाक ( पकी फुन्सी ) उत्पन्न करे उसको तालुपाक कहते हैं ॥

कंठगत १७ रोग.

तिनमें पांच रोहिणीकी सामान्य संप्राप्ति।

**गलेऽनिलःपित्तकफौचमूर्छितौप्रदूष्यमांसंचतथैवशोणितम् ॥**
**गलोपसंरोधकरैस्तथांकुरैर्निहंत्यसून्व्याधिरयंहिरोहिणी ॥ ४२ ॥**

अर्थ—गलेमे वायु पित और कफ ये दुष्ट होकर मांसको तथा रुधिरको दूपित कर गलेमे अकुर (कांटे) उत्पन्न करे है, उनसे गला रुकजाय, यह रोहिणीनाम व्याधि प्राणनाशक है. सब रोहिणी सन्निपातसे प्रगट होती हैं उत्कर्षके वास्ते वातआदिका व्यपदेश है इन सवका असाध्यत्व भोजने पृथक् पृथक् लिखा है ॥

वातजाके लक्षण।

**जिह्वासमन्तात्भृशवेदनास्तुमांसांकुराःकंठनिरोधनोये ॥**
**सारोहिणीवातकृताप्रदिष्टावातात्मकोपद्रवगाढयुक्ता ॥ ४३ ॥**

अर्थ—जीभके चारो ओर अत्यत वेदनायुक्त जो मांसाकुर उत्पन्न होयँ, उनसे कंठका अवरोध होय, तथा कंप, विनाम, स्तंभादि वातके उपद्रव होयँ ॥

---

१ सद्यस्त्रिदोषजा हन्ति त्र्यहाच्छ्लेष्मसमुद्भवा। पञ्चाहात्पित्तसंभूता सप्ताहात्पवनोत्थितेति।

पित्तजाके लक्षण ।

**क्षिप्रोद्गमाक्षिप्रविदाहपाकातीव्रज्वरापित्तनिमित्तजाता ॥**

अर्थ--पित्तसे प्रगट भई रोहिणी शीघ्र वढै, तथा शीघ्रही पके, उराके योगसे तीव्र ज्वर होय ॥

कफजाके लक्षण ।

**स्रोतोनिरोधिन्यपिमन्दपाकास्थिराकुरायाकफसंस्रवासा ॥ ४४ ॥**

अर्थ--जो रोहिणी कठके मार्गको रोध करे ( रोक दे) तथा हौले हौले पके, तथा जिसके अंकुर कठिन होयँ वह कफजन्य जाननी ॥

त्रिदोषजाके लक्षण ।

**गम्भीरपाकिन्यनिवार्यवीर्यात्रिदोषलिंगात्रितयोत्थितासा ॥**

अर्थ--त्रिदोषसे उत्पन्न भई रोहिणी गभीरपाकिनी ( जिसमे राध वहुत हो) तिसमे औषधिका प्रभाव नही चले और तीन दोषोके लक्षणोसे युक्त होय, यह तत्काल प्राणोंका हरण करे ॥

रक्तजाके लक्षण ।

**स्फोटैश्चितापित्तसमानलिंगासाध्याप्रदिष्टारुधिरात्मकातु ॥ ४५ ॥**

अर्थ--रुधिरकी रोहिणी पित्तरोहिणीके समान जाननी, तथा फोडोसे व्याप्त होय, यह साध्य है ॥

कंठशालूकके लक्षण ।

**कोलास्थिमात्रःकफसंभवोयोग्रंथिर्गलेकंटकशूकभूतः ॥**
**खरःस्थिरःशस्त्रनिपातसाध्यस्तंकंठशालूकमितिब्रुवन्ति ॥ ४६ ॥**

अर्थ--कफसे गलेमे वेरकी गुठली समान गाठ होय, उसमे वारीक काटे ( शूक ) तीकुरके छेदनेकीसी, पीडा होय अथवा काटे और शूकके सदृश गलेमे मालूम होयँ, तथा खरदरी और कठिन होयँ, यह रोग शस्त्रोसे साध्य होय इस रोगको कठशालूक रोग कहते है ॥

अधिजिह्वके लक्षण ।

**जिह्वाग्ररूपःश्वयथुःकफात्तुजिह्वोपरिष्टादपिरक्तमिश्रात् ॥**
**ज्ञेयोऽधिजिह्वःखलुरोगएषविवर्जयेदागतपाकमेनम् ॥ ४७ ॥**

अर्थ--रक्तमिश्रित कफसे जीभके अग्रभागसदृश जीभमे सूजन होय, इसको अधिजिह्व कहते है यह पकनेसे असाध्य जानना ॥

वलयके लक्षण ।

बलासएवायतमुन्नतंचग्रंथिंकरोत्यन्नगतिंनिवार्य ॥
तंसर्वथैवाप्रतिवार्यवीर्यंविवर्जनीयंवलयंवदन्ति ॥ ४८ ॥

अर्थ--कफसे ऊंची और लंबी ऐसी गाठ कठमे उत्पन्न होय उसके योगसे कंठमे ग्रास (गस्सा) उतरे नहीं, तथा उसमें कोई उपाय नही चले, इस रोगको वलय कहते है इसको वैद्य त्याग देय ॥

बलाशके लक्षण ।

गलेतुशोथंकुरुतःप्रवृद्धौश्लेष्मानिलौश्वासरुजोपपन्नम् ॥
मर्मच्छिदंदुस्तरमेनमाहुर्बलाशसंज्ञंनिपुणाविकारम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—कुपित भए जो कफवायु सो गलेमें सूजन उत्पन्न करे उससे श्वास होय, तथा कठ दूखे, इस मर्मभेद करनेवाली दुस्तर व्याधिको वेद्य बलाश ऐसे कहते है ॥

एकवृंदके लक्षण ।

वृत्तोन्नतोंतःश्वयथुःसदाहःसकंडुरोऽपाक्यमृदुर्गुरुश्च ॥
नाम्नैकवृंदःपरिकीर्तितोऽसौव्याधिर्बलाशक्षतजप्रसूतः ॥ ५० ॥

अर्थ—गलेमें गोल, ऊची किंचित् दाहयुक्त खुजानेवाली ऐसी सूजन होय, वह किंचित् पके, और कुछ नरम होय, तथा भारी होय इसका नाम एकवृन्द है यह व्याधि कफरक्तसे होय है ॥

वृन्दके लक्षण ।

समुन्नतंवृत्तममंददाहंतीव्रज्वरंवृंदमुदाहरंति ॥
तंचापिपित्तक्षतजप्रकोपाद्विद्यात्सतोदंपवनास्रकंतु ॥ ५१ ॥

अर्थ—गलेमें ऊची गोल तीव्रदाह तथा ज्वरयुक्त जो सूजन होय उसको वृन्द कहते है, यह भी रक्तपित्तके कोपसे होय है इसमे वायुके सबध होनेसे सुईके चोटनेकीसी पीडा होय । *शंका—* क्यो जी ! कठके १७ रोग कहे हैं और वृन्दको मिलायकर अठारह रोग हुए तो कहिये कि सत्रहकी सख्यामें भेद हुआ. * उत्तर—*तुमने कहा सो ठीक है, परतु तुल्यस्थान आकृति होन से एकवृन्दका ही भेद वृन्दरोगजानना ऐसे माननेसे सख्यामे विरोध नही पडे, यद्यपि एकवृन्द कफरक्तज है और वृन्दरोग पित्तरक्तज कहाहे, तथापि जैसे वृन्दको चोटनी होनेकरके वातात्मकत्व कहा है तो भी एकवृन्दकी अवस्थाविशेप होनेसे वृन्दको एकवृन्दके साथ ग्रहण करा है, जैसे कामलाके लक्षणसे भिन्नभी है तथापि हलीमक कामलाकाही भेद जानना और भोजनेभी इसको

---

१ "श्लेष्मरक्तसमुत्थानमेकवृन्दं विभावयेत् । तुल्यस्थानाकृतिर्वृन्दोवन्दजो रक्तपित्तजः" ॥ इति ।

एकवृन्दकाही भेद कहा है, **गदाधर** कहता है कि, छंदोनुरोधके निमित्त एकवृन्द शब्दके एकश-ब्दका लोपकर वृन्दशब्दही मूलमे धरा यासे वृन्द और एकवृन्द ये दोनो एकही हैं ॥

शतघ्नीके लक्षण ।

**वर्तिर्घनाकंठनिरोधिनीयाचिताऽतिमात्रंपिशितप्ररोहैः ॥**
**अनेकरुक्प्राणहरीत्रिदोषाज्ज्ञेयाशतघ्नीतुशतघ्निरूपा ॥ ५२ ॥**

अर्थ–कंठमें लवी और कठिन सूजन होय, उसकरके कठ रुकजाय और उस सूजनके ऊपर मासके अकुर वहुत होयँ, तथा उसमे तोद ( चोटनी ) दाह खुजली आदि अनेक वेदना होयँ. यह प्राण हरनेवाली सूजनको शतघ्नी ( लवे तथा काटे लवे जिसमें होयँ ऐसे शस्त्र अथवा तोप ) के समान होय इसीसे इस रोगको यह संज्ञा दीनीहै ॥

गिलायुके लक्षण ।

**ग्रंथिर्गलेत्वामलकास्थिमात्रःस्थिरोऽल्परुक्स्यात्कफरक्तमूर्तिः ॥**
**संलक्ष्यतेसक्तमिवाशनंचसशस्त्रसाध्यस्तुगिलायुसंज्ञः ॥ ५३ ॥**

अर्थ--कफरक्तके कोपसे गलेमे आँवलेकी गुठलीके वरावर गांठ उत्पन्न होवे, वह गांठ कठिन मद पीडावाली हो, इसके होनेसे अन्न गलेमें अटकतासा मालुम देवे यह रोग शस्त्रके द्वारा अर्थात् शस्त्रसे काटनेसे साध्य होवे इसको गिलायु कहते हैं ॥

गलविद्रधिके लक्षण ।

**सर्वंगलंव्याप्यसमुत्थितोयःशोथोरुजःसंतिचयत्रसर्वाः ॥**
**ससर्वदोषोगलविद्रधिस्तुतस्यैवतुल्यःखलुसर्वजस्य ॥ ५४ ॥**

अर्थ–जो सूजन सव गलेमे व्याप्त होवे, तथा जिसमे सर्व प्रकारकी पीडा होय वह विद्रधिनिदानमे जो त्रिदोषकी विद्रधि कही है उसके समान गलविद्रधिके लक्षण जानना ॥

गलौघके लक्षण ।

**शोथोमहानन्नजलावरोधीतीव्रज्वरोवायुगतेर्निहन्ता ॥**
**कफेनजातोरुधिरान्वितेनगलेगलौघःपरिकीर्त्यतेसौ ॥ ५५ ॥**

अर्थ–रक्तयुक्त कफसे गलेमे भारी सूजन होय, उसके योगसे कठमे अन्नजलका अवरोध ( रोकावट ) होय, तथा वायुका सचार होय नहीं इसको वैद्य गलौघ कहते है ॥

स्वरघ्नके लक्षण ।

**यस्ताम्यमानःश्वसितिप्रसक्तंभिन्नस्वरःशुष्कविमुक्तकंठः ॥**
**कफोपदिग्धेष्वनिलायतेषुज्ञेयःसरोगःश्वसनात्स्वरघ्नः ॥ ५६ ॥**

अर्थ—वायुका मार्ग कफसे लिप्त होनेसे वार वार नेत्रोंके आगे अंधकार आकर जो पुरुष ... नको छोडे अथवा मूर्च्छा आकर जिसकी श्वास निकले, जिसका भिन्न स्वर होय, कठ सूखे और विमुक्त कहिये कंठ स्वाधीन न हो अर्थात् थोडा भी अन्न खायाहो तथापि कंठसे नीचे न उतरे, इस वातजरोगको स्वरघ्न कहते हैं ॥

मांसतानके लक्षण।

प्रतानवान्यःश्वयथुःसुकष्टोगलोपरोधंकुरुतेक्रमेण ॥
समांसतानेतिविभातिसंज्ञांप्राणप्रणुत्सर्वकृतोविकारः ॥ ५७॥

अर्थ—जो सूजन गलेमे उत्पन्न होकर क्रमसे फैलकर गलेको रोक ले तव वहुत कष्ट हो इस त्रिदोषविकारको मांसतान कहते है यह विकराल रोग प्राणोंका नाश करनेवाला है ॥

विदारीके लक्षण।

सदाहतोदंश्वयथुंसुतीव्रमन्तर्गलेपूतिविशीर्णमांसम् ॥
पित्तेनविद्याद्वदनेविदारींपार्श्वेविशेषात्सतुयेनशेते ॥ ५८ ॥

अर्थ—पित्तसे गलेमे सूजन होवै तिसकरके दाह होय, चवक होय, तथा दुर्गंधियुक्त सडा मांस गिरे और रोगी जिस करवट सोवे उसी तर्फ वह रोग होता है, मासके विदारण करनेसे विदारी कहलाता है ॥

मुखपाक।

सर्वसर ( मुख पाक मुखआना ) तीन प्रकारका है।

वातजके लक्षण।

स्फोटैःसतोदैर्वदनंसमंताद्यस्याचितंसर्वसरः सवातात् ॥

अर्थ—वादीके योगसे मुखमे सर्वत्र छाले होजायँ और वह चिनमिनावे, मुख जिह्वा गला होठ मसूढे दांत और तालु इन सवमे व्याप्ति होनेसे, इस रोगको सर्वसर कहते हैं ॥

पित्तजके लक्षण।

रक्तैःसदाहैःपिडकैःसपीतैर्यस्याचितंचापिसपित्तकोपात् ॥ ५९ ॥

अर्थ—पित्तसे मुखमे लाल तथा पीले छाले होयँ और दाह होवै ॥

कफजके लक्षण।

अवेदनैःकण्डुयुतैःसवर्णैर्यस्याचितंचापिसवैकफेन ॥ ६० ॥

अर्थ—कफसे मुखमें मदपीडा और त्वचाके समान वर्ण जिनका ऐसे छाले सर्वत्र होयँ ॥

असाध्यमुखरोगके लक्षण ।

ओष्ठप्रकोपेवर्ज्याःस्युर्मांसरक्तप्रकोपजाः ॥ दंतमूलेषुवर्ज्यौतु त्रिलिंगगतिशौषिरौ ॥ ६१ ॥ दंतेषुनचसिध्यन्तिश्यावदालनसंजनाः ॥ जिह्वारोगेवलासश्चतालव्येष्वर्बुदंतथा ॥ ६२ ॥ स्वरघ्नोवलयोवृन्दोबलासश्चविदारिका ॥ गलौघोमांसतानश्चशतघ्नीरोहिणीगले ॥ ६३ ॥ असाध्याःकीर्त्तिताह्येतेरोगा नवदशैवतु ॥ तेषुचापिक्रियांवैद्यःप्रत्याख्यायसमाचरेत् ॥ ६४ ॥

अर्थ—ओष्टरोग ( होठके रोगोमे ) मासज, रक्तज और त्रिदोषज, असाध्य है । मसूढोके रोगोमे सन्निपात, नाडी और शौषिर और दातोके रोगोमे श्याव, दालन और भजन, जिह्वाके रोगोमे वलाश और तालुएके रोगोमे अर्बुद, तथा गलेके रोगोमे स्वरघ्न, वलय, वृन्द, वलाश, विदारिका, गलौघ, मासतान, शतघ्नी, और रोहिणी ये उन्नीस रोग असाध्य हैं, इनपर चिकित्सा करनेवाले वैद्यको प्रत्याख्यान ( नटकर ) अर्थात् असाध्य कहकर औषध देनी क्योकि इसकी मृत्यु निश्चय होय और कदाचित् बच भी जाय ऐसे विचारकर औषधी तौ देनीही चाहिये ॥

इति मुखरोगनिदान समाप्तम् ।

# कर्णरोगनिदानम् ।

कर्णशूलके लक्षण ।

समीरणःश्रोत्रगतोऽन्यथाचरन्समंततःशूलमतीवकर्णयोः ॥ करोतिदोषैश्चयथास्वमावृतःसकर्णशूलःकथितोदुरासदः ॥ १ ॥

अर्थ—कानमे वायु, दोपोकरके ( कफ पित्त रुधिरसे ) आवृत होकर कानोमे उलटी फिरे तब अत्यत शूल ( दरद ) होय इस रोगको कर्णशूल कहते है यह रोग कष्टसाध्य है. कर्णशूलके उपद्रव विदहन इसप्रकार लिखे हैं " मूर्च्छा दाहो ज्वरःकासःक्लमोथवमथुस्तथा । उपद्रवाः कर्णशूले भवन्त्येते भविष्यतः " इति । इसका अर्थ सुगम है ॥

कर्णनादके लक्षण ।

कर्णस्रोतःस्थितेवातेशृणोतिविविधान्स्वरान् ॥ भेरीमृदंगशंखानांकर्णनादःसउच्यते ॥ २ ॥

१ कर्णशब्देन च कर्णशष्कुल्यवच्छिन्नमदृष्टोपगृहीतं श्रोत्रमुच्यते ।

अर्थ-वायु कानके छिद्रमें स्थित होनेसे अनेक प्रकारके स्वर तथा भेरी, मृदग, ओर शंख इनके शब्द सुनाई देवे, इस रोगको कर्णनाद कहते हैं ॥

बाधिर्य ( बहरा ) के लक्षण।

**यदाशब्दवहंवायुःस्रोतआवृत्यतिष्ठति ॥**
**शुद्धश्लेष्मान्वितोवापिबाधिर्यंतेनजायते ॥ ३ ॥**

अर्थ-जिस समय केवल वायु, अथवा कफयुक्त वायु शब्द वहानेवाली नाडियोमें स्थित होय, तव उस पुरुषको शब्द सुनाई नहीं देय अर्थात् बहरा होजाय ॥

कर्णक्ष्वेडके लक्षण।

**वायुःपित्तादिभिर्युक्तोवेणुघोषसमंस्वनम् ॥**
**करोतिकर्णयोःक्ष्वेडंकर्णक्ष्वेडःसउच्यते ॥ ४ ॥**

अर्थ-पित्तादि दोषोकरके युक्त वायुसे कानोंमे वेणु ( वसी ) का शब्द सुनाई देता है उसको कर्णक्ष्वेड कहते है ॥

कर्णस्रावके लक्षण।

**शिरोभिघातादथवानिमज्जनाज्जलेप्रपाकादथवापिविद्रधेः ॥**
**स्रवेद्धिपूयंश्रवणोऽनिलार्दितःसकर्णसंस्रावइतिप्रकीर्तितः ॥ ५ ॥**

अर्थ-शिरमें किसी प्रकारकी चोट लगनेसे अथवा पानीमे गोता मारनेसे, अथवा कानमे विद्रधि पकनेसे, वायु कुपित होकर कानोसे राध वहे उसको कर्णस्राव कहतेहैं ॥

कर्णकंडूके लक्षण।

**मारुतःकफसंयुक्तःकर्णकंडूंकरोतिच ॥**

अर्थ-कफसे मिलाहुआ वायु कानोमे खुजली उत्पन्न करता है ॥

कर्णगूथके लक्षण।

**पित्तोष्मशोषितःश्लेष्माजायतेकर्णगूथकः ॥ ६ ॥**

अर्थ-पित्तकी गरमीसे कफ सूखकर कानमे मेल जमे, उसको कर्णगूथ कहते हैं ॥

कर्णप्रतिनाहके लक्षण।

**सकर्णगूथोद्रवतांयदागतोविलायितोघ्राणमुखंप्रपद्यते ॥**
**तदा सकर्णप्रतिनाहसंज्ञितोभवेद्विकारःशिरसोऽर्द्धभेदकृत् ॥७ ॥**

अर्थ-वही कानका मैल पतला होनेसे, अथवा स्नेह स्वेदादिकोकरके पतला होकर मुख और नाकमे प्राप्त होय, तव उसको कर्णप्रतिनाह कहते हैं, इस रोगसे अर्द्धशिर ( आधासीसी ) का विकार होता है ॥

## कृमिकर्णके लक्षण।

**यदातुमूर्च्छंत्यथवापिजंतवःसृजंत्यपत्यान्यथवापिमाक्षिकाः॥ तदंजनत्वाच्छ्रवणोनिरुच्यतेभिषग्भिराद्यैःकृमिकर्णकोगदः॥८॥**

अर्थ–जिस समय कानमें कीड़े पड़जायँ, अथवा मक्खी अंडा धरे, कृमिलक्षण होनेसे श्रवण कहतेहैं इसीका द्वितीय पर्यायवाचीशब्द इस रोगका कृमिकर्ण कहते है॥

## कानमें पतंगादिकीडा धसनेके लक्षण।

**पतंगाःशतपद्यश्चकर्णस्रोतःप्रविश्यहि॥ अरतिंव्याकुलत्वंचभृ-शंकुर्वन्तिवेदनाम्॥९॥ कर्णोनिस्तुद्यतेतस्यतथाफुरफुराय-ते॥ कीटेचरतिरुक्तीव्रानिस्पन्देमन्दवेदना॥१०॥**

अर्थ–पतग, कनखजूरा, गिजाई, आदि कानमें धसनेसे, बेचैनी होय, जीव व्याकुल होय और कानमे पीडा होय, तथा कानमें नोचनेकीसी पीडा होय, और वह कीडा कानके भीतर फडके और फिरे, उस समय घोर पीडा होय और जब वह वन्द हो तब पीडा बन्द होवे॥

## द्विविधकर्णविद्रधिके लक्षण।

**क्षताभिघातप्रभवस्तुविद्रधिर्भवेत्तथादोषकृतोऽपरःपुनः॥ स रक्तपीतारुणरक्तमास्रवेत्प्रतोदधूमायनदाहचोषवान्॥११॥**

अर्थ–कानमे खुजानसे व्रण होजाय, अथवा चोट लगनेसे कानमें व्रण होकर विद्रधि होय, उसी प्रकार वातादिदोषोंकरके दूसरे प्रकारकी विद्रधि होय है, जब वह फूटे तब उसमेंसे लाल पीला रुधिर वहे, नोचनेकीसी पीड़ा होवै, धूआसा निकलता माल्म होवै, दाह होवै, चूसनेकीसी पीडा होवै।

## कर्णपाकके लक्षण।

**कर्णपाकस्तुपित्तेनकोथविक्लेदकृद्भवेत्॥ कर्णेविद्रधिपाकाद्वाजायतेचांबुपूरणात्॥१२॥**

अर्थ–पित्तसे अथवा कान पकनेसे अथवा कानमे पानी जानेसे कर्णपाक रोग होवे उसकरके कान सड़जावे और गीला रहे॥

## पूतिकर्णके लक्षण।

**पूयंस्रवतिवापूतिसज्ञेयःपूतिकर्णकः॥**

अर्थ–जिसके कानमे राध निकले, वा वास आवे, उसको पूतिकर्ण कहते हैं॥

कर्णशोथ-कर्णार्बुद कर्णार्शका हवाला देते हैं ।

**कर्णशोथार्बुदार्शांसिजानीयादुक्तलक्षणैः ॥ १३ ॥**

अर्थ—कानकी सूजन, कानका अर्बुद, और कानकी अर्श ( ववासीर ) ये रोग होयँ तो इनके लक्षण उसी उसी निदानके द्वारा जानले, कुछ थोडेसे यहा लिखभी देते है । कर्णशोथ चार प्रकारकी है, वात, पित्त, कफ रक्तजके भेदसे. इसी प्रकार कर्णार्श कानकी ववासीर भी चारही प्रकारकी है, चारसे विशेष शोथअर्शका होना असभव है यासे चारही हैं ॥ कर्णार्बुदरोग सात प्रकारका है, वात, पित्त, कफ, रुधिर, मास, मेदा और शिरा इनके भेदसे, अब कहते है कि, कर्णरोग सुश्रुतके मतसे २८ प्रकारका है परन्तु चरकके मतसे चारही उसके भेद हैं उनको कहते हैं ॥

वातजके लक्षण ।

**नादोऽतिरुक्कर्णमलस्यशोषःस्रावस्तनुश्चाश्रवणंचवातात् ॥**

अर्थ—वादीसे कानमे शब्द होय, पीडा होय, कानका मैला सूखजाय, पतला स्राव होय, सुनाई नही देवे अर्थात् वहरा होजाय ॥

पित्तजके लक्षण ।

**शोथःसरागोदरगंविदाहःसपीतपूतिस्रवणंचपित्तात् ॥ १४ ॥**

अर्थ—पित्तसे कानम सूजन हो, कान लाल हो, दाह हो, चिरासा होजाय, तथा किंचित् पीला दुर्गंधयुक्त स्राव [illegible]य ॥

कफजके लक्षण ।

**वैश्रुत्य[illegible]कण्डूस्थिरशोथशुक्लास्निग्धाश्रुतिःश्लेष्मभवेतिरुक्च ॥**

अर्थ—कफ[illegible] प्रभा[illegible] विरुद्ध सुनना, खुजली चले, कठिन सूजन होय, सफेद और चिकना ऐसा स्राव होय ॥

सन्निपातजके लक्षण ।

**सर्वाणिरू[illegible]पसन्निपातात्स्रावश्चतत्राधिकदोषवर्णः ॥ १५ ॥**

अर्थ—सन्निपात[illegible] लक्षण होयँ, स्राव होय, वा जौनसा दोष अधिक होय वैसाही दोषानुसार वर्णका स्रा[illegible] [illegible]ग ॥

कर्णपालीके रोग ।

कर्णशोथके लक्षण ।

**[illegible]र्णाश्चिरोत्सृष्टेसहसापिप्रवर्धिते ॥**

**[illegible]भवेत्पाल्यासरुजःपरिपोटवान् ॥ १६ ॥**

अर्थ—सुकु[illegible] स्त्री अ[illegible] बालक कानकी लौरको एक साथ बहुत बढावे तो कानकी पालीमे ( लौरमें ) सूजन होकर फलजावे और दूखे ॥

परिपोटके लक्षण।

**कृष्णारुणनिभःस्तब्धःसवातात्परिपोटकः ॥ १७ ॥**

अर्थ–वादीसे काला लाल और कठिन ऐसा फूल जाय, उसको परिपोटक कहते है ॥

उत्पातके लक्षण।

**गुर्वाभरणसंयोगात्ताडनाद्धर्षणादपि ॥**
**शोथःपाल्यांभवेच्छ्यावोदाहपाकरुजान्वितः ॥ १८ ॥**
**रक्तोवारक्तपित्ताभ्यामुत्पातःसगदोमतः ॥**

अर्थ--कानमें भारी आभरण (गहना) पहननेसे, अथवा चोटके लगनेसे अथवा कानको खींचनेसे, रक्तपित्त कुपित होकर कानकी पालीमे नीला, अथवा लाल सूजन होय उसमे दाह होवै, पीडा होवे, और रक्त वहे, इस रोगको उत्पात कहते हैं ॥

उन्मंथकके लक्षण।

**कर्णवलाद्वर्धयतःपाल्यांवायुःप्रकुप्यति ॥ १९ ॥**
**कफंसंगृह्यकुरुतेसशोफंस्तब्धवेदनम् ॥**
**उन्मंथकःसकण्डूकोविकारःकफवातजः ॥ २० ॥**

अर्थ–कानको वलपूर्वक वढानेसे पालीमे (लौरमे) वायु कुपित होकर कफको संग लेकर कठिन तथा मंद पीडायुक्त सूजनको प्रगट करे, उसमे खुजली चले इस कफवातजन्य विकारको उन्मथक कहते है ॥

दुःखवर्द्धनके लक्षण।

**संवर्ध्यमानेदुर्विद्धेकण्डूदाहरुजान्वितः ॥**
**शोफोभवतिपाकश्चत्रिदोषोदुःखवर्द्धनः ॥ २१ ॥**

अर्थ--दुष्टरीतिकरके कानको छेदनेसे, तथा वढानेसे, खुजली दाह पीडायुक्त ऐसी सूजन होय, वह पकजाय, उसको दुःखवर्द्धन कहते है ॥

परिलेहीके लक्षण।

**कफासृक्कृमिसंभूतःसविसर्पन्नितस्ततः ॥**
**लिहेच्छष्कुलींपालिंपरिलेहीत्यसौस्मृतः ॥ २२ ॥**

अर्थ–कफ रक्त कृमिसे उत्पन्न भई तथा सर्वत्र विचरनेवाली ऐसी जो सूजन कानकी पालीमे होय, वह कानकी पालीको खाय जाय अर्थात् उसका मांस झरने लगे, उसको परिलेही कहते हैं ॥

इति माधवार्थबोधिकामाथुरीभाषाटीकायां कर्णरोगनिदानं समाप्तम् ॥

# नासारोगनिदानम्।



## पीनसके लक्षण।

**आनह्यतेयस्यविशुष्यतेचप्रक्लिद्यतेधूप्यतिचैवनासा॥**
**नवेत्तियोगंधरसांश्चजन्तुर्जुष्टंव्यवस्येत्सतुपीनसेन॥ १॥**
**तंचानिलश्लेष्मभवंविकारंब्रूयात्प्रतिश्यायसमानलिंगम्॥**

अर्थ–जिसकी नाक रुकजाय, वात शोणित कफसे नाक भीतरसे सूखीसी रहे, गीली रहे; धूआसा निकले, जिसकी नाकमे सुगध दुर्गंध मिष्ट रसादिककी गध मालूम न हो, उसके पीनस प्रगट भई जाननी, इस वातजन्य विकारको प्रतिश्याय ( पीनस ) कहते हैं॥

## पूतिनस्यके लक्षण।

**दोषैर्विदग्धैर्गलतालुमूलेसंमूर्च्छितोयस्यसमीरणस्तु॥**
**निरेतिपूतिर्मुखनासिकाभ्यांतंपूतिनस्यंप्रवदंतिरोगम्॥ २॥**

अर्थ–गले और तालुएमे दुष्टभया पित्तरक्तादि दोषकरके वायु मिश्रित होकर नाक और मुखके मार्गोंसे दुर्गंध निकले, इस रोगको पूतिनस्य कहते है॥

## नासापाकके लक्षण।

**घ्राणाश्रितंपित्तमरूंषिकुर्याद्यस्मिन्विकारेबलवांश्चपाकः॥**
**तंनासिकापाकमितिव्यवस्येद्विक्लेदकोथावथवापियत्र॥ ३॥**

अर्थ–जिसकी नाकमे पित्त दूषित होकर फुंसी प्रगट करे और नाक भीतरसे पकजाय, उसको नासिकापाक कहते हैं इसमे नाकसे राध बहे और दुर्गन्ध आवे॥

## पूयरक्तके लक्षण।

**दोषैर्विदग्धैरथवापिजन्तोर्ललाटदेशेभिहतस्यतैस्तैः॥**
**नासास्रवेत्पूयमसृग्विमिश्रंतंपूयरक्तंप्रवदन्तिरोगम्॥ ४॥**

अर्थ–दोष दुष्ट होनेसे अथवा कपालमे चोटलगनेसे नाकमेसे राध बहे और रुधिर बहे इस रोगको पूयरक्त कहते हैं॥

क्षवथु छींकके लक्षण।

घ्राणाश्रितेमर्मणिसंप्रदुष्टोयस्यानिलोनासिकयान्निरेति ॥
कफानुयातोवहुशोऽतिशब्दंतंरोगमाहुःक्षवथुंविधिज्ञाः ॥ ५ ॥

अर्थ—नासिकाश्रित मर्मके ( शृंगाटकमर्म ) के विषे वायु दुष्ट होकर कफ सहित भारी शब्दको नासिकाके बाहर निकाले उसको क्षवथु ( छींक ) कहते है ॥

आगंतुजक्षवथुके लक्षण।

तीक्ष्णोपयोगादतिजिघ्रतोवाभावान्कटूनर्कनिरीक्षणाद्वा ॥
सूत्रादिभिर्वातरुणास्थिमर्मण्युद्घाटितेऽन्यक्षवथुर्निरेति ॥ ६ ॥

अर्थ—तीखे राईआदि पदार्थ खानेसे, अथवा कडुवा खानेसे, मिरच आदि तीखे वस्तुओंके अत्यन्त सूघनेसे सूर्यके देखनेसे, अथवा कपडेकी बत्ती बनाकर नाकमे तरुणास्थि मर्म (फणामर्म) में लगनेसे, आगंतुज क्षवथु (छींक) आती है आगतुज और दोषज छींक एकही है ॥

भ्रंशथुके लक्षण।

प्रभ्रश्यतेनासिकयाहियस्यसांद्रोविदग्धोलवणः कफश्च ॥
प्राक्संचितोमूर्द्धनिसूर्यतप्तेतंभ्रंशथुंव्याधिमुदाहरन्ति ॥ ७ ॥

अर्थ—सूर्यका गरमीकरके मस्तक तप्त होनेसे पूर्वसंचित भया विदग्ध गाढा खारी ऐसा कफ नाकसे गिरे उस व्याधिको भ्रंशथुरोग कहते हैं ॥

दीप्तके लक्षण।

घ्राणेभृशंदाहसमन्वितेतुविनिश्चरेद्धूमइवेहवायुः ॥
नासाप्रदीप्तेवचयस्यजंतोर्व्याधिंतुतंदीप्तमुदाहरन्ति ॥ ८ ॥

अर्थ—नाक अत्यन्त दाहयुक्त होनेसे उसमें वायु धूआंके सदृश विचरे और नाक प्रदीप्त होवे अर्थात् गरम होवे इस रोगको दीप्त कहते हैं ॥

प्रतिनाहके लक्षण।

उच्छ्वासमार्गंतुकफःसवातोरुंध्यात्प्रतीनाहमुदाहरेत्तम् ॥

अर्थ—वायुसहित कफ श्वासके मार्गको बंद करे, तब नाकका ज्वर अच्छी रीतिस चले नहीं, इसको प्रतिनाह कहते हैं ॥

नासास्रावके लक्षण।

घ्राणाद्घनःपीतसितस्तनुर्वादोषःस्रवेत्स्रावमुदाहरेत्तम् ॥ ९ ॥

अर्थ—नाकसे गाढा पीला अथवा सफेद पतला दोष ( कफ स्रवे, उसको स्राव कहते हैं ॥

नासापरिशोथके लक्षण ।

घ्राणाश्रितेस्रोतसिमारुतेनगाढंप्रतप्तेपरिशोषितेच ॥
कृच्छ्राच्छ्वसेदूर्ध्वमधश्चजंतुर्यस्मिन्सनासापरिशोषउक्तः ॥ १० ॥

अर्थ—वायुसे नासिकाका द्वार अत्यन्त तप्त होकर सूखजाय, तब मनुष्य बडे कष्टसे ऊपर नीचेको श्वास लेयँ उस रोगको नासापरिशोष कहतेहैं ॥

चिकित्साभेदार्थपीनसके आमपक्वके लक्षण ।

शिरोगुरुत्वमरुचिर्नासास्रावस्तनुः स्वरः ॥ क्षामःष्ठीवेत्तथा-
ऽभीक्ष्णमामपीनसलक्षणम् ॥ ११ ॥ आमलिंगान्वितःश्लेष्मा
घनश्चाप्सुनिमज्जति॥स्वरवर्णविशुद्धिश्चपक्वपीनसलक्षणम् ॥१२॥

अर्थ—शिरमें भारीपन, अन्नमे अरुचि, नासिकासे गरम गरम जलका झरना, अवाज कुछ मन्दी हो, और शरीरका कृश होना, बार बार थूकना, यह आम ( कच्चे ) पीनसके लक्षण हैं और जिसमे इसी पूर्वोक्त आम पीनसके भी लक्षण हो और कफ गाढा होगया हो, और जलमे गेरनेसे डूबजाय, और मुखसे साफ आवाज निकले, और मुखका रंग ( रूहानी ) अच्छा होय, तो जानना कि, यह पीनस पक गया है ॥

प्रतिश्यायकी संप्राप्ति ।

संधारणाजीर्णरजोतिभाष्यक्रोधर्तुवैषम्यशिरोभितापैः ॥
प्रजागरातिस्वपनाम्बुशीतावश्यायतोमैथुनबाष्पधूमैः ॥ १३ ॥
संस्त्यानदोषे शिरसिप्रवृद्धोवायुः प्रतिश्यायमुदीरयेच्च ॥

अर्थ—वेगोंके रोकनेसे, अजीर्णकारक पदार्थोंके खानेसे, रज ( धूल ) के नासिकाके भीतर जानेसे अत्यत भाषण ( अत्यत पढने ) से, और अत्यत गुस्सा करनेसे, तथा ऋतुविपर्यय अर्थात् एक ऋतुमे दूसरे ऋतुके लक्षण होनेसे, शिरोभिताप अर्थात् ग्रीष्म ऋतुमे शिरसे अत्यन्त धूप सेवन करनेसे, रात्रिमे जागनेसे, दिनमे विशेष सोनेसे, और शीत पदार्थोंके अधिक सेवन करनेसे, इसी तरह कोलरके खानेसे , अत्यन्त मैथुन करनेसे, पसीना अथवा आसुओंके रुकनेसे अथवा नासिकामें धूआ रुकनेसे शिरमे दोष इकट्ठे हो फिर वायु वृद्धिगत होकर प्रतिश्याय रोग ( जुकाम ) उत्पन्न करे ये कारण सद्योजनक अर्थात् तत्काल पीनस करनेवाले हैं ॥

चयादिक्रमसे इसका दूसरा निदान ।

चयंगताःमूर्द्धनिमारुतादयःपृथक्समस्ताश्चतथैवशोणितम् ॥ १४ ॥

प्रकुप्यमानाविविधैःप्रकोपनैस्ततःप्रतिश्यायकराभवन्ति ॥

अर्थ–मस्तकमें पृथक् वातादि दोष तथा सर्व दोष उसी प्रकार रुधिर संचय होकर अनेक प्रकारके कारणोंसे ( बलवानसे वैर करना दिवास्वापादि ) कुपित होकर प्रतिश्याय उत्पन्न करें ॥

पूर्वरूपके लक्षण ।

क्षवप्रवृत्तिःशिरसोऽतिपूर्णतास्तम्भोऽगमर्दःपरिहृष्टरोमता ॥१५॥

उपद्रवाश्चाप्यपरेपृथग्विधान्नृणांप्रतिश्यायपुरःसराःस्मृताः ॥१६॥

अर्थ–छींकका आना, मस्तकका भारी होना, अंगोका जिकड जाना, तथा अंगोका टूटना, रोमांच अवमंथसे आदि ले और धूमादिक (१) तत्काल होनेवाला उपद्रव होय जब जुकाम होनेहार होती है तब ये लक्षण होते है ॥

वातिकप्रतिश्यायके लक्षण ।

आनद्धापिहितानासातनुस्रावप्रसेकिनी ॥

गलताल्वोष्ठशोषश्चनिस्तोदःशंखयोरति ॥ १७ ॥

भवेत्स्वरोपघातश्चप्रतिश्यायेऽनिलात्मजे ॥

अर्थ–जिसकी नाकका मार्ग रुकजाय आच्छादित होजाय, और उसमेसे पतला पानी निकले गला तालू होठ ये सूखजायँ और कनपटी दूखे, गला बैठजाय, ये वातके जुकामके लक्षण है ॥

पैत्तिकप्रतिश्यायके लक्षण ।

उष्णःसपीतकःस्रावोघ्राणात्स्रवतिपैत्तिके ॥ १८ ॥

कृशोतिपांडुःसन्तप्तोभवेदुष्णाभिपीडितः ॥

सधूममग्निंसहसावमतीवचनासया ॥ १९ ॥

अर्थ–जिसकी नाकसे दाह और पीला स्राव होवे, वह मनुष्य कृश और पीला होजाय उसका देह गरम रहे. नाकसे अग्निके समान धूँआँ निकले, यह पित्तकी पीनसके लक्षण है ॥

श्लैष्मिकके लक्षण ।

घ्राणात्कफःकफकृतेश्वेतःपीतःस्रवेद्बहुः ॥

---

१ पूर्वरूपाणि दृश्यंते प्रतिश्याये भविष्यति । घ्राणधूमायन मंथक्षवथुस्ताळुदालनम् ॥ कंठेध्वंसो मुखस्राव. शिरस्यापूर्ण तथा ॥

शुक्लावभासःशूनाक्षोभवेद्गुरुशिरानरः ॥ २० ॥
कंठताल्वोष्ठशिरसांकंडूभिरभिपीडितः ॥

अर्थ—नाकसे सफेद पीला बहुत कफ गिरे, उसकी देह सफेद होजाय, नेत्रोंके ऊपर सूजन होय और मस्तक भारी रहे और गला तालु होठ और शिर इनमें खुजली विशेष चले, ये कफकी पीनसके लक्षण है ॥

सन्निपातके लक्षण।

भूत्वाभूत्वाप्रतिश्यायोयस्याकस्मान्निवर्त्तते ॥ २१ ॥
सपक्कोवाप्यपक्कोवासतुसर्वभवःस्मृतः ॥ २२ ॥

अर्थ—जिसकी नाकमे पूर्वोक्त कहे सो सर्व लक्षण मिले, तथा वह पीनस वारवार होकर पककर अथवा विना पके नष्ट होजाय, उसको सन्निपातकी पीनस कहते है यह विदेह[1] आचार्यके मतसे असाध्य है ॥

दुष्टप्रतिश्यायके लक्षण।

प्रक्लिद्यतेपुनर्नासापुनश्चपरिशुष्यति ॥ पुनरानह्यतेचापिपुनर्विव्रीयतेतथा ॥ २३ ॥ निश्वासोवातिदुर्गंधोनरोगंधंनवेत्तिच ॥ एवंदुष्टप्रतिश्यायंजानीयात्कृच्छ्रसाधनम् ॥ २४ ॥

अर्थ—वारंवार जिसकी नाक झडा करे, और सूखजाय और नाकसे अच्छी तरह श्वास नही आवे, नाक रुकजाय, और फिर खुलजाय, श्वास लेनेमें बास आवे, तथा उस रोगीको सुगंध दुर्गधका ज्ञान जाता रहे, ऐसे लक्षण होनेसे इसको दुष्टप्रतिश्याय कहते है, यह कष्टसे साध्य होती है यह पीनस पाच पीनसोंके अतर्गत जाननी इनकाही भेद है यह छठी नही है ॥

रक्तप्रतिश्यायके लक्षण।

रक्तजेतुप्रतिश्यायेरक्तस्रावःप्रवर्तते ॥ ताम्राक्षश्चभवेज्जंतुरुरोघातप्रपीडितः ॥ २५ ॥ दुर्गंधोच्छ्वासवदनोगंधानपिनवेत्तिसः ॥ २६ ॥

अर्थ—रुधिरके पीनसमे नाकसे रुधिर गिरे, नेत्र लाल होयँ, उरःक्षतकी पीडाके सदृश पीडा होय, श्वास अथवा मुखमे वास आवे दुर्गंधका ज्ञान नहीं होय, उरःक्षतके[2] लक्षण ग्रन्थान्तरसे

---

१ नृणा दुष्टप्रतिश्यायः सर्वजश्च न सिध्यति। इति विदेहः।

२ उरःक्षतमुरुस्तम्भः पूतिकर्णकफो रस।मकास' सज्वरो ज्ञेय उरोघातः सपीनस॥ अत्र पित्तप्रतिश्यायलिङ्गान्यपि बोद्धव्यानि तुल्यात् पित्तरक्तयो ॥

लिखे है सो जानने, किसी पुस्तकमे " पितप्रतिश्यायक्तोर्लिंगैश्चापि समन्वितः " ऐसा पाठ है इसका अर्थ यह है कि जिसमे पित्तकी पीनसके लक्षण मिलते हो ॥

## असाध्य लक्षण ।

**सर्वएवप्रतिश्यायानरस्याप्रतिकारिणः ॥ दुष्टतांयान्तिकालेन्न तदाऽसाध्याभवंतिच ॥२७॥ मूर्च्छंतिक्रमयश्चात्र श्वेताःस्निग्धा स्तथाऽणवः ॥ क्रमिजोयःशिरोरोगस्तुल्यंतेनास्यलक्षणम् ॥ २८ ॥**

अर्थ—सर्व पीनस औषधी न करनेसे असाध्य होते है, इसमे नाकमे कीडा पडजाय वह क्रमि सफेद चिकने और बारीक होते हैं क्रमिज शिरोरागोके सदृश लक्षण होयँ क्रमिज शिरोरोगके लक्षण शिरोरोगमे कह आये है ॥

## प्रतिश्याय और विकारोंको भी करता है उनको कहते हैं ।

**बाधिर्यमान्ध्यमघ्रत्वंघोरांश्चनयनामयान् ॥**
**शोथाग्निसादकासादीन्वृद्धाःकुर्वन्तिपीनसाः ॥ २९ ॥**

अर्थ—पीनस वढनेसे बहरा होजाय, मद दीखे, वास आवे नहीं, भयकर नेत्ररोग होय, सूजन मदाग्नि खांसी इत्यादि विकार होते है, सुश्रुतमे नासिकाके ३१ रोग कहेहैं और इस जगह पीनससे लेकर प्रतिश्यायपर्यन्त १९ रोग कहे है बाकी १६ रोगोको सख्यापूरणके वास्ते लिखते है ॥

**अर्बुदंसप्तधाशोथाश्चत्वारोऽर्शश्चतुर्विधम् ॥**
**चतुर्विधंरक्तपित्तमुक्तंघ्राणेऽपितद्विदुः ॥ ३० ॥**

अर्थ—सात प्रकारके अर्बुद रोग, चार प्रकारके शोथ ( सूजन ) चार प्रकारके अर्श, और चार प्रकारके रक्तपित्त, ये पूर्वोक्त कहे रोग सोलह होते हैं ॥

वात, पित्त, कफ, रुधिर, मास, मेदकरके छःहुए और सातवा शालाक्य सिद्धातके मतसे सन्निपातका ऐसे सात प्रकारके अर्बुदरोग हुए ॥

वात पित्त कफ सन्निपातके भेदसे चार प्रकारकी सूजन भई तथा वात पित्त कफ सन्निपातके भेदसे चारही प्रकारकी अर्श ( बवासीर ) और चारही प्रकारका रक्त रक्तपित्तकी समानतासे एकही जानना, पूर्वोक्त पीनससे लेकर प्रतिश्याय पर्यंत १९ भए और अर्बुदादि १६ हुए, ऐसे सब मिलकर नासिकारोग ३१ हुए ॥

इति श्रीमाधवार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकाया नासिकारोगनिदान समाप्तम् ॥

---

# नेत्ररोगनिदानम् ।



कारण ।

उष्णाभितप्तस्यजलप्रवेशाद्दूरेक्षणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ॥ स्वेदाद्रजोधूमनिषेवणाच्चछर्देर्विघाताद्वमनातियोगात् ॥१॥ द्रवान्नपानातिनिषेवणाच्च विण्मूत्रवातक्रमनिग्रहाच्च ॥प्रसक्तसंरोदनशोककोपाच्छिरोभिघातादतिमद्यपानात् ॥ २ ॥ तथाऋतूनां च विपर्ययेण क्लेशाभिघातादतिमैथुनाच्च ॥ बाष्पग्रहात्सूक्ष्मनिरीक्षणाच्च नेत्रे विकाराञ्जनयंति दोषाः ॥ ३ ॥

अर्थ—गरमीसे तप्तहोकर जलमे प्रवेश, ( स्नानादि करना ऐसा करनेसे शीतलतामे शरीर व्याप्त होकर शरीरको गरमी ऊपर चढकर नेत्रके तेजको पराभव करनेसे नेत्ररोग उत्पन्न होता है ) दूरकी वस्तुको देखनेसे, दिनमे सोना और रात्रिमे जागनेसे, नेत्रमे पसीना जानेसे, अथवा बाफ लगनेसे, अथवा नेत्रोमे धूल जानेसे, अथवा धुआ जानेसे, वमनके वेगको रोकनेसे, अथवा बहुत वमन ( रद्द ) होनेसे, पतले अन्नपानके अत्यत सेवन करनेसे. विष्ठा, मूत्र और अधोवायु इनके वेगको निग्रह (कहिये वेग धारण करनेसे) निरतर रुदन करनेसे, शोकसे, कोपसे, मस्तकमे चोट लगनेसे, अतिमद्यपान करनेसे, उसी प्रकार ऋतुके विपर्यय अर्थात् शीतकालमे गरमी और गरमीमे शीतकाल होनेसे, क्लेश कहिये कामादिक दुःख उससे अभिघात कहिये, दुःख होनेसे, अति मैथुन करनेसे, अश्रुपातका वेग धारण करनेसे, और सूक्ष्म पदार्थके अवलोकन करनेसे वातादिदोष नेत्रोमे रोग पैदा करते है सुश्रुतमे नेत्ररोगकी सप्राप्ति इस प्रकार लिखी है ॥

यथा ।

( शिरानुसारिभिर्दोषैर्विगुणैरूर्ध्वमाश्रितैः ॥
जायन्तेनेत्रभागेषुरोगाःपरमदारुणाः ॥ ४ ॥ )

अर्थ—कुपित हुए वातादिदोष नेत्रोकी नसोमे प्राप्त हो नेत्रोका भाग व्याप्त करनेसे उनमें

१ षट्सप्ततिर्नेत्ररोगाभवन्ति,—यदाहसुश्रुतः—तैस्तिभिलिशदुक्तास्ते कफेनात्यविकारत्रय । रक्तजाः षोडश प्रोक्ताः सर्वजाः पचविंशतिः । वाह्यौ पुनर्द्वौच तथा रोगाः षट्सप्तति. स्मृता. ॥ नेत्रप्रमाणन्तसुश्रुतेनोक्तम्—विद्याद्द्व्यङ्गुलबाहुल्यस्वांगुष्ठोदरसंम्मितम् । द्वयङ्गुलं सर्वतःसार्धं भिषङ्नयनबुद्बुदम् ।

भयकर रोग उत्पन्न होता है, ये वात पित्त कफ रुधिर सन्निपात और आगंतु इनसे होनेवाले ऐसे नेत्ररोग ७६ हैं ॥

नेत्ररोगका प्रायः अभिष्यंद ( नेत्रआना ) होता है।

इसीसे प्रथम उसको कहते हैं।

**वातात्पित्तात्कफाद्रक्तादभिष्यन्दश्चतुर्विधः ॥**
**प्रायेणजायतेघोरःसर्वनेत्रामयाकरः ॥ ५ ॥**

अर्थ–वात पित्त कफ और रुधिर इनसे चार प्रकारका अभिष्यन्द रोग होता है, इसकी पीडा नष्ट नही होय, तथा यह अभिष्यन्दरोग सर्व नेत्ररोगोका ( अधिमंथादिक उत्पत्तिस्थान जानना सो सुश्रुतमे लिखा है इस रोगको भाषामे नेत्र दूखना कहते हैं अथवा आंखआई कहते है ) ॥

वाताभिष्यंदके लक्षण।

**निस्तोदनस्तंभनरोमहर्षसंघर्षपारुष्यशिरोभितापाः ॥**
**विशुष्कभावःशिशिराश्रुताचवाताभिपन्नेनयनेभवन्ति ॥ ६ ॥**

अर्थ–वादीसे नेत्र दूखने आये होयँ उनमे सूई चुभानेकीसी पीडा हो, नेत्रोंका स्तम्भन ( ठहरजाना ) रोमाच, नेत्रोमें रेत गिरनेके समान खटके, तथा रूक्ष होय मस्तकमें पीडा हो, नेत्रोसे पानी गिरे, परन्तु नेत्र सूखेसे रहै और नेत्रोसे जो आसू गिरे वह शीतल हो ॥

पित्ताभिष्यंदके लक्षण।

**दाहप्रपाकौशिशिराभिनन्दाधूमायनंवाष्पसमुच्छ्रयश्च ॥**
**उष्णाश्रुतापीतकनेत्रताचपित्ताभिपन्नेनयनेभवन्ति ॥ ७ ॥**

अर्थ–पित्तसे नेत्र दूखने आनेसे उनमे बहुत दाह हो, नेत्र पकजायँ, उनमे शीतल पदार्थ लगानेकी इच्छा हो, नेत्रोसे धूआ निकले, अथवा नेत्रोमे धूआं जानेकीसी पीडा हो, तथा नेत्रोसे गरम अश्रु ( आसू ) बहुत पडे आख पीलीसी मालूम पडे ॥

कफजाभिष्यंदके लक्षण।

**उष्णाभिनन्दागुरुताक्षिशोथःकण्डूपदेहावतिशीतताच ॥**
**स्रावोबहुःपिच्छिलएवचापिकफाभिपन्नेनयनेभवन्ति ॥ ८ ॥**

अर्थ–कफसे नेत्र दूखने आये हो उसको गरम वस्तु नेत्रोंमे लगानेसे आराम मालूम हो अर्थात् नेत्रमे सेकसा मालूम हो तथा नेत्र भारी होयँ, सूजन हो, खुजली चले, कीचडसे नेत्र दूषित हों, और शीतल हो, उनमेसे स्राव होय, सो गाढा और बहुत होय ॥

---

१ "प्रायेणसर्वंनयनामयास्ते भवन्त्यभिष्यन्दनिमित्तमूला. । "

रक्तजाभिष्यंदके लक्षण।

**ताम्राश्रुतालोहितनेत्रताचराज्यःसमंतादतिलोहिताश्च ॥**
**पित्तस्यलिंगानिचयानितानिरक्ताभिपन्नेनयनेभवंति ॥ ९ ॥**

अर्थ–रक्ताभिष्यदसे नेत्रोसे लाल पानी गिरे, नेत्र लाल होयँ और नेत्रोमे ओर पास रेखासी लाल लाल दीखे, और जो पित्ताभिष्यदके लक्षण कहे है वह सब लक्षण इसमें होवे ॥

अभिष्यंदसे अधिमंथकी उत्पत्ति होती है सो कहते हैं।

**वृद्धैरेतैरभिष्यंदैर्नराणामक्रियावताम् ॥**
**तावंतस्त्वधिमंथाःस्युर्नयनेतीव्रवेदनाः ॥ १० ॥**

अर्थ–इस अभिष्यदमे औषधोपचार न करनेसे यह बढकर उतनेही ( चार ) अभिष्यदरोग नेत्रोमे प्रगट होयँ, इससे नेत्रोमे तीव्र पीडा होय, यह अधिमथके सामान्य लक्षण हैं वेदनाशब्द इस जगह व्यथामात्रका वाचक है इससे यह प्रगट हुआ कि वातके अभिष्यंदसे वातिक अधिमथ प्रगट होय उसमे तीव्र वातज सर्व निस्तोदादि पीडायुक्त होयँ, इसी प्रकार पित्तकेसे, कफकेसे, रुधिरकेसे, पित्त कफ रुधिरके अधिमथ स्वलक्षणकरके जानने ॥

दूसरे सामान्य लक्षण।

**उत्पाट्यतइवात्यर्थंनेत्रंनिर्मथ्यतेतथा ॥**
**शिरसोऽर्द्धंचतंविद्यादधिमंथंस्वलक्षणैः ॥ ११ ॥**

अर्थ–आधे शिरमे उपाडनेकीसी पीडा होय, अथवा तोडनेकीसी, तथा मथनेकीसी पीडा हो, व्याधिके प्रभावसे आधे शिरमे पीडा हो, इससे अधिमथ कहते है। इनके लक्षण वातज अभिष्यदके समान जानने ॥

दोषभेदसे कालमर्यादाके लक्षण।

**हन्याद्दृष्टिंश्लैष्मिकःसप्तरात्राद्योऽधीमंथोरक्तजःपंचरात्रात् ॥**
**षड्रात्राद्वावातिकोवैनिहन्यान्मिथ्याचारात्पैत्तिकःसद्यएव ॥ १२ ॥**

अर्थ–कफका अधिमंथ सातदिनमे दृष्टिका नाश करे, रक्तज अधिमथ पांच दिनमे, वातिक अधिमथ छः दिनमे, और पैत्तिक अधिमथ मिथ्योपचारसे तत्काल ( तीन दिनमे ) दृष्टिका नाश करे, अर्थात् आख जाती रहे इस जगह जो कालकी अवधि कहीहै सो व्याधिके स्वभावसे तथा लंघन प्रलेपादि क्रियाकरके तथा अजननिषेधके निमित्त कही है ॥

नेत्ररोगके सामान्य लक्षण ।

उदीर्णवेदनंनेत्रंरागोद्रेकसमन्वितम् ॥
घर्षनिस्तोदशूलाश्रुयुक्तमामान्वितंविदुः ॥ १३ ॥

अर्थ–जिस नेत्ररोगमे पीडाविशेप होय, लाली बहुत होकर चमका चले, तथा उनमें घर्ष ( रेत गिरनेसे जैसी पीडा होती है वैसी ) पीडा होय, अर्थात् करकरा होय, सूई चुभानेकीसी पीडा होय, शूलसा चले, और स्रावयुक्त होवे, उन नेत्रोंको आमयुक्त जानना ॥

निरामके लक्षण ।

मन्दवेदनताकण्डूःसंरम्भाश्रुप्रशान्तता ॥
प्रसन्नवर्णताचाक्ष्णोःसंपक्वंदोपमादिशेत् ॥ १४ ॥

अर्थ–नेत्रोंमे पीडा कम होवे, खुजली चले, सूजन मंद होय, आंसुओंका गिरना बंद होय, नेत्रोंका वर्ण स्वच्छ होय, ये दोप पक्व होनेके लक्षण हैं ॥

शोथसहितनेत्रपाकके लक्षण ।

कण्डूपदेहाश्रुयुतःपक्वोदुंबरसन्निभः ॥
संरम्भीपच्यतेयस्तुनेत्रपाकःसशोफजः ॥ १५ ॥
शोथहीनानिलिंगानिनेत्रपाकेत्वशोथजे ॥

अर्थ–नेत्रोंमे खुजली तथा लेप और आसुओंसे युक्तहो और पके गूलरके समान लाल होयँ, ये लक्षण शोथसहित नेत्ररोगके हैं और शोथ ( सूजन ) के विना जो नेत्रपाक होय उसमें शोथको छोडकर सब लक्षण होयँ, यह व्याधि त्रिदोपजन्य जाननी ॥

हताधिमंथके लक्षण ।

उपेक्षणादक्षियदाऽधिमंथोवातात्मकःसादयतिप्रसह्य ॥
रुजाभिरुग्राभिरसाध्यएषहताधिमंथःखलुनेत्ररोगः ॥ १६ ॥

अर्थ–वातज अधिमंथको उपेक्षा करनेसे वह नेत्रोको सुखाय देवे, सो मनुष्यके नेत्रोंमें तोद ( सुईके चुभानेकीसी पीडा ) दाहादि भारी पीडा होय, यह हताधिमंथनामक नेत्ररोग असाध्य है. इसी रोगको विदेह दृष्ट्युत्क्षेपणी कहते हे अथवा दृष्टिनिर्गम तथा सकलाक्षिशोपभी जानना यही सुश्रुतकाभी मत है इस रोगसे नेत्र सूखे कमलके समान होजाते हैं ॥

---

१ अंतर्गतः शिराणां तु यदा तिष्ठति मारुतः । स तदा नयनं प्राप्य शीघ्रं दृष्टिं निरस्यति ॥ तस्याः निरस्यमानाया निर्मथन्निव मारुतः । नयनं निर्वमत्याशु शूलतोदादिमंथनैः ॥

२ अतःशिराणां श्वसनः स्थितो दृष्टिं च प्राक्षिपन् । हताधिमंथं जनयेत्तमसाध्यं विदुर्बुधाः ॥ इति । विदेहः ॥ अथवा शोषयेदक्ष्णोः क्षीणात्तेजोबलादयम् ॥ तत्पद्मामिव संशुष्कमवसीदति लोचनम् ॥

वातपर्ययके लक्षण ।

**वारंवारंचपर्यैतिभ्रुवौनेत्रेचमारुतः ॥**
**रुजश्चविविधास्तीव्राःसज्ञेयोवातपर्ययः ॥ १७ ॥**

अर्थ—वायु क्रमसे कभीकभी भ्रुकुटीमे प्राप्त हो और कभीकभी नेत्रोंमें प्राप्त होकर और अनेकप्रकारकी तीव्र पीडा करे उसको वातपर्यय कहतेहैं ॥

शुष्काक्षिपाकके लक्षण ।

**यत्कूणितंदारुणरूक्षवर्त्मसंदह्यतेचाविलदर्शनंच ॥**
**सुदारुणंयत्प्रतिबोधनेचशुष्काक्षिपाकोपहतंतदक्षि ॥ १८ ॥**

अर्थ—जो नेत्र खुले नहीं अर्थात् सकुचित होजायँ, जिनकी वाफणी कठिन और रूक्ष होय, जिसके नेत्रोंमें दाह विशेष होय, यथार्थ दीखे नहीं, जो खोलनेमे वहुत दुःख होय, उन नेत्रोंको शुष्काभिपाकनामक रोगसे पीडित जानना। यह रोग रक्तसहित वादीसे होता है सो करालाचार्य्यने लिखा है ॥

अन्यतोवातके लक्षण ।

**यस्यावटुकर्णशिरोहनुस्थोमन्यागतोवाप्यनिलोन्यतोवा ॥**
**कुर्याद्रुजंवैभ्रुविलोचनेचतमन्यतोवातमुदाहरंति ॥ १९ ॥**

अर्थ—घाटी ( धार ) कान, मस्तक, ठोडी, मन्या, नाडी इनमें अथवा इतर ठिकाने स्थित जो वायु वह भ्रुकुटी ( भौंह ) वा नेत्रोमे तोद भेदादि पीडा करे इस रोगको अन्यतोवातरोग कहते हैं अर्थात् अन्य स्थानोमें स्थित होकर अन्यस्थानोमे पीडा करे इसीसे इसको अन्यतोवातरोग कहते हैं सो विदेहका मत भी है ॥

अम्लाध्युषितके लक्षण ।

**श्यावंलोहितपर्यन्तंसर्वंचाक्षिप्रपच्यते ॥**
**सदाहशोथंसास्रावमम्लाध्युषितमम्लतः ॥ २० ॥**

अर्थ—मध्यमे कुछ नीलवर्ण, ओर आरा पारा लाल भरा हो ऐसे सर्व नेत्र पकजाय, और उनमें पीले रगकी फुन्सी होयँ, उनमे दाह होकर सूजन होय, तथा नेत्रोसे पानी झरे, यह रोग

---

१ कूणितः खरवर्त्माक्षिकृच्छ्रोन्मीलाविलेक्षणम् । सदाहसाखजोवातच्छुष्कपाकान्वित वदेत् ॥

२ मन्यानामन्तरे वायुरस्थितः पृष्ठतोपि वा । करोति भेद निस्तोद शखं चाक्ष्णोः सवस्तया ॥ तमाहुरन्यतोवात रोगंदृष्टिविदो जनाः ॥ इति ।

अम्ल खटाई आदि खानेसे होता है, सुश्रुतके मतमें यह रोग पित्तसे होता है; इसको अम्लाध्युषित कहते हैं ॥

## शिरोत्पातके लक्षण ।

**अवेदनावापिसवेदनावायस्याक्षिराज्योहिभवंतिताम्राः ॥**
**मुहुर्विरज्यंतिचयास्तदाहग्व्याधिःशिरोत्पातइतिप्रदिष्टः ॥ २१ ॥**

अर्थ–जिसके नेत्रकी नस पीडासहित अथवा पीडारहित तामेके समान लाल रंगकी होजायँ, और वह बराबर अधिकाधिक ( जियादहसे जियादह ) लाल होजायें, इस रोगको शिरोत्पात ( सबलवायु ) कहते है। यह रोग रक्तजन्य है ॥

## शिराहर्षके लक्षण ।

**मोहाच्छिरोत्पातउपेक्षितस्तुजायेतरोगस्तुशिराप्रहर्षः ॥**
**ताम्राभमस्रंस्रवतिप्रगाढंतथानशक्रोत्यभिवीक्षितुंच ॥ २२ ॥**

अर्थ–आज्ञानकरके शिरोत्पात ( सबल वायु ) की उपेक्षा करनेसे अर्थात् इलाज न करनेसे शिराप्रहर्षरोग होता है उसमे नेत्रोसे लाल स्वच्छ ऐसे आसू गिरे, और उस रोगीको नेत्रोंसे कुछ दिखाई न देवे ॥

इति सर्वगता रोगाः ।

## अब नेत्रोंके काले रंगमें होनेवाले रोग कहते हैं ।

## सव्रणशुक्रलक्षण ।

**निमग्नरूपंतुभवेद्धिकृष्णेसूच्येवविद्धंप्रतिभातियद्वै ॥**
**स्रावंस्रवेदुष्णमतीवयच्चतत्सव्रणंशुक्रमुदाहरंति ॥ २३ ॥**

अर्थ–नेत्रके कालेभागमे शुक्र कहिये फूलासा होजाय, और वह भीतरसे गडासा होजाय उसने सूई चुभानेकीसी पीडा होवे तथा नेत्रोसे अति गरम और बहुतसा स्राव होवे इस रोगको सव्रणशुक्र कहते है इसमे पीडा बहुत होतीहै, क्षतमे पीडा होना ठीक हीहै और नेत्रसरीखे सुकुमार ठिकानेपर तो विशेष पीडा होती है ऐसे भोजविदेहादिकोका मत है ॥

## सव्रणशुक्रके साध्यासाध्य लक्षण ।

**दृष्टेःसमीपेनभवेत्तुयत्तुनचावगाढंनचसंस्रवेद्धि ॥**
**अवेदनंवानचयुग्मशुक्रंतत्सिद्धिमायातिकदाचिदेव ॥ २४ ॥**

अर्थ–जो शुक्र ( फूला ) दृष्टिके समीप होय नही, और एक त्वचामे होय बहुत स्रवे ( झरे ) हो, जिसमें पीडा न होय, और एकही स्थानमें दो बूंद ( फूल ) न होय, ऐसा शुक्र कदाचित्

अच्छाभी होजाय परन्तु इनसे विपरीत लक्षण दृष्टिके समीप होना दूसरी त्वचामे होय बहुत स्रवे पीडा होय एक स्थानमे दो बूंद होयँ यह शुक्र अच्छा नही होय ॥

अव्रणशुक्रलक्षण ।

**स्यन्दात्मकंकृष्णगतंसचोषंशंखेन्दुकुन्दप्रतिमावभासम् ॥**
**वैहायसाभ्रप्रतनुप्रकाशमथाव्रणंसाध्यतमंवदन्ति ॥ २५ ॥**

**अर्थ**–अभिष्यन्दसे उत्पन्न होकर नेत्रोके काले भागमे चोष ( सीग तुमडीकी पीडा युक्त ) शख, चन्द्र, कुन्दपुष्प इनके समान सफेद आकाशके समान पतला ऐसा जो व्रणरहित शुक्र होय, उसको सुखसाध्य कहते हैं ॥

अव्रणशुक्र अवस्थाविशेषकरके साध्य होय है सो कहते हैं ।

**गम्भीरजातंबहलंचशुक्रंचिरोत्थितंवापिवदन्तिकृच्छ्रम् ॥**

**अर्थ**–जो शुक्र गभीर हो अर्थात् दो तीन त्वचाके भीतर हुआ हो तथा मोटा हो उसको कृच्छ्रसाध्य कहते है ॥

अव्रण अवस्थाभेदकरके असाध्य होता है उसको कहते हैं ।

**विच्छिन्नमध्यंपिशितावृतंवाचलंशिरासूक्ष्मसदृष्टिकृच्च ॥२६ ॥**
**द्वित्वग्गतंलोहितमन्ततश्चचिरोत्थितंचापिविवर्जनीयम् ॥**

**अर्थ**–जो शुक्रके बीचका मांस गिरजाय, इसीसे शुक्रके स्थानमे गढेला होजाय, अथवा इसके विपरीत कहिये पिशितावृत अर्थात् उसके चारो ओर मास होय, चंचल कहिये एक ठिकाने न रहे, शिराओकरके व्याप्त हो, बारीक होगया हो दृष्टि नाश करनेवाला ( यह 'दृष्टेः समीपे न भवेत्' इसका उलटा है ) दो पटल कहिये परदोके भीतर भया हो चारो ओरसे लाल हो और बीचमे सफेद और बहुत दिनका शुक्र हो ऐसेको वैद्य त्याग दे ॥

दूसरे असाध्य लक्षण ।

**उष्णाश्रुपातःपिडिकाचनेत्रेयस्मिन्भवेन्मुद्गनिभंचशुक्रम् ॥ २७ ॥**
**तदप्यसाध्यंप्रवदंतिकेचिदन्यच्चयत्तित्तिरिपक्षतुल्यम् ॥ २८ ॥**

**अर्थ**–जिसके नेत्रोसे गरम अश्रुपात ( आंसू ) गिरकर पिडिका उत्पन्न होवे ( दो पटलमे शुक्र जानेसे ये लक्षण होते है ) तथा जिसमे मूगके बराबर शुक्र होवे ऐसा नेत्रका शुक्र असाध्य है और जो तीतरके पंखके समान ( काले रगका ) होवे उसकोभी असाध्य कोई कोई कहते है ॥

## अक्षिपाकात्ययके लक्षण ।

**श्वेतःसमाक्रामतिसर्वतोहिदोषेणयस्यासितमण्डलंतु ॥**
**तमक्षिपाकात्ययमक्षिपाकंसर्वात्मकंवर्जयितव्यमाहुः ॥ २९ ॥**

अर्थ—नेत्रके कृष्णभागमे दोषोंके योगसे चारो ओर सफेद ( शुक्र ) फैल जावे यह सन्निपात जन्य अक्षिपाकात्ययनामक रोग त्याज्य है ऐसे कहाहै ॥

## अजकाजातके लक्षण ।

**अजापुरीषप्रतिमोरुजावान्सलोहितोलोहितपिच्छलास्रुः ॥**
**विगृह्यकृष्णंप्रचयोऽभ्युपैतितच्चाजकाजातमितिव्यवस्येत् ॥३० ॥**

अर्थ—काले भागमे बकरीके शुष्क विष्टाके समान दूखनेवाला लाल हो और गाढा कुछ कालेमे आंसू वहे, उसको अजकाजात ऐसे जानना चाहिये ॥

## इति कृष्णजरोग ।

## दृष्टिके रोग ।

### पहले पटलमें दोष जानेसे उसके लक्षण ।

**प्रथमेपटलेयस्यदोषोदृष्टिंव्यवस्थितः ॥**
**अव्यक्तानिचरूपाणिकदाचिदथपश्यति ॥ ३१ ॥**

अर्थ—प्रथम पटलमें दोष स्थित होनसे वह पुरुष अव्यक्तरूप ( घटपटादि पदार्थ ) देखे—दृष्टिका प्रमाण सुश्रुतमें कहा है ॥

यथा—

**( मसूरदलमात्रंतुपंचभूतप्रसादजम् ॥ )**

अर्थ—आधे मसूरदलके समान पंचभूत ( पृथ्वी, जल, तेज, वायु आकाश ) से प्रगट है; * शंका—* इस श्लोकमें तो मसूरदलके समान लिखा है फिर आधे मसूरके समान ऐसा अर्थ आपने कैसे किया.* उत्तर—* तुमनें कहा सो ठीक है परंतु यह अर्थ हमने निमि अचार्य्यके मतसे लिखा है. यथा "पंचभूतात्मिका दृष्टिर्मसूरार्द्धदलोन्मिता" इति । अब कहते हैं कि पटल चार हैं सो सुश्रुतमें लिखा है ॥

---

१ अजकाजातका भेद विदेह दूसरा कहता है । यथा—कृष्णेरक्षणोभवेच्छुक्रं छगलीविट्समप्रभम् । सांद्रपिच्छलरक्ताश्रित्रागमत्वनकेति सा ॥

यथा ।

तेजोजलाश्रितंबाह्येतेष्वन्यत्पिशिताश्रितम् ॥
मेदस्तृतीयंपटलमाश्रितंत्वस्थिचापरम् ॥
पञ्चमांशसमं दृष्टेस्तेषां वाहुल्यमिष्यते ॥ ३२ ॥

अर्थ—प्रथम पटल रुधिर और जलाश्रित है, दूसरा पटल पिशित ( मास ) के आश्रित है, तीसरा पटल मेदके आश्रित है, चौथा पटल अस्थि ( हड्डी ) के आश्रित है, इन चारों पटलोका बहुलता दृष्टिके पञ्चमभागके समान होती है ॥

द्वितीयपटलस्थितदोषके लक्षण ।

दृष्टिर्भृशंविह्वलतिद्वितीयंपटलंगते ॥
मक्षिकामशकान्केशाञ्जालकानिचपश्यति ॥ ३३ ॥
मण्डलानिपताकाश्चमरीचिंकुण्डलानिच ॥
परिप्लवांश्चविविधान्वर्षमभ्रंतमांसिच ॥ ३४ ॥
दूरस्थानिचरूपाणिमन्यतेचसमीपतः ॥
समीपस्थानिदूरेचदृष्टेर्गोचरविभ्रमात् ॥ ३५ ॥
यत्नवानपिचात्यर्थंसूचीपाशंनपश्यति ॥

अर्थ—दूसरे पटलमे दोषके जानेसे दृष्टि विह्वल हो जाय, अर्थात् पदार्थोंके देखनमे असमर्थ होय, उसी प्रकार नेत्रोंके आगे मक्खी मच्छर वाल जाली मंडल पताका किरण कुण्डल मण्डूक आदि अनेक प्रकारके जलके समूह वर्षामेघ ( बादल ) अधकार ये नहीं दीखे ये दृष्टि विह्वल होनेसे होते हैं और विषयभ्रान्तिसे दूरकी वस्तु समीप दीखे और समीपकी दूर दीखे, और अनेक यत्न करनेसेभी सूईका छिद्र न दीखे ॥

तृतीयपटलगतदोषके लक्षण ।

ऊर्ध्वंपश्यतिनाधस्तात्तृतीयंपटलंगते ॥ ३६ ॥
महान्त्यपिचरूपाणिच्छादितानीवचाम्बरैः ॥
कर्णनासाक्षिहीनानिविकृतानिवपश्यति ॥ ३७ ॥

यथादोषंचरज्येतदृष्टिर्दोषेबलीयसी ॥
अधःस्थितेसमीपस्थंदूरस्थंचोपरिस्थिते ॥ ३८ ॥
पार्श्वस्थितेपुनर्दोषेपार्श्वस्थंनैवपश्यति ॥
समतन्तःस्थितेदोषेसंकुलानीवपश्यति ॥ ३९ ॥
दृष्टिमध्यस्थितेदोषेमहद्ध्रस्वंचपश्यति ॥
द्विधास्थितेद्विधापश्येद्बहुधावाऽनवस्थिते ॥ ४० ॥
दोषेदृष्टिस्थितेतिर्यगेकंवैमन्यतेद्विधा ॥

अर्थ–तीसरे पटलमे दोष जानेसे ऊपरकी वस्तु दीखे नीचेकी वस्तु नही दीखे, जो वस्तु बडी और भव्य होवे वह वस्त्रसे ढकीसी दीखे, कान नाक और नेत्र इनकरके रहित पुरुषोको देखे, टेढ वॉके दीखे, और जिस वातादि दोषका रुधिर मास मेदादिकोके सहाय होनेसे उनमे जो दोष बलवान् होय उसका जैसा रूप ( रग ) होवे उसी प्रकारका दीखे, अर्थात् जिम जिस दोषका जैसा वर्ण होय वैसा दीखे, दोष नीचे स्थित होयँ तो समीपस्थ वस्तु नही दीखे, और ऊपर दोष स्थित होय तो दूरकी वस्तु न दीखे, और दोष पार्श्व ( पसवाडे ) मे स्थित होनेसे पसवाडेकी वस्तु नही दीखे, और दोष दृष्टिमे सर्वत्र स्थित होवे तो उस पुरुषको सब चीज मिलीरी दीखे, दृष्टिके मध्यमे दोष जानेसे बडी वस्तु छोटी दीखे, दो ठिकाने दोष रहनेसे एक वस्तुकी दो दीखे, और दोष अव्यवस्थित अर्थात् एकही स्थानमे स्थित न होनेसे एक वस्तुके दो टुकडेसे दिखलाई देवे, दृष्टिगत दोष तिरछे स्थित न होनेसे एक वस्तुके दो टुकडे दिखलाई देवे यह स्वरूपोका दीखना तीसरे ( पटल ) से प्रारंभ होताहै, सो विदेहने लिखाभी है ॥

चतुर्थपटलगततिमिरलक्षण ।

तिमिराख्यःसवैरोगश्चतुर्थपटलंगतः ॥ ४१ ॥ रुणद्धिसर्वतो दृष्टिंलिंगनाशमतः परम् ॥ अस्मिन्नपितमोभूतेनातिरूढेमहागदे ॥ ४२ ॥ चन्द्रादित्यौसनक्षत्रावंतरिक्षेचविद्युतम् ॥ निर्मलानिचतेजांसिभ्राजिष्णूनिचपश्यति ॥ ४३ ॥

अर्थ–वह तिमिररोग चौथे पटल ( परदे ) मे पहुचनेसे दृष्टिको चारो ओरसे रोक दे, इसको कोई आचार्य लिंगनाश कहते है और कोई तिमिर कहते हैं, यह अधकारमय रोग अति बढजाय तब उस मनुष्यको आकाशमे चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, बिजली, और निर्मलतेज भी यथार्थ

१ यथावर्णं रज्यते दृष्टिर्दोषैस्त्रिपटलस्थितैः । चतुर्थं पटलं प्राप्य मण्डले रज्यते तु तैः ॥ इति ।

नहीं दीखे, तेजके पुंजसे दीखे, लिंगनाशकी निरुक्ति 'लिंग्यते ज्ञायते अनेनेति लिंगमिन्द्रियशक्तिस्तस्य नाशो यस्मिन्निति लिंगनाश.' अर्थात् जिसकरके जाने सो कहिये इन्द्रिय ( लिंग ) उसका नाश जिसमे होय उसको लिंगनाश कहते है, और इसी रोगको लौकिकमे मोतियाबिन्दु भी कहते है ॥

तृतीयपटलाश्रितकाचदोषकी दूसरी संज्ञा ।

**सएवलिंगनाशस्तुनीलिकाकाचसंज्ञितः ॥**

**अर्थ**—तीसरे पटलगत काच ( मोतियाबिन्दु ) की उपेक्षा करनेसे वही फिर चौथे पटलमे पहुंचता है, तब उसे लिंगनाश और नीलिका कहते हैं. यह रोग असाध्य है सो निमिआचार्य लिखते है, परन्तु **गदाधर** आचार्य कहते हैं कि, विशेष काचको नीलकाकाच कहते हैं ॥

दोषविशेषकरके रूपका दीखना कैसा होता है ।

**तत्रवातेनरूपाणिभ्रमन्तीवहिपश्यति ॥**
**आविलान्यरुणाभानिव्याविद्धानीवमानवः ॥ ४४ ॥**
**पित्तेनादित्यखद्योतशक्रचापतडिद्गुणान् ॥**
**नृत्यतश्चैवशिखिनःसर्वंनीलंचपश्यति ॥ ४५ ॥**
**कफेनपश्येद्रूपाणिस्निग्धानिचसितानिच ॥**
**सलिलप्लावितानीवपरिजाड्यानिमानवः ॥ ४६ ॥**
**पश्येद्रक्तेनरक्तानितमांसिविविधानिच ॥**
**ससितान्यथकृष्णानिपीतान्यपिचमानवः ॥ ४७ ॥**
**सन्निपातेनचित्राणिविप्लुतानिचपश्यति ॥**
**बहुधाचद्विधावापिसर्वाण्येवसमंततः ॥ ४८ ॥**
**हीनांगान्यधिकांगानिज्योतींष्यपिचपश्यति ॥**

**अर्थ**—वादीसे रोगीको मलिन, कुछ लाल, तिरछी और भ्रमती, ऐसी वस्तु दीखे । पित्तसे सूर्य, खद्योत ( पटवीजना ), इन्द्रधनुष, बिजली इनको और नाचनेवाले मोर, तथा सर्व वस्तु नीली दीखे ।

---

१ काच इत्येष विजयो याप्यस्त्रिपटलस्थितैः । चतुर्थपटल प्राप्तो लिंगनाशः स उच्यते ॥

कफसे चिकना, और सफेद तथा पानीमें डुबोया हुवा निकालनेके समान और भारी ऐसा रूप दीखे ।

रुधिरसे लाल, और अनेक प्रकारका अधकार, तथा किंचित् सफेद, काली, और पीली ऐसी वस्तु दीखे ।

सन्निपातसे अनेक प्रकारके विपरीत अर्थात् एकको अनेक तथा दो अथवा अनेक प्रकारके रूप दीखे, हीन अगके अथवा अधिक अगके रूप रोगी देखे, और ज्योतिस्वरूपसे सब पदार्थ दीखे ॥

पित्तसे दूसरा परिम्लायसंज्ञक तिमिर होय है ।

**पित्तंकुर्य्यात्परिम्लायिमूर्च्छितंरक्ततेजसा ॥ ४९ ॥**
**पीतादिशस्तथोद्योतान्नवीनःपिसपश्यति॥**
**विकीर्यमाणान्खद्योतैर्वृक्षांस्तेजोभिरेवच ॥**

अर्थ—रक्तके तेजसे मिश्रित हुए पित्तसे परिम्लायिरोग होय, इसके योगसे रोगीको दिशा, आकाश, और सूर्य, ये पीले दीखे और सर्वत्र सूर्य ऊगसे दीखे, तथा वृक्ष भी तेजस्वरूपसे दीखे परिम्लायि पित्तको नील कहते है सो सात्यकिने लिखा है, इस रोगको कोई आचार्य रक्तपित्तसे होता है ऐसे कहते हैं सोभी लिखो है ॥

रोगभेदसे लिंगनाशको षड्विधत्व कहते हैं ।

**वक्ष्यामिषड्विधंरागैर्लिंगनाशमतः परम् ॥ ५० ॥**
**रागोऽरुणोमारुतजःप्रदिष्टोम्लायीचनीलश्चतथैवपित्तात् ॥**
**कफात्सितःशोणितजःसरक्तःसमस्तदोषप्रभवोविचित्रः ॥ ५१ ॥**

अर्थ—इसके अनन्तर रागभेदसे छः प्रकारका लिगनाश होता है, सो इस प्रकार वातजन्य रग लाल होय है, पित्तसे म्लायी, पीला, नीला, अथवा नीलाही रग होय, कफसे सफेद, और रुधिरसे लाल, तथा सब दोषोंसे अनेक प्रकारका रग होता है ॥

वातिकरोगके विशेष लक्षण ।

**अरुणंमण्डलंदृष्ट्यांस्थूलकाचारुणप्रभम् ॥**
**परिम्लायिनिरोगेस्यान्म्लायिनीलंचमण्डलम् ॥ ५२ ॥**
**दोषक्षयात्कदाचित्स्यात्स्वयंतत्रप्रदर्शनम् ॥**

---

१ "एवमेव तु विज्ञेया नीलाः पित्तसमुद्भवाः । रक्तपित्तोत्थिताः पीताः" ॥ इति ।

२ विदधाति परिम्लायि पित्तरक्तेन संगतम् । तेन पीता दिशः पश्येदुद्यन्तमिव भास्करम् ॥ इति ।

अर्थ-परिम्लायि रोगमें दृष्टिके ऊपर मोटा काचके समान लाल मण्डल होता है, वह म्लान ( लाल पीला ) अथवा नीला होता है, उसमे दोप घटनेसे कदाचित् देखनेकी शक्ति होय. इस जगह दोपशब्दकरके कोई कर्मका ग्रहण करते हैं ॥

दृष्टिमण्डलगतरागके लक्षण।

अरुणंमण्डलंवाताच्चंचलंपरुषंतथा ॥ ५३ ॥
पित्तान्मण्डलमानीलंकांस्याभंपीतमेवच ॥
श्लेष्मणाबहलंस्निग्धंशंखकुन्देन्दुपाण्डुरम् ॥ ५४ ॥
चलत्पद्मपलाशस्थःशुक्लोबिन्दुरिवांभसः ॥
मृद्यमानेचनयनेमण्डलंतद्विसर्पति ॥ ५५ ॥
प्रवालपद्मपत्राभंमण्डलंशोणितात्मकम् ॥
दृष्टिरागोभवेच्चित्रोलिंगनाशेत्रिदोषजे ॥ ५६ ॥
यथास्वंदोषलिंगानिसर्वेष्वेवभवंतिहि ॥

अर्थ-वादीसे दृष्टिमडल लाल, चचल, और खरदरा होता है। पित्तसे दृष्टिमंडल किंचित् नीला, तथा कांसके समान पीला होवे। कफसे भारी, चिकना, शख, कुदफूलके समान और चन्द्र इनके समान सफेद होय और उसके नेत्रमे हलनेवाला कमलपत्रके ऊपर पानीकी बूदके समान टेढी तिरछी सफेद बूद फैलीसी दिखलाई दे रुधिरसे दृष्टिमडल मूगाके समान अथवा लाल कमलके समान लाल होवे, ओर त्रिदोपज लिंगनाशमे तरह तरहके मंडल होयँ, तथा सर्वदोषोसे लिंगमंडलमें वातादि दोषोके न्यारे २ लक्षण होयँ ॥

आगे कहे गये और पीछे कहे ऐसे दृष्टिरोगोकी संख्या।

षड्लिंगनाशाःषडिमेचरोगादृष्टयाश्रयाःषट्चषडेवचस्युः ॥ ५७ ॥

अर्थ-पूर्व कहे लिंगनाश रोग छः और आगे विदग्धदृष्ट्यादि कहे गये व छ. ऐसे सबमिलकर बारह दृष्टिरोग होते हैं ॥

पित्तविदग्धके लक्षण।

पित्तेनदुष्टेनगतेनवृद्धिंपीताभवेद्यस्यनरस्यदृष्टिः ॥
पीतानिरूपाणिचतेनपश्येत्सवैनरःपित्तविदग्धदृष्टिः ॥ ५८ ॥

अर्थ-पित्त दुष्ट होकर बढनेसे जिस मनुष्यकी दृष्टि पीली होय, तथा उसके रोगसे उस मनुष्य को सर्व पदार्थ पीले रगके दीखें, उस दृष्टिको पित्तविदग्ध कहते हैं ॥

### दिवांध्यके लक्षण।

**प्राप्तेतृतीयंपटलंचदोषेदिवानपश्येन्निशिवीक्षतेसः ॥**
**रात्रौसशीतानुगृहीतदृष्टिःपित्ताल्पभावादपितानिपश्येत्॥५९॥**

अर्थ--तीसरे पटलमें दोष ( पित्त ) जानेसे, दिनमे रोगीको नहीं दीखे, रात्रिमे शीतलताके कारण पित्त कम होनेसे दीखे ॥

### कफविदग्धदृष्टिके लक्षण।

**तथानरःश्लेष्मविदग्धदृष्टिस्तान्येवशुक्लानिहिमन्यतेतु ॥**

अर्थ--इसी प्रकार, कफविदग्ध पुरुषको सफेद रूप दीखे ॥

### नक्तांध्य ( रतोंध ) के लक्षण।

**त्रिषुस्थितोयःपटलेषुदोषोनक्तांध्यमापादयतिप्रसह्य ॥ ६० ॥**
**दिवाससूर्यानुगृहीतदृष्टिःपश्येत्तुरूपाणिकफाल्पभावात् ॥**

अर्थ--जो दोष ( कफ ) तीनो पटलोमे रहे वह नक्तांध्य ( रतोंध ) उत्पन्न करे वह कफ दिवस ( दिन ) मे सूर्यके तेजसे कम होनेसे दीखे ॥

### धूमदर्शीके लक्षण।

**शोकज्वरायासशिरोभितापैरभ्याहतायस्यनरस्यदृष्टिः ॥ ६१ ॥**
**धूम्रांस्तथापश्यतिसर्वभावान्सधूमदर्शीतिनरःप्रदिष्टः ॥**

अर्थ--शोक, ज्वर, परिश्रम और मस्तकताप, इन कारणोसे पित्त कुपित होकर जिसकी दृष्टिमे विकार होवे, उससे उस मनुष्यको सर्व पदार्थ धूआके रगके दीखे. इस रोगको धूमदर्शी वा शोकविदग्धदृष्टि कहते हैं,इसमे दिनको धूआके रगके पदार्थ दीखे इसका कारण यह है कि रात्रिमे पित्तका तेज घटनेसे निर्मल दीखे ॥

### ह्रस्वदृष्टिके लक्षण।

**योह्रस्वजाड्योदिवसेषुकृच्छ्राद्ध्रस्वानिरूपाणिचतेनपश्येत् ॥६२॥**

अर्थ--जो ह्रस्वजाड्य पुरुष होता है उसको दिनमे बडे पदार्थ छोटे दीखे, इसका कारण यह है कि उस समय दृष्टिके मध्यगत दोष होता है, यह रोग भी पित्तजन्य है ॥

### नकुलांध्यके लक्षण।

**विद्योततेयस्यनरस्यदृष्टिर्दोषाभिपन्नानकुलस्ययद्वत् ॥**
**चित्राणिरूपाणिदिवासपश्येत्सवैविकारोनकुलांध्यसंज्ञः ॥ ६३ ॥**

अर्थ–जिस पुरुषकी दृष्टि दोषोसे व्याप्त होकर नोलेकी दृष्टिके समान चमके, वह पुरुष दिनमें अनेक प्रकारके रूप देखे इस विकारको नकुलान्ध्य कहते है ॥

गम्भीरदृष्टिके लक्षण ।

दृष्टिर्विरूपाश्वसनोपसृष्टासंकोचमभ्यंतरतश्वयाति ॥
रुजावगाढंचतमक्षिरोगंगम्भीरकेतिप्रवदंतितज्ज्ञाः ॥ ६४ ॥

अर्थ–जो दृष्टि वायुसे विकृत होकर भीतरको संकुचित होवे, तथा उसमे पीडा होवे, उसको गंभीरदृष्टि कहते है ॥

आगंतुज लिंगनाशके लक्षण ।

बाह्यौपुनर्द्वाविहसंप्रदिष्टौनिमित्ततश्चाप्यनिमित्ततश्च ॥
निमित्ततस्तत्रशिरोभितापाज्ज्ञेयस्त्वभिष्यंदनिदर्शनःसः॥ ६५ ॥

अर्थ–अभिघातज लिंगनाश दो प्रकारका है, एक निमित्तजन्य, दूसरा अनिमित्तजन्य, तिनमे शिरोभितापकरके ( विषवृक्षके फलसे मिला पवनका मस्तकमे स्पर्श होनेसे ) होय उसको निमित्त जन्य कहते है इसमे रक्ताभिष्यदके लक्षण होते है ॥

अनिमित्तके लक्षण ।

सुरर्षिगंधर्वमहोरगाणांसन्दर्शनेनापिचभास्करस्य ॥
हन्येतदृष्टिर्मनुजस्ययस्यसलिंगनाशस्त्वनिमित्तसंज्ञः ॥ ६६ ॥
तत्राक्षिविस्पष्टमिवावभातिवैदूर्यवर्णाविमलाचदृष्टिः ॥

अर्थ–देव, ऋषि, गधर्व, महासर्प, और सूर्य, इनके सन्मुख दृष्टिको लगाकर ( टकटकी लगाकर ) देखनेसे जिस मनुष्यकी दृष्टि नष्ट होय, उसको अनिमित्तलिंगनाश कहते है, इस रोगमे नेत्र स्वच्छ दीखते है और दृष्टि वैदूर्य्यमणिके समान स्वच्छ कहिये श्याम वर्ण होय, अब कहते हैं कि देवादिक भोतिक इंद्रियोको नही बिगाडे, परन्तु उनकी शक्तिका नाश करते है, सो चरकमें लिखा है ॥

अर्मरोग ( ५ ) प्रकारका है ।

प्रस्तार्यर्मतनुस्तीर्णंश्यावंरक्तनिभंसिते ॥ सश्वेतंमृदुशुक्लार्मं शुक्लेतद्वर्धतेचिरात् ॥ ६७ ॥ पद्माभंमृदुरक्तार्मयन्मांसंची-

१ देवादयोह्यौ हि महाप्रभावा न दूषयतः पुरुषस्य देहम् । विशंत्यदृश्यास्तरसा यथैव छाया तयोर्दर्पणसूर्यकांतौ ॥

**यतेसिते ॥ पृथुमृद्वाधिमांसार्मबहलंचयकृन्निभम् ॥ ६८ ॥**
**स्थिरंप्रस्तारिमांसाढ्यंशुष्कंस्नाय्वर्मपंचमम् ॥**

अर्थ—नेत्रोंके सफेद भागमें पतला, विस्तीर्ण, श्यामवर्ण, तथा लाल, ऐसा जो मास बढे उसको प्रस्तारि अर्मरोग कहते हैं।

शुक्लभागमे सफेद मृदुमांस वहुत दिनमे बढे, उसको शुक्लार्म कहते हैं।

कमलके समान लाल तथा मृदु जो बढे उसको रक्तार्म कहते हैं।

जो मांस विस्तीर्ण, स्थूल, कलेजाके समान ( कुछ काला लाल ) दीखे उसको अधिमांसार्म कहते हैं।

जो कठिन तथा फैलनेवाले स्त्रावरहित मास बढे, उसको स्नाय्वर्म कहते हैं। विदेहने कहा भी है॥

शुक्तिरोगके लक्षण।

**श्यावाःस्युःपिशितनिभास्तुबिंदवोये**
**शुक्त्याभाःसितिनियताःसशुक्तिसंज्ञः ॥**

अर्थ—नेत्रके सफेद भागमें श्यामवर्ण मांसतुल्य सीपीके समान जो बिंदु होंय, उसको शुक्ति कहते हैं॥

अर्जुनके लक्षण।

**एकोयःशशरुधिरोपमश्चबिन्दुःशुक्लस्थोभवतितदर्जुनंवदंति ॥६९॥**

अर्थ—शुक्लभागमें शश ( खरगोश ) के रुधिरके समान जो बिन्दु ( बूद ) नेत्रमे उत्पन्न होय उसको अर्जुन कहते है॥

पिष्टकके लक्षण।

**श्लेष्ममारुतकोपेनशुक्लेमांसंसमुन्नतम् ॥**
**पिष्टवत्पिष्टकंविद्धिमलाक्तादर्शसन्निभम् ॥ ७० ॥**

अर्थ—कफ वायुके कोपसे शुक्लभागमे पिष्ट ( पिसासा ) जो मांस वढे उसको पिष्टक कहते हैं, वह मलसे मिले आदर्श ( ऐनक ) के समान होता है॥

जालके लक्षण।

**जालाभःकठिनशिरोमहान्सरक्तःसंतानःस्मृतइहजालसंज्ञितस्तु ॥**

अर्थ—नेत्रके सफेद भागमे शिरा ( नस ) का समूह जालीके समान होय और वह कठिन तथा रुधिरके समान लाल होवे, उसको जाल कहते हैं॥

---

१ प्रस्तारिणोर्मण.स्रावं निरुणद्धि यदानिलः। विनास्रावं विशुष्य यत्स्नाय्वर्मेतीति तद्विदुः॥

शिराजपिटिकाके लक्षण।

शुक्लस्थाःसितपिडिकाःशिरावृताया-
स्ताब्रूयादसितसमीपजाःशिराजाः ॥ ७१ ॥

अर्थ–नेत्रके शुक्लभागमे शिरा ( नसो ) से व्याप्त ऐसी सफेद फुसी होय, उसको शिराजपिडिका कहते हैं वह कृष्णभागके समीप होती है ॥

बलासके लक्षण।

कांस्याभोऽमृदुरथवारिबिंदुकल्पोविज्ञेयोनयनसितेबलाससंज्ञः ॥७२॥

इतिशुक्लजारोगाः।

अर्थ–नेत्रके शुक्लभागमें कासीके समान कठिन अथवा पानीकी बूंदके समान ऊची जो गांठ होय, उसको बलास कहते हैं ॥

इति शुक्लजरोग।

नेत्रकी संधिके रोग।

पूयालसके लक्षण।

पक्वःशोथःसंधिजोयःसतोदःस्रावेत्पूयंपूतिपूयालसाख्यः ॥

अर्थ–नेत्रकी सधिमे सूजन होवे और पककर फूटजाय, उसमेंसे दुर्गंधि और राध बहे, तथा तोद ( सुई छेदनेकीसी पीडा ) होय, उसको पूयालस कहते हैं ॥

उपनाहके लक्षण।

ग्रंथिर्नाल्पोदृष्टिसंधावपाकीकण्डूप्रायोनीरुजस्तूपनाहः ॥ ७३ ॥

अर्थ–नेत्रकी सधिमे बडी गांठ होवे, वह थोडी पके, उसमें खुजली बहुत हो, दूखे नही, उसको उपनाह ऐसे कहते हैं ॥

स्राव अथवा नेत्रनाडीके लक्षण।

गत्वासंधीनश्रुमार्गेणदोषाःकुर्युःस्रावाँल्लक्षणैःस्वैरुपेतान् ॥
तंहिस्रावंनेत्रनाडीतिचैकेतस्यालिंगंकीर्तयिष्येचतुर्धा ॥ ७४ ॥

अर्थ–वातादि दोष अश्रुमार्गसे संधियोंमे प्राप्त होकर स्वकीयलक्षणयुक्त स्राव उत्पन्न करे, उस स्रावको कोई नेत्रनाडी कहते है–यह रोग चार प्रकारका है उसके लक्षण कहते हैं, * शंका–*

---

१ मरुता पीडितः श्लेष्मा शुक्लभागे व्यवस्थितः ॥ जलबिंदुरिवोच्छूनो मृदुःसकफसभव. ॥ बलासग्रथितं नाम तं शोफ वृत्तमादिशेत् ॥

क्यौंजी वातका स्राव क्यो नही कहा ? * उत्तर—* वातमे स्राव नहीं होता है इसीसे विदेहने[1] चारही प्रकारके स्राव कहे हैं ॥

**पाकःसंधौसंस्रवेद्यस्तुपूयंपूयास्रावोऽसौगदः सर्वजस्तु ॥ श्वेतं सान्द्रंपिच्छिलंसंस्रवेद्धिश्लेष्मास्रावोऽसौविकारोमतस्तु ॥ ७५ ॥ रक्तास्रावःशोणितार्थोविकारःस्रावेदुष्णंतत्ररक्तंप्रभूतम् ॥ हरिद्राभंपीतमुष्णंजलंवापित्तस्रावःसंस्रवेत्संधिमध्यात् ॥ ७६ ॥**

अर्थ—पूयास्राव नेत्रकी संधिमे सूजन होकर पके, तथा उसमेसे राध वहे, यह रोग सन्निपातात्मक है ॥

श्लेष्मास्राव—जिसमेसे सफेद, गाढी और चिकनी राध वहे।

रक्तास्राव—जिस विकारमे विशेष गरम रुधिर वहे, उसको रक्तास्राव कहते है।

पित्तास्राव—जिसकी संधिसे हल्दीके समान पीला गरम जल वहे उसको पित्तास्राव कहते हैं ॥

## पर्वणी व अलजीके लक्षण।

**ताम्रातन्वीदाहपाकोपपन्नाज्ञेयावैद्यैःपर्वणीवृत्तशोथा ॥ जातासन्धौशुक्लकृष्णेऽलजीस्यात्तस्मिन्नेवख्यापितापूर्वलिंगैः ॥ ७७ ॥**

अर्थ—नेत्रकी सफेद काली संधियोमे तावेके समान छोटी गोल जो फुन्सी होवे और वह फुन्सी दाह होकर पके उसको पर्वणी कहते हैं ॥

ओर उसी ठिकाने पूर्वरूपसंयुक्त वडी फुन्सी उठे, उसको अलजी कहते हैं ॥

पर्वणी और अलजीमे इतनाही अतर है कि, अलजी वडी फुन्सी होती है और पर्वणी छोटी फुन्सी होती है यह विदेहका[2] मत है ॥

## कृमिग्रंथिके लक्षण।

**कृमिग्रंथिर्वर्त्मनःपक्ष्मणश्चकण्डूंकुर्युःकृमयः संधिजाताः ॥ नानारूपावर्त्मशुक्लांतसंधौचरंत्यंतर्नयनंदूषयंतः ॥ ७८ ॥**

अर्थ—जिसके नेत्रके शुक्लभागकी संधिमे और पलकोकी संधिमे उत्पन्न हुई अनेक प्रकारकी कृमि खुजली और गांठ उत्पन्न करे ओर नेत्रके पलक और सफेदी भागकी संधिमे प्राप्त होकर

---

१ "निरस्नात्क्षाद्रक्तात्विनात्स्रावोऽक्षिसंधिषु ॥ इति।

२ "पर्वणीपिडिका तत्र जायते त्वंकुरोपमा। शुक्लकृष्णातसंधौ च जनयेद्रोस्तनाकृतिम्। पिडिकामलजीं [illegible] हि तारागुंहन्नाम्" इति।

नेत्रके भीतरके भागको दूपित करे, भीतर फिरे उसको कृमिग्रथि कहते हैं यह सन्निपातात्मक कहते हैं सो विदेहका भी मत है ॥

वर्त्मरोग ( मर्मस्थानके )

उत्संगपिडिकाके लक्षण।

**अभ्यन्तरमुखीताम्राबाह्यतोवर्त्मतश्चया ॥**

**सोत्संगोत्संगपिडिकासर्वजास्थूलकण्डुरा ॥ ७९ ॥**

अर्थ–नेत्रके ढकनेवाली वाफणी अर्थात् कोएमे फुन्सी होय, और उसका मुख भीतर होय, वह लाल वडी तथा खुजलीसंयुक्त होय, उसको उत्संगपिडिका कहते हैं वह सन्निपातसे होती है। गदाधर और विदेहके मतसे पलकोके कोएके वाहरभी यह रोग होता है, 'च' इस श्लोकमे लिखा है उसका यह प्रयोजन है कि, इस जगहभी मुर्गीके अंडेकासा रसस्राव जानना ॥

कुंभिकाके लक्षण।

**वर्त्मांतेपिडिकाध्माताभिद्यंतेचस्रवंतिच ॥**

**कुंभीकबीजसदृशाःकुंभीकाःसन्निपातजाः ॥ ८० ॥**

अर्थ–पलकोके समीप कुंभिकाके बीजके समान अर्थात् जमालगोटेके समान फुन्सी होय वह पककर फूटजाय, और फूटकर वहे, उसको कुंभिका कहते हे। कोई आचार्य कहते हैं कि, कच्छदेशमेके दाड़िम ( अनार ) के बीजके आकार कुंभिका होती है ॥

पोथकीलक्षण।

**स्राविण्यःकण्डुरागुर्व्योरक्तसर्षपसन्निभाः ॥**

**रुजावत्यश्चपिडिकाःपोथक्यइतिकीर्त्तिताः ॥ ८१ ॥**

अर्थ–जिसके कोएमे लाल सरसोके समान रुधिरस्राव हो, खुजलीसंयुक्त भारी तथा पीडा सयुक्त फुन्सी होय, उसको पोथकी कहते है ॥

वर्त्मशर्कराके लक्षण।

**पिडिकायाखरास्थूलासूक्ष्माभिरभिसंवृता ॥**

**वर्त्मस्थाशर्करानामसरोगोवर्त्मदूषकः ॥ ८२ ॥**

अर्थ–जिसके कोएमे जो पिडिका कठिन और वडी होकर सर्वत्र छोटी २ फुन्सियोसे व्याप्त होय, उसको वर्त्मशर्करा कहते है इससे कोए विगड जाते है ॥

---

१ ततः पूयमसृक्कृष्णाः पतंति कृमयस्तथा। लक्षणैर्विविधैर्युक्ताः सन्निपातसमुत्थिताः ॥ कृमिग्रथि तु त विद्याद्देहिना नेत्रदूषणम् ॥ इति।

२ वर्त्मोत्संगादधो जातः सन्निपातात्प्रजायते ॥ अभ्यन्तरमुखी स्थूला बाह्यतश्चापि दृश्यते ॥ पिडिका पिडिकाभिश्च चितान्याभिः समंततः ॥ उत्संगपिडिकानाम कठिना मदवेदना ॥ इति।

अर्शोवर्त्मके लक्षण।

उर्वारुबीजप्रतिमाःपिडिकामंदवेदनाः ॥
श्लक्ष्णाःखराश्चवर्त्मस्थास्तदर्शोवर्त्मकीर्त्यते ॥ ८३ ॥

अर्थ–ककडीके बीजके बराबर मद पीडा पृथक् २ कठिन ऐसी फुन्सी कोएमें उठे, उसको अर्शोवर्त्म कहते हैं। निमि ( विदेह ) के मतसे यह सन्निपातात्मक है ॥

शुष्कार्शके लक्षण।

दीर्घांकुरःखरःस्तब्धोदारुणोऽभ्यन्तरोद्भवः ॥
व्याधिरेषोऽतिविख्यातःशुष्कार्शोनामनामतः ॥ ८४ ॥

अर्थ–नेत्रके कोएमे लंबे खरदरे कठिन दुःखदायक ऐसे जो मासांकुर होयँ उस व्याधिको शुष्कार्श कहते हैं यहभी सन्निपातज है ॥

अंजनाके लक्षण।

दाहतोदवतीताम्रापिडिकावर्त्मसंभवा ॥
मृद्वीमंदरुजासूक्ष्माज्ञेयासांऽजननामिका ॥ ८५ ॥

अर्थ–दाह तोद ( चोटनी ) संयुक्त, लाल, नरम, छोटी, मंद पीडा करनेवाली, ऐसी फुन्सी नेत्रके कोएमें होय, उसको अजना कहते हैं, यहभी सन्निपातज है ॥

बहलवर्त्मके लक्षण।

वर्त्मोपचीयतेयस्यपिडिकाभिःसमंततः ॥
सवर्णाभिःस्थिराभिश्चविद्याद्बहलवर्त्मतत् ॥ ८६ ॥

अर्थ–जिसके नेत्रका कोया त्वचाके समान वर्ण तथा कठिन फुन्सियोंसे व्याप्त होय उसको बहलवर्त्म रोग कहते है यह भी सन्निपातज है ॥

वर्त्मबंधके लक्षण।

कण्डूमताऽल्पतोदेनवर्त्मशोथेनयोनरः ॥
नसंप्रच्छादयेदक्षियत्रासौवर्त्मबंधकः ॥ ८७ ॥

अर्थ–जिसके नेत्रके कोयोमे नेत्रसे बराबर सूजन आय जावे, उससे उस मनुष्यको कुछ नहीं दीखे इस रोगको वर्त्मबंध कहते है इस सूजनमे खुजली चले तथा तोद ( चोटनी ) होय यह रोग त्रिदोपज है ॥

---

१ नीरुजा कठिना वर्त्मपक्ष्मान्तर्बाह्यतोपि वा। पिडिका सन्निपातेन तदर्शोवर्त्म कीर्त्यते ॥ इति।

क्लिष्टवर्त्मके लक्षण।

मृद्वल्पवेदनंताम्रंयद्वर्त्मसममेवच ॥
अकस्माच्चभवेद्रक्तंक्लिष्टवर्त्मेतितद्विदुः ॥ ८८ ॥

अर्थ-नेत्रके नीचे ऊपरके दोनो कोए नरम अल्प पीडा तामेके वर्ण होकर अकस्मात् लाल होजायँ, तो इस रोगको क्लिष्टवर्त्मरोग कहते हैं यह रोग कफरक्तज है, यही मत विदेहका है।

वर्त्मकर्दमके लक्षण।

क्लिष्टंपुनः पित्तयुतंशोणितंविदहेद्यदा ॥
ततःक्लिन्नत्वमापन्नमुच्यतेवर्त्मकर्दमः ॥ ८९ ॥

अर्थ-क्लिष्टवर्त्म फिर पित्तयुक्त रुधिरको दहन करे, तव वह दही दूध माखनके समान गीला होजाय, अतएव इस व्याधिको वर्त्मकर्दम कहते हैं, यह पित्ताधिक सान्निपातात्मक है ॥

श्याववर्त्मके लक्षण।

वर्त्मयद्बाह्यतोऽतश्चश्यावंशूनंसवेदनम् ॥
तदाहुःश्याववर्त्मेतिवर्त्मरोगविशारदाः ॥ ९० ॥

अर्थ-जिसके नेत्रके कोएके वाहर अथवा भीतर काली सूजन होय, तथा पीडा होय, उसको वर्त्मरोगके जाननेवाले श्याववर्त्म कहते हैं, यह वाताधिक दृष्टिदोषजन्य है विदेहने लिखा भी है ॥

प्रक्लिन्नवर्त्मके लक्षण।

अरुजंबाह्यतःशूनंवर्त्मयस्यनरस्यहि ॥
प्रक्लिन्नवर्त्मतद्विद्यात्क्लिन्नमत्यर्थमंततः ॥ ९१ ॥

अर्थ-जो कोये अल्पपीडा तथा वाहरसे सूजा हूआ अत्यत कीचडसे व्याप्त हो उसको प्रक्लिन्न वर्त्म कहते हैं यह कफजविकार हे ॥

अक्लिन्नवर्त्मके लक्षण।

यस्यधौतान्यधौतानिसंबध्यंतेपुनः पुनः ॥
वर्त्मान्यपरिपक्वानिविद्यादक्लिन्नवर्त्मतत् ॥ ९२ ॥

अर्थ-जिसके नेत्रके पलक धोनेसे अथवा नही धोनेसे वारंवार चिपक जावें, कोए पककर, राधसे नहीं चिकटे तो इस रोगको अक्लिन्नवर्त्म कहते हैं, इस रोगको विदेह त्रिदोषज कहता है ॥

---

१ श्लेष्मा दुष्टेन रक्तेन क्लिष्टमासमतः समम् ॥ बंधुजीवनिभं वर्त्म क्लिष्टमाख्यं तदुच्यते ॥
२ दुष्टं श्लेष्मानिलात्पित्त वर्त्मनोऽश्रीयते यदा ॥ अग्निदग्धनिभं श्यावं श्याववर्त्मेति तद्विदुः ॥ इति।

वातहतवर्त्मके लक्षण ।

**विमुक्तसंधिनिश्चेष्टंवर्त्मयस्यनमील्यते ॥**
**एतद्वातहतंवर्त्मजानीयादक्षिचिन्तकः ॥ ९३ ॥**

अर्थ–जिसके नेत्रके पलक पृथक् पृथक् होयँ, तथा जिसके पलक मिचे और खुले नहीं ऐसे नेत्रके कोए मिले नही उसको वातहतवर्त्म शालाक्य सिद्धांतवाला कहता है ॥

अर्बुदके लक्षण ।

**वर्त्मान्तरस्थंविषमंग्रन्थिभूतमवेदनम् ॥**
**आचक्षतेऽर्बुदमितिसरक्तमविलंबितम् ॥ ९४ ॥**

अर्थ–नेत्रके कोएके भीतर गोल मदवेदनायुक्त कुछ लाल जल्दी बढनेवाली ऐसी जो गाठ होय उसको अर्बुद कहते है यह भी सन्निपातज है ॥

निमेषके लक्षण ।

**निमेषिणीःशिरावायुःप्रविष्टोवर्त्मसंश्रयः ॥**
**प्रचालयतिवर्त्मानिनिमेषंनामतंविदुः ॥ ९५ ॥**

अर्थ–वर्त्माश्रित ( कोएमे स्थित ) जो वायु, सो निमेष ( पलकके उघाडने मूदनेवाली नस ) मे प्रवेश होकर वारवार पलकोको चलायमान करे, उसको निमेष ( नेत्रका मिचकाना ) कहते है, विदेहनेभी लिखा है यह रोग भी सन्निपातज है ॥

शोणितार्शके लक्षण ।

**वर्त्मस्थोयोविवर्द्धेतलोहितोमृदुरंकुरः ॥**
**तद्रक्तजंशोणितार्शश्छिन्नंछिन्नंप्रवर्द्धते ॥ ९६ ॥**

अर्थ–रुधिरके संबधसे नेत्रके कोएके भीतरभागमे लाल तथा नरम अकुर बढे, उसको शोणितार्श कहते हैं, इसको जैसे जैसे काटे तैसे तैसे बढता है, इस रक्तज व्याधिको विदेह आचार्य असाध्य कहते है ॥

लगणके लक्षण ।

**अपाकीकठिनःस्थूलोग्रंथिर्वर्त्मभवोऽरुजः ॥**
**सकण्डूःपिच्छिलःकोलसंस्थानो लगणस्तुसः ॥ ९७ ॥**

---

१ निमेषिणीःशिरावायुः प्रविश्य व्यवतिष्ठते । अत्यर्थ चलते वर्त्म निमेषः स न सिध्यति ॥

२ वायुःशोणितमादाय शिराणा मुखे स्थितः । जनयत्यंकुरं ताम्र वर्त्मनिच्छिन्नरोहणम् ॥ तच्छोणितार्शोऽसाध्य स्याद्रक्तात्साव्यथ रक्तजम् ॥

अर्थ-नेत्रके कोएमें बेरके समान बडी कठिन खुजलीसंयुक्त चिकनी गाठ होय उसको लगण कहते हैं । यह रोग कफजन्य है, इसने पीडा और पकना नहीं होय ॥

विसवर्त्मके लक्षण ।

त्रयोदोषाबहिःशोथंकुर्युश्छिद्राणिवर्त्मनोः ॥
प्रस्रवत्यंतरुदकंबिसवद्बिसवर्त्मतत् ॥ ९८ ॥

अर्थ-तीनो दोष कुपित होकर नेत्रके कोयोंको सुजाय देवे, तथा उनमे छिद्र होजाय, उन कोयोंमेंसे कमलतंतुके समान भीतरसे पानी झरे, इस रोगको बिसवर्त्म कहते है ॥

कुंचनके लक्षण ।

वाताद्यावर्त्मसंकोचंजनयंतियदामलाः ॥
तदाद्रष्टुंनशक्नोतिकुंचनंनामतद्विदुः ॥ ९९ ॥

अर्थ-वातादिदोष जब कोएके मार्गको संकुचित करे तब मनुष्य नेत्रको उघाडकर नही देखसके, इस रोगको कुचन् कृच्छ्रोन्मीलिन कहते है,यह रोग सुश्रुताचार्यने नही लिखा माधवाचार्यनेही लिखा है ॥

पक्ष्मकोपके लक्षण ।

प्रचालितानिवातेनपक्ष्माण्यक्षिविशंतिहि ॥ घृष्यंत्यक्षिमुहु
स्तानिसंरम्भंजनयंतिच ॥ १०० ॥ असितेसितभागेचमूलकोशा
त्पतंत्यपि ॥ पक्ष्मकोपःसविज्ञेयोव्याधिःपरमदारुणः ॥ १०१ ॥

अर्थ-वादीसे चलायमान कोएके बाल नेत्रमे प्रवेश करे और वह वारवार नेत्रसे रगडे जायँ, इसीसे नेत्रके काले वा सफेद भागमें सूजन होय, वह केश ( बाल ) जडसे टूट जावे, अतएव इस व्याधिको पक्ष्मकोप अथवा उपपक्ष्म कहते है यह बडा दुःखदायक है ॥

पक्ष्मशातके लक्षण ।

वर्त्मपक्ष्माशयगतंपित्तंरोमाणिशातयेत् ॥
कण्डूंदाहंचकुरुतेपक्ष्मशातंतमादिशेत् ॥ १०२ ॥

अर्थ-पलकोंकी जडमें रहनेवाला पित्त कुपित होकर नेत्रोंके बाल जिनको वरुनी अथवा बाफणी कहते है उनका नाश करे, तथा नेत्रोमे खुजली चले, दाह होय उसको पक्ष्मशात कहते हैं इस रोगको भी सुश्रुतने सख्या बढनेके भयसे, नही लिखा, माधवाचार्यने अन्य ग्रन्थोके मतसे लिखा है ॥

इति वर्त्मजनिदानम् ।

नेत्ररोगोंकी संख्या ।

नवसंध्याश्रयास्तेषुवर्त्मजास्त्वेकविंशतिः ॥ शुक्लभागेदशै-
कश्चचत्वारःकृष्णभागजाः ॥ १ ॥ सर्वाश्रयाःसप्तदशदृष्टिजा
द्वादशैवतु ॥ बाह्यजौद्वौसमाख्यातौरोगौपरमदारुणौ ॥ २ ॥
भूयएतान्प्रवक्ष्यामिसंख्यारूपचिकित्सितैः ॥

अर्थ—संधिमें होनेवाले नेत्ररोग ९ प्रकारके हैं और कोएमें होनेवाले रोग २१ हैं और नेत्रके सफेद भागमे होनेवाले रोग ११ है और काले भागके ४ हैं और सर्वसर अर्थात् सर्व नेत्रमें होनेवाले रोग १७ हैं, और दृष्टिके रोग १२ हैं और नेत्रके बाहरके रोग २ हैं ॥

इति श्रीपण्डितदत्तराममाथुरप्रणीतमाधवार्थदीपिकाया माथुरीभाषाटीकायां नेत्ररोगनिदानं समाप्तम् ।

# शिरोरोगनिदानम् ।

शिरोरोगाश्चजायंतेवातपित्तकफैस्त्रिभिः ॥ सन्निपातेनरक्तेन
क्षयेणकृमिभिस्तथा ॥ १ ॥ सूर्यावर्त्तानंतवातार्द्धावभेदकशं-
खकैः ॥ एकादशप्रकारस्य लक्षणं संप्रवक्ष्यते ॥

अर्थ—वात पित्त कफ इनसे ३, सन्निपातसे १, रुधिरसे १, क्षयसे १, कृमिसे १, सूर्यावर्त १, अनन्तवात १, अर्धावभेदक १, और शंखक १, सब मिलकर ११ प्रकारके शिरोरोग ( मस्तकशूल ) होते हैं उनके लक्षण आगे कहेंगे ॥

वातजके लक्षण ।

यस्यानिमित्तंशिरसोरुजश्चभवन्तितीव्रानिशिचातिमात्रम् ॥
बन्धोपतापैःप्रशमश्चयत्रशिरोभितापःससमीरणेन ॥ २ ॥

अर्थ—जिसका मस्तक अकस्मात् दुखे और रात्रिमे विशेष दुखे, बांधनेसे अथवा सेकनेसे शांति हो, उसको वातज शिरोरोग जानना चाहिये ॥

पैत्तिकके लक्षण ।

यस्योष्णमंगारचितंतथैवभवेच्छिरोदह्यतिचाऽक्षिनासम् ॥
शीतेनरात्रौप्रशमंचयातिशिरोभितापःसतुपित्तकोपात् ॥ ३ ॥

अर्थ—जिसका मस्तक अंगारसे तपायेके समान गरम होवे और नेत्रमें तथा नाकमें दाह होय शीतल पदार्थसे रात्रिमें शान्ति होय, उस मस्तकशूलको पित्तकोपका जानना ॥

श्लैष्मिकके लक्षण।

शिरोभवेद्यस्यकफोपदिग्धंगुरुप्रतिस्तब्धमतोहिमंच ॥
शूनाक्षिकूटंवदनंचयस्यशिरोभितापःसकफप्रकोपात् ॥ ४ ॥

अर्थ–जिसका मस्तक भीतरसे कफकरके लिप्त ( लिहसासा ) होवे भारी बँधासा और शीतल होवे, तथा नेत्रके कोये सुजाकर मुखको सुजाय देवे, इस मस्तकरोगको कफके कोपका जानना चाहिये ॥

सान्निपातिकके लक्षण।

शिरोभितापेत्रितयप्रवृत्तेसर्वाणिलिंगानिसमुद्भवन्ति ॥ ५ ॥

अर्थ–त्रिदोषसे उत्पन्न मस्तकरोगमें तीनों दोषोंके सब लक्षण होते हैं ॥

रक्तजके लक्षण।

रक्तात्मकःपित्तसमानलिंगःस्पर्शासहत्वंशिरसोभवेच्च ॥

अर्थ--रक्तजन्य मस्तकरोगमे पित्तकृतमस्तकरोगके सब लक्षण होते हैं, तथा मस्तकका स्पर्श सहा नहींजाय, यह विशेष होता है ॥

क्षयजके लक्षण।

असृग्वसाश्लेष्मसमीरणानांशिरोगतानामिहसंक्षयेण ॥ ६ ॥
क्षवप्रवृत्तिःशिरसोऽभितापःकष्टोभवेदुग्ररुजोऽतिमात्रम् ॥
संस्वेदनच्छर्दनधूमनस्यैरसृग्विमोक्षैश्च विवृद्धिमेति ॥ ७ ॥

अर्थ–मस्तकके रुधिर वसा कफ और वायु इनके क्षय होनेसे अत्यत भयकर मस्तकशूल होता है, छींक बहुत आवें मस्तक गरम होवे, कष्ट होय अत्यन्त कठिन ( असह्य ) पीडा होय तथा उसमें स्वेदन, वमन, धूमपान, नस्य और रुधिर निकलना ये उपद्रव करनेसे यह मस्तकशूल वृद्धिको प्राप्त होता है, इसको क्षयज मस्तकशूल कहते है ॥

कृमिजके लक्षण।

निस्तुद्यतेयस्यशिरोऽतिमात्रंसंभक्ष्यमाणंस्फुरतीवचांतः ॥
घ्राणाच्चगच्छेद्रुधिरंसपूयंशिरोभितापःकृमिभिःसघोरः ॥ ८ ॥

अर्थ--जिसके मस्तकमें सुईके चुभनेके समान पीडा होवे, तथा कृमि मस्तकको खारहीहों तथा मस्तकके भीतरमें फडकता हुआ मालूम हो तथा नाकमे रुधिरराध और कीडा पडें यह कृमिजरोग बडा भयकर है ॥

सूर्यावर्त्तके लक्षण ।

सूर्योदयं याप्रतिमन्दमन्दमक्षिभ्रुवंरुक्समुपैतिगाढा ॥
विवर्द्धतेचांशुमतासहैवसूर्यापवृत्तौ विनिवर्ततेच ॥ ९ ॥
शीतेनशांतिंलभते कदाचिदुष्णेनजंतुःसुखमाप्नुयाद्वा ॥
सर्वात्मकंकष्टतमंविकारंसर्यापवर्ततमुदाहरन्ति ॥ १० ॥

अर्थ–सूर्यके उदय होनेसे धीरे धीरे मस्तक दुखनेका आरंभ होय और जैसे जैसे सूर्य बढे तैसे तैसे वह शूल नेत्र और भ्रुकुटी ( भौह ) इनमें दो प्रहर दिन चढे तक बढता जाय और सूर्यके साथ बढकर फिर जैसे जैसे सूर्य अस्त होय तैसे तैसे पीडा मन्द होती जाय, शीतल और गरम उपचार करनेसे मनुष्यको सुख होय, इस सान्निपातिके विकारको सूर्यावर्त्त कहते हैं ॥

अनंतवातके लक्षण ।

दोषास्तुदुष्टास्त्रयएवमन्यांसंपीड्यगाढंसरुजांसुतीव्राम् ॥
कुर्वंतिसाक्षिभ्रुविशंखदेशेस्थितिंकरोत्याशुविशेषतस्तु ॥ ११ ॥
गंडस्यपार्श्वेचकरोतिकंपंहनुग्रहंलोचनजांश्चरोगान् ॥
अनन्तवाततमुदाहरन्तिदोषत्रयोत्थंशिरसोविकारम् ॥ १२ ॥

अर्थ–तीनो दोष ( वात पित्त कफ ) दुष्ट होकर मन्यानाडीको पीडित कर नेत्र, भौह, कनपटी, इनमें घोर पीडा करे तथा गंडस्थलके समीपमें कंप होय, ठोडी जकड जाय, नेत्ररोग होय, इस त्रिदोषजन्य मस्तकरोगको अनंतवात कहते हैं. सुश्रुतने अनंतवातरोगको छोडकर मस्तरोग १० ही कहे है ॥

अर्धावभेदक ( आधासीसी ) के लक्षण ।

रूक्षाशनात्यध्यशनप्राग्वातावश्यमैथुनैः ॥ वेगसंधारणाया-
सव्यायामैःकुपितोऽनिलः ॥ १३ ॥ केवलःसकफोवार्द्धंगृही-
त्वाशिरसोबली ॥ मन्याभ्रूशंखकर्णाक्षिललाटेर्धेतिवेदना-
म् ॥ १४ ॥ शस्त्रारणिनिभांकुर्यात्तीव्रांसोऽर्धावभेदकः ॥ न-
यनंवाथवाश्रोत्रमतिवृद्धोविनाशयेत् ॥ १५ ॥

अर्थ–रूखे अन्नसे, अत्यन्त भोजन, अध्यशन ( भोजनके ऊपर भोजन ), पूर्वदिशाकी पवन सेवन करनेसे, वर्फसे, मैथुनसे, मलमूत्रादिका वेग धारण करनेसे, परिश्रम और दंडकसरत करनेसे इन कारणोसे कुपित भई जो केवल वायु अथवा कफयुक्त वायु सो आधे मस्तकको ग्रहण कर

मन्यानाडी, भृकुटी, कनपटी, कान, नेत्र, ललाट ये सब एक ओरसे आधे दूखे, कुल्हाडासे घात्र करनेकीसी अथवा अरणी ( आंच निकालनेके काष्ठके ) मथनेकीसी पीडा होय, उसको अर्धाव भेदक ( आधासीसी ) कहते हैं. यह रोग जब बहुत बढजाताहै तब एक ओरके कानसे बहरापन होजाता है, अथवा एक ओरकी आंख मारीजाती है जिस ओरको पीडा होय उधर ये उपद्रव होते है। सुश्रुतने इस रोगको त्रिदोषज कहा है ॥

शंखकके लक्षण।

**पित्तरक्तानिलादुष्टाःशंखदेशेविमूर्च्छिताः ॥ तीव्ररुग्दाहरागं हिशोथंकुर्वन्तिदारुणम् ॥ १६ ॥ सशिरोविषवद्वेगीनिरुध्याशुगलंतथा ॥ त्रिरात्राज्जीवितंहन्तिशंखकोनाम्नानामतः ॥ त्र्यहाज्जीवतिभैषज्यंप्रत्याख्यायास्यकारयेत् ॥१७॥**

अर्थ—दुष्ट भए जो पित्त रक्त और वायु ( इस जगह कफको भी दुष्ट हुआ जानना यह सुश्रुतने कहा है ) सो विशेष बढकर नेत्रोमे भयकर सूजन उत्पन्न करे और इसमे घोर पीडा होय, घोर दाह होय तथा नेत्र लाल बहुत हो और यह विषके वेगके समान बढकर गलेमे जाकर गलेको रोकदे, इस शंखकरोगसे रोगीके तीन दिनमे प्राणोका नाश होय, इन तीन दिनमे कुशल वैद्यकी औषधि पहुँचनेसे रोगी बचे, परन्तु प्रथम निश्चय करके चिकित्सा करना ॥

इति शिरोरोगनिदानम्।

---

# प्रदररोगनिदानम्।

**विरुद्धमद्याध्यशनादजीर्णाद्गर्भप्रपातादतिमैथुनाच्च ॥ यानाध्वशोकादतिकर्षणाच्चभाराभिघाताच्छयनाद्दिवाच ॥ तंश्लेष्मपित्तानिलसन्निपातैश्चतुष्प्रकारंप्रदरंवदंति ॥ १ ॥**

अर्थ—विरुद्ध ( क्षीरमत्स्यादि ), मद्य, अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), अजीर्ण, गर्भपात, अतिमैथुन, अतिगमन ( बहुत चलना ), अतिशोक, उपवासादि करके कर्षण अर्थात् रक्तके करनेसे सूखजाना, भारके वहनेसे अर्थात् भारी वस्तु उठाकर चलनेसे, चोटके समान लगनेसे, दिनमे सोनेसे, इन कारणोसे कफ पित्त वायु और सन्निपात इन भेदोसे चार प्रकारका प्रदररोग होता है ॥

---

१ स्यादुत्तमागं रुजतेर्द्धमात्रं सतोदभेदभ्रममोहशूलैः । पक्षाद्दशाहादथवाप्यकस्मात्तस्यादर्द्धभेदंत्रि-तयाद्व्यवस्येत् ॥

प्रदररोगके सामान्यरूप ।

असृग्दरंभवेत्सर्वंसांगमर्दंसवेदनम् ॥ २ ॥

अर्थ—सब प्रदरोमे अगोका टूटना तथा हात पैरोमे पीडा होती है ॥

उपद्रवके लक्षण ।

तस्यातिवृद्धौदौर्बल्यंश्रमोमूर्च्छामदस्तृषा ॥
दाहःप्रलापःपांडुत्वंतंद्रारोगाश्चवातजाः ॥ ३ ॥

अर्थ—जब यह प्रदर वहुत वढजाता है तव दुर्बलता होय, थकजाय, मूर्च्छा आवै, मस्तपन, प्यास, दाह, प्रलाप ( वकना ), देह पीला होजाय, तन्द्रा और वातजरोग ( आक्षेप अपतान कपादिक ) होते हैं ॥

श्लैष्मिकके लक्षण ।

आमंसपिच्छाप्रतिमंसपांडुपुलाकतोयप्रतिमंकफात्तु ॥

अर्थ—कफसे आमरस (कच्चारस) संयुक्त, चिकना, किंचित् पीला, मासके धुले जलके समान स्राव होय, इसको श्वेत प्रदर अथवा सोमरोग कहते हैं ॥

पैत्तिकके लक्षण ।

सपीतनीलासितरक्तमुष्णंपित्तार्त्तियुक्तंभृशवेगिपित्तात् ॥ ४ ॥

अर्थ—किंचित् पीला, नीला, काला, लाल, गरम ऐसा प्रदर वहै, उसमे पित्तसे दाह चिमचिमादि पीडा होय, तथा उसका वेग अत्यन्त होय ॥

वातिकके लक्षण ।

रूक्षारुणंफेनिलमल्पमल्पंवातार्त्तिवातात्पिशितोदकाभम् ॥

अर्थ—वातसे रूक्ष, लाल, झागसे युक्त, मासके और सफेद पानीके समान थोड़ा थोड़ा प्रदर वहे, उसमे वादी ( आक्षेपकादि )की पीडा होती है ॥

त्रिदोषजके लक्षण ।

सक्षौद्रसर्पिर्हरितालवर्णंमज्जाप्रकाशंकुणपंत्रिदोषम् ॥
तच्चाप्यसाध्यंप्रवदंतितज्ज्ञानतत्रकुर्वीतभिषक्चिकित्साम् ॥ ५ ॥

अर्थ—जो प्रदर शहद, घृत, हरिताल इनके रंगके समान, चर्वीके समान तथा मुर्दाकीसी दुर्गंध युक्त होय, उसको त्रिदोषजप्रदर जानना, यह असाध्य है अर्थात् इसकी वैद्य चिकित्सा न करे ॥

विशुद्धार्त्तवके लक्षण ।

स्रासान्निःषिपच्छदाहार्तिपंचरात्रानुबंधिच॥नैवातिबहुलंनाल्प-
आर्तवंशुद्धमादिशेत् ॥ ६ ॥ शशासृक्प्रतिमंयच्चयद्वालाक्षा-
रसोपमम् ॥तदार्तवंप्रशंसन्तियच्चाप्सुनविरज्यते ॥ ७ ॥

इतिप्रदरनिदानम् ।

अर्थ–जो आर्त्तव ( रजोदर्शनका रुधिर ) चिकना नहीं होवे, तथा जिसमे दाह शूलादिक न हों, तथा जिसका अनुबन्ध महीनामें पांच दिवस पर्यन्त होय, तथा बहुत न निकले और थोड़ा भी न होय ( मध्यमप्रमाणका होय ), उसको शुद्धआर्तव जानना चाहिये और जो आर्तव खरगोशके रुधिरके समान होवे अथवा लाखके रंगकासा लाल होवे और जिससे रँगा कपड़ाको जलमे डालनेसे वर्ण नहीं पलटे, उसको शुद्ध आर्त्तव कहते है ॥

इति प्रदररोगनिदान समाप्तम् ।

---

## योनिव्यापत्तिनिदानम् ।

विंशतिर्व्यापदो योनेर्निर्दिष्टा रोगसंग्रहे ॥
मिथ्याचारेणताः स्त्रीणां प्रदुष्टेनार्त्तवेन च ॥ १ ॥
जायंते बीजदोषाच्च दैवाच्च शृणु ताः पृथक् ॥

अर्थ–रोगसंग्रहमे योनिके बीस रोग है वह मिथ्या आहार और मिथ्या विहार करके तथा दुष्ट आर्त्तवसे, बीजदोषसे और दैवकी इच्छासे स्त्रियोके होते हैं, उनके लक्षण पृथक् पृथक् कहता हू सुनो ॥

सफेनिलमुदावर्तारजःकृच्छ्रेणमुंचति ॥ २ ॥ वंध्यांनष्टार्तवां-
विद्याद्विप्लुतांनित्यवेदनाम् ॥ परिप्लुतायांभवतिग्राम्यधर्मे-
रुग्भृशम् ॥ ३ ॥ वातलाकर्कशास्तब्धाशूलनिस्तोदपीडि-
ता ॥ चतसृष्वपिचाद्यासुभवंत्यनिलवेदनाः ॥ ४ ॥

अर्थ–जिस योनिसे झागमिला रुधिर बडे कष्टसे वहे उसको उदावर्त्ता योनि कहते हैं, और जिसका आर्त्तव नष्ट हो उसको वंध्या कहते हैं, जिसके निरन्तर पीडा हो उसको विप्लुता कहतेहैं, जिसके मैथुन करनेमे अत्यन्त पीडा होय उसको परिप्लुताकहते हैं, जो योनि कठोर स्तब्ध होकर

शूलतोदयुक्त होवे उसको वातला कहते है, स्वस्वलक्षणसंयुक्त पित्तला श्लेष्मला योनिभी जाननी चाहिये और पहले जो चार योनि ( उदावर्त्ता, वध्या, विप्लुता, परिप्लुता ) कहीहै इनमे वातकी पीडा हौती है और वातलामे वातकी पीडा विशेप होती है ॥

**सदाहंक्षीयतेरक्तंयस्याःसालोहितक्षया ॥ सवातमुद्गमेद्वीजं वामिनीरजसान्वितम् ॥ ५ ॥ प्रस्रंसिनीस्रंशतेतुक्षोभितादुष्प्रजायिनी ॥ स्थितंस्थितंहन्तिगर्भंपुत्रघ्नीरक्तसंक्षयात् ॥ ६ ॥ अत्यर्थंपित्तलायोनिर्दाहपाकज्वरान्विता ॥ चतसृष्वपिचाद्यासुपित्तलिंगोच्छ्रयोभवेत् ॥ ७ ॥**

अर्थ–जिस योनिसे दाहयुक्त रुधिर वहे उसको लोहितक्षया कहते है, जिसमेंसे रजोयुक्त शुक्र वायु वरावर वहे उसको वामनी कहते है, जो योनि स्थानभ्रष्ट होय उसको प्रस्रंसिनी कहते हैं, जिसमे अग वाहर निकल आवे और यह विमर्दित करनेसे प्रसव योग नही होय है, जिस योनिमे रुधिर क्षय होनेसे गर्भ न रहे उसको पुत्रघ्नी कहते है, जो योनि अत्यन्त दाह पाक ( पकना) और ज्वर इन लक्षणोकरके सयुक्त होय, उसको पित्तला कहते है, इनमे पहली चार ( रक्तक्षया वामनी प्रस्रसिनी और पुत्रघ्नी ) इनमे पित्तके लक्षण अधिक होते है, और पित्तलामे पित्तके विशेप लक्षण होते है और पित्तलमे जो ज्वर, दाह, पाक कहे है सो उपलक्षणमात्र है अर्थात् इसमे नीला पीला सफेद आर्तव वहता है यह जानना सो तंत्रान्तरोमें लिखा है ॥

---

१ व्यापल्लवणकट्वम्लक्षाराद्यैः पित्तजा भवेत् । दाहपाकज्वरोष्णार्तिनीलपीतासितार्त्तवा ॥

## यवनशास्त्रानुसारेण स्त्रीरोगाः ।

रिह्मगर्भाऽऽशयस्तस्य द्वार मुयुल्मिजाजतः ॥ वारिदरतवयाविस्त्वा हेतवः प्रतिवंधकाः ॥ १ ॥
तत्रापि द्विविधः सादे माद्दीति परिकीर्तित. ॥ तत्र योगं प्रतीकारं तत्र वैद्यः समाचरेत् ॥ २ ॥
गर्भे रिह्मकोष्ठस्था सौदी संगमवर्तिनी ॥ गिरजत्सौदत्तद्हेज हिर्कत् चापि भृशंभवेत् ॥ ३ ॥ संभवैरि वकत्देर आमदन् हैज एव च ॥ दाहामविश्च शैत्यत्व लिगानिर्देश इत्यसौ ॥ ४ ॥ यकसत्सभवेन्ष्मिन्व रागे शोपण रजः ॥ सूक्ष्म प्रवर्त्तते शीतं परं सौदाप्रकोपजम् ॥ ५ ॥ रतूवत् प्रभवेत्त्वस्मिन्मैलानरिह्मुद्भवेत् ॥ द्दद्रारहेजनामेयगर्भस्थितिविघातका ॥ ६ ॥ कदाचिद्दैवयोगेन सम्भवेद्गर्भलक्षणम् ॥ मासत्र्योत्तरं पातो रतुवत्सगतो ध्रुवम् ॥ ७ ॥ मनीते नाशयेन्नैव विशेषितिष्येन संयुता ॥ सुरतावसरे तत्र वेदना विक्रम्भवेत् ॥ ८ ॥ सभोगानन्तरं नारी वेगादुत्तिष्ठते द्रुतम् ॥ रिह्ममुखान्मनीयातो वहिरेवम्भवेत्पुनः ॥९॥ अकरत् वन्धत्वमाख्यात मिपुन. स्याद्रिपत्त्वैरः ॥ परीक्षणीयं सद्धीन्या प्रतिकाय यथायथम् ॥ १० ॥ म नीदंर्जक्षेदप्सुभिन्नभिन्न च सतेत् ॥ दूपित तद्विजानीयात् तहन शीनन दोपल ॥ ११ ॥ रिह्मद्दुष्मम यो दोर. मदगान्वा द्दाकजन् ॥ औपधीकीचवदनी द्विविधा विदधान्यवम् ॥ १२ ॥ कस्याश्चिदगनाया स्तु स्नावे संकट भवेत् ॥ अष्टमान्मासतस्तस्यै क्षीरं पातु दिशेत्रिपक् ॥ १३ ॥ परिपाकाऽनुरूपं तद्रज कोद्रेकशून च ॥ तद्विकुल्यारिह्मं दर्दं नवदुष्णेन वारिणा ॥ १४ ॥ जरायुसुग्नवपेन मृतिर्भ्रूणस्य गंदरे ॥

अत्यानन्दानसन्तोषंग्राम्यधर्मेणगच्छति ॥ कर्णिन्यांकर्णि-
कायोनौश्लेष्मासृग्भ्यांप्रजायते ॥ ८ ॥ मैथुनाचरणात्पूर्वंपुरु-
षादतिरिच्यते ॥ बहुशश्चातिचरणात्तयोर्बीजंनविंदति ॥ ९ ॥
श्लेष्मलापिच्छिलायोनिः कण्डूयुक्ताऽतिशीतला ॥ चतसृष्व-
पिचाद्यासुश्लेष्मलिंगोच्छ्रयोभवेत् ॥ १० ॥

अर्थ—जो योनि अतिमैथुनसे भी संतोषको प्राप्त न होवे, उसको अत्यानन्दा कहते हैं, जिसमे कफ रुधिरकरके कर्णिका ( कमलके भीतर जो होता है ऐसा मांसकन्द ) होय उसको कर्णिनी कहते हैं, जो योनि थोडे मैथुनसे लिंगमे पहले स्रवे उसको चरण कहते हैं, अर्थात् जबतक पुरुषको सुख नही हो उसके पहलेही द्रवीभूत होकर वीर्यको ग्रहण नही करे, जो योनि बहुवार मैथुन करनेसे पुरुषके पीछे द्रवे ( छूटे ) उसको अतिचरणायोनि कहते है यह कफजनित है ॥

स्राव और पातके लक्षण।

आचतुर्थात्ततोमासात्प्रस्रवद्गर्भविद्रवः ॥
ततःस्थिरशरीरःस्यात्पातःपंचमषष्ठयोः ॥११॥

अर्थ--पाचवे मास पर्य्यन्त गर्भ पतली अवस्थामे होनेसे जो स्रवे उसे स्राव कहते है. और चौथे महीनेसे लेकर पाचवे छठे महीने पर स्राव और शरीर बननेपर निकले उसे पात कहते है ॥

गर्भ अकालमें कैसे गिरे इस विषयमे निदानपूर्वक दृष्टान्त.

गर्भोभिघातविषमाशनपीडनाद्यैःपक्वंद्रुमादिवफलंपततिक्षणेन ॥

अर्थ—अभिघात ( चोट ) विषमाशन ( विषमभोजन ) पीडनादिक इन कारणोसे जैसे पका-हुआ फल वृक्षसे चोटलगनेसे क्षणभरमे गिरजाता है, इसीप्रकार गर्भ अभिघातादि कारणोसे गिरता है ॥

---

जनीनमौत तत्प्रोक्तं शूल्य तुल्यंविघातकृत् ॥ १५ ॥ अचल जडवत्तिष्ठेन्नार्यसाक्षयकारकम् ॥ इर्म्राजस्तस्य कर्त्तव्यो वनिताशर्मणे शनैः ॥ १६ ॥ हिमहस्तपद तस्या.शीतबाधा भवेद्भृशम् ॥ मन्दाग्निर्बलहानिश्चानु त्साहःश्वाससंभवः ॥ १७ ॥ व्यथागर्भशयस्थानु मैथुनाऽतिशयात्तथा ॥ भवेद्रजोविकाराच प्रसूतेः प्रागन न्तरम् ॥ १८॥ दुष्टोपारोदुखारोस्याऽऽमभ्रणपातयत्यध ॥ समग्रविग्रहाभावमकालेपि च कल्पयेत् ॥१९॥ ह्रहतवा सुतममुख्य इस्तिस्काभ्रान्तिरेव च ॥ अवलौ द्वौ हृदाऽऽभावो भवेद्गर्भसमाकृतिः ॥ २० ॥ प्रदरोन्यःसमाख्यातोऽसमयेर्वाकृत्स्वमासतः ॥ हैजजारी शवद्रक्तपीतवर्ण विमिश्रितम् ॥ २१ ॥ अन्तर्मुखो म णोघोरः सतानिरिहमस्मृतः ॥ कर्कीकार कठोरः स्याच्छोथतः सचिरतनात् ॥२२॥ अन्येऽप्यत्रविकारास्य तन्केयाखिन्नकोपजत् ॥ तार्कियत्चापि तवई विधेया विविधाऽगदैः ॥ २३ ॥ इति ॥

१ एते श्लोकाः शुद्धा वा अशुद्धा वेति न शक्ता विवेक्तुं वयम् ॥

प्रसूत होतेसमय मूढगर्भ कैसे होता है उसके लक्षण।

मूढःकरोतिपवनःखलुमूढगर्भंशूलंचयोनिजठरादिषुमूत्रसंगम्॥१२॥

अर्थ–मूढ ( कुंठितगति ) वायु गर्भको मूढ ( टेढा ) करदे, और योनि तथा पेट इनमे शूल तथा मूत्रोत्सग उत्पन्न करे, ( धीरे धीरे पीडासहित मूत निकले ) ॥

मूढगर्भकी आठ प्रकारकी गति।

भुग्नोऽनिलेनविगुणेनततःसगर्भःसंख्यामतीत्यबहुधासमुपैति योनिम् ॥ द्वारंनिरुध्यशिरसाजठरेणकश्चित्कश्चिच्छरीरपरिवर्त्तितकुब्जदेहः ॥ १३ ॥ एकेनकश्चिदपरस्तुभुजद्वयेनतिर्यग्गतोभवतिकश्चिदवाङ्मुखोन्यः॥ पार्श्वप्रवृत्तगतिरेतितथैवकश्चिदित्यष्टधागतिरियंह्यपराचतुर्धा ॥ १४ ॥ संकीलकःप्रतिखुरःपरिघोऽथबीजस्तेषूर्ध्वबाहुचरणैःशिरसाचयोनिम् ॥ संगीचयोभवतिकीलकवत्सकीलोदृश्यैः खुरैः प्रतिखुरःसहिकायसंगी ॥ १५ ॥ गच्छेद्भुजद्वयशिराःसचबीजकाख्योयोनौस्थितःसपरिघः परिघेणतुल्यः ॥ १६ ॥

अर्थ–विगुण वायुसे गर्भ विपरीत ( टेढा ) होकर अनेक प्रकारकरके योनिके द्वारमे आयकर अडजाय है, उसकी आठ प्रकारकी सज्ञा है, सो इस प्रकार है–१ कोई गर्भ मस्तकसे योनिके द्वारको बन्दकर देय हे, २ कोई पेटसे योनिके मार्गको रोक देय, ३ कोई शरीरके विपरीतपनेसे योनिके मार्गको रोक देय, ४ कोई एक हाथसे योनिके मार्गको रोक दे, ५ कोई मूढगर्भ दोनों हाथोको बाहर निकालकर योनिके द्वारको रोक दे, ६ कोई गर्भ तिरछा होकर योनिके मार्गको रोक दे, ७ और कोई गर्भ मन्यानाडीके मुड़नेसे नीचेको मुख होय, वह योनिके द्वारको रोक दे ८ इसी प्रकार कोई पार्श्वभंग ( पसवाडे भंग ) होनसे योनिके द्वारको रोक देय, इस प्रकार मूढगर्भके आठ प्रकारकी गति है । दूसरी चार प्रकारकी गति और होती है उसको कहते हैं–१ संकील, २ प्रतिखुर, ३ परिघ, ४ बीज, इनमे जो गर्भ हाथ पैर ऊपरको कर मस्तकसे योनिको कीलके समान रोक दे उसको संकीलक कहते है, जिस गर्भके हाथ पैर खुरके सदृश बाहर निकल आवें और शरीर योनिके भीतर अटका रहे उसको प्रतिखुर कहते हैं, जो गर्भ दोनो हाथ और मस्तक आग करके अटक जाय उसको बीजक कहते हैं और परिघ ( आगड़ ) के समान योनिमें गर्भ अटक जाय उसको परिघ कहते है ॥

असाध्य मूढगर्भ और गर्भिणीके लक्षण।

**अपविद्धशिरायातुशीतांगीनिरपत्रपा ॥**
**नीलोद्धतशिराहन्तिसागर्भंसचतांतथा ॥ १७ ॥**

अर्थ–जिस गर्भिणीका मस्तक नीचेको हो जाय, देह शीतल होय तथा लज्जा जाती रहे और जिसकी कोखमें हरी नीली शिरा ( नस ) उठ खडी होय तो वह गर्भिणी उस गर्भको और गर्भ उस गर्भिणीको अन्योन्य नाश करते हैं ॥

मृतकगर्भके लक्षण।

**गर्भास्पन्दनमावीनाप्रणाशःश्यावपाण्डुता ॥**
**भवेदुच्छ्वासपूतित्वंशूनतांतर्मृतेशिशौ ॥ १८ ॥**

अर्थ–गर्भ हले चले नही प्रसव वेदना (पीडा) बंद होजाय, देह हरी नीली होय और जिसकी श्वासमे दुर्गंध आवे, और पेटके भीतर सूजन होय, अर्थात् पेटमें आतोके फूलनेसे पेट सूज जाय, ये गर्भमें बालक मरजाय उसके लक्षण है ॥

गर्भमरणहेतु।

**मानसागन्तुभिर्मातुरुपतापैःप्रपीडितः ॥**
**गर्भोव्यापद्यतेकुक्षौव्याधिभिश्चप्रपीडितः ॥ १९ ॥**

अर्थ–माताके मानसिक तथा आगतुक दुःखसे, अथवा रोगोसे गर्भको पीडा हो, वह बालक गर्भाशयमे मरजाय ॥

गर्भिणीके दूसरे असाध्य लक्षण।

**योनिसंवरणसंगःकुक्षौमक्कल्लमेवच ॥**
**हन्युःस्त्रियंमूढगर्भायथोक्ताश्चाप्युपद्रवाः ॥ २० ॥**

अर्थ--वायुके योगसे योनिका सकोच, गर्भका अटकना, और मक्कल शूल ( वातरक्तकी पीडा), तथा आक्षेपक, खॉसी, श्वासादिक उपद्रव होनेसे वह गर्भिणी वचे नहीं, अथवा योनिसंवरण नाम रोग ग्रन्थान्तरोंमे लिखा है सो होय ॥

इति योनिव्यापत्तिनिदानं समातम्।

---

(१) वातलान्यन्नपानानि ग्राम्यधर्मं प्रजागरम् ॥ अत्यर्थं सेवमानाया गर्भिण्या योनिमार्गजः ॥ मातरिश्वा प्रकुपितो योनिद्वारस्य संवृतिम् ॥ कुरुते रुद्धमार्गत्वात्पुनरतर्गतोनिलः ॥ निरुणद्ध्याशयद्वारं पीडयन्गर्भसंस्थितिम् ॥ निरुद्धवदनोच्छ्वासो गर्भश्चाशु विपद्यते ॥ विपन्नगूनसर्वांगः सर्वाण्यवयवानि च ॥ उच्छ्वासरुद्धहृदया नाशयत्याशु गर्भिणीम् ॥ योनिसंवरणं नाम व्याधिमेनं प्रचक्षते ॥ अंतकप्रतिम घोरं नारभेत चिकित्सितम् ॥ इति।

# सूतिकारोगनिदानम् ।



अंगमर्दोज्वरःकंपःपिपासागुरुगात्रता ॥
शोथःशूलातिसारौचसूतिकारोगलक्षणम् ॥ १ ॥

अर्थ–अगोका टूटना, ज्वर हो, कप, प्यास, अगोका भारी होना, सूजन तथा शूल और अतिसार ये सूतिकारोगके लक्षण होते है ॥

प्रसूतिरोगकी उत्पत्ति ।

मिथ्योपचारात्संक्लेशाद्विषमाजीर्णभोजनात् ॥
सूतिकायाश्चयेरोगाजायन्तेदारुणास्तुते ॥ २ ॥

अर्थ–जिस स्त्रीके वालक प्रगट होचुका हो ऐसी स्त्रीके मिथ्या उपचार करनेसे अथवा सक्लेश ( दोपजनक अन्नपानका सेवन अथवा अत्यत कोप ) अथवा विषमाशन अजीर्ण भोजनादिक करनेसे प्रसूतिरोग होता है वह घोर दुःखदायक है ॥

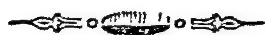
लक्षण ।

ज्वरातिसारशोथाश्चशूलानाहवलक्षयाः ॥ तन्द्रारुचिप्रसेका-
द्याःकफवातामयोद्भवाः ॥ ३ ॥ कृच्छ्रसाध्याहितेरोगाःक्षीणमां
सबलाग्नितः ॥ तेसर्वेसूतिकानाम्नारोगास्तेचाप्युपद्रवाः ॥ ४ ॥

अर्थ–ज्वर, अतिसार, सूजन, शूल, अफरा, और बलक्षय, तथा कफ, वातजन्यरोगसे उत्पन्न होनेवाले तन्द्रा अन्नद्वेप और मुखसे पानीका गिरना इत्यादि विकार, अशक्तता, तथा अग्नि मदहोनेसे कृच्छ्साध्य होता है । इन सव ज्वरादिकोको प्रसूतिरोग कहते हैं । इन सवमे एक रोग प्रधान होता है वाकीके उपद्रवरूप कहलाते हैं ॥

इति सूतिकारोगनिदान समाप्तम् ।

# स्तनरोगनिदानम् ।



सक्षीरौवाप्यदुग्धौवादोपःप्राप्यस्तनौस्त्रियः ॥ प्रदूष्यमांसरुधि-
रेस्तनरोगायकल्पते ॥ १ ॥ पंचानामपितेषांहिरक्तजंविद्रधिं
विना ॥ लक्षणानिसमानानिवाह्यविद्रधिलक्षणैः ॥ २ ॥

अर्थ-वातादि दोष गर्भिणी अथवा प्रसूता स्त्रीके सदुग्ध अथवा अदुग्ध स्तनोंमे प्राप्त हो मास रक्तको दुष्ट करके स्तनरोग उत्पन्न करे. स्तनरोग वात, पित्त, कफ, सन्निपात, आगतुजके भेदसे पांच प्रकारके हैं, इन पाचोंके लक्षण रक्तविद्रधिको त्यागकर बाह्यविद्रधिके समान होते है,सो विद्रधि-निदान जो पीछे कह आए हैं उससे जानलेना चाहिये ॥

इति स्तनरोगनिदानम् ॥

स्तन्य ( दूध ) रोग।

**गुरुभिर्विविधैरन्नैर्दुष्टैर्दोषैः प्रदूषितम् ॥**
**क्षीरंधात्र्याःकुमारस्यनानारोगायकल्पते ॥ ३ ॥**

अर्थ-गुर्वादिक अनेक प्रकारके अन्नसे दोप (वात पित्त कफ) दुष्ट होकर माताके दूधका नाश करे उस दुष्ट दूधसे बालकके नानाप्रकारके रोग होते हैं ॥

वातादिकसे दूषितदूधके लक्षण।

**कषायंसलिलप्लाविस्तन्यंमारुतदूषितम् ॥ कट्वम्ललवणंपीत-राजिमत्पित्तसंज्ञितम् ॥ ४ ॥ कफदुष्टंघनंतोयेनिमज्जतिसु-पिच्छिलम् ॥ द्विलिंगंद्वंद्वजंविद्यात्सर्वलिंगंत्रिदोषजम् ॥ ५ ॥**

अर्थ-जो दुग्ध कसैला अथवा पानीके ऊपर तैरनेवाला होय, उसको वातदूपित जानना तथा जो कडुआ, खट्टा और खारी होकर जिसमे पीली रेखासी प्रतीत होवे उसको पित्तदूपित जानना और जो दूध सघन, चिकनासा होवे और पानीमे डालनेसे नीचेको बैठ जाय, उसको कफसे दुष्ट जानना चाहिये। दो दोपोंके लक्षण जिसमे मिलें उसे द्वंद्वज जाने, और जिसमे तीनों दोषोंके लक्षण मिले उसे त्रिदोपदूपित जाने ॥

शुद्ध दूधके लक्षण।

**अदुष्टंचाम्बुनिक्षिप्तमेकीभवतिपाण्डुरम् ॥**
**मधुरंचाविवर्णंचतत्प्रसन्नंविनिर्दिशेत् ॥ ६ ॥**

अर्थ-जो दूध पानीमे डालनेसे मिलजाय, तथा जो दूध कुछ पीला हो और मीठा होकर वेरगका न हो उसको शुद्ध जानना। अव कहते है कि, स्त्रियोके दूध दीखे नही परतु होता है, क्योंकि बालक पिया करते है इस बातको शुक्र ( वीर्य ) का दृष्टान्त देकर कहते हैं ॥

इति स्तन्यरोगनिदानम्।

**विशस्तेष्वपिगात्रेषुयथाशुक्रंनदृश्यते ॥**
**सर्वदेहाश्रितत्वाच्चशुक्रलक्षणमुच्यते ॥ ७ ॥**

स्तन्यमितिशेषः।

अर्थ- जैसे सर्व पुरुषोंके देहमें व्याप्तभी परन्तु देहके काटनसे भी शुक्र दीखता नहीं है, उसी प्रकार सर्व स्त्रियोंके देहाश्रित जो दुग्ध है सोभी नही दीखता है, परन्तु निःसन्देह है सही ॥

तदेवचेष्टयुवतेर्दर्शनात्स्मरणादपि ॥ शब्दसंश्रवणात्स्पर्शात्संहर्षाच्चप्रवर्त्तते ॥ ८ ॥ सुप्रसन्नंमनस्त्वेवंहर्षणेहेतुरुच्यते ॥ आहाररसयोनित्वादेवंस्तन्यमपिस्त्रियाः ॥ ९ ॥ तदेवाऽपत्यसंस्पर्शाद्दर्शनात्स्मरणादपि ॥ ग्रहणाच्चशरीरस्यशुक्रवत्संप्रवर्त्तते ॥ १० ॥ स्नेहो निरन्तरस्तत्र प्रसवे हेतुरुच्यते ॥

अर्थ-वही शुक्र इष्ट ( प्रिय ) स्त्रीके देखनेसे, उसका स्मरण ( याद ) करनेसे, उसकी वाणी सुननेसे और स्पर्श ( आलिंगन ) से भया जो आनन्द उस आनन्दसे प्राप्त होय है, इस जगह मनका प्रसन्न होना यही आनन्दका कारण है, शुक्रकी उत्पत्ति आहारसे होती है, सोई हेतु स्तन्य ( दूध ) का जानना, अर्थात् दूध भी जब स्त्री अपने बालकका स्पर्श करे, देखे, उसका स्मरण करे तथा बालकको गोदमे लेनेसे दूध शुक्रके सदृश बढता है, इस जगहभी दूधके उतरनेमे स्नेह ( प्यार ) ही कारण है। यह श्लोक संगृहीत है ॥

इति श्रीपंडितदत्तरामप्रणीतमाधवभावार्थदीपिकामाथुरीभाषाटीकासमाप्ता ।

---

# बालरोगनिदानम् ।

त्रिविधःकथितोबालःक्षीरान्नोभयवर्तनः ॥
स्वास्थ्यंताभ्यामदुष्टाभ्यांदुष्टाभ्यांरोगसंभवः ॥ १ ॥

अर्थ--दूध पीनेवाला और अन्न खानेवाला और दूध अन्न दोनो खानेवाला ऐसे तीन प्रकारके बालक होते हैं; यदि वो अन्न और दूध दुष्ट न होय तो बालक निरोग रहे और वे दोनो दुष्ट होयँ तो अनेक रोग प्रगट होते हैं ॥

## वातदूषित दूधके रोग ।

वातदुष्टंशिशुःस्तन्यंपिबन्वातगदातुरः ॥
क्षामस्वरःकृशागः स्याद्बद्धविण्मूत्रमारुतः ॥ २ ॥

अर्थ-जो बालक वातदूषित दूधको पीता है उसके वातके रोग होते है, उसका शब्द क्षीण होजाय, शरीर कृश होय और मल मूत्र तथा अधोवायु नहीं उतरे ॥

पित्तदूषितदूधके लक्षण ।

स्विन्नोभिन्नमलोबालःकामलापित्तरोगवान् ॥
तृष्णालुरुष्णसर्वांगःपित्तदुष्टंपयःपिबन् ॥ ३ ॥

अर्थ—जो बालक पित्तदूषित दूधको पीवे उसके पसीना आवे, मल पतला होजाय, कामलारोग होय तथा पित्तके औरभी रोग होयँ, प्यासका लगना, सर्वांगमे दाह आदि अनेक रोग होयँ ॥

कफदूषितदूधके लक्षण ।

कफदुष्टंपिवन्क्षीरंलालालुःश्लेष्मरोगवान् ॥
निद्रार्दितोजडःशूनःशुक्लाक्षश्छर्दनःशिशुः ॥ ४ ॥

अर्थ—जो बालक कफदूषित दूधको पीवे उसके मुखसे लार बहुत गिरे, तथा कफके रोग होयँ, निद्रा आवे, अंग भारी होय, सूजन होय, वमन होय, खुजली चले ॥

बालकोंकी अंतर्गत पीडा जाननेका उपाय ।

शिशोस्तीव्रामतीव्रांचरोदनाल्लक्षयेद्रुजम् ॥
सयंस्पृशेद्भृशंदेशंयत्रचस्पर्शनाक्षमः ॥ ५ ॥
तत्रविद्याद्रुजंमूर्ध्निरुजंचाक्षिनिमीलनात् ॥
कोष्ठेविबंधवमथुस्तनदंशान्त्रकूजनैः ॥ ६ ॥
आध्मानपृष्ठनमनजठरोन्नमनैरपि ॥
बस्तौगुह्येचविण्मूत्रसंगेस्त्रासदिगीक्षणैः ॥ ७ ॥
स्रोतांस्यंगानिसंधींश्चपश्येद्यत्नान्मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ—बालकोंके रुदन ( रोने ) से उसके थोडी वा बहुत पीडा जाननी, वह बालक जिस ठिकाने वारवार हाथ लगावे उस ठिकाने और जिस जगह औरके हाथको न लगाने दे उस ठिकाने उसके पीडा जानना चाहिये. नेत्रोंके मूँदनेसे, मस्तकपीडा जाने; मलावरोध वमन, स्तन ( छातीको ) चवाना, तथा पेटका गूँजना, पेटका फूलना, तथा पेटका उछलना इन लक्षणोसे बालकके पेटमें पीडा जाननी; मलमूत्रके रुकने, तथा डरनेसे और सर्वत्र देखनेसे, इन लक्षणोसे उसकी वस्ति ( मूत्रस्थान ) और गुदामे पीडा जाननी, वैद्य बालकके स्रोत ( नाक मुख कान आदि छिद्रो ) को, हाथ पैरसे आदिले अवयवों और सधियोंको वारंवार देखे तो रोगका यथार्थ ज्ञान होय ॥

द्वंद्वज और सन्निपातज दूषितदुग्धके रोग ।

द्विलिंगंद्वंद्वजंविद्यात्सर्वलिंगंत्रिदोषजे ॥

अर्थ–पूर्वोक्त जो वातादिदूषित दुग्धके लक्षण कहे है उनमें दो दोषके लक्षण मिलनेसे द्वंद्वज रोग जानना और त्रिदोषके लक्षण मिलनेसे सन्निपातका रोग जानना, यह श्लोक प्रक्षिप्त है. माधवाचार्यका नही है ॥

कुकूणकके लक्षण ।

कुकूणकःक्षीरदोषाच्छिशूनामक्षिवर्त्मनि ॥ ८ ॥
जायतेतेननेत्रंचकण्डूरंचस्रवेन्मुहुः ॥
शिशुःकुर्याल्ललाटाक्षिकूटनासाविघर्षणम् ॥ ९ ॥
शक्तोनार्कप्रभांद्रष्टुंनवर्त्मोन्मीलनक्षमः ॥

अर्थ–कुकूणक यह रोग बालकोंके दूधके दोषसे होताहै, इस रोगके होनेसे बालकके नेत्रके कोयेमे सूजन, नेत्र खुजावै और पानी वहे, नेत्रोंमे कीचड आनेसे वह ललाट नेत्र और नाकको रगडे, धूपके सामने देखा न जाय, उसके नेत्र खुले नही. इसको लौकिकमे कोथस्राव कहते है, यह रोग बालकोंकेही होता है सो वाग्भट्टमे लिखा है ॥

पारिगर्भिकके लक्षण ।

मातुःकुमारोगर्भिण्याःस्तनंप्रायःपिबन्नपि ॥ १० ॥
कासाग्निसादवमथुतंद्राकार्श्यारुचिभ्रमैः ॥
युज्यतेकोष्ठवृद्ध्याचतमाहुःपारिगर्भिकम् ॥ ११ ॥
रोगंपरिभवाख्यंचदद्यात्तत्राग्निदीपनम् ॥

अर्थ–बालकके गर्भिणी माताका दूध पीनेसे उसके खासी, मदाग्नि, वमन, तन्द्रा, अरुचि, कृशता और भ्रम ये होयँ और उसके पेटकी वृद्धि होय, इस रोगको वैद्यगण पारिगर्भिक अथवा परिभव कहते हैं। इस रोगमे अग्निदीपनकर्ता औषधि बालकको देनी चाहिये ॥

तालुकंटकके लक्षण ।

तालुमांसेकफःक्रुद्धःकुरुतेतालुकंटकम् ॥ १२ ॥ तेनतालुप्रदेशस्यनिम्नतामूर्ध्निजायते ॥ तालुपातःस्तनद्वेषःकृच्छ्रात्पानं शकृद्द्रवम् ॥ १३ ॥ तृडक्षिकंठास्यरुजाग्रीवादुर्धरतावमिः ॥

अर्थ–तालुके मासमे कफ कुपित होकर तालुकंठके रोगको करै, उसके होनेसे तालुके ऊपरका भाग नीचा होजाय, तथा भीतरसे बालकका तालुआ विधजाय, इसीसे बालक स्तन ( छाती )

१ कुकूणकः शिशोरिव दीनोत्पत्तिनिमित्तजः ।

को नहीं दावे और पीवेभी तो बडे कष्टसे पीवे, पतला मल होजाय, प्यास लगे, नेत्र कंठ मुख इनमें पीडा होय, लार गिर पडे और जो दूध पीवे उसे डाल दे॥

महापद्मविसर्पके लक्षण।

विसर्पस्तुशिशोःप्राणनाशनोवस्तिशीर्षजः॥ १४॥
पद्मवर्णोमहापद्मोरोगोदोषत्रयोद्भवः॥
शंखाभ्यांहृदयंयातिहृदयाद्वागुदंव्रजेत्॥ १५॥

अर्थ—बालकोंके जो मस्तक और वस्ति (मूत्रस्थान) मे विसर्प होय, वह बालकका प्राणनाशक जानना, जो विसर्प कमलके पत्रके समान लाल होय है यह महापद्मरोग त्रिदोषज है यह कनपटीमे उत्पन्न होकर हृदयपर्यन्त जाता है, अथवा हृदयमे होकर गुदापर्यंत जाता है॥

और विकार जो बालकोंके होते हैं उनको कहते हैं।

क्षुद्ररोगेचकथितेअजगल्यहिपूतने॥
ज्वराद्याव्याधयःसर्वेमहतांयेपुरेरिताः॥ १६॥
बालदेहपितेतद्वद्विज्ञेयाःकुशलैःसदा॥

अर्थ—क्षुद्ररोगनिदानमे जो अजगल्ली और अहिपूतना कही है सो और ज्वरादिक सर्व रोग जो बडे मनुष्योंके होते है अर्थात् जिन रोगोको पूर्व कहिआये है वह सब रोग बालकोके देहमेंभी होते है, ऐसे कुशल वैद्योको जानना चाहिये॥

सामान्य ग्रहजुष्टके लक्षण।

क्षणादुद्विजतेबालःक्षणात्त्रस्यतिरोदिति॥ १७॥
नखैर्दन्तैर्दारयतिधात्रीमात्मानमेवच॥
ऊर्ध्वंनिरीक्षतेदन्तान्खादेत्कूजतिजृम्भते॥ १८॥
भ्रुवौक्षिपतिदंतौष्ठंफेनंवमतिचासकृत्॥
क्षामोऽतिनिशिजागर्तिशूनांगोभिन्नविट्स्वरः॥ १९॥
मांसशोणितगन्धिश्चनचाश्नातियथापुरा॥
सामान्यग्रहजुष्टानांलक्षणंसमुदाहृतम्॥ २०॥

अर्थ—कभी क्षणभरमे बालक विह्वल होजाय, कभी क्षणभरमे डरे, रोवे, नख और दातोसे अपने शरीर और माताको खसोटे, ऊपरको देखे, दातोको चबावे, किलकारी मारे, जभाई लेय, भ्रुव (भौह) को तिरछी करे, दातोसे होठोको खाय, वारवार मुखसे झाग डाले, वह अत्यन्त क्षीण होय, रात्रिमे सोवे नही, देहमे सूजन होय, मल पतला होय, स्वर बैठ जाय, उसके देहमे रुधिर

मांसकीसी बास आवे, जितना पहले खाता होय उतना नहीं खाय ये सामान्य ग्रहव्याप्त बालकके लक्षण हैं. अब कहते हैं कि, स्कन्दादिक ग्रह पूजाके अर्थ बालकोंको मारे हैं सो चरकेमें लिखा है॥

स्कंदग्रहगृहीतबालकके लक्षण।

एकनेत्रस्यगात्रस्यस्रावःस्यंदनकंपनम् ॥ अर्द्धदृष्ट्यानिरीक्षेत्वक्रास्योरक्तगंधिकः ॥ २१ ॥ दंतान्खादतिवित्रस्तःस्तन्यंनैवाभिनन्दति ॥ स्कन्दग्रहगृहीतानारोदनंचाल्पमेवच ॥ २२ ॥

अर्थ–बालकके एक नेत्रसे पानी गिरे और अंगमे स्राव ( पसीना ) बहे, एक ओरका अंग फडके, तथा थर थर कांपे, वह बालक आधी दृष्टिसे देखे, मुख टेढा होजाय, रुधिरकीसी दुर्गंध आवे, वह बालक दांतोंको चबावै, अंग शिथिल होजाय, स्तनको नहीं पीवे, और थोडा रोवे, यह स्कन्दग्रह लगे बालकके लक्षण हैं। इस जगह स्कन्दग्रहकरके शिवजीके प्रगट करे जो ग्रह हैं उनमेसे श्रीशिवपुत्र स्वामिकार्तिकका ग्रहण न करना चाहिये॥

स्कंदापस्मारके लक्षण।

नष्टसंज्ञोवमेत्फेनंसंज्ञावानतिरोदिति ॥
पूयशोणितगन्धित्वंस्कन्दापस्मारलक्षणम् ॥ २३ ॥

अर्थ–बालक बेसुधि होय, मुखसे झाग डाले, जब होसहो तब रोवे, उसकी देहमे रुधिरकीसी दुर्गंधि आवे इन लक्षणोकरके स्कन्दापस्मारके लक्षण जानने॥

शकुनिग्रहके लक्षण।

स्रस्तांगोभयचकितोविहंगगन्धिःसंस्रावव्रणपरिपीडितःसमन्तात् ॥ स्फोटैश्चप्रचिततनुःसदाहपाकैर्विज्ञेयोभवतिशिशुःक्षतः शकुन्या ॥ २४ ॥

अर्थ--शकुनीग्रहसे पीडित बालकके अग शिथिल होयँ, भयसे चकित होय उसके अंगमें पक्षीके अंगके समान बास आवे, घाव होकर उसमेसे लस बहे, सर्व अगोमे फोडा उत्पन्न होयँ और वे पकें तथा दाह होय॥

---

१ धात्रीमात्रोःप्राक्प्रदिष्टोपचाराच्छौचभ्रष्टान्मङ्गलाचारहीनान् ॥ त्रिस्तांस्तांस्तर्जितांस्ताडितांश्च पूजाहेतोर्हिस्युरेते कुमारान् ॥ इति।

२ तदुक्त हिरण्याक्षेण। संस्रावदाहपाकाद्यैश्चातिस्फोटैर्भयान्वितः। स्रस्तांगो विस्रगंधिः स्याच्छकुन्या पीडितःशिशुः॥

रेवतीग्रहका लक्षण ।

**व्रणैःस्फोटैश्चितंगात्रंपंकगंधसृक्स्रवेत् ॥**
**भिन्नवर्चोज्वरोदाहोरेवतीग्रहलक्षणम् ॥ २५ ॥**

अर्थ—रेवतीग्रहसे पीडित वालकके अंगमे घाव और फोडा होयँ, उनमेंसे रुधिर बहे उसमें कीचकीसी वास आवे, दस्त होय, ज्वर होय और अंगमे दाह होय ॥

पूतनाग्रहके लक्षण ।

**अतिसारोज्वरस्तृष्णातिर्यक्प्रेक्षणरोदने ॥**
**नष्टनिद्रस्तथोद्विग्नःस्त्रस्तःपूतनयाशिशुः ॥ २६ ॥**

अर्थ—पूतना ग्रहकी पीडासे वालकको दस्त, ज्वर, प्यास होय, टेढी दृष्टिसे देखे, रोवे, सोवे नहीं, व्याकुल होयं, शिथिल होजाय, ये लक्षण होते हैं ॥

अंधपूतनाग्रहके लक्षण ।

**छर्दिःकासोज्वरस्तृष्णावसागंधोऽतिरोदनम् ॥**
**स्तन्यद्वेषोऽतिसारश्चाप्यंधपूतनयाभवेत् ॥ २७ ॥**

अर्थ—अंधपूतना ग्रहकी पीडासे वालकके वमन होय, खांसी, ज्वर, प्यास, चर्बीकीसी दुर्गंध, बहुत रोना, स्तन्य ( छाती ) को मुखसे दावे नहीं, आतिसार ये लक्षण होते हैं ॥

शीतपूतनाग्रहके लक्षण ।

**वेपतेकासतेक्षीणोनेत्ररोगोविगंधिता ॥**
**छर्द्यतीसारयुक्तश्चशीतपूतनयाशिशुः ॥ २८ ॥**

अर्थ—शीतपूतना ग्रहकी पीडासे वालकके मुखकी काांति क्षीण होजाय, उसके नेत्ररोग होय, देहमे दुर्गंध आवे, वमन होय और दस्त होयँ ॥

मुखमंडिकाग्रहके लक्षण ।

**प्रसन्नवर्णवदनःशिराभिरिवसंवृतः ॥**
**मूत्रगन्धिश्चवह्वाशीमुखमण्डिकयाभवेत् ॥ २९ ॥**

अर्थ—मुखमडिका ग्रहकी पीडासे वालकके मुखकी कांति सुंदर होय और देहकी कांति श्रेष्ट होय, शिराओंमे बँधा देह होजाय, उसके देहमें मूत्रकीसी दुर्गंधि आवे, यह वालक बहुत भक्षण करे ॥

नैगमेयग्रहके लक्षण ।

**छर्दिस्यन्दनकंठास्यशोषमूर्च्छाविगन्धिताः ॥**
**ऊर्ध्वंपश्येद्दशेद्दन्तान्नैगमेयग्रहंवदेत् ॥ ३० ॥**

**अर्थ**–वमन, कप, कठ मुखका सूखना, मूर्च्छा, दुर्गध, ऊपरको देखे, दातोको चबावे इन लक्षणोसे नैगमेयग्रहकी बाधा जाननी ॥

इति बालरोगनिदानम् ।

---

# विषरोगनिदानम् ।

**स्थावरंजंगमंचैवद्विविधंविषमुच्यते ॥**
**मूलात्मकंतदाद्यंस्यात्परंसर्पादिसम्भवम् ॥ १ ॥**

**अर्थ**--विष दोप्रकारका है स्थावर और जगम, तथा मूलात्मक स्थावर और सर्पादिकोसे जो प्रगट हो वह जगम विष कहाता है ॥

**( दशाधिष्ठानमाद्यंतुद्वितीयंषोडशाश्रयम् ॥ )**

**अर्थ**–आद्य अर्थात् स्थावर विष दशजगह रहता है और जगम विष सोलह जगह रहता है ॥

**मूलंपत्रंफलंपुष्पंत्वक्क्षीरंसारएवच ॥**
**निर्यासाधातवश्चैवकन्दश्चदशमःस्मृतः ॥ २ ॥**

**अर्थ**–जड, पात, फल, फूल, छाल, दूध, रस, गोद, धातु, और कद ये दश स्थावर विष हैं । तहा मूलविष आठ, हैं क्लीतक, अश्वमार, गुंज, सुगध, गर्गर, ककरघाट, विद्युच्छिखा, और विजिया ये है ॥

विषपत्रिका, लम्बावर, दारुक, करम्भ, महाकरंभ ये पाच पत्रविष हैं ।

कुमुद्वती–वेणुका, करम्भ, महाकरभ, कर्कोटक, रेणुक, खद्योतक, चमरी, इभगंधा, सर्पघाति, नन्दन, सारपाकिनी ये बारह फलविष है ।

पत्र, कदव, वल्लिज, करम्भ, महाकरम्भ ये पाच पुष्पविष है ।

अंत्रपाचक, कर्तरीय, सौरीय, ककरघाट, करम्भ, नन्दन, वराटक ये सात त्वचारसके ( गोद ) के विष हैं ।

कुमुदघ्नी, स्नुही, जालक्षीरी, ये तीन दूधके विष है ।

फेनाश्मभस्म और हरिताल ये धातुविष है ।

कालकूट, वत्सनाभ, सर्षपक, पालक, कर्दमक, वैराटक, पुस्तक, शृंगीविष, प्रपौंडरीक, मूलक, हलाहल, महाविष, कर्कट ये तेरह कंदविष हैं।

सब मिलकर स्थावर विष पचपन ( ५५ ) हैं।

### विषस्य स्थानम्।

**जंगमस्यविषस्योक्तान्यधिष्ठानानिषोडश॥**
**समासेनमयायानिविस्तरस्तेषुवक्ष्यते॥ ३॥**

अर्थ—जंगम विषके स्थान सोलह हैं, सो मैंने संक्षेपसे कहे हैं। अब विस्तारसे कहता हूं—दृष्टि, श्वास, दात, नख, मूत्र, विष्ठा, शुक्र, लार, आर्तव, मुख, सदंश, विशर्द्धित ( पादना ), गुदा, हड्डी, पित्त, शूकशव ये सोलह स्थान हैं।

तहां दृष्टि, निश्वास, विष दिव्य है सो दिव्य सर्पादिकका जानना. भीम विष, दंष्ट्राविष है।

विलाव, कुत्ता, बन्दर, मगर, मेडक, मच्छी, जलगंधिका, शंबूक (शीप), पंचालक, छिपकरी, मोहारकी मक्खी, पीली मक्खी, ततैया इनसे आदिले ये जानवर दंष्ट्रा और नख विषवाले हैं।

चिपिंठ, पिच्चटक, कषाय, वासिक, सर्षप, तोटवर्च्च, कोड कौटिल्यक इन जानवरोंके विष्ठा, और मूत्रमें विष होता है।

इनको लोकप्रसिद्ध नामसे जानना।

मूसेके शुक्रमें विष होता है, मकरी आदि जो कीट हैं सो लूता कहाते हैं। इनके लार, मूत्र, विष्ठा, मुख, नख, शुक्र, आर्तव इनमें विष होता है।

विच्छू, विश्वभर, ततैया, राजिलमछली, चिंठिंग, समुद्रका विच्छू, इनकी पूछमे जो कांटा होता है उसमें विष होता है।

चित्रशिर, शरावकुर्दि, शतदारुक आदि भेदक, शारिका मुख, मुखदंशक इनके मूत्रपुरीषमें विष जानना॥

मक्खी कणव, जोख इनके मुख और काटनेमें विष है।

विषसे मरेहुएकी हड्डी, सर्पकी हड्डी, विषियल मछली, इनको हड्डीमें विष हैं।

शकुलीनामकी मछली, रक्तराजी, और चरकी नामकी मछली इनके पित्तमें विष है।

सूक्ष्मतुंड, चेंटि बहर, कनखजूरा, शूक, मोरा, तोता इनके तुण्ड अर्थात् मुखके अग्रभागमे विष है॥

कीट और सर्प इनके मेरे देहमेंही विष है।

और जिनकी गणना यहां नहीं की उनको मुखसदश वालोंमें जानना ये जगमविषके हैं॥

जंगमविषके सामान्य लक्षण।

निद्रांतन्द्राक्लमंदाहमपाकंरोमहर्षणम् ॥
शोथंचैवातिसारंचकुरुतेजंगमंविषम् ॥ ४ ॥

अर्थ–निद्रा, तन्द्रा, क्लम, दाह, अन्नका न पचना, रोमांच, शोथ और अतिसार ये लक्षण जंगमविषके हैं ॥

इति जंगमविषसामान्यलक्षणम्।

स्थावरविषके सामान्य लक्षण।

स्थावरंतुज्वरंहिक्कांदन्तहर्षंगलग्रहम् ॥
फेनवच्छर्द्यरुचिश्वासंमूर्च्छांचकुरुतेभृशम् ॥ ५ ॥

अर्थ–स्थावरविषसे ज्वर, हिचकी, दांतोंका घिसना, गलेका घिरना झागसे मिली रद्द, अरुचि, श्वास और अत्यंत मूर्च्छा ये लक्षण होते हैं ॥

राजा किंवा कोई दूसरा बडा सेठसाहूकार जिसको समीपके रहनेवाले किसी नौकर चाकरने विष मिलाकर अन्न दिया हो उस विषदेनेवालेके ढूँढनेके निमित्त कुछ लक्षण कहतेहैं ॥

इंगितज्ञोमनुष्याणांवाक्चेष्टामुखवैकृतैः ॥ जानीयाद्विषदातारमेभिर्लिंगैश्चबुद्धिमान् ॥ ६ ॥ नददात्युत्तरंपृष्टोविवक्षुर्मोहमेतिच ॥ अपार्थबहुसंकीर्णंभाषतेचापिमूढवत् ॥ ७ ॥ हसत्यकस्मात्स्फोटयतिह्यंगुलीर्विलिखेन्महीम् ॥ वेपथुश्चास्य भवतित्रस्तश्चान्योन्यमीक्षते ॥ ८ ॥ विवर्णवक्त्रःक्षामश्चनखैः किंचिच्छिनत्त्यपि ॥ आलभेतासनंदीनःकरेणचशिरोरुहम् ॥ वर्त्ततेविपरीतंचविषदाताविचेतनः ॥ ९ ॥

अर्थ–मनुष्यके अभिप्राय जाननेवाले वैद्यको बोलने चालने तथा मुखकी चेष्टा इनसे तथा आगे जो कहते हैं इन लक्षणोंसे विषके देनेवाले मनुष्यको बुद्धिमान् जान ले। सो इस प्रकार जो मनुष्य विष दे उससे कोई बात पूँछे तो वह उत्तर न दे, और जब बोले तब मोहको प्राप्त हो, अर्थात् घबडा जावे। तथा कदाचित् बोले भी तो निरर्थक और बहुत अस्पष्ट बोले तथा अकस्मात् हँसे, हाथकी उंगली चटकावे, पृथ्वीमें रेखा काढे, भयसे काँपे. और डरकर चारों ओर वारंवार सबकी तरफ देखे, मुखकी चेष्टा जाती रहे और काला होजाय, नखोंसे कुछ तिनका आदि तोडे, गरीबके समान एकही स्थानपर बैठा रहे, माथेपर हाथ फेरे, वारवार इधर उधर

डोलकर बैठजाय, उसका चित्त ठिकाने न रहे, तथा उसका चित्त भागनेको चाहे ये लक्षण विष देनेवालेके जानने और येही लक्षण चोर अपराध करनेवालेके राजा जान लेवे ॥

मूलादिविषोंके लक्षण।

**उद्वेष्टनंमूलविषैःप्रलापोमोहएवच ॥ जृम्भणंवेपनंश्वासो मोहःपत्रविषेणतु ॥ १० ॥ मुखशोथःफलविषैर्दाहोऽन्नद्वेषएवच ॥ भवत्युपविषैश्छर्दिराध्मानंश्वासएवच ॥ ११ ॥ त्वक्सारनिर्यासविषैरुपयुक्तैर्भवन्तिहि ॥ आस्यदौर्गन्ध्यपारुष्यशिरोरुक्कफसंस्रवाः ॥ १२ ॥ फेनागमःक्षीरविषैर्विड्भेदो गुरुजिह्वता ॥ हृत्पीडनंधातुविषैर्मूर्च्छादाहश्चतालुनि ॥ प्रायेणकालघातीनिविषाण्येतानिनिर्दिशेत् ॥ १३ ॥**

अर्थ—मूलविषसे रोगीके हाथ पैरोंमें पीडा और मोह होवे।

पत्रविषसे—जंभाई, कंप, श्वास और मोह होवे।

फलविषसे—मुखपर सूजन, दाह, अन्नमें अरुचि होवे।

पुष्पविषसे—वमन, अफरा और श्वास होवे।

छाल, रस, गोंद—इनसे मुखमें दुर्गंध, अंगमें खरदरापन, मस्तकशूल और मुखके मार्ग कफ गिरे।

दुग्धविषसे—मुखमें झाग आवे, दस्त होय और जीभ जकड जावे।

धातुविषसे—हृदयमें पीडा होय मूर्च्छा आवे, तालुएमें दाह होय ये सब विष बहुधाकरके कालान्तरमें मारनेवाले होते हैं ॥

विषलिप्तशस्त्रहतके लक्षण।

**सद्यःक्षतंपच्यतेतस्यजन्तोःस्रवेद्रक्तंपच्यतेचाप्यभीक्ष्णम् ॥ कृष्णीभूतंक्लिन्नमत्यर्थपूतिक्षतान्मांसंशीर्यतेयस्यचापि ॥ १४ ॥ तृष्णामूर्च्छाज्वरदाहौचयस्यदिग्धाहतंतंमनुजंव्यवस्येत् ॥ लिंगान्येतान्येवकुर्यादमित्रैर्व्रणेविषंयस्यदत्तंप्रमादात् ॥ १५ ॥**

अर्थ—जिस पुरुषका जखम तत्काल पकजावे, तथा उसमें रुधिर बहे और वारंवार पके तथा उस जखममेंसे काला सडा दुर्गंधयुक्त ऐसा मांस निकले, तथा जिसमें प्यास, मूर्च्छा, ज्वर, दाह, ये होवें उसके विषमें बुझे वा लिप्त शस्त्रकी जखम लगी जानना चाहिये। शत्रुओंने फाडकरके जिसके व्रणमें विष डाल दिया हो उसके भी यही लक्षण हैं ॥

स्थावरविषको कहकर जंगममें सर्पविष ये अतितीक्ष्ण हैं इसीसे प्रथम सर्पोंकी जाति कहते हैं।

**वातपित्तकफात्मानोभोगिमण्डलिराजिलाः॥**
**यथाक्रमंसमाख्याताद्व्यन्तराद्वंद्वरूपिणः॥ १६॥**

अर्थ—भोगी, मंडली और राजिल, ये सर्प अनुक्रमसे वात, पित्त, कफप्रकृति हैं और जे द्व्यंतर अर्थात् जो दो जातिके सर्प और सर्पिणीसे प्रकट हैं वे द्व्यंतर कहातेहैं। उनकी प्रकृति द्वंद्वज है अर्थात् जिस जिस प्रकारके सर्प सार्पिणीसे प्रगट उसी उसी प्रकारकी प्रकृति उनकी होती है, जिनके मस्तकपर चक्र, हल, छत्र, स्वस्तिक ( सतिया ), अंकुश, इनका चिह्न हो और जिनका फण करछीके समान चौडा हो, और जल्दी चलनेवाले हों उनको भोगी अथवा राजिल सर्प कहते हैं और जो अनेक प्रकारके चकत्तोसे चित्रविचित्र हों, तथा मोटे और मद चलनेवाले, तथा अग्नि और सूर्यकासा प्रकाश जिनका, उनको मंडली सर्प कहते है॥

और जो चिकने और अनेकप्रकारकी रेखा उनके ऊपर नीचे विद्यमान हों, उनको राजिल सर्प कहते हैं। इन सर्पोंकी चार जाति हैं। तिनमे मोती, चांदी, सुवर्णकीसी प्रभा होवे और जो नम्र तथा जिनकी देहमे सुगंध आवे वे ब्राह्मण जातिके सर्प हैं। और जिनका स्वच्छवर्ण, क्रोधी और जिनके मस्तकपर सूर्यचन्द्रके समान छत्र तथा कमलका चिह्न होवे, वह क्षत्रिय जातिके सर्प हैं। काले और हीराके समान तथा लोहेके वर्ण हो और जिनकी धूआं और कबूतरके समान प्रभा हो, वे वैश्यजातिके सर्प हैं। जिनकी देह भैंसा, चीतेके समान हो, और जिनकी त्वचा कठोर हो, तथा अनेक प्रकारका जिनका वर्ण हो, वो शूद्रजातिके सर्प हैं। रात्रि पिछले प्रहरमे राजिलजातिके सर्प विचरते हैं, और रात्रिके पहले तीन प्रहरोंमें मंडली जातिके सर्प विचरते हैं, और दिनमे दर्वीकर जातिके सर्प बहुधा विचरते हैं। इनमें दर्वीकर जातिके सर्प तरुण हैं और मंडली जातिके वृद्ध और राजिल जातिके मध्यम अवस्थाके हैं।

इतनी जातिके सर्प निर्विष जानने। जो नौलसे हत हैं, और बालक, तथा जलसे ताडित हैं और कृश, वृद्ध, तथा दिनकी काचली छूट रही हो और डररहे हो ऐसे सर्प विषरहित होते हैं॥

### अब सर्पोंके भेद कहते हैं।

तहा प्रथम दर्वीकर सर्पोके भेद कहते हैं। कृष्णसर्प, महाकृष्ण, कृष्णोदर, श्वेत कपोल, नलाहक, महासर्प, शखपाल, लोहिताक्ष, गवेधुक, परीसर्प, खंडफण, ककुदंपद्म, महापद्म, दर्भपुष्प, दधिमुख, पुडरीक, भ्रुकुटीमुख, विष्किर, पुष्पाभिकीर्ण, गिरिसर्प, ऋतुसर्प, श्वेतोदर, महाशिरा, अलगर्द, आशीविष ये दर्वीकर जातिके सर्प है।

आदर्शमंडल, श्वेतमंडल, रक्तमंडल, चित्रमंडल, प्रषत, रोध्रपुष्प, मिलिंदक, गोनस, वृद्धगोनस, पनस, महापनस, वेणुपत्रक, शिशुक, वसु, कषाय, कलुष, पारावत, हस्ताभरण, चित्रक, एणीपद ये मंडलीजातिके सर्प हैं ।

पुंडरीक, राजिचित्र, अंगुलराजि, बिंदुराजि, कर्दमक, तृणशोपक, ससर्पक, श्वेतहनु, दर्भपुष्प, चक्रक, गोधूमक, किक्कसाद, ये राजिलजातिके सर्प हैं ।

गुळगोली, शूकपत्र, अजगर, दिव्यक, वर्षाहिक, पुष्पशकली, ज्योतारथ, क्षीरिक, पुष्पक, अहिपतानक, अधाहिक, गौराहिक, वृक्षेशय, इतने सर्प हीनविष जानने ।

अब कहते हैं कि, द्वथतर ( वर्णसकर ) सर्पभी तीन प्रकारके हैं । माकुली, पोटगल, स्निग्धराजि ।

तहा कृष्णसर्पजातिकी सर्पिणी और गोनसजातिके सर्पसे जो सर्प प्रगट हो वह माकुली कहाता है ।

इसी प्रकार राजिल और गोनसीजातिकी सर्पिणी सर्पसे जो प्रगट सो पोटगलकसर्प कहाता है । इसी प्रकार कृष्णसर्प और राजमती जातिकी सर्पिणीसे जो प्रगट हुए सर्प उनको स्निग्धराजी कहते हैं ।

तहा अकुली सर्पमें पिताकासा विष ( जहर ) होय है और पोटगल स्निग्धराजी इन दोनोंमें माताकासा विप होता है । इन तीनोंके विपरीततासे दिव्येलक, लोध्रपुष्पक, राजिचित्रक, पोटगल, पुष्पाभिकीर्ण, दर्भपुष्प, वेल्लितक, इन सात जातिके सर्प प्रगट होते हैं ।

इनमेंभी प्रथमके तीन सर्पोंमे राजिल सर्पोंकासा विष होताहै और शेषोंमें मंडली सर्पोंकासा जानना, ऐसे सब मिलकर अस्सी प्रकारके सर्प हैं । इनमेभी जिनके नेत्र, जीभ, मुख, शिर बडे हो वह पुरुष जानने और छोटे होयँ वह स्त्री जाननी और जिनमें दोनों स्त्री पुरुषके लक्षण मिलते होयँ, तथा मद विषवाले क्रोधरहित हों उनको नपुसक जानना ॥

भोगिप्रभृतिसर्पके काटनेपर वातादिकोंके लक्षण ।

दंशोभोगिकृतःकृष्णःसर्ववातविकारकृत् ॥
पीतोमण्डलिजःशोथोमृदुःपित्तविकारवान् ॥ १७ ॥
राजिलोत्थोभवेद्दंशःस्थिरशोथश्चपिच्छिलः ॥
पाण्डुःस्निग्धोऽपिसान्द्रासृक्सर्वश्लेष्मविकारवान् ॥ १८ ॥

अर्थ—भोगी अथवा राजिल दर्वीकर सर्पके काटनेसे काटनेकी ठौर काली हो, और सर्व वातके विकार करे इसके सुश्रुतनें बहुत अवगुण लिखे हैं । मंडली सर्पके काटनेकी ठौर पीली सूजनयुक्त

और नरम और पित्तके विकार करे और राजिल का दंश चिकना पीले रंगका या गाढा तथा उसकी सूजन कठोर होय उसमें गाढा रुधिर निकले तथा सब प्रकारके कफविकार हों ये लक्षण राजिलसर्प काटनेके है ॥

### विशिष्टदेशमें तथा विशिष्टनक्षत्रमें काटनेके असाध्य लक्षण ।

**अश्वत्थदेवायतनश्मशानवल्मीकसंध्यासुचतुष्पथेषु ॥**
**याम्येचदष्टाःपरिवर्जनीयाऋक्षेशिरामर्मसुयेचदष्टाः ॥ १९ ॥**

अर्थ-पीपलके वृक्षके नीचे, देवताओके मंदिरमे, मसानमें, बँबई, संध्याकाल ( प्रातः और सायंकालकी संधि ), चौराहेमें, भरणीनक्षत्रमे चकारसे आर्द्रा, आश्लेषा, मूल, मघा, कृत्तिका, इन नक्षत्रोमें और शिरानाडीके मर्ममें, सर्पके काटनेसे मनुष्य बचे नहीं ॥

### गर्मी होनेसे विषका जोर होता है उसके लक्षण ।

**दर्वीकराणांविषमाशुहन्तिसर्वाणिचोष्णेद्विगुणीभवन्ति ॥**

अर्थ-दर्वीकर ( नाग ) का विष तत्काल प्राणनाश करे और सर्व विष गर्मीके योगसे दुगुना जोर करते हैं ॥

**अजीर्णपित्तातपपीडितेषुबालेषुवृद्धेषुबुभुक्षितेषु ॥**
**क्षीणक्षतेमेहिनिकुष्ठदुष्टेरूक्षेऽबलेगर्भवतीषुचापि ॥ २० ॥**

अर्थ-अजीर्ण पित्त और सूर्यकी घाम इनसे पीडित, बालक, वृद्ध, भूखा, क्षीण होगया हो, उरःक्षती, प्रमेहवाला, कोढी, रूखा, निर्बल और गर्भिणी, इनको सर्पके काटनेसे तत्काल मृत्यु हो ॥

### सर्पके काटनेके असाध्य लक्षण ।

**शस्त्रक्षतेयस्यनरक्तमेतिराज्योलताभिश्चनसम्भवन्ति ॥**
**शीताभिरद्भिश्चनरोमहर्षोविषाभिभूतंपरिवर्जयेत्तम् ॥ २१ ॥**

अर्थ-जिसको विषका अमल चढगया हो उसके शस्त्रके घाव करनेसे रुधिर निकले नहीं, अथवा चाबुक मारनेसे अगमें उपडे नहीं, अथवा शीतल पानी अंगपर डालनेसे रोमांच नहो, मनुष्यका जहर उतारनेका उद्योग न करै ॥

### दूसरे असाध्य लक्षण ।

**जिह्मंमुखंयस्यचकेशशातोनासावसादश्चसकंठभंगः ॥**
**रक्तःसकृष्णश्वयथुश्चदंशेहन्वोःस्थिरत्वंचविवर्जनीयः ॥ २२ ॥**

अर्थ-जिसका मुख टेढा और स्तब्ध होजाय, केश ( बाल ) स्पर्श करनेसे टूट २ कर गिर पडें, नाककी हड्डी टेढी होजाय, नाड नीचेको झुक पड़े ऊंची न होय और काटनेकी जगह सूजन होय, तथा वह दंश लाल अथवा काला होय, तथा स्थिर होय, उस रोगीको त्यागदेय ॥

तथा असाध्य लक्षण।

वर्तिर्घनायस्यनिरेतिवक्राद्रक्तंस्रवेदूर्ध्वमधश्चयस्य ॥
दंष्ट्राभिघाताश्चतुरस्ययस्य तंचापिवैद्यःपरिवर्जयेत्तु ॥ २३ ॥
उन्मत्तमत्यर्थमुपद्रुतंवाहीनस्वरंचाप्यथवाविवर्णम् ॥
सारिष्टमत्यर्थमवेगिनंचजह्यान्नरंतत्रनकर्मकुर्यात् ॥ २४ ॥

अर्थ—जिसके मुखसे गाढी लारकी बत्ती गिरे और नाक मुखके मार्ग तथा गुदाके मार्गसे रुधिर निकले और जिसके चार दांत लगे होयँ उसको त्याग देय, अत्यंत उन्मत्त होगया हो अथवा ज्वर अतिसार आदि उपद्रवोंकरके पीडित हो, बोलनेमें असमर्थ हो, जिसके देहका वर्ण काला होगया हो, नासाभंगादि अरिष्टयुक्त, जिसका वेग ( लहर ) आवे नहीं, ऐसा अथवा विष्ठा मूत्रादि वेगरहित ऐसे विषवाले पुरुषको त्याग देय अर्थात् उसका उपचार चिकित्सा न करे ॥

दूषिताविषके लक्षण।

जीर्णंविषघ्नौषधिभिर्हतंवादावाग्निवातातपशोषितंवा ॥
स्वभावतोवागुणविप्रहीनंविषंहिदूषीविषतामुपैति ॥ २५ ॥

अर्थ—जो विष पुराना होगया हो अथवा विषकी नाशक औषधसे हतवीर्य होनेसे, अथवा सरदी, गरमी, अग्नि इनसे सूखी हुई अथवा जे स्वभावसे गुणरहित हैं, ऐसे स्थावर, जंगमात्मक विष दूषीविषताको प्राप्त होते हैं ॥

दूषीविषके लक्षण।

वीर्याल्पभावान्ननिपातयेत्तत्कफान्वितंवर्षगणानुबंधि ॥
तेनार्दितोभिन्नपुरीषवर्णोविगंधिवैरस्ययुतःपिपासी ॥ २६ ॥
मूर्च्छाभ्रमंगद्गदवाग्वमित्वंविचेष्टमानोऽरतिमाप्नुयाद्वा ॥ २७ ॥

अर्थ—वे दूषीविष अल्पवीर्य होनेसे मारक नहीं होते, किंतु कफसवध होनेसे उष्णादि गुण मंद होकर बहुत वर्षपर्यंत विष गर ( विष ) रूप होकर रहतेहैं। उस विषसे पीडित हुए पुरुषके दस्त होते हैं उसका वर्ण पलट जाय, उसके मुखपे बुरी दुर्गंध निकले उसके मुखका स्वाद जाता रहे, प्यास लगे, मूर्च्छा आवे, भ्रम होय, वह बोलते समय अक्षर चबावे, वमन करे, विरुद्ध चेष्टा करे और उसको चले नहीं पडे ॥

स्थानभेदकरके उसके विशिष्ट लक्षण ।

आमाशयस्थेकफवातरोगीपक्काशयस्थेऽनिलपित्तरोगी ॥
भवेत्ससुद्धस्तशिरोरुहागोविलूनपक्षस्तुयथाविहंगः ॥ २८ ॥

अर्थ—पूर्वोक्त विष आमाशयमें स्थित होनेसे कफवातजन्य रोग होय और पक्काशयमें आनेसे वातपित्तजन्यविकार होय, तथा उस रोगीके मस्तकके और सब देहके बाल उडकर पखरहित पक्षी ( पखेरू ) के समान होजाय ॥

निद्रागुरुत्वंचविजृम्भणंचविश्लेषहर्षावथवांगमर्दः ॥ ततः करोत्यन्नमदाविपाकावरोचकंमण्डलकोठजन्म ॥ २९ ॥ मांसक्षयंपादकरप्रशोथंमूर्च्छांतथाछर्दिमथातिसारम् ॥ दूषीविषंश्वासतृषौचकुर्याज्ज्वरप्रवृद्धिंजठरस्यचापि ॥ ३० ॥ उन्मादमन्यज्जनयेत्तथान्यदाहंतथान्यत्क्षपयेच्चशुक्रम् ॥ गाद्गद्यमन्यज्जनयेच्चकुष्ठंतांस्तान्विकारांश्चबहुप्रकारान् ॥ ३१ ॥

अर्थ—दूषीविषके प्रभावसे निद्रा, भारीपन, जँभाई, अंग शिथिल, रोमांच, अंगोंका टूटना, ये प्रथम होकर तदनंतर भोजनके उपरांत हर्ष होना अन्न पचे नही, अरुचि, देहमें चकत्ते तथा गाठ उठें, मासक्षय, हाथ पैरोमे सूजन, मूर्च्छा, वमन, दस्त, श्वास प्यास, ज्वर, उदररोग ये विकार होयँ तथा अनेक प्रकारके रोग होयँ सो इस प्रकार किसीसे उन्माद रोग होय और किसीसे दाह होय कोई नपुसकत्व करे और कोई गद्गदवाणीकरे कोई कुष्ठरोग करे और विसर्प विस्फोट आदि अनेक प्रकारके रोग होयँ ॥

दूषीविषकी निरुक्तिके लक्षण ।

दूषितंदेशकालान्नदिवास्वप्नैरभीक्ष्णशः ॥
कस्मात्संदूषयेद्धातूंस्तस्माद्दूषीविषंस्मृतम् ॥ ३२ ॥

अर्थ—देश काल और अन्न और दिवा निद्रा, इनसे वारंवार दूषित हुए विष धातुओंको दुष्ट करे, इसीसे उसको दूषीविष कहते हैं । दूषीविष दोप्रकारका है—एक कृत्रिम और दूसरा गरसञ्ज्ञक, जो विष पदार्थोंसे बनाया जाय वह कृत्रिम और निर्विष द्रव्योके सयोगसे होय उसको गर कहते हैं । सो वृद्धकाश्यपने और चरकमें लिखा भी है ॥

---

१ वृद्धकाश्यपः—संयोगजं तु द्विविधं तृतीयं विषमुच्यते । गरः स्यादविषस्तत्र सविषं कृत्रिमं यतः ॥
२ चरकः—दंष्ट्राविषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे । इति ॥

इन दोनोंविषोंका लक्षण ।

सौभाग्यार्थंस्त्रियःस्वेदरजोनानांगजान्मलान् ॥ शत्रुप्रयुक्ताश्च गरान्प्रयच्छंत्यन्नमिश्रितान् ॥ ३३ ॥ तैःस्यात्पाण्डुःकृशोऽल्पाग्निर्ज्वरश्चास्योपजायते ॥ मर्मप्रधमनाध्मानंहस्तयोःशोथलक्षणम् ॥ ३४ ॥ जाठरंग्रहणीदोषोयक्ष्मगुल्मक्षयज्वराः ॥ एवंविधस्यचान्यस्यव्याधेर्लिंगानिनिर्दिशेत् ॥ ३५ ॥

अर्थ–घरका अधिकार स्वाधीन करनेको, दुष्ट जनोंके कहनेसे पतिको वशीकरण करनेके निमित्त, स्त्री अपने पतिको पसीना, आर्तव ( रजोदर्शनका रुधिर ) तथा अपनी देहके अनेक अंगोंका मैल अन्नमे मिलाकर खिलाती हैं । अथवा शत्रुकृत विषके प्रयोग अर्थात् वैरी विष अथवा विषके अन्न तथा जलमे मिलाकर खवाय देय, इससे मनुष्य पीला और कृश होय, उसकी अग्नि मंद होय, सब मर्मोंमें पीडा, पेट फूलजाय, हाथोमें सूजन, उदररोग, ग्रहणीरोग, राजयक्ष्मा, गुल्म, क्षय,ज्वर इन रोगोंके तथा इसी प्रकारके रोगोंके लक्षण होते हैं ॥

दूषीविषके असाध्यादि लक्षण ।

साध्यमात्मवतःसद्योयाप्यंसंवत्सरोषितम् ॥
दूषीविषमसाध्यंतुक्षीणस्याहितसेविनः ॥ ३६ ॥

अर्थ–दूषीविष पेटमें जानेसे, तत्काल उपाय करनेसे और रोगी पथ्यमे रहनेसे साध्य है । और वर्ष दिन व्यतीत हो जाय तो याप्य जानना । और क्षीण तथा अपथ्य सेवन करनेवालेके असाध्य होय ॥

लूताविषकी उत्पत्तिके लक्षण ।

यस्माल्लूनंतृणंप्राप्तामुनेःप्रस्वेदबिंदवः ॥
तस्माल्लूताःप्रभाष्यन्तेसंख्ययातास्तुषोडश ॥ ३७ ॥

अर्थ–विश्वामित्रराजा वसिष्ठकी कामधेनु जबरदस्ती लेकर चला, उस समय वसिष्ठजीको क्रोध आया, उससे ललाटमे पसीनाका बिंदु निकला, सो समीप जो कटे तृण गौके चरनेके अर्थ पडे थे उनपर वे बिंदु पडे इसीसे लूता ( मकडी ) प्रगट हुई इन मकडियोकी सोलह जाति हैं इन सोलहोंके भी दो भेद हैं एक कृच्छ्रसाध्य, दूसरी असाध्य ॥

उनके काटनेके सामान्य लक्षण।

ताभिर्दष्टेदंशकोथप्रवृत्तिःक्षतजस्यच ॥ ज्वरोदाहोऽतिसारश्च गदाःस्युश्चत्रिदोषजाः ॥ ३८ ॥ पिडिकाविविधाकारासण्ड-लानिमहान्तिच॥शोथामहान्तोमृदवोरक्तश्यावाश्चलास्तथा ॥ ॥ ३९ ॥ सामान्यंसर्वलूतानामेतद्दंशस्यलक्षणम् ॥

अर्थ—उन मकडियोके काटनेसे वह स्थान सडे और उसमेंसे रुधिर वहे ज्वर, दाह अतिसार और त्रिदोषज, तथा अनेक प्रकारके फोडा वडे वडे चकत्ते, नरम लाल काली नीली और चंचल ऐसी सूजन होय इत्यादि लक्षण होते हैं, इसप्रकार सर्व लूताओंके सामान्य लक्षण जानने ॥

दूषीविषलूताके काटनेके लक्षण।

दंशमध्येतुयत्कृष्णंश्यावंवाजालकावृतम् ॥ ४० ॥
ऊर्ध्वाकृतिभृशंपाकंक्लेदकोथज्वरान्वितम् ॥
दूषीविषाभिर्लूताभिस्तंदष्टमितिनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥

अर्थ—जिस दंशका मध्यभाग काला, अथवा नीला, अथवा हरा, तथा जालके सदृश ऊंचा होकर शीघ्र पके, तथा उसमेंसे दुर्गंधयुक्त लस वहे, उसमेंसे ज्वर होय उसको दूषीविष अथवा लूताका काटा हुआ जानना ॥

प्राणहरलूताके लक्षण।

सर्पाणामेवविण्मूत्रशवकोथसमुद्भवाः ॥
दूषीविषाःप्राणहराइतिसंक्षेपतोमताः ॥ ४२ ॥
शोथाःश्वेताऽसितारक्ताःपीताःसपिडिकाज्वराः ॥
प्राणान्तिकाभिर्जायन्तेदाहहिक्काशिरोग्रहाः ॥ ४३ ॥

अर्थ—सर्पोंके मलमूत्रसे अथवा मरे हुए सर्पके सड़जानेसे जो दूषीविषके कीड़ा उत्पन्न होयँ, वे प्राण हरनेवाले होते हैं उनका काटा हुआ स्थान सूज जावे, तथा वह सफेद काला लाल पीला होय और फुंसी होजाय और रोगीको ज्वर आवे, दाह होय, हिचकी आवे, मस्तकमें शूल होय ॥

दूषीविषाखुलक्षण।

आदंशाच्छोणितंपाण्डुमण्डलानिज्वरोऽरुचिः ॥
लोमहर्षश्चदाहश्चाप्याखुदूषीविषार्दिते ॥ ४४ ॥

अर्थ–विषैले आखु (मूसा) के काटनेसे पीला रुधिर निकले, देहमें गोल चकत्ते उठें, ज्वर होय, अरुचि होय, रोमांच और दाह होय ये मूसेके काटनेके विषपीडित मनुष्यके लक्षण हैं॥

प्राणहरमूषकविषके लक्षण।

मूर्च्छांगशोथवैवर्ण्यक्लेदाश्शब्दश्रुतिर्ज्वरः॥
शिरोगुरुत्वंलालासृक्छर्दिश्चासाध्यमूषकैः॥ ४५॥

अर्थ–जिस मूसेके काटनेसे मूर्च्छा, मूसेके आकार सूजन, देहमें विवर्णता, क्लेद, मंद सुनाई दे, ज्वर, मस्तक भारी, लार और रुधिर इनकी रद्द होय ये लक्षण प्राणहर्ता मूसेके असाध्य हैं॥

कृकलास (नौला) के काटेके लक्षण।

कार्ष्ण्यंश्यावत्वमथवानानावर्णत्वमेवच॥
व्यामोहोवर्चसोभेदोदष्टेस्यात्कृकलासकैः॥ ४६॥

अर्थ–नौलाके काटनेसे देहका वर्ण काला अथवा नीला, हरा, तथा अनेक प्रकारका होय, तथा उस रोगीके भ्रांति और अतिसार होय॥

वृश्चिकविषके लक्षण।

दहत्यग्निरिवादौतुभिनत्तीवोर्ध्वमाशुवै॥
वृश्चिकस्यविषंयातिपश्चाद्दंशेऽवतिष्ठति॥ ४७॥

अर्थ–विच्छूके काटनेसे उस स्थानमें प्रथम अग्निसी जले, पीछे ऊपरको चढे, पीछे उस काटनेकी जगह फटनेकीसी पीडा होय।

अब कहते हैं कि, विच्छू, मन्दविष, मध्यविष, महाविषके भेदसे तीन प्रकारका है। तिनमें जो गौके गोबरसे प्रगट होय वह मंदविष है, और काठ ईंट इनसे प्रगट होय वह मध्यविष है और जो सर्पकी सडी देहसे प्रगट होय वह अथवा अन्य विषवाली वस्तुओंसे प्रगट होय वह विच्छू महाविषवाला होता है, मंदविषवाले विच्छू बारह प्रकारके हैं। और मध्यविषवाले तीन प्रकारके हैं, और महाविषवाले पंद्रह प्रकारके हैं, ऐसे सब मिलकर तीस प्रकारके विच्छू हैं। कोई आचार्य २७ प्रकारके कहता है. कृष्ण, श्याव, कर्बुर (विचित्रवर्ण), पीत, गोमूत्राभ, कर्कश, मेचक, श्वेत, लाल, रोमश, शाद्वलाभ, रक्त ये बारह मदवीर्य हैं, इनके काटनेसे पीडा, कंप, देहका स्तंभ काले रुधिरका निकलना, इत्यादि रोग होते हैं।

रक्तोदर, पित्तोदर, कपिलोदर, ये तीन मध्यविषवाले विच्छू हैं, इनके काटनेसे जीभमें सूजन, भोजनका न होना, घोर मूर्च्छा ये लक्षण होते हैं ।

श्वेत, चित्र, श्यामल, लोहिताभ, रक्तश्वेत, रक्तोदर, नीलोदर, पीत, रक्त, नीलपीत, रक्तनील, नीलशुक, रक्तबभ्रु, एकपर्व्वा, उपर्व्वा ये घोर विषवाले १९ विच्छू हैं । इनके काटनेसे सर्पके समान वेग होय, फोड़ोंकी उत्पत्ति होय भ्रांति, दाह, ज्वर, नाक, कान आदि छिद्रोंसे काला रुधिर निकसे, इसीसे शीघ्र प्राणत्याग होवे ॥

### वृश्चिकविषके असाध्य लक्षण ।

दष्टोसाध्यस्तुहृद्घ्राणरसनोपहृतोनरः ॥
मांसैःपतद्भिरत्यर्थवेदनार्तोजहात्यसून् ॥ ४८ ॥

अर्थ—हृदय, नाक, जीभ इनमे विच्छूके काटनेसे मांस गले, अत्यन्त वेदना होकर मनुष्य मरे ॥

### कणभदष्टके लक्षण ।

विसर्पःश्वयथुःशूलंज्वरश्छर्दिरथापिवा ॥
लक्षणंकणभैर्दष्टेदंशश्चैवविशीर्यते ॥ ४९ ॥

अर्थ—कणभ एक जातिका कीड़ा होता है । उसके काटनेसे विसर्प, सूजन, शूल, ज्वर, वमन ये लक्षण होते हैं और वह काटनेका स्थान गल जाय । अब कहते है कि, त्रिकंटक, कुणी, हस्तीकक्ष, उपराजित ये कणभकीडाके चार भेद हैं । इनके काटनेसे पूर्वोक्त रोग होयँ और अंगोंका टूटना, देहमें भारीपन और काटनेकी ठौर काली हो जाय ये लक्षण विशेष होयँ ॥

### उच्चिटिंगर ( झींगर ) विषके लक्षण ।

हृष्टरोमोच्चिटिंगेनस्तब्धलिंगोभृशार्तिमान् ॥
दष्टःशीतोदकेनेवसिक्तान्यंगानिमन्यते ॥ ५० ॥

अर्थ—उच्चिटिंगनामक विच्छूके काटनेसे देहमे रोमांच होयँ, लिंग जकड़ जाय, घोर पीडा होय और सब देहपर शीतल जल मानो डाल दिया है, उच्चिटिंगको सुश्रुतवाला झींगर कहता है और कोई दशधूम कहते हैं परन्तु आतंकदर्पण टीकाकारने विच्छूका भेद माना है ॥

### मंडूक ( मेंडक ) विषके लक्षण ।

एकदंष्ट्रार्दितःशूनःसरुजःपीतकःसतृट् ॥
छर्दिर्निद्राचसविषैर्मण्डूकैर्दष्टलक्षणम् ॥ ५१ ॥

अर्थ-विषैले मेंडकके काटनेसे उसका एक दांत लगे, उस ठिकाने पीली सूजन होयँ, दूखे, प्यास, वमन और निद्रा ये लक्षण होयँ, अब कहते हैं कि, कृष्णसार, कुहक, हारित, रक्त, यवव-र्णाभ, भ्रुकुटी, कोटिक इन भेदोंसे मेडक आठ प्रकारका है इनके काटनेसे पूर्वोक्त लक्षण होयँ और खुजली, मुखमें पीले झाग आना, इन आठमें भी भ्रुकुटी और कोटिक इन दोनों मेडकोंके काटनेसे पूर्वोक्त लक्षण होंय, और दाह, मूर्च्छा, अत्यन्त होय ये विशेष लक्षण होते है ॥

विषैलेमत्स्य ( मछली ) के विषके लक्षण।

**मत्स्यास्तुसविषाःकुर्युर्दाहंशोथंरुजंतथा ॥**

अर्थ-विषैले मछलीके काटनेसे दाह, सूजन और शूल ये होयँ, विषैले मछलीके सत्ताईस भेद हैं। उनके नाम नहीं लिखे इस लिये कि, मिले नहीं ॥

सविषजलौका ( जोंक ) के विषके लक्षण।

**कण्डूंशोथंज्वरंमूर्च्छांसविषास्तुजलौकसः ॥ ५२ ॥**

अर्थ-विषैले जोंकके काटनेसे खुजली, सूजन, ज्वर और मूर्च्छा, ये लक्षण होते हैं विषैले जोंक काली विचित्रवर्णकी, अलगर्दा, इंद्रायुध, सामुद्रिका, गोचन्दना इन भेदोसे छः प्रकारकी हैं ॥

इनमेंभी अंजन चूर्णवर्णा और पृथुशिराके भेदसे काली जोंक दो प्रकारकी हैं, वर्म्मि मछलीके समान लंबी छिन्नोन्नत कुक्षिके भेदसे विचित्रवर्णकी जोंक दो प्रकारकी है, रोमशा, महापार्श्वा, कृष्णमुखी इन भेदोंसे अलगर्दा जोंक तीन प्रकारकी है, इन्द्रधनुषके समान ऊपरसे विचित्र होय वह इन्द्रायुधा जोंक है. कुछ सफेद और पीली तथा विचित्रपुष्पके समान चित्रित ये दो भेद सामुद्रिका जोंकके हैं और बैलके अंडकोशके समान नीचेसे दो भाग होवें उसको गोच-न्दना कहते हैं ॥

गृहगोधिका ( छिपकली ) के विषके लक्षण।

**विदाहंश्वयथुंतोदंस्वेदंचगृहगोधिका ॥**

अर्थ-छिपकलीके विषसे दाह होय, सूजन, नोंचनेकीसी पीड़ा और पसीना आवे, कोई गृहगोधिकाको भाषामें विषखपरा कहते हैं ॥

शतपदी ( कानखजुरा ) के विषके लक्षण।

**दंशेस्वेदंरुजंदाहंकुर्याच्छतपदीविषम् ॥ ५३ ॥**

अर्थ–कानखजूराके काटनेसे काटनेके स्थानमें पसीना आवे, शूल होय और दाह होय, अब जानना चाहिये कि, परुषा, कृष्णा, चित्रा, कर्पालिका, पित्तिका, रक्ता, श्वेता, अग्निप्रभा ये शतपदीके आठ भेद हैं । इनमेंसे छः तो पूर्वोक्त लक्षण करती हैं, और श्वेता तथा अग्निप्रभा दो जातिकी शतपदीके काटनेसे दाह और मूर्च्छा अधिक होय, ये विशेष लक्षण जानना ॥

मशक ( मच्छर वा डांस ) के विषके लक्षण ।

**कण्डूमान्मशकैरीषच्छोथःस्यान्मन्दवेदनः ॥**

अर्थ–मच्छर अथवा डांसके काटनेसे जो किंचित् सूजन होय, उसमें खुजली चले, तथा थोडी पीडा होय, सामुद्र, परिमंडल, हस्तिमस्तक, कृष्ण, पार्वतीय ये पांच भेद मच्छरोंके हैं ॥

असाध्य मशकक्षतके लक्षण ।

**असाध्यकीटसदृशमसाध्यमशकक्षतम् ॥ ५४ ॥**

अर्थ–पर्वतके ऊपर रहनेवाले मच्छर, अथवा डांसके काटनेसे क्षत असाध्य कीटके समान असाध्य है । असाध्य कीटके विषके लक्षण सुश्रुतमें लिखे हैं सो जान लेने ।

सविषमक्षिका ( मक्खी ) दंशके लक्षण ।

**सद्यःप्रस्राविणीस्याद्वादाहमूर्च्छाज्वरान्विता ॥**
**पिडिकामक्षिकादंशेतासांतुस्थविकाऽसुहृत् ॥ ५५ ॥**

अर्थ–विषैले मक्खीके काटनेके ठिकाने काली फुन्सी प्रगट होय, वह तत्क्षण बहने लगे, उस ठिकाने दाह होय और मूर्च्छा, ज्वर होय, इनमें स्थविका नाम मक्खी प्राणहर्त्ता जानना ॥

मक्खीके छः भेद हैं–जैसे कान्तारिका, कृष्णा, पिंगलिका मधूलिका, काषायी और स्थविका, इनमें काषायी और स्थविका दो असाध्य हैं ॥

चतुष्पादादिकोंके विषके साधारण लक्षण ।

**चतुष्पद्भिर्द्विपद्भिर्वानखदन्तविषंचयत् ॥**
**पूयतेपच्यतेचापिस्रवतिज्वरयत्यपि ॥ ५६ ॥**

अर्थ–व्याघ्रआदि चतुष्पाद और वनमनुष्यादि वानरादि द्विपाद इनके नख दांतोंका विष फूल आवे, पकजावे, बहे तथा इसके योगसे ज्वर आवे. अब कहते हैं कि, श्रीमाधवाचार्यने विश्वंभरा, अहिंडुका कण्डूमका, शुकवृन्तादि, पिपीलिका गोधेरका और सर्षपिका इनके विषका निदान नहीं लिखा, परंतु इनका निदान सुश्रुतमें कहा है सो ग्रंथकी समाप्तिमें लिखेंगे ॥

विष उतरगयाहो उसके लक्षण।

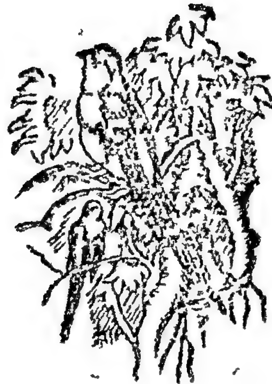
**प्रसन्नदोषंप्रकृतिस्थधातुमन्नाभिकांक्षंसमसूत्रविड्कम् ॥**
**प्रसन्नवर्णेन्द्रियचित्तचेष्टंवैद्योऽवगच्छेदविषंमनुष्यम् ॥ ५७ ॥**

इति विषनिदानम्।

अर्थ–जिस पुरुषके वातादि दोष निर्मल होयँ, रस रक्तादि धातु निरोग अवस्थामें जैसे होते हैं वैसेही होयँ, अन्न खानेकी इच्छा होय मलमूत्र जैसे हे तैहैं वैसे होयँ शरीरका वर्ण, इन्द्रिय मन और व्यापार ( देहकी चेष्टा ) ये जिसके शुद्ध होयँ, उसका विष उतरगया ऐसे वैद्य जाने ॥

इति श्रीमाथुरकुलकमलप्रकाशकश्रीमत्कन्हैयालालपाठकतनयदत्तरामनिर्मितमाधवभावार्थ-
बोधिनीमाथुरीभाषाटीकायां विषरोगनिदानम्।

**इति माधवनिदानं समाप्तम्।**



श्रीः ।

# परिशिष्ट ( ग्रंथशेष ).

विदित हो कि, माधवाचार्य्य भिषक्शिरोमणिजीने बहुतसे रोगोंके निदान स्वग्रथमे नहीं लिखे परन्तु उन रोगोंके निदानोंसे बहुधा वैद्योंको काम पडता है, इसी कारण उन निदानोंको अन्य ग्रंथोंसे सग्रह करके इस जगह लिखते है. प्रथम क्लीब ( नपुंसक ) का निदान चरकसे लिखते हैं ॥

## क्लीबके लक्षण ।

**रेतोदोषोद्भवंक्लैब्यंयस्माच्छुद्धयैवासिध्यति ॥ अतोवक्ष्यामिते सम्यगग्निवेशयथातथम् ॥१॥ बीजध्वजोपघाताभ्यांजरयाशुक्र संक्षयात् ॥ वैक्लव्यसम्भवस्तस्यशृणुसामान्यलक्षणम् ॥ २ ॥**

अर्थ—क्लैब्य ( नपुंसक ) होना केवल वीर्यके दोषसे होता है, वीर्य शुद्ध होनेसेही उसकी शुद्धि है इसी कारण हे अग्निवेश ! मैं तेरे आगे क्लीबका लक्षण कहता हू । नपुसक चार प्रकारके होते हैं उनको कहते हैं—१ बीजके उपघातसे, २ ध्वजोपघातसे, ३ बुढापेसे, और ४ शुक्र ( वीर्य ) के क्षय होनेसे जो नपुंसकता प्राप्त होती है उसके सामान्य लक्षणको तू सुन ॥

## क्लैब्यके सामान्य लक्षण ।

**संकल्पप्रवणोनित्यंप्रियावश्यमथापिवा ॥ नयातिलिंगशैथि-ल्यात्कदाचिद्यातिवापुमान् ॥ ३ ॥ श्वासार्तःस्विन्नगात्रांसो मोघसंकल्पचेष्टितः ॥ म्लानशिश्नश्चनिर्बीजःस्यादेतत्क्लैब्य-लक्षणम् ॥ ४ ॥**

अर्थ—प्रिय और वशीभूत स्त्रीकोभी प्राप्त होकर जो पुरुष लिंगको शिथिलता होनेसे नित्य विषय न करे और कदाचित् करे, तो जब कभी करे, वह पुरुष श्वाससे व्याकुल हो, देहमे पसीना होय, निष्फलमनोरथ और चेष्टा ( विषयादि ) होय, लिग जिसका ढीला और बीजरहित होय ये नपुसकके सामान्य लक्षण हैं ॥

## बीजोपघात क्लीबके लक्षण ।

**सामान्यलक्षणंह्येतद्विस्तरेणप्रवक्ष्यते ॥ शीतरूक्षाम्लसंक्लिष्ट-विरुद्धासात्म्यभोजनात् ॥ ५ ॥ शोकचिन्ताभयत्रासात्स्त्रीणा चात्यर्थसेवनात् ॥ अभिचारादविस्रम्भाद्रसादीनाचसंक्षयात् ६**

वातादीनांचैवपक्वाद्विरुद्धाध्यशनाच्छ्रमात् ॥ नारीष्वास्मल भिज्ञस्वात्पंचकर्मापचारतः ॥ ७ ॥ बीजोपघातोभवति पाण्डुवर्णःसुदुर्बलः ॥ अल्पप्रजोल्पहर्षश्च प्रमदासुभवेन्नरः ॥८॥ हृत्पांडुरोगतमककासलाश्रमपीडितः ॥ बीजोपघातजंक्लैब्यं ध्वजभंगकृतंशृणु ॥ ९ ॥

अर्थ-प्रथम जो कहे वे नपुंसकके सामान्य लक्षण हैं, अब उनको विस्तारसे कहता हूं। शीतल, रूखा, थोड़ा मिला हुआ, तथा विषम असात्म्य ( अहितकारी ) अन्न इत्यादि पदार्थोंके भोजन करनेसे आदिशब्दसे खट्टा, चरफरा, कसैला पदार्थ खानेसे, शोक ( सोच ), चिंता, भय और त्रास, तथा अत्यंत स्त्रीसेवन करनेसे, किसी शत्रुका अभिचार ( जादूटोना ) से, तथा किसीका विश्वास न करनेसे, रसादि धातुओंके क्षीण होनेसे, वातादि दोषोंके बढ़नेसे, उसी प्रकार विरुद्ध ( क्षीर मत्स्यादि ) भोजन उपवास ( व्रतादि ) और श्रम करनेसे, स्त्रीसुखके न जाननेसे पंचकर्म ( वमन विरेचनादि ) के अपचारसे, बीजोपघात अर्थात् बीजमें किसी प्रकारका विकार होना होता है इसके होनेसे बीजका वर्ण पीला होता है, तथा देह दुर्बल हो जाय, उस पुरुषके संतान थोटी हो, तथा स्त्रीगमनमें इच्छा न होना हृदयवेग और पांडुरोग होय, तमक श्वास, कामला, थलायारा, श्रम, इनमें पीडित होय ये लक्षण बीजोपघात क्लीबके हैं॥

ध्वजभंगक्लीबकी उत्पत्ति ।

अत्यम्ललवणक्षारविरुद्धाजीर्णभोजनात् ॥ अत्यम्बुपानाद्विषमपिष्टान्नगुरुभोजनात् ॥ १० ॥ दधिक्षीरानूपमांससेवनादतिकर्षणात् ॥ कन्यानांचैवगमनादयोनिगमनादपि ॥ ११ ॥ दीर्घरोगांस्त्रियंचिरोत्सृष्टांतथैवचरजस्वलाम् ॥ दुर्गंधांदुष्टयोनिंच तथैवचपरिस्रुताम् ॥ १२ ॥ नरस्यप्रमदासोहादतिहर्षाच्च गच्छतः ॥ चतुष्पदाभिगमनाच्छेफसश्चाभिघाततः ॥ १३ ॥ अधावनाद्वामेढ्रस्यशस्त्रदंतनखक्षतात् ॥ काष्ठप्रहारनिर्भशेपशूकानांचातिसेवनात् ॥ १४ ॥ रेतसश्चप्रतीघाताद्ध्वजभंगःप्रवर्त्तते ॥

अर्थ-अत्यंत खट्टा, नोनका खार, विरुद्ध (क्षीरमत्स्यादि), अपक्व अन्न भोजन करनेसे तथा बहुत जल पीनेसे, विषमान्न और भारी ऐसे पदार्थके खानेसे, दही दूध जलसमीप रहनेवाले पक्षीका

मास खानेसे, व्याधिकरके कृश होनेसे, कन्याके साथ गमन करनेसे, जिसके योनि नहीं ऐसी स्त्रीके साथ गमन करनेसे, अथवा अयोनि कहिये गुदाभजन करनेसे, तथा जिसकी योनिपर बडे बडे बाल हों और जिस स्त्रीने बहुत दिनोसे मैथुन करना छोडदिया हो तथा रजस्वला और जिसकी योनिमे दुर्गंधि आती हो तथा दुष्टयोनि और जिसकी सोमादिरोगोसे योनि चुचाती हो ऐसी स्त्रियोंसे मैथुन करनेसे तथा उन्मत्त होकर गमन करनेसे, और अति हर्पसे गमन करनेसे, तथा चतुष्पाद ( बकरी कुतियाआदि ) से गमन करनेसे, तथा लिंगमें किसी प्रकारकी चोट लगनेसे, तथा लिंगके न धोनेसे, तथा शस्त्र, दांत, नख, इनकरके घाव होनेसे, लकडी आदिकी चोट लगनेसे, लिंगके पिसजानेसे, तथा लिंगके मोटे करनेके निमित्त शूकादि प्रयोग करनेसे, अर्थात् इनका अत्यन्त सेवन करनेसे, तथा वीर्यके बिगडनेसे मनुष्यके ध्वजभंग अर्थात् लिंग खडा होकर तुरंत मुरझाजाय, यह रोग होता है इसके लक्षण आगे कहते है ॥

ध्वजभंगके लक्षण ।

**श्वयथुर्वेदनामेढ्रेरागश्चैवोपलक्ष्यते ॥ १५ ॥ स्फोटाश्चतीव्राजायन्तेलिंगपाकोभवत्यपि ॥ मांसवृद्धिर्भवेच्चापिव्रणाः क्षिप्रंभवंत्यपि ॥ १६ ॥ पुलाकोदकसंकाशःस्रावःश्यावारुणप्रभः ॥ वलयीकुरुतेचापिकठिनंचपरिग्रहम् ॥ १७ ॥ ज्वरस्तृष्णाभ्रमोमूर्च्छाच्छर्दिश्चास्योपजायते ॥ रक्तंकृष्णं स्रवेच्चापिनीलमाविललोहितम् ॥ १८ ॥ अग्निनेवचदग्धस्य तीव्रोदाहःसवेदनः ॥ वस्तौवृषणयोर्वाऽपि सेवन्यांवंक्षणेषुच ॥ १९ ॥ कदाचित्पिच्छिलोवापि पाण्डुस्रावश्चजायते ॥ श्वयथुश्चभवेन्मन्दस्तिमितोऽल्पपरिस्रवः ॥ ॥ २० ॥ चिरात्सपाकंव्रजतिशीघ्रंवाथप्रपद्यते ॥ जायन्ते कृमयश्चापिक्लिद्येतपूतिगांधिच ॥ २१ ॥ प्रशीर्यतेमणिश्चास्यमेढ्रंमुष्कावथापिच ॥ ध्वजभंगकृतंक्लैब्यमित्येतत्समुदाहृतम् ॥ एवंपंचविधंकेचिद्ध्वजभंगंवदंत्यपि ॥ २२ ॥**

अर्थ—ध्वजभंगवाले मनुष्यके लिंगपर सूजन हो, और लिंगमे पीडा हो, तथा लाल हो, उसके ऊपर घोर फोडा होते हैं, तथा लिंग पकजावे, और मांसकी वृद्धि होय, तथा लिंगमे फोडा होयँ, उसमें चावलके मांडके समान और काला लाल स्राव होय, कंकणके समान गोल लपेटा होय,

और उसकी जड कठिन होय, तथा इस पुरुषके ज्वर, प्यास, भ्रम, मूर्च्छा, वमन ये रोग हो तथा लिंगमेंसे काला नीला लोहित और दुष्ट रुधिर निकले, उसका लिंग अग्निसे दग्धके समान होजाय, मूत्राशय अंडकोश ऊरूकी संधियोंमें घोर दाह और पीडा होय, कभी कभी गाढा और पीला स्राव होय और सूजन मंद और गीली होय, तथा थोडा स्राव होय, और देरमें पके, अथवा शीघ्रही पकजावे, उसके लिंगमे कीडा पडजायँ, क्लेदयुक्त और दुर्गंध आवे, लिंगके ऊपरकी सुपारी गलजाय, तथा लिंग और अंडकोश दोनो गलकर गिरजायँ, यह ध्वजभंगकृत नपुंसकके लक्षण कहे है। कोई सुश्रुतादिक आचार्य इस ध्वजभंग नपुसकके ईर्ष्यक, सौगंधिक कुंभिक आसेक्य, और महाषंढ इन भेदोसे पाच प्रकारका बतलाते है, उनकोभी प्रसगवशसे इस जगह सुश्रुतसे लिखते है तहा प्रथमः-

आसेक्यनपुंसकके लक्षण।

**पित्रोरत्यल्पवीर्यत्वादासेक्यःपुरुषोभवेत् ॥**
**सशुक्रंप्राश्यलभतेध्वजोच्छ्रायमसंशयम् ॥ १ ॥**

अर्थ-मातापिताके अति अल्पवीर्यसे जो गर्भ रहे वह पुरुष आसेक्यनाम नपुसंक होता है, वह पुरुष अन्य पुरुषसे अपने मुखमे मैथुन कराकर उसके वीर्यको खाजाय तब उसको चैतन्य अर्थात् लिंगसतर हो तब स्त्रीसे मैथुन करे इसका दूसरा नाम मुखयोनि है ॥

सौगंधिकनपुंसकके लक्षण।

**यःपूतियोनौजायेतससौगंधिकसंज्ञितः ॥**
**सयोनिशेफसोर्गंधमाघ्रायलभतेबलम् ॥ २ ॥**

अर्थ-जो पुरुष दुष्टयोनिसे उत्पन्न होय, उसको योनि तथा लिंगके सूंघनेसे चैतन्य प्राप्ति होय, उसको सौगंधिक कहते है, इसका दूसरा पर्यायवाचक नाम नासायोनि है ॥

कुम्भिक नपुंसकके लक्षण।

**स्वगुदेऽब्रह्मचर्याद्यःस्त्रीषुपुंवत्प्रवर्तते ॥**
**कुम्भिकःसतुविज्ञेयः-**

अर्थ-जो पुरुष पहले अपनी गुदा भंजन करावे तब उसको चैतन्य प्राप्त होय, तब स्त्रीके विषै पुरुषके समान प्रवृत्त होय, उसको कुम्भिकनपुसक कहते हैं। कोई **आचार्य** इसका और प्रकारसे अर्थ करते हैं अर्थात् जो पुरुष लौंडेबाजी करते है वे प्रथम स्त्रीके पीछे बैठकर पशुके समान शिथिल लिंगसेही उसकी गुदाभंजन करे, इस प्रकार करनेसे जब चैतनता प्राप्त होती है तब मैथुन करे, उसका नाम कुम्भिक कहते है और गुदायोनी यह इसका पर्यायवा

चक नाम है, इसकी उपपत्ति काश्यपने इस प्रकार लिखी है, कि ऋतुकालमें अल्परजस्क स्त्रीसे अल्प रेतवाले पुरुषके संभोग करनेसे उस स्त्रीका कामदेव शान्त न हो इस कारण उस स्त्रीका मन अन्य पुरुषसे संभोग करनेकी इच्छा करे तब उसके कुंभिकनाम नपुंसक होता है ॥

ईर्ष्यकनपुंसकके लक्षण ।

**ईर्ष्यकंशृणुचापरम् ॥ ३ ॥ दृष्ट्वाव्यवायमन्येषांव्यवायेयःप्र-वर्त्तते ॥ ईर्ष्यकःसतुविज्ञेयोदृग्योनिरयमीर्ष्यकः ॥ ४ ॥**

अर्थ—जो मनुष्य दूसरेको मैथुन करते देख आप मैथुन करे उसको ईर्ष्यकनपुसक कहते हैं, इसका दूसरा पर्यायवाचक नाम दृग्योनि है। कोई 'दृग्योनिरयमीर्ष्यकः, इस जगह ( पण्ढक शृणु पचमम् ) ऐसा पाठ कहते हैं अर्थात् पण्ढक जो पंचम नपुसक है उसके लक्षण सुन ॥

महापण्ढनपुंसकके लक्षण ।

**योभार्यायामृतौमोहादंगनेवप्रवर्त्तते ॥**
**ततःस्त्रीचेष्टिताकारोजायतेपण्ढसंज्ञितः ॥ ५ ॥**

अर्थ—जो पुरुष ऋतुकालमे मोहसे स्त्रीके सदृश प्रवृत्त होय, अर्थात् आप नीचेसे सीधी हो ऊपर स्त्रीको चढाकर मैथुन करे, उससे जो गर्भ रहे वह पुरुष स्त्रीकीसी चेष्टा करे, और स्त्रीकी आकार, होय स्त्रीकी चेष्टा ( आप स्त्रीके समान नीचे होकर अन्य पुरुषसे अपने लिंगके ऊपर वीर्य पतन करावे ) ॥

नारीपण्डनपुंसकके लक्षण ।

**ऋतौपुरुषवद्वापिप्रवर्त्ततांगनायदि ॥**
**तत्रकन्यायदिभवेत्साभवेन्नरचेष्टिता ॥ ६ ॥**

अर्थ—ऋतुसमय यदि स्त्री पुरुषके सदृश प्रवृत्त होय, अर्थात् पुरुषको नीचे सुलाय उसके ऊपर चढ पुरुषके समान मैथुन करे, उस मैथुनसे जो कन्या प्रगट हो वह पुरुषकेसे आकारवान् होय और पुरुषकीसी चेष्टा करे ( अर्थात् स्वयं स्त्रीरूपभी होकर दूसरी स्त्रीके ऊपर पुरुषके समान उसकी योनिसे अपनी योनि घर्षण करे) ये पढनपुसकके दोनो भेद है इससे पाच प्रकारकेही ध्वजभंग नपुसक जानने परतु चरकके मतसे नपुसक स्त्री पुरुषके भेदसे दो प्रकारका है और जितने पुरुष के नपुंसक भेद हैं उतनेही स्त्रीके जानने ॥

उक्तश्लोकोंका संग्रह।

आसेक्यश्चसुगंधीचकुम्भिकश्चेर्ष्यकस्तथा ॥
सरेतसस्त्वमीज्ञेयाअशुक्रःषण्ढसंज्ञितः ॥ ७ ॥

अर्थ—आसेक्य, सुगंधी, कुम्भिक और ईर्ष्यक ये चारों प्रकारके नपुंसक शुक्र (वीर्य) सहित जानने और षण्ढसंज्ञक नपुंसकके वीर्य नहीं होता है वह वीर्यरहित जानना। कोई शंका करे कि जब वीर्यसहित है तब आप उसको नपुंसक कैसे कहतेहो इस वास्ते कहते हैं॥

अनयाविप्रकृत्यातुतेषांशुक्रवहाःशिराः ॥
हर्षात्स्फुटत्वमायान्तिध्वजोच्छ्रायस्ततोभवेत् ॥ ८ ॥

अर्थ—इनकी विरुद्ध चेष्टाके करनेसे उनके शुक्रके वहनेवाली जो नाडी है सो हर्ष ( आनंद ) से फूलती हैं, इससे उनको चैतन्य ( लिंगसतर होना ) होता है, वीर्यके प्रभावसे नहीं होता, ये ध्वजभंग नपुंसकके पांच भेद हैं, अब जरासंभव नपुंसकके लक्षण कहते हैं॥

जरासम्भवनपुंसकके लक्षण।

क्लैब्यंजरासम्भवंहिप्रवक्ष्याम्यथतच्छृणु ॥
जघन्यमध्यप्रवरंवयस्त्रिविधमुच्यते ॥ २३ ॥
अथचप्रवरेशुक्रंप्रायशःक्षीयतेनृणाम् ॥
रसादीनांसंक्षयाच्चतथैवावृष्यसेवनात् ॥ २४ ॥
बलवर्णेन्द्रियाणांचक्रमेणैवपरिक्षयात् ॥
परिक्षयादायुषश्चाप्यनाहाराच्छ्रमात्क्रमात् ॥ २५ ॥
जरासम्भवजंक्लैब्यमित्येतैर्हेतुभिर्नृणाम् ॥

अर्थ—अब मैं जरा ( बुढापे ) मे नपुंसक होनेके लक्षण कहता हूं, उनको सुन—अवस्था तीन हैं, जघन्य ( छोटी ) और मध्यम, तथा प्रवर ( बडी ) इन तीनोमे प्रवर अर्थात् वृद्ध अवस्थामे बहुधा करके शुक्र ( वीर्य ) क्षीण होता है, उसके हेतु ये है रसादि धातुओंके क्षीण होनेसे, तथा वृष्य ( वीर्यकर्ता ) औषधिके न खानेसे, बल वर्ण इन्द्रिय इनके क्रमसे क्षीण होनेसे आयु ( अवस्था ) के घटनेसे, भूखा रहनेसे, श्रम ( मेहनत ) के करनेसे, इन कारणोसे जरासम्भव नपुंसक होता है॥

जरासंभवनपुंसकके लक्षण।

जायतेतेनसोत्यर्थंक्षीणधातुःसुदुर्बलः ॥ २६ ॥

विवर्णोविह्वलोदीनःक्षिप्रंव्याधिमथाश्नुते ॥
एतज्जरासम्भवंहिचतुर्थंक्षयजंशृणु ॥ २७ ॥

अर्थ–पूर्वोक्त जरासम्भवक्लीबके होनेसे मनुष्य धातुक्षीण, दुर्वल देहका, हीनवर्ण, विह्वल, दीन, ऐसा होजाय और वह शीघ्रही व्याधि ( रोग ) को प्राप्त होय, यह जरासम्भवके लक्षण कहे; अव चतुर्थ क्षयजक्लीवके लक्षण सुनो ॥

क्षयजक्लीवके लक्षण ।

अतिप्रचिन्तनाच्चैवशोकात्क्रोधाद्भयादपि ॥
ईर्ष्योत्कण्ठात्तथोद्वेगात्सदाविशतियोनरः ॥ २८ ॥
कृशोवासेवतेरूक्षमन्नपानमथौषधम् ॥
दुर्बलप्रकृतिश्चैवनिराहारोभवेद्यदि ॥ २९ ॥
अथाल्पभोजनाच्चापिहृदयेयोव्यवस्थितः ॥
रसप्रधानधातुर्हिक्षीयेताशुनरस्ततः ॥ ३० ॥

अर्थ–अत्यंत चिन्ता, अतिशोक, अतिक्रोध, अतिभय, ईर्ष्या, उत्कठा, उद्वेग और जो पुरुष वीस वरसका होय, तथा जो पुरुष कृश होकर अन्नपानकी वस्तु तथा रूखी औषधियोका सेवन करे और दुर्वल प्रकृति होकर निराहार रहे, अथवा थोडा भोजन करे वह भी हृदयमें ही स्थित रहे इन कारणोसे रस है प्रधान जिनमे ऐसी जो धातु सो क्षीण होयँ, इसी कारणसे वह मनुष्य क्षीण होता जाय ॥

रक्तादयश्चक्षीयन्तेधातवस्तस्यदेहिनः ॥
शुक्रावसानास्तेभ्योहिशुक्रंधामपरंमतम् ॥ ३१ ॥
चेतसोवातिहर्षेणव्यवायंसेवतेतुयः ॥
शुक्रंतुक्षीयतेतस्यततःप्राप्नोतिसंक्षयम् ॥ ३२ ॥
घोरंव्याधिमवाप्नोतिमरणंवासमृच्छति ॥
शुक्रंतस्माद्विशेषेणरक्ष्यमारोग्यमिच्छता ॥ ३३ ॥
एतन्निदानलिंगाभ्यामुक्तंक्लैब्यंचतुर्विधम् ॥

अर्थ–उस पुरुषके रक्तादि धातु क्षीण होयँ उन धातुओकी शुक्र अवसान ( मर्यादा ) है; क्योकि, सवका शुक्रही धाम ( ठिकाना ) है, चित्तके हर्षसे जो मैथुन करे, तव उसका शुक्र क्षीण होय, तदनतर संक्षयको प्राप्त होय, जव मनुष्यका शुक्र क्षीण होजाता है, तव घोर व्याधि इस

मनुष्यको प्राप्त होतीहै और मरण होता है, अतएव आरोग्यकी इच्छा करनेवाला मनुष्य शुक्र (वीर्य) को जरूर रक्षा करे, यह निदान और चिन्होसे नपुंसक चार प्रकारका कहा है ॥

केचित्क्लैब्येत्वसाध्येद्वेध्वजभंगक्षयोद्भवे ॥ ३४ ॥
वदन्तिशेफसश्छेदाद्वृषणोत्पाटनेनवा ॥

अर्थ—कोई आचार्य लिंग और अंडकोशोंके गिर पडनेसे ध्वजभंग, और क्षयज इन दोनो नपुंसकोंको असाध्य कहते हैं ॥

मातापित्रोर्बीजदोषादशुभैश्चाकृतात्मनः ॥ ३५ ॥ गर्भस्थस्य यदादोषाःप्राप्यरेतोवहाःशिराः ॥ शोषयन्त्याशुतन्नाशाद्रेतश्चाप्युपहन्यते ॥ ३६ ॥ तत्रसंपूर्णसर्वांगःसभवत्यपुमान्पुमान् ॥ एतेत्वसाध्याव्याख्याताःसन्निपातसमुच्छ्रयात् ॥ ३७ ॥

अर्थ—गर्भमें नपुंसक कौन कारणसे होताहै ऐसे कोई प्रश्न करे उसके निमित्त कहते हैं । मातापिताके बीजदोषसे, पूर्वजन्मके पापोंसे, गर्भमे रेत ( वीर्य ) के वहनेवाली नाडियोमे दोष प्राप्त होकर उन नाडियोंको सुखाय देवे, जब रेतके वहनेवाली नाडी सूख जावे तब वीर्यका क्षय हो, इससे बालक जो प्रगट होय उसके सब अंग यथार्थ होय, परंतु लिंग नहीं होवे, सन्निपातके बढनेसे ये असाध्य रोग कहे हैं ॥

## शुक्रार्तवदोषनिदान ।

शुक्रंपौरुषमित्युक्तंतस्माद्वक्ष्यामितच्छृणु ॥ यथाहिबीजंकालाम्बुक्रिमिकीटाग्निदूषितम् ॥ १ ॥ नविरोहतिसन्दुष्टंतथा शुक्रंशरीरिणाम् ॥ अतिव्यवायाद्व्यायामादसात्म्यानांचसेवनात् ॥ २ ॥ अकालेचाप्ययोनौवामैथुनंचैवगच्छतः ॥ रूक्षतिक्तकषायातिलवणाम्लोष्णसेवनात् ॥ ३ ॥ मधुरस्निग्धगुर्वन्नसेवनाज्जरयातथा ॥ चिन्ताशोकादिविस्रम्भाच्छस्त्रक्षाराग्निभिस्तथा ॥ ४ ॥ भयात्क्रोधादभीचाराद्व्याधिभिःकर्षितस्य च ॥ वेगाघातात्क्षयाच्चापिधातूनांसंप्रदूषणात् ॥ ५ ॥ दोषाःपृथक्समस्तावाप्राप्यरेतोवहाःशिराः ॥ शुक्रंसंदूषयन्त्याशुतद्वक्ष्यामिविभागशः ॥ ६ ॥

अर्थ--पूर्वे नपुंसकके निदानमें यह कह आये हैं कि, मनुष्यमें पुरुषार्थ केवल वीर्यकाही है। इसी कारण अब मैं वीर्यका वर्णन करता हूं उसको सुन—जैसे काल ( समय ), जल, कृमि, कीट,

अग्निसे दूषित बीज नहीं हरा होवे उसी प्रकार मनुष्यका दूषित वीर्य गर्भप्रद नहीं होताहै । अत्यंत मैथुन करनेसे, दंडकसरत करनेसे, अपनी प्रकृतिके विरुद्ध भोजन करनेसे, कुगमन और दुष्टयोनि (गर्मीरोग आदिसे दूषितगे) विषय (गमन) करनेसे, बैठे रहनेसे, रूखा, कडवा, कषैला, अतिनोनका, खट्टा, गरम ऐसे पदार्थके सेवन करनेसे, मधुर, चिकने, भारी, अन्नके भोजन करनेसे, वृद्ध अवस्थाके होनेसे, चिंता, शोक, अविश्वास, शस्त्र. खार और अग्निके प्रयोगसे, भय, क्रोध, अर्या तथा धातुओंके दूषित होनेसे पृथक् पृथक् दोष अथवा सर्व दोष रेत ( वीर्य ) के वहनेवाली नाडीमें प्रवेश होकर शुक्रको दूषित करतेहैं—उस दूषितशुक्रके लक्षण क्रमसे न्यारे न्यारे कहताहूं ॥

दूषितशुक्रके भेद ।

फेनिलंतनुरूक्षंचविवर्णंपूतिपिच्छिलम् ॥
अन्यधातूपसंसृष्टमवसादितथाष्टमम् ॥ ७ ॥

अर्थ—दुष्ट शुक्र आठ प्रकारका है, फेनिल अर्थात् झागवाला पतला रूखा विवर्ण ( खोटे रंगका ) पूति ( सडा ) पिच्छिल गाढा और धातुके साथ मिला भया, तथा अवसादि ये आठ भेद हुए ॥

वातदूषित शुक्रके लक्षण ।

वातेनफेनिलंशुष्कंकृच्छ्रेणपिच्छिलंतनु ॥
अवल्पुपहतंशुक्रंनतद्गर्भायकल्पते ॥ ८ ॥

अर्थ—वादीसे शुक्र झागवाला, सूखा, कुछ गाढा, और थोडा तथा क्षीण हो । यह गर्भके अर्थका नही है ॥

पित्तदूषित शुक्रके लक्षण ।

सनीलमथवापीतमत्युष्णंपूतिगंधिच ॥
दहेल्लिंगंविनिर्यातिशुक्रंपित्तेनदूषितम् ॥ ९ ॥

अर्थ—पित्तसे दूषित शुक्र नीला, पीला, अत्यंत गरम होता है । उसमे बुरी वास आवै, और जब निकले तब लिंगमे दाह होवे ॥

कफदूषित शुक्रके लक्षण ।

श्लेष्मणारुद्धमार्गंतुभवत्यत्यर्थपिच्छिलम् ॥

अर्थ—कफसे शुक्र, शुक्रवहा नाडियोंके मार्ग रुकनेसे, अत्यत गाढा होजाता है ॥

स्त्रियमत्यर्थगमनादभिघातात्क्षयादपि ॥
शुक्रंप्रवर्ततेजन्तोःप्रायेणरुधिरान्वयम् ॥ १० ॥

अर्थ—अत्यन्त स्त्रीगमन करनेसे, चोट लगनेसे, मनुष्यके रुधिरसंयुक्त वीर्य निकलता है ॥

कृच्छ्रेणचातिग्रथितमवसादितथाष्टमम् ॥
इतिदोषाःसमाख्याताःशुक्रस्याष्टौसलक्षणाः ॥ ११ ॥

अर्थ—अष्टम जो अवसादि शुक्र हैं सो बडी कठिनतासे गाठके समान निकलते हैं, ये शुक्रके आठ दोष कहे हैं ॥

## शुद्धशुक्रके लक्षण।

स्निग्धंघनंपिच्छिलंचमधुरंचाविदाहिच ॥
रेतःशुद्धंविजानीयात्स्निग्धंस्फटिकसन्निभम् ॥ १२ ॥

अर्थ—सचिक्कण, गाढा, पिच्छिल ( मलाईके समान ) मीठा, दाहरहित, और जो स्निग्ध स्फटिक मणिके समान होय, ये शुद्धवीर्यके लक्षण हैं ॥

## शुक्रदोषनिदानम्।

( सुश्रुतसे )

वातपित्तश्लेष्मशोणितकुणपगंध्यनल्पग्रंथिपूतिपूयक्षीणरेतसः प्रजोत्पादने न समर्थाः ॥ १३ ॥ तत्रवातवर्णवेदनं वातेन ॥ पीतवर्णवेदनं पित्तेन ॥ श्लेष्मवर्णवेदनं श्लेष्मणा ॥ शोणितवर्णपित्तवेदनंरक्तेन ॥ कुणपगंध्यनल्पंचरक्तेनपित्तेनच ॥ ग्रंथिभूतंश्लेष्मवाताभ्यांपूयनिभंपित्तवाताभ्यांक्षीणशुक्रंप्रागुक्तं पित्तवाताभ्यांमूत्रपुरीषगंधिसर्ववर्णवेदनंसन्निपातेनोतितेषु कुणपग्रंथिपूयक्षीणरेतसः कृच्छ्रसाध्याःमूत्रपुरीषरेतसोऽसाध्याः ॥

अर्थ—वात, पित्त, कफ, रुधिर, इनसे दूषित हुआ, शवगंधि और बहुत दुर्गंधयुक्त, तथा राधके समान ऐसा जिस पुरुषका रेत ( वीर्य ) होय उसके सतान नही होय । जिसका वीर्य वादीसे दुष्ट होय उसका वर्ण काला, लाल, ऐसा होय । तथा उसमे तोदादिक पीडा होय, पित्तसे दुष्ट हुए शुक्रका वर्ण पीला, नीला इत्यादि वर्णोका होय, तथा उसमें चोपादि पीडा होय। कफसे दुष्ट हुए शुक्रका वर्ण श्वेत होय, तथा उसमे मन्द पीडा होय, रुधिरसे दुष्ट हुए शुक्रका वर्ण लाल होवे, उसमे चोपादि ( चूसनेकीसी पीडा होय ) तथा रुधिरसे दूषित शुक्रमे मुर्दाकीसी बास आवे, और विशेष ऐसा हो । कफसे दूषित हुआ शुक्र गाठदार होय, पित्त कफसे दूषित शुक्रमे राधकीसी वास आवे। पित्तवातसे शुक्र क्षीण होता है । सन्निपातसे दूषित भये शुक्रमे

पूर्वोक्त सब वर्णन होय, और पीडा होय, तथा उसमे मूत्र और विष्टाकीसी वास आये, इनमें कुणप, ग्रथि, पूय, क्षीणरेत ये चार कृच्छ्रसाध्य है और मूत्र पुरीष ( विष्टा ) रेतस असाध्य और बाकीके सब साध्य है ॥

## आर्त्तवदोषके लक्षण।

**आर्त्तवमपित्रिभिर्दोषैःशोणितचतुर्थैः पृथग्द्वंद्वैःसमस्तैश्चो-पसृष्टमबीजंभवति ॥ तदपिदोषवर्णवेदनाभिर्ज्ञेयम्। तेषुकु-णपग्रंथिपूतिपूयक्षीणमूत्रपुरीषप्रकाशमसाध्यम् ॥**

**अर्थ**—आर्तव अर्थात् स्त्रियोका रज वातादि पृथक् दोप, रक्त, द्वद्व और सन्निपात, इनकरके दुष्ट होनेसे गर्भ धारणके अयोग्य होय। तिन दोपोकरके वर्ण और वेदना जाननी चाहिये। तिनमें कुणप, पूतिपूय, क्षीण, मलमूत्रके समान जो होय सो असाध्य है बाकीके साध्य जानने ॥

## विष्टम्भगर्भके लक्षण।

गर्भिणीके कुसमय भोजन करनेसे अथवा रूक्षादि पदार्थ खानेसे, वायुसे कुपित होकर गर्भ शुक्र शुष्क करे अर्थात् गर्भको सुखाय देवे, इसीसे, उस गर्भका हलना चलना बढना बद होय, और समय पाकर उसका वादीकी पीडा होकर स्राव होय ॥

## उपविष्टगर्भके लक्षण।

गर्भिणी स्त्रीके अनन्त दाहकर्ता पदार्थ खानेसे रुधिरका स्राव बहुत होय, इसीसे वह गर्भ पीछे बढता न दीखे, उसका हलना चलना मात्र होय ऐसे गर्भको उपविष्ट कहते है। यह विष्टभ गर्भकाही भेद है ॥

## संथरज्वर ( मोतीज्वर ) के लक्षण।

( योगरत्नसे )

**ज्वरोदाहोभ्रमोमोहोह्यतीसारोवमिस्तृषा ॥**
**अनिद्रामुखशोषश्चतालुजिह्वाचशुष्यति ॥ १ ॥**
**ग्रीवायांपरिदृश्यन्तेस्फोटकाःसर्षपोपमाः ॥**
**घृताशनात्स्वेदरोधान्मंथरोजायतेनृणाम् ॥ २ ॥**

अर्थ—अधिक घृत खानेसे, अथवा पसीना रोकनेसे, मनुष्यको मंथरज्वर ( मोतीज्वर ) आता है इनके लक्षण कहते है। ज्वर, दाह, भ्रम, मूर्च्छा, अतीसार, वमन, प्यास, निद्रानाश, मुख तालु और जीभ इनका सूखना, कंठमें सरसोके समान सपेद मोतीके आकार फोडा होयँ इस ज्वरको

माधवने पित्तज्वरके अंतरगत अर्थात् ये पित्तज्वरके अंतरगत माना है इसीसे इसको पृथक् नहीं कहा, परंतु व्यवहारमें इनको पृथक् मानते हैं तथा बहुतसे ग्रंथकारोंने इसका नाम जुदा कहकर चिकित्साभी पृथक् कही है ॥

## अलर्क ( कुत्ता )के विषनिदान ।

( वाग्भट्टसे )

**शुनःश्लेष्मोल्वणादोषाःसंज्ञांसंज्ञावहाश्रिताः ॥ मुष्णन्तःकुर्वते क्षोभंधातूनामतिदारुणम् ॥ १ ॥ लालावानंधबधिरःसर्वतः सोऽभिधावति ॥ स्रस्तपुच्छहनुस्कंधःशिरोदुःखीनताननः॥२॥**

अर्थ—कुत्ताके कफाधिक दोष संज्ञाके बहानेवाले स्रोतो ( छिद्रो) मे प्रवेश करके संज्ञानाशके सदृश करे और उसकी धातुओंका क्षोभ करे इस योगसे उस कुत्ताके मुखसे लार बहे, तथा वह अंधा बहरा होकर इधर उधर दौडने लगे उसकी पूछ सीधी होजाय, और ठोडी कंधा ढीले होजायँ, इसको बावला कुत्ता कहते हैं ॥

उसके काटनेके लक्षण ।

**दंशस्तेनविदष्टस्यसुप्तःकृष्णंक्षरत्यसृक् ॥**
**हृच्छिरोरुग्ज्वरःस्तम्भस्तृष्णामूर्च्छोद्भवोनच ॥ ३ ॥**

अर्थ—उस बावले कुत्ताके काटनेसे काटनेकी जगह शून्य होजाय, उसमेसे काला रुधिर बहे, तथा उस मनुष्यका हृदय और मस्तक दूखे, ज्वर होय, देह जकडजाय, प्यास लगे, तथा मूर्च्छा आवे ॥

**अनेनान्येपिबोद्धव्याव्यालादंष्ट्राप्रहारिणः ॥**
**सृगालाश्वतराश्वर्क्षद्वीपिव्याघ्रवृकादयः ॥ ४ ॥**

अर्थ—इसप्रकार डाढा प्रहार करनेवाले सर्प, स्यार, खिच्चर, घोडा, रिछ, चीता, बाघ, भेडिया आदिशब्दसे सिंह, बानर, आदि इनके लक्षण भी कुत्तेके समान जानने ॥

सविष निर्विषदंशके लक्षण ।

**कण्डूनिस्तोदवैवर्ण्यसुप्तिक्लेदज्वरभ्रमाः ॥ विदाहरागरुक्पाक- शोफग्रंथिविकुंचनम् ॥ ५ ॥ दंशावदरणंस्फोटाःकर्णिकाम- ण्डलानिच ॥ सर्वत्रसविषेलिंगंविपरीतंतुनिर्विषे ॥ ६ ॥**

अर्थ—खुजली, नोचनेकीसी पीडा, वर्णका बदलना, शून्यता, क्लेद, ज्वर, भ्रम, दाह, लाली,

दर्द पकना, सूजन, गाठ, चांटनी, काटनेकी जगह चीरा पडे, फोडा, कर्णिका मंडल ये लक्षण सविष दातके होते है। इससे विपरीत लक्षण निर्विषके जानने॥

असाध्य लक्षण।

दष्टोयेनतुतच्चेष्टारुतंकुर्वन्विनश्यति॥
पश्यंस्तस्मेवचाकस्मादादर्शसलिलादिषु॥ ७॥

अर्थ–जिस प्राणीका काटाहुआ मनुष्य उसी प्राणीकी सर्व चेष्टा करे, और रुदन करे, तथा आदर्श ( शीसा ) पानी आदि पदार्थोंमे उसी प्राणीका प्रतिबिंब देखे वह रोगी मरजाय॥

जलसंत्रासनामाके लक्षण।

योऽद्भ्यस्त्रस्येददष्टोपिशब्दसंस्पर्शदर्शनैः॥
जलसंत्रासनामानंदष्टंतमपिवर्जयेत्॥ ८॥

अर्थ–पुरुष पानीके शब्द स्पर्श और अवलोकन ( देखने ) से डरपे उसको जलसंत्रासनामा कहते है। उसकोभी वैद्य त्याग देवे, कोई शका करे कि जलविना कैसे मनुष्य डरता है इसवास्ते कहते हैं॥

अदष्टस्यापिजन्तोर्हिजलत्रासोभवेद्यदि॥
तस्यारिष्टंहिविषजंब्रुवतेविषचिन्तकाः॥ ९॥
जलंविनाजलत्रासोजायतेश्लेष्मसंचयात्॥

अर्थ–जिस मनुष्यको जलके विना देखेभी भय लगे, उसको विषज्ञ वैद्य विषज रोग कहते हैं। यह जलविना जलसे त्रास कफके सचयसे होता है सो लिखते है॥

बुद्धिस्थानंयदाश्लेष्माकेवलंप्रतिपद्यते॥ १०॥
तदाबुद्धौनिरुद्धायांश्लेष्मणाधिष्ठितोनरः॥
जाग्रत्सुप्तोथवात्मानंमज्जन्तमिवमन्यते॥ ११॥
सलिलत्रासदातंद्राजलत्रासंतुतंविदुः॥

अर्थ–जिस समय केवल कफ बुद्धिके स्थानमे जाकर प्राप्त होताहे तब इस पुरुषकी कफकरके बुद्धि आच्छादित होनेसे जागते सोते अपने आपको जलमें डूबा हुआ जाने। इसी कारण यह मनुष्य जलसे डरताहे इसीसे इसको जलत्रास जानना॥

अब विषनिदानमे कह आये हैं कि, विश्वभरा, अहिडूका, कडूमका, शूकवृन्तादि, पिपीलिका, गोधेरका और सर्षपिका इनका निदान ग्रथके अतमे लिखेगे सो यहा सुश्रुतसे लिखते हैं॥

गोधेरकदंशके लक्षण।

**प्रतिसूर्यःपिंगभासोबहुवर्णोमहाशिराः ॥ १२ ॥ तथानिरुपमश्चापिपंचगोधेरकाःस्मृताः ॥ तैर्भवन्तीहदष्टानांवेगज्ञानानि सर्पवत् ॥ १३ ॥ रुजश्चविविधाकाराग्रंथयश्चसुदारुणाः ॥**

अर्थ—प्रतिसूर्य, पिंगभास, बहुवर्ण, महाशिरा, निरुपम, ये पांच प्रकारके गोधेरक (गोहेरा) होते है। इनके काटनेसे वेग और ज्ञान सर्पके समान जानना। और अनेक प्रकारके रोग तथा दारुण गांठ प्रगट होय, गोधेरककी उत्पत्ति ग्रंथान्तरोंमें लिखीहै॥

सर्षपिकादंशके लक्षण।

**गलगोलीश्वेतकृष्णारक्तराजीतुमण्डला ॥ १४ ॥ सर्वश्वेतासर्षपिकेत्येवंषट्स्मृताभिर्दष्टेसर्षपिकावर्ज्यंदाहशोफक्लेदाभव-न्तिसर्षपिकयाहृदयपीडातिसारश्च ॥ १५ ॥**

अर्थ—गलगोली, श्वेतकृष्णा, रक्तराजी, रक्तमंडला, सर्वश्वेता, सर्षपिका, इस प्रकार सर्षपिकाके छः भेद हैं। इनमें सर्षपिकाको छोडकर बाकी गलगोलीआदिके काटनेसे दाह, सूजन, और क्लेद होय और सर्षपिकाके काटनेसे पूर्वोक्त लक्षण होवे और हृदयमें पीडा तथा अतिसार होय ॥

विश्वंभरदष्टके लक्षण।

**विश्वम्भराभिर्दष्टेदंशःसर्षपिकाकाराभिःपिटिका-भिश्चीयतेशीतज्वरार्त्तश्चपुरुषोभवति ॥ १६ ॥**

अर्थ—विश्वंभराके काटनेकी ठौर सरसोंके समान फुन्सियोंसे व्याप्त हो, और शीतज्वरकरके रोगी व्याकुल होय ॥

अहिंडुकादष्टके लक्षण।

**अहिण्डुकाभिर्दष्टेतोददाहकण्डूश्वयथवोमोहश्च ॥**

अर्थ—अहिंडुकाके काटनेसे नोचनेकीसी पीडा होय, दाह, खुजली, सूजन और मोह होय ॥

कंडूमकादष्टके लक्षण।

**कंडूमकाभिर्दष्टपीतांगश्छर्द्यतीसारज्वरादिभिर्हन्यते ॥ १७ ॥**

अर्थ—कंडूमका कीडाओंके काटनेसे देह पीली होजाय, वमन, अतिसार और ज्वरादिरोगोंसे मनुष्य पीडित होय ॥

---

१ कृष्णसर्पेण गोधाया भवेज्जन्तुश्चतुष्पदः। सर्पो गोधेरको नाम तेन दष्टो न जीवति ॥

शूकवृन्तादिदष्टलक्षण ।

शूकवृन्तादिभिर्दष्टेकंडूकोठाःप्रवर्द्धन्तेशूकश्चात्रलक्ष्यते ॥

अर्थ–शूकवृन्तादि कीडोके काटनेसे खुजली, चकत्ता और शूकरोग हो ॥

पिपीलिकादंशलक्षण ।

पिपीलिकास्थूलशीर्षासंवाहिकाब्राह्मणिका ॥
गुलिकाकपिलिकाचित्रवर्णेतिषट्ताभिर्दष्टेदंशेश्वयथु-
रग्निस्पर्शवद्दाहशोफौभवतः ॥ १८ ॥

अर्थ–स्थूलशीर्षा, संवाहिका, ब्राह्मणिका, अगुलिका, कपिलिका, चित्रवर्णा ये छः प्रकारकी पिपीलिका ( चेटी ) हैं इनके काटनेकी जगह सूजन अग्निस्पर्शके समान दाह और चकत्ते सूजन होवे ॥

स्नायुके निदान ।

शाखासुकुपितोदोषःशोथंकृत्वाविसर्पवत् ॥
भिनत्तितक्षतेतत्रसोष्मामांसंविशोष्यच ॥ १ ॥
कुर्यात्तन्तुनिभंजीवंवृतंसितद्युतिंवहिः ॥
शनैःशनैःक्षताद्यातिच्छेदात्कोपमुपैतिच ॥ २ ॥
तत्पाताच्छोफशान्तिःस्यात्पुनःस्थानांतरेभवेत् ॥
सस्नायुकेतिविख्यातःक्रियोक्तातुविसर्पवत् ॥ ३ ॥
वाह्वोर्यदिप्रमादेनजंघयोस्तुद्यतेकचित् ॥
संकोचंखंजतांचैवच्छिन्नोजन्तुःकरोत्यसौ ॥ ४ ॥

अर्थ–हाथ पैरोमे दोप कुपित होकर विसर्पके सदृश सूजन होय, वह सूजन फूटकर घाव पडजावे और उसमे अभ्यतरीयअग्नि मासको शुष्क करके सूतके समान गोल सफेद जीव डोरेके सदृश वाहर निकले, वह जीव धीरे धीरे घावसे वाहर निकलतेसमय टूट जावे तो वहुत दुःख देताहै, यदि वह समग्र वाहर निकल आवे तो सूजन जातीरहै और उसमेसे कुछ टुकडा वाकी रहजावे तो वह फिर दूसरे स्थानपर निकले उस रोगको स्नायुक ( नहरुआ ) कहतेहै, इसपर चिकित्सा विसर्प रोगकीसी कही है, कदाचित् हाथ वा पैरोमे नहरुआ होकर टूट जावे तो पैरसे ठोटा अथवा लूला होजाय ॥

ध्वजभंगके संगृहीतश्लोक ।

यौवनेऽनंगवेगेनशिशुनाकेलिमाचरेत् ॥
गुह्यदोषेणतल्लिंगेशैथिल्यमुपजायते ॥ १ ॥
स्वगुदोत्पाटनंबाल्येपरैःकारयतिस्वयम् ॥
कुरुतेतेनदोषेणध्वजभंगोभिजायते ॥ २ ॥
अथवायोभवेन्मर्त्यःकरमैथुनलम्पटः ॥
तस्यनूनंप्रजायेतध्वजभंगंसुदुर्जयम् ॥ ३ ॥

( करमैथुन ) हथरस इति प्रसिद्धः ।

रोगानुक्रमणिका ।

ज्वरोऽतिसारोग्रहणीत्वर्शोऽजीर्णोविषूचिका ॥ अलसश्चविलम्बीचक्रमिरुक्पाण्डुकामलाः ॥ १ ॥ हलीमकंरक्तपित्तंराजयक्ष्माप्युरःक्षतम् ॥ कासोहिक्कासहश्वासैःस्वरभेदस्त्वरोचकः ॥ २ ॥ छर्दिस्तृष्णाचमूर्च्छाद्यारोगाःपानात्ययादयः ॥ दाहोन्मादावपस्मारःकथितोऽथाऽनिलामयः ॥ ३ ॥ वातरक्तमुरुस्तम्भआमवातोथशूलरुक् ॥ पित्तजंशूलमानाहउदावर्त्तोथगुल्मरुक् ॥ ४ ॥ हृद्रोगोमूत्रकृच्छ्रंचमूत्राघातस्तथाश्मरी ॥ प्रमेहोमधुमेहश्चपिडिकाश्चप्रमेहजाः ॥ ५ ॥ मेदस्तथोदरंशोथोवृद्धिश्चगलगण्डकः ॥ गण्डमालाऽपचीग्रंथिरर्बुदंश्लीपदंतथा ॥ ६ ॥ विद्रधिर्व्रणशोथश्चद्वौव्रणौभग्ननाडिके ॥ भगन्दरोपदंशौचशूकदोषस्त्वगामयः ॥ ७ ॥ शीतपित्तंमुदर्दश्चकोठश्चैवाऽम्लपित्तकम् ॥ विसर्पश्चसविस्फोटःसरोमान्त्योमसूरिकाः ॥ ८ ॥ क्षुद्राऽऽस्यकर्णनासाऽक्षिशिरःस्त्रीबालकग्रहाः ॥ विषंचेत्ययमुद्देशोरुग्विनिश्चयसंग्रहे ॥ ९ ॥

अर्थ—अर्श ( बवासीर ) छर्दि ( रद ) मूर्च्छाद्या ( मूर्च्छा भ्रम तन्द्रा निद्रा सन्यास ) पानात्यय ( मदात्यय ) अपस्मार ( मृगी ) अनिलामय ( वातव्याधि ) आनाह ( अफरा ) गुल्म ( गोलेका

रोग , अश्मरी ( पथरी ) वृद्धि ( अंडवृद्धि ) ग्रंथि ( गाठ ) नगामय ( कांटरोग ) आस्य ( मुख रोग ) ग्रह ( पूतनादिबालग्रह ) ये हमने कठिन शब्दोंके अर्थ लिखदिये हैं ॥

रोगानुक्रमणिका लिखनेका यह प्रयोजन है कि, इतने रोग इस ग्रंथमें कहे हैं, इससे विशेष रोग प्रक्षित जानने. इस रोगानुक्रमणिकाके रोगोंके ऊपर हमने १-२-३ ऐसे अंक करदीने हैं सो बुद्धिमान् समझलेंगे ॥

## टीकाकर्त्ताकी वंशावली ।

श्रीमन्माथुरमंडलेद्विजकुलेश्रीमाथुराणांकुले
घासीरामइतिप्रथामधिगतोजातःसतांमोदकृत् ॥
श्रीचन्द्रःकिलरामचन्द्रविबुधोजातोहरिश्चन्द्रकः
पुत्रास्तेत्रितयीवधर्मनिपुणाःसर्वैर्नृपैःपूजिताः ॥ १ ॥

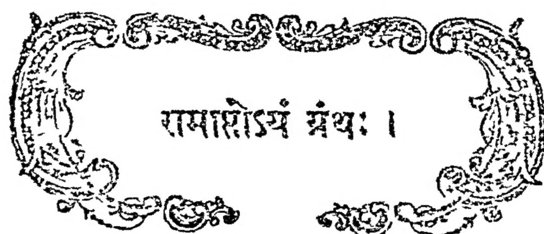
अर्थ—श्रीमान्माथुरमण्डल द्विजकुल श्रीमाथुर ( चौबे ) नके कुलमें श्रीघासीराम इस नामसे प्रसिद्ध सज्जन मनुष्योंके आनदकर्त्ता प्रगट भये, उनके श्रीचंद्र और परम बुद्धिमान् रामचन्द्र और हरिश्चन्द्र ये तीन पुत्र वेदत्रयी ( ऋक् साम यजुः ) के समान और सर्व राजमान्य प्रगट भये ॥

तेषांहरिश्चंद्रसमानकीर्त्तिर्जातोहरिश्चंद्रगुणाभिरामः ॥
बभूवतस्मात्किलकृष्णलालःसंगीतशास्त्रार्थविचारदक्षः ॥ २ ॥

अर्थ—तिन घासीरामके तीन पुत्रोंमे हरिश्चद्रके समान कीर्त्ति जिनकी ऐसे हरिश्चन्द्र भये, तिनके संगीतशास्त्र ( गानविद्या ) के अर्थ विचारमें कुशल कन्हैयालाल प्रगट होते भये ॥

तस्यपुत्रस्त्वहंजातोदत्तरामोविमूढधीः ॥
भाषायांमाधवस्यार्थोयथामतिप्रचेरितः ॥ ३ ॥

अर्थ—तिन कन्हैयालालका पुत्र मैं तुच्छ बुद्धिवाला दत्तराम प्रगट हुआ, मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार माधवनिदानका अर्थ भाषामे निरूपण किया ॥




पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—बम्बई.